# काशी-नागरीप्रचारिणी सभा

का

# अर्द्धशताब्दी-इतिहास

## कृपया ठीक कर लीजिए

| पृष्ठ | स्तंभ | पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|---|---|
| ४ | २ | १९ | गोपाल दास | गोपाल प्रसाद |
| ३२ | २ | १९ | तक के | तक |
| २११ | २ | २७ | १००) | १०००) |
| २४४ | १ | छठी और ११ वीं पंक्ति में इनवर्टेड कामा ("  ") न होने चाहिएँ | | |

## कृपया ठीक कर लीजिए

| पृष्ठ | स्तंभ | पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|---|---|
| ४ | २ | १९ | गोपाल दास | गोपाल प्रसाद |
| ५२ | २ | १९ | तक के | तक |
| २११ | २ | २७ | १००) | १०००) |
| २४४ | १ | ६ठी और ११ वीं पंक्ति में इनवर्टेड कामा ( " " ) न होने चाहिएँ | | |

---

का

# अर्द्धशताब्दी-इतिहास

लेखक

श्री वेदव्रत शास्त्री, बी० ए०

संपादक

श्री विश्वनाथप्रसाद मिश्र एम० ए०, साहित्यरत्न

प्रकाशक

काशी नागरीप्रचारिणी सभा

संवत् २०००

१००० ]

[ मूल्य २॥)

प्रकाशक
मंत्री नागरीप्रचारिणी सभा,
काशी।





मुद्रक—
श्री अपूर्वकृष्ण बसु,
इंडियन प्रेस, लिमिटेड,
बनारस-ब्रांच।

## वक्तव्य

नागरीप्रचारिणी सभा की ज्योति उस समय फूटी जब 'भारतेंदु' के अस्त हो जाने से हिंदी-संसार में चारों ओर अंधकार ही अंधकार छाया हुआ था। इस ज्योति का प्रकाश प्रसरित होते ही धीरे धीरे हमारी लिपि, हमारी भाषा और हमारे साहित्य की रूप-रेखा स्पष्ट दिखाई देने लगी, उनके चतुर्दिक् फैला हुआ धुंध छँट गया। भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र और उनके सहयोगियों ने जो प्रस्तावना की थी उसी का उद्घाटन नागरी-प्रचारिणी सभा के पचास वर्षों का इतिहास है। इस चार युगों से भी अधिक समय में सभा ने नागरी लिपि के प्रसार के ही साथ हिंदी के संस्कार और साहित्य के संवर्द्धन में जैसा योग दिया उससे स्पष्ट है कि हिंदी की वर्तमान समृद्धि का वास्तविक हेतु सभा ही है। इसने साहित्य-क्षेत्र में जिस जिस बीज का वपन किया, उस उसको अंकुरित, पल्लवित, पुष्पित और फलित करने में अन्य संस्थाओं का सहयोग उसे मिला। इसमें संदेह नहीं कि सभा का आविर्भाव बड़े ही पुण्यकाल में हुआ था। इसका ज्वलंत प्रमाण यह है कि इसकी स्थापना करनेवाली त्रिमूर्ति, पचास वर्षों का दीर्घकाल समाप्त हो जाने पर भी, अपनी लगाई हुई लता को फूली-फली और देशवासियों की मानसतृप्तिकारिणी देखने और अब भी उसके फैलाव का मार्ग निर्दिष्ट करने के लिये हमारे बीच उपस्थित है।

सभा की स्थापना के समय ध्वनि सुनाई पड़ती थी 'नागरी तेरी यह दशा' और अब घननाद हो रहा है 'नागरी तेरी यह समृद्धि'। साहित्य की विभिन्न शाखाओं की संवर्धना के साथ ही साथ नागरी या हिंदी में ज्ञानवर्द्धक वाङ्मय की भी प्रभूत ग्रंथराशि एकत्र हो गई है। हिंदी या नागरी में उत्तम उत्तम ग्रंथों का मुद्रण और प्रकाशन इतने प्रचुर परिमाण में हो चुका है कि उन सबका एक बार बाँच जाना भी जीवन के अल्प काल में अब बहुतों को यदि असंभव नहीं तो दुस्साध्य अवश्य हो रहा है। उस पर भी हिंदी का प्राचीन साहित्य अभी शतांश ही मुद्रित हुआ है। इस समृद्धि को देखते हुए जहाँ हर्ष हो रहा है वहाँ यह बात भी अंतःशूल की भाँति वेदना उत्पन्न करती है कि हिंदी का मार्ग इतना प्रशस्त और परिष्कृत हो जाने पर भी, अपनी भाषा और अपना साहित्य होने के नाते मानिए या लोगों की स्वाभाविक उपेक्षा के कारण समझिए, इसके प्रेमी और सेवक भाषा की एकता बनाए रखने, साहित्य की पुरातन भारतीय दृष्टि पर विशेष ध्यान देने और अपनी नागरी लिपि के अधिकाधिक व्यवहार करने पर वैसे कटिबद्ध नहीं हैं जैसा उन्हें हो जाना चाहिए था। अभी तक एक साधारण सी बात में भी लोगों ने ऐक्य की स्थापना नहीं कर पाई है, वह है हिंदी का वर्णविन्यास, जिसका निर्देश नागरीप्रचारिणी सभा बहुत पहले कर चुकी है। 'सरस्वती' पत्रिका के प्रकाशित होने के बाद भाषा का अच्छा परिष्कार हो गया था, पर अब उसमें शैथिल्य आ चला है। सभा का

इतिहास पढ़कर, इसमें संगृहीत तथ्यों का मनन करके हिंदी भाषा के अनुरागियों को इस बात का विचार करना चाहिए कि हिंदी की जितनी समृद्धि हो चुकी है उसकी संरक्षा के लिये और उसे बढ़ाने के लिये हमें अब शीघ्र कैसा प्रयास करने की आवश्यकता है।

सभा के इस इतिहास में अधिकतर तथ्यों का ही संग्रह करने का प्रयत्न रहा है, इन्हें ढूँढ़कर प्रत्येक विषय को यथास्थान, यथावश्यक और यथार्थ रूप में सामने लाने के लिये विशेष परिश्रम और धैर्य की आवश्यकता थी। यह दुष्कर कार्य श्री वेदव्रत शास्त्री बी० ए० ने बड़ी ही योग्यता के साथ संपन्न किया। इस इतिहास को दुहराने में मेरे पुराने मित्र श्री कालिकाप्रसादजी श्रीवास्तव ने मेरा हाथ बँटाया। इसके लिये वे धन्यवादार्ह हैं। माननीय डाक्टर श्यामसुंदरदासजी ने छपने के पूर्व इसे एक बार देख लेने का कष्ट उठाया है जिसके लिये हम उनके अनुगृहीत हैं। इतना ही इतिहास ( प्रथम खंड ) के प्रकाशित होने का इतिहास है।

—विश्वनाथप्रसाद मिश्र

## निवेदन

कागज की दुर्लभता के कारण इस इतिहास में नागरीप्रचारिणी पत्रिका के लेखों की सूची, पूज्य मालवीयजी के अँगरेजी निबंध 'कोर्ट करैक्टर ऐंड प्राइमरी एजुकेशन' का श्री श्यामसुंदरदास लिखित हिंदी सारांश ( जो १८९८ में नागरीप्रचारिणी पत्रिका के दूसरे भाग में प्रकाशित हुआ था ), श्री राधाकृष्णदास का 'मुसलमानी दफ्तरों में हिंदी' शीर्षक लेख और सभा के पचासवें वर्ष के सदस्यों की नामावली नहीं जा सकी।

इस इतिहास में ज्ञानमंडल यंत्रालय, काशी के पत्रे की सौर तिथियों का प्रयोग किया गया है। तिथियों के आगे कोष्ठ में अँगरेजी तारीखें भी यथासंभव दे दी गई हैं। इस इतिहास का प्रत्येक प्रकरण प्रेस में देने से पूर्व साहित्यवाचस्पति डाक्टर श्यामसुंदरदास ने इस वृद्धावस्था में, अस्वस्थता के कारण अत्यंत अशक्त होते हुए भी, कृपाकर एक बार पढ़ लिया है और छपाई के समय श्री लल्लीप्रसाद पांडेय ने इसका प्रूफ-संशोधन करने का अनुग्रह किया है।

नागरीप्रचारिणी सभा का इतिहास हिंदी की प्रगति का इतिहास है। अब से पचास वर्ष पहले हिंदी गद्य का क्या रूप था और वह किस प्रकार विकसित होता हुआ आज का रूप प्राप्त कर सका है इसके बड़े सुंदर नमूने सभा और उसकी उपसमितियों की कार्यवाही-पुस्तकों ( प्रोसीडिंग बुक्स ) में भरे पड़े हैं। इनमें बड़े बड़े व्यक्तियों की चर्चा आई है, उनकी कार्यशैली और विचारों का आभास इनके पृष्ठों पर मिलता है और अनेक साहित्य-महारथियों के हस्ताक्षरों के दर्शन होते हैं। इस इतिहास में उक्त पुस्तकों से जो उद्धरण लिए गए हैं उन्हें अविकल रूप में ही रखा गया है। संतोष की बात है कि ये सब पुस्तकें सभा में अभी तक सुरक्षित हैं।

—वेदव्रत

————

# विषय-सूची

# सभा के संस्थापक

इस त्रिमूर्ति ने सभा का पालन-पोषण अपनी सन्तान की भाँति किया है; अनेक कठिनाइयों से इसे उबारा है। इसलिये ये तीनों सभा के केवल संस्थापक हो नहीं, पालनकर्ता भी हैं।

पंडित रामनारायण मिश्र बी० ए०, पी० ई० एस० (अवसर प्राप्त) का जन्म दिल्ली में संवत् १९३३ में हुआ था। आपकी शिक्षा काशी में हुई थी। आप दस वर्षों तक सरकारी शिक्षा-विभाग में डिपुटी इंस्पेक्टर रहे, तत्पश्चात् अनेक स्कूलों के हेडमास्टर रहे। इनमें हरिश्चन्द्र-हाईस्कूल तथा सेंट्रल हिंदू-स्कूल मुख्य हैं। डी० ए० वी० कालेज के आप अवैतनिक प्रिंसिपल भी रहे हैं। इन तीनों संस्थाओं की वर्तमान स्थिति का श्रेय मुख्यतः आपको ही है। काशी का कोई सार्वजनिक क्षेत्र ऐसा नहीं है जहाँ आपने सक्रिय रूप से भाग न लिया हो। अर्द्धशताब्दी की सफलता का अधिकांश श्रेय आपको ही है। आपके उद्योग से सभा का ऋण चुक गया और उसके स्थायी कोश में चालीस हज़ार से अधिक रुपए जमा हो गए।

(बैठे)
सर्वश्री रामनारायण मिश्र, डाक्टर श्यामसुंदरदास,
(खड़े)
ठाकुर शिवकुमारसिंह

साहित्य - वाचस्पति राय बहादुर डाक्टर श्यामसुंदरदास के पूर्वज पंजाब के निवासी थे। आपका जन्म आषाढ़ शुक्ल ११, संवत् १९३२ में काशी में हुआ था। छात्रावस्था में ही अन्य दोनों संस्थापकों के साथ आपने काशी नागरी-प्रचारिणी सभा की स्थापना की। तब से आपका और सभा का इतिहास एक है। अदालतों में हिंदी, रासो, शब्दसागर, वैज्ञानिक कोष और मनोरंजन पुस्तकमाला का संपादन, आदि आपके कार्य हैं। सभा को सदा आपसे स्फूर्ति मिलती रही है। आपकी हिंदी-सेवाओं से प्रसन्न होकर सरकार ने राय बहादुर, काशीविश्वविद्यालय ने डाक्टर और सभा ने साहित्यवाचस्पति की उपाधि दी है।

राय साहब शिवकुमार सिंह का जन्म बनारस जिले के तिरपाट गाँव में संवत् १९२९ में हुआ था। सं० १९५४ में आप २०) मासिक पर अध्यापक हुए और उन्नति करते करते ३००) मासिक पर डिपुटी इंस्पेक्टरी से अवकाश ग्रहण किया। जब आप मिडिल कक्षा में पढ़ते थे तभी अन्य छात्र मित्रों के साथ आपने सर्वप्रथम नागरीप्रचारिणी सभा की स्थापना की। तब से आप बराबर उसकी उन्नति में लगे हुए हैं।

## सभा के संस्थापक

( सं० १९६७ से पूर्व का चित्र )
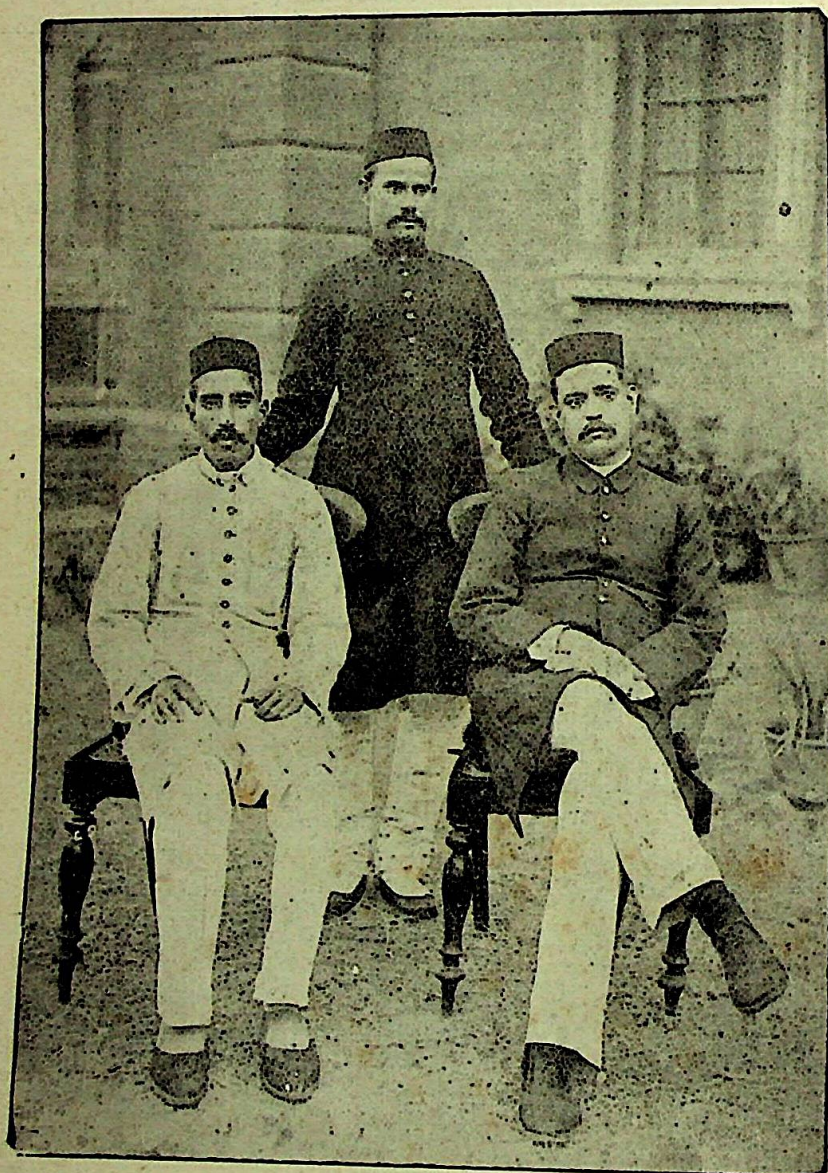
बैठे—सर्व श्री रामनारायण मिश्र, श्यामसुंदरदास
खड़े—ठाकुर शिवकुमार सिंह

# नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

## १—स्थापना

हिंदी-गगन से भारतेंदु का असमय अस्त हुए आठ ही वर्ष बीते थे। उनके उदित होने से हिंदी-साहित्य जैसा जगमगा उठा था, उसके विस्तार का जैसा आयोजन हुआ था और उसकी छटा में मन को रमाने का जैसा उत्साह दिखलाई दिया था उनके अस्तंगत होते ही उस पर अंधकार की वैसी ही छाया भी पड़ने लगी थी और शैथिल्य का प्रसार होने लगा था; किंतु उसकी शीतलता का सर्वथा लोप नहीं हुआ था। भारतेंदु ने अपने अल्पकालिक उदय में हिंदी-प्रेम की जैसी चंद्रिका भारतवासियों के हृदय में छिटकाई थी उसका प्रभाव अभी बना था। उनके लेखों और पुस्तकों को जो पढ़ता था उसके हृदय में हिंदी के अनुराग की ज्योति जगे बिना नहीं रहती थी। उनके परिवार में तो हिंदी-प्रेम की धारा ही बह रही थी। इस परिवार के संपर्क में जो कोई आया वही हिंदी का प्रेमी-पुजारी बन गया। नगरों में ही नहीं, ग्राम-पाठशालाओं में भी कहीं-कहीं हिंदी के भक्त अध्यापक अपने छात्रों को भारतेंदुजी की रचनाओं का रसास्वादन करने के लिये उत्साहित करते रहते थे। संवत् १९४२ ( सन् १८८५ ई० ) में बनारस जिले के तिरपाट गाँव के हिंदी मिडिल स्कूल के अध्यापक श्री रामकिंकरसिंह अपने छात्रों को भारतेंदुजी के हिंदी-प्रेम और उनके सुयश की गाथाएँ सुनाया करते थे। उनकी रचनाएँ पढ़ने के लिये विद्यार्थियों को इनसे विशेष प्रेरणा मिलती थी। उस समय इस स्कूल के जिन छात्रों ने हिंदी-प्रेम की पक्की दीक्षा ली उनमें श्री शिवकुमारसिंह और श्री उमरावसिंह के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

ये दोनों छात्र मिडिल पास करके संवत् १९४५ वि० ( सन् १८८८ ई० ) में अँगरेजी पढ़ने के लिये काशी आए और 'क्वींस कालेजियेट स्कूल' में प्रविष्ट होकर जगतगंज महल्ले में स्थित उसके छात्रावास में रहने लगे। इस छात्रावास का भवन 'नार्मल स्कूल' के नाम से प्रसिद्ध था, क्योंकि यहाँ पहले कभी नार्मल स्कूल था, जो टूट चुका था और जिसका भवन 'क्वींस कालेजियेट स्कूल' को मिल गया था। इस भवन के कुछ कमरों में पाँचवीं श्रेणी तक अँगरेजी कक्षाएँ लगती थीं और शेष भाग में छात्रावास था।

इन छात्रों के सौभाग्यवश यहाँ भी कई हिंदी-प्रेमी साथी मिले, जिनके संपर्क से इनका हिंदी-प्रेम उत्तरोत्तर बढ़ता गया। इस प्रकार के छात्रों में गोरखपुर जिले के ग्रामवासी छात्र श्री रामगरीब चौबे और भारतेंदुजी के भतीजे श्री कृष्णचंद्र के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। चौबेजी कालेज में पढ़ते थे और उसी छात्रावास में रहते थे। वे भारतेंदुजी के बड़े भक्त थे

और कभी-कभी उनकी देश-भक्ति तथा हिंदी-प्रेम की चर्चा करते हुए गद्गद हो जाते थे। उनके द्वारा श्री शिवकुमारसिंह और श्री उमरावसिंह को 'हरिश्चंद्र मैगजीन' और 'कविवचन-सुधा' की फाइलें पढ़ने को मिल जाया करती थीं। श्री कृष्णचंद्र इन्हीं दोनों की कक्षा में पढ़ते थे। वे बड़े ही मिलनसार थे। शीघ्र ही उनके साथ इन छात्रों की मित्रता बढ़ गई और उनके द्वारा श्री राधाकृष्णदास ( बच्चा बाबू ) से भी इनका परिचय हुआ और ये अकसर उनसे मिलने लगे। बच्चा बाबू भारतेंदुजी के फुफेरे भाई थे। इस प्रकार भारतेंदुजी के मकान पर इन लोगों का आना-जाना आरंभ हो गया। वहाँ श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' जैसे विद्वानों के संपर्क का सुयोग भी इन छात्रों को प्राप्त होने लगा और इनके नागरी-प्रेम को पनपने के लिये अति उपयोगी परिस्थिति मिल गई।

उन दिनों काशी में स्वर्गीय मिस्टर केन द्वारा संचालित मद्य-निवारिणी सभा की धूम मची हुई थी। महंत केशवराम इस सभा के प्राण थे। वे बहुधा एक बड़े झंडे के साथ अपना दल-बल लिए प्रचार करते हुए नार्मल स्कूल के पास जगतगंज में और पिशाच-मोचन तथा लहुराबीर की चौमुहानी पर भी आया करते थे। उनके मनोरंजक बिरहे बहुत हृदय-ग्राही और जनता को आकृष्ट करनेवाले होते थे। अनेक छात्र भी उनके इस कार्य में सहयोग देते थे। श्री उमरावसिंह जैसे उत्साही छात्र तो छुट्टी के दिन महंतजी के साथ-साथ सड़कों पर व्याख्यान देते और बिरहा गाते हुए प्रचार-कार्य करते फिरते थे। उनके हृदय में भी इसी प्रकार नागरी का झंडा लेकर उसका प्रचार करने की उमंग उठा करती थी।

उक्त छात्रावास में एक ओर तो कुछ छात्रों के हृदयों में इस प्रकार के विचार की लहरें उठ रही थीं, दूसरी ओर सर्वश्री गोपालप्रसाद खत्री, रामसूरत मिश्र, जयकृष्णदास आदि पाँचवीं कक्षा के छात्र एक वाद-समिति ( डिबेटिंग सोसायटी ) स्थापित करने की बात सोच रहे थे। इनमें श्री गोपालप्रसाद उम्र में सबसे छोटे थे; पर लगन और उत्साह में सबसे आगे रहते थे। अपने बड़े भाई सर्वश्री ठाकुरप्रसाद, संकठाप्रसाद तथा दुर्गाप्रसाद के समान वे भी विद्या-रसिक, वाक्पटु और व्यवहार-कुशल थे। श्री संकठाप्रसाद का प्रभाव इन पर अधिक था। संकठाप्रसादजी अपने समय के अच्छे वक्ता और काशी में कांग्रेस के मुख्य कार्यकर्त्ता थे। उनके व्याख्यानों को जनता बहुत पसंद करती थी। गोपालप्रसादजी उनके साथ प्रायः सभी सभा-समाजों में जाया करते थे। इसी से उनका हृदय उमंग और उत्साह से भरा रहता था। इन छात्रों ने इस विषय में अन्य उच्च कक्षाओं के छात्रों का सहयोग प्राप्त करने के लिये एक दिन श्री रामसूरत मिश्र को श्री शिवकुमारसिंह आदि नवीं कक्षा के छात्रों के पास भेजा। वे लोग इस शर्त पर इस वाद-समिति की स्थापना में सहयोग करने को प्रस्तुत हो गए कि नागरी-प्रचार को उद्देश्य बनाकर सभा की स्थापना की जाय। श्री गोपालप्रसाद आदि ने यह शर्त स्वीकार कर ली। निदान २० फाल्गुन, १९४९ वि० ( ३ मार्च, १८९३ ) को उक्त छात्रावास के उत्तरवाले एक कमरे में, जिसमें अँगरेजी की एक कक्षा लगा करती थी, ये सब छात्र पहली बार एकत्र हुए। श्री रामसूरत मिश्र ने सबका परस्पर परिचय कराया। उसके बाद निश्चय हुआ कि नियमादि बनाकर अगले शनिवार को सभा में उपस्थित किए जायँ। इस निश्चय के अनुसार २७ फाल्गुन, १९४९

(१० मार्च, १८९३) को १२ बजे के बाद छुट्टी होने पर ये छात्र पुनः उसी कमरे में एकत्र हुए। सभा का नाम 'नागरीप्रचारिणी सभा' रखा गया और कार्य-संचालन के लिये १० नियम स्वीकृत हुए तथा निश्चय हुआ कि प्रति शनिवार को सभा की बैठक हुआ करे। सभा का कार्य बाल-सुलभ उत्साह के साथ होने लगा। उत्साही कार्यकर्त्ताओं में श्री जयकृष्णदास आर्थिक कठिनाइयाँ दूर करने में आगे रहते थे। सर्वश्री रामसूरत मिश्र, उमरावसिंह और शिवकुमारसिंह प्रचार के कार्य में पटु थे। नए-नए छात्रों को सभा में लाना और यत्र-तत्र-सर्वत्र हिंदी के पक्ष का समर्थन करना इनको विशेष प्रिय था।

श्री रामनारायण मिश्र भी उन दिनों उसी स्कूल की नवीं कक्षा में पढ़ते थे। ये उस समय अपने नवयुवक साथियों में अँगरेजी लिखने और बोलने में बहुत अच्छे थे। इस विषय में उस समय इनके जोड़ का दूसरा छात्र उस कक्षा में कोई नहीं था। इस कारण अपनी सभा-समितियों में मिश्रजी को पाकर छात्र अपने को धन्य मानते थे और इनका बड़ा आदर-सत्कार करते थे। इनके मामा स्वर्गीय डाक्टर छन्नूलाल, जिनके कारण ये पंजाब से काशी आए थे, उस समय काशी-आर्यसमाज के प्राण थे। आर्यसमाज के अनेक विद्वान् उपदेशक प्रायः काशी आते रहते थे और डाक्टर साहब के उद्योग से उनके व्याख्यान काशी-आर्यसमाज मंदिर में, जो उन दिनों लहुराबीर में था, हुआ करते थे। इससे मिश्रजी को सभा-समाजों में जाने का बहुत चाव रहता था। आर्यसमाज के संपर्क से स्कूल में उर्दू-फारसी पढ़ते हुए भी उनके हृदय में हिंदी के प्रति प्रगाढ़ अनुराग उत्पन्न हो चुका था। तीसरे अथवा चौथे शनिवार को श्री सुधाकर द्विवेदी के सुपुत्र श्री अच्युतानंद के साथ मिश्रजी सभा में पधारे और उसके कार्यों में उत्साह के साथ योग देने लगे। मिश्रजी के संमिलित होने से छात्रों का उत्साह दूना हो गया और बल चौगुना। उसकी बैठकों में अब खासी भीड़ होने लगी थी।

स्कूल में उपद्रवी छात्रों की भी कमी न थी। ये लोग सभा की बैठकों में अनेक प्रकार की बाधाएँ उपस्थित करने की चेष्टा किया करते थे। बड़ी पियरी महल्ले का एक बड़ा-सा लड़का इनका नेता था। एक शनिवार को, जब श्री गोपालप्रसाद अन्य छात्रों की प्रतीक्षा में बैठे थे, इस लड़के ने सभा के कमरे में कुछ उपद्रवी छात्रों के साथ पहुँचकर भारी उत्पात मचाना आरंभ किया। यह लड़का उर्दू का पक्षपाती और हिंदी का घोर विरोधी था। गोपालप्रसादजी कुछ समय तक अकेले ही उसका सामना करते रहे। बात यह थी कि उस दिन स्कूल में बड़े छात्रों की परीक्षा हो रही थी। इस कारण वे लोग सभा में ठीक समय पर नहीं पहुँच सके थे। कुछ समय के पश्चात् वे भी आ गए। काफी झगड़े-टंटे के बाद अंत में वह उपद्रवी लड़का अपने साथियों सहित वहाँ से भगा दिया गया।

'नार्मल स्कूल' के तत्कालीन निरीक्षक ने जब देखा कि सभा में भीड़ अधिक होने लगी है और उत्पाती लड़कों के आ जाने से कभी-कभी झगड़े-टंटे की आशंका भी है, तो एक दिन उन्होंने सभा के उत्साही कार्यकर्ताओं को बुलाकर कहा कि आप लोगों की बैठकों में अब अधिक भीड़ होने लगी है, इसलिये आप लोग कोई दूसरा मकान खोज लें तो अच्छा हो। इस मनाही के बाद छात्र बड़ी पियरी महल्ले में 'बाग बरियारसिंह' के पास

श्री मथुराप्रसाद के बाग में एकत्र हुए। एक बैठक वहीं हुई। पर उस स्थान पर कई प्रकार की असुविधाओं का अनुभव हुआ और कई छात्रों को वह स्थान ठीक नहीं जँचा। इस अवसर पर श्री जयकृष्णदास ने, जिनकी चर्चा ऊपर की जा चुकी है, बड़ी सहायता की। उन्होंने बुलानाला के अपने अस्तबल के ऊपरवाले कमरे में सभा की बैठकें करने की अनुमति अपने पिता श्री जीवनदास से प्राप्त कर ली। अतः बड़ी पियरी की बैठक के पश्चात् जीवनदासजी के उसी कमरे में बैठकें होने लगीं। यह मकान बहुत खुला हुआ और सड़क पर था। यहाँ आने पर सभा की बैठकें शनिवार की जगह रविवार को होने लगीं।

मई महीने में जब गरमी की छुट्टी हुई और बहुत से छात्र अपने-अपने घर चले गए तो छुट्टी भर सभा की बैठकें भी नहीं हो सकीं।

यही नागरीप्रचारिणी सभा के पूर्वरूप का इतिहास है।

ग्रीष्मावकाश समाप्त होने पर २५ आषाढ़, १९५० वि० ( ९ जुलाई, सन् १८९३ ई० ) को पुनः सब लोग श्री जीवनदास के उसी कमरे में एकत्र हुए। उस दिन श्री गोपालप्रसाद और श्री रामनारायण मिश्र के उद्योग से कई नए सज्जन सभा में पधारे। इनमें श्री श्यामसुंदरदास और श्री शंकरनाथ के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। श्री श्यामसुंदरदास उन दिनों कालेज में पढ़ते थे और सभा-समाजों में बड़े उत्साह से संमिलित हुआ करते थे। श्री शंकरनाथ काशी में संस्कृत का अध्ययन कर रहे थे और समय-समय पर आर्यसमाज की ओर से उपदेशक का कार्य भी करते रहते थे। ये बड़े ओजस्वी और प्रभावशाली वक्ता थे। आगे चलकर इन्होंने विदेशों का भ्रमण करके आर्यसमाज का बहुत कार्य किया। ये आजकल संन्यास लेकर स्वामी शंकरानंद के नाम से काठियावाड़ के वीरपुर नामक नगर में रम रहे हैं ( स्वामी भवानीदयाल संन्यासी ने इनका एक बहुत ही रोचक जीवनचरित्र लिखा है )। इन दो नवयुवकों के आने से सभा में नई जान आ गई।

इन नवागंतुक सज्जनों ने पहले ही दिन सभा का नाम और कार्यप्रणाली बदल देने के लिये अपने प्रस्ताव उपस्थित किए, जिन पर बहुत वाद-विवाद हुआ; पर उस दिन इस विषय पर कोई निर्णय न हो सका और इन नए प्रश्नों पर विचार करने के लिये ३२ आषाढ़, १९५० वि० ( १६ जुलाई, १८९३ ई० ) का दिन नियत किया गया। उस दिन फिर सब लोग एकत्र हुए। उन प्रश्नों पर फिर बहुत वाद-विवाद हुआ। श्री श्यामसुंदरदास, श्री शंकरनाथ आदि चाहते थे कि सभा का नाम बदल दिया जाय और नए नाम के अनुसार उसका संघटन किया जाय तथा उसके लिये नियम भी बनाए जायँ। सर्वश्री रामनारायण मिश्र, शिवकुमार सिंह, उमरावसिंह, गोपालदास आदि का मत था कि सभा के नाम और उद्देश्यों में कोई परिवर्तन न होना चाहिए; नियमों में आवश्यक हो तो परिवर्त्तन कर लिया जाय। अंत में जो निश्चय हुआ उसका सारांश यह था—

( १ ) सभा का नाम 'नागरीप्रचारिणी सभा' ही रहे।

( २ ) इसके स्थापनकर्त्ता श्री गोपालप्रसाद माने जायँ।

( ३ ) उद्देश्य और नियम परिवर्त्तित तथा परिवर्द्धित किए जायँ।

( ४ ) सभा का जन्मदिन ३२ आषाढ़, सं० १९५० वि० (१६ जुलाई, १८९३ ई०) माना जाय।

( ५ ) श्री श्यामसुंदरदास सभा के मंत्री बनाए जायँ।

इसी निश्चय के अनुसार नागरीप्रचारिणी सभा का जन्म ३२ आषाढ़, १९५० वि० ( १६ जुलाई, १८९३ ई० ) माना जाता है। इससे पहले भी यद्यपि इसका नाम नागरीप्रचारिणी सभा ही था और हिंदी-हित-साधन के बीज इसमें विद्यमान थे, तथापि उस समय यह स्कूली छात्रों की वाद-समिति मात्र थी। सभा का जो रूप हम आज देख रहे हैं, वास्तव में उसका ढाँचा ३२ आषाढ़, १९५० ( १६ जुलाई, सन् १८९३ ई० ) की बैठक में ही बना। स्मरण रखने की बात है कि आयरलैंड में भी श्री डी० वेलेरा ने मातृ-भाषा का आंदोलन इसी वर्ष आरंभ किया था। जिस सभा ने गत ५० वर्षों में हिंदी भाषा और नागरी लिपि की इतनी बड़ी सेवा की है उसका श्रीगणेश इसी दिन हुआ। यही दिन वास्तव में सभा की प्राण-प्रतिष्ठा का दिन है। सभा वस्तुतः एक स्रोतस्वती है। जिस प्रकार कई स्रोतों के मिलने पर सरिता की धारा फूटती है उसी प्रकार इस साहित्य की स्रोतस्वती में भी एक स्रोत 'तिरपाट' के मिडिल स्कूल से आया, दूसरा श्री गोपालप्रसाद आदि के रूप में मिला, तीसरा श्री रामनारायण मिश्र आदि के साथ आया और चौथा श्री श्यामसुंदरदास आदि के रूप में आ मिला। ३२ आषाढ़, १९५० वि० ( १६ जुलाई, १८९३ ई० ) को इन स्रोतों के संगम ने साहित्य की इस सरिता नागरी-प्रचारिणी सभा का रूप धारण कर लिया जिसकी अखंड धारा अनेक भंगिमाओं के साथ बहती चली आ रही है।

इस महत्त्वपूर्ण अधिवेशन में जो सज्जन संमिलित हुए थे, उन सब के नाम मासिक चंदे सहित इस प्रकार हैं—

| | |
|---|---|
| ( १ ) श्री गोपालप्रसाद | । |
| ( २ ) श्री कन्हैयासहाय | =) |
| ( ३ ) श्री रामकृष्णदास | =) |
| ( ४ ) श्री जयकृष्णदास | ।।।) |
| ( ५ ) श्री रघुनाथप्रसाद | =) |
| ( ६ ) श्री श्यामसुंदरदास | =) |
| ( ७ ) श्री रामनारायण मिश्र | =) |
| ( ८ ) श्री शिवकुमारसिंह | -) |
| ( ९ ) श्री उमरावसिंह | -) |
| (१०) बाबा गंडासिंह | सहायक |
| (११) श्री भगतराम | -) |
| (१२) श्री शंकरनाथ | =) |

श्री श्यामसुंदरदास ने मंत्रिपद स्वीकार करते ही बड़ी लगन के साथ सभा के संघटन और सुव्यवस्था का कार्य आरंभ कर दिया। उनकी विद्या, बुद्धि और अथक परिश्रम की सहायता से सभा की चर्चा नगर के प्रौढ़ और प्रतिष्ठित विद्वानों में भी होने लगी। अब इस बात का अधिक उद्योग होने लगा कि भारतेंदुजी के अनुयायी तथा अन्य सभी हिंदी-हितैषी विद्वान् सभा में संमिलित किए जायँ। नगर के प्रतिष्ठित हिंदी-प्रेमी उस समय तक इस सभा को निरी बाल-सभा समझते थे; उसमें आते हुए संकोच करते थे। वे यह कहकर हँसते थे कि कहाँ इन बालकों की स्वल्प शक्ति और परिमित साधन और कहाँ सभा के महान् उद्देश्य। पर यह सब होते हुए भी कर्मठ नवयुवकों ने अपने उद्योग में शिथिलता नहीं आने दी। श्री कृष्ण-चंद्र ने श्री राधाकृष्णदास को सभा की ओर आकृष्ट

किया। उस समय काशी से 'भारतजीवन' नाम का साप्ताहिक पत्र निकलता था। उसमें एक लेख उपालंभ के रूप में भेजा गया। उसका आशय था कि नगर के हिंदी-हितैषी विद्वान् बालकों पर हँसें नहीं, न उनके साथ बैठने में संकोच करें। एक बार आएँ, उनका कार्य देखें, सहायता दें और उनके पथ-प्रदर्शक बनकर उन्हें उत्साहित करें। यह लेख पत्र में प्रकाशित तो नहीं हुआ, पर भारतजीवन प्रेस में उस पर बहुत चर्चा हुई। श्री श्यामसुंदरदास के उद्योग से श्री कार्त्तिकप्रसाद ने एक दिन सभा में आने का वचन दिया। इसी प्रकार महामहोपाध्याय श्री सुधाकर द्विवेदी और रायबहादुर श्री लक्ष्मीशंकर मिश्र को भी प्रेरित किया गया। फल यह हुआ कि इन लोगों ने सभा के कार्यों में अभिरुचि दिखाना आरंभ कर दिया। इस प्रकार सभा को अपनी शैशवावस्था में ही सर्वश्री राधाकृष्णदास, महामहोपाध्याय सुधाकर द्विवेदी, रायबहादुर लक्ष्मीशंकर मिश्र, डाक्टर छन्नूलाल और रायबहादुर प्रमदादास मित्र जैसे हिंदी-हितैषी प्रतिष्ठित विद्वान् पथ-प्रदर्शक के रूप में प्राप्त हो गए। धीरे धीरे सभा अपनी ओर भारत भर के हिंदी-प्रेमियों का ध्यान खींचने लगी। सर्वश्री महामना मदनमोहन मालवीय, कालाकाँकर-नरेश राजा रामपालसिंह, राजा शशिशेखर राय, कांकरौली-नरेश महाराज बालकृष्णलाल, अंबिकादत्त व्यास, बदरीनारायण चौधरी, राधाचरण गोस्वामी, श्रीधर पाठक, ज्वालादत्त शर्मा (लाहौर), नंदकिशोरदेव शर्मा (अमृतसर), कुँवर जोधसिंह मेहता (उदयपुर), समर्थदान (अजमेर), डाक्टर ग्रियरसन आदि जैसे अनेक लब्ध-प्रतिष्ठ विद्वानों ने पहले ही वर्ष सभा की संरक्षकता और सदस्यता स्वीकार कर ली।

सभा ने आरंभ में ही जिन कार्यों को अपने हाथ में लेने का विचार किया उनमें से कुछ ये हैं—

(१) हिंदी की प्राचीन हस्तलिखित पुस्तकों की खोज कराना।
(२) हिंदी के एक बड़े कोश का निर्माण कराना।
(३) प्रमुख हिंदी लेखकों और पत्र-संपादकों के जीवन-चरित तैयार कराना।
(४) हिंदी हस्त-लिपि की परीक्षा आरंभ करना।
(५) हिंदी भाषा के इतिहास का निर्माण कराना।
(६) हिंदी उपन्यासों का इतिहास लिखाना।
(७) भारतवर्ष का इतिहास तैयार कराना।
(८) यात्राओं के वर्णन तैयार कराना।
(९) हिंदी भाषा के सामयिक पत्रों का इतिहास लिखाना।
(१०) विज्ञान-संबंधी भिन्न भिन्न विषयों के ग्रंथ लिखाना।
(११) हिंदी के प्राचीन पद्य-ग्रंथों का प्रकाशित कराना।

इस प्रकार सभा ने हिंदी की ठोस सेवा करने का उद्योग स्थापना के प्रथम वर्ष से ही आरंभ कर दिया और इस पथ पर पूर्ण वेग से अग्रसर हो चली। एक के पूरे होने के पहले ही दूसरा महत्त्वपूर्ण काम हाथ में लिया जाने लगा। कार्यों की यह शृंखला आज तक अटूट चली आ रही है। आर्यभाषा पुस्तकालय, सभा का अपना विशाल भवन, वैज्ञानिक कोश, हिंदी-शब्दसागर, हिंदी-व्याकरण, पृथ्वीराज रासो, खोज के द्वारा सहस्रों हस्तलिखित ग्रंथों का उद्धार, नागरीप्रचारिणी पत्रिका, हिंदी हस्त-लिपि-परीक्षा, सरस्वती, संकेत-लिपि-विद्यालय, हिंदी-साहित्य संमेलन, अदालतों, विश्वविद्यालयों और अहिंदी प्रांतों

में हिंदी-प्रचार, भारतकला-भवन, कई पदक और पुरस्कार, पुस्तकमालाएँ, उनकी स्थायी निधियाँ, सभा का स्थायी कोश, हिंदी-साहित्य का इतिहास और 'हिंदी' पत्रिका इस शृंखला की कड़ियाँ हैं।

सभा की स्थापना में यद्यपि अनेक छात्रों ने योग दिया था, पर दो-तीन वर्ष बीतते न बीतते यह छात्र-मंडली बिखरने लगी। कोई कहीं चला गया कोई कहीं। श्री उमरावसिंह एलिचपुर ( मध्य प्रांत ) चले गए, श्री रामसूरत मिश्र पढ़ना छोड़कर घर पर रहने लगे, श्री शिवकुमारसिंह ट्रेनिंग स्कूल में पढ़ने के लिये लखनऊ गए, श्री गोपालप्रसाद दिल्ली पहुँचे और श्री रामनारायण मिश्र जौनपुर चले गए। केवल श्री श्यामसुंदरदास ही उस समय सभा के संचालन में तत्पर रहे। बाहर चले जाने पर भी अधिकांश सदस्यों ने सभा के साथ संबंध बनाए रखा। श्री श्यामसुंदरदास के अतिरिक्त श्री शिवकुमारसिंह और श्री रामनारायण मिश्र ये ही दो सज्जन ऐसे हैं जो सभा की स्थापना से लेकर अब तक बराबर सभा के सदस्य हैं। सभा के साथ इन तीनों सज्जनों का संबंध विगत ५० वर्षों में कभी टूटा नहीं और ये अखंड रूप से सभा की सक्रिय सेवा करते आ रहे हैं। इस त्रिमूर्ति ने सभा का पालन-पोषण अपनी संतान के समान किया है; अनेक कठिनाइयों से इसे उबारा है। इसलिये ये तीनों सभा के संस्थापक ही नहीं, पालन-कर्त्ता भी हैं। इसी कारण सभा के संस्थापक होने का श्रेय इस त्रिमूर्ति को ही प्राप्त है। इन तीनों महानुभावों का परिचय अन्यत्र दिया गया है, जिससे प्रकट होगा कि ये तीनों ही शिक्षा-क्षेत्र के अनुभवी और सफल कार्यकर्त्ता रहे हैं। नागरीप्रचारिणी सभा के अतिरिक्त इनका समस्त जीवन शिक्षा-क्षेत्र में ही व्यतीत हुआ है।

---

## २—उद्देश्य और नियम

सभा की स्थापना का इतिहास पहले अध्याय में बताया जा चुका। उसके उद्देश्यों और नियमों का भी इतिहास देना आवश्यक है। उद्देश्यों और नियमों के पुराने और नए रूपों को देखकर पाठक यह भी जान सकेंगे कि सभा का संचालन कैसे सुनियंत्रित और सुव्यवस्थित रूप में हुआ, किस प्रकार वह दिन-दिन उन्नति के पथ पर अग्रसर हुई और अपने उद्देश्यों की पूर्त्ति के लिये किस प्रकार समय-समय पर विचारपूर्ण नियमों का निर्माण करती रही। उद्देश्यों और नियमों के संशोधन तथा परिवर्धन सभा की प्रगति के बड़े अच्छे परिचायक हैं। इनसे सभा के संचालकों और कार्य-कर्त्ताओं की लगन, अध्यवसाय और विवेकशीलता का पता चलता है।

श्री जीवनदास के नीचीबागवाले अस्तबल के ऊपरवाले कमरे में ३२ आषाढ़, १९५० वि० ( १६ जुलाई, १८९३ ई० ) की बैठक में उपस्थित समस्त सभासदों की संमति से सभा ने आवश्यक नियमों का निर्माण आरंभ किया और जब तक वे बन न जायँ तब तक के लिये श्री श्यामसुंदरदास को सभा का मंत्री नियत किया।

सभा की इस बैठक में १२ सदस्य उपस्थित थे, जिनके नाम 'स्थापना' वाले अध्याय में दिए जा चुके हैं। इन सदस्यों ने मिलकर सर्वसंमति से उस दिन जो उद्देश्य और नियम बनाए वे अविकल रूप में इस प्रकार हैं—

### उद्देश्य

१—यह सभा नागरी ( हिंदी ) प्रचारिणी सभा के नाम से पुकारी जायगी।

२—इस सभा का मुख्य उद्देश्य नागरी भाषा की उन्नति करना होगा, जिसके हेतु सभा को निम्नलिखित प्रबंधों पर अवश्य ध्यान देना होगा—

(क) इस सभा के सभासदों का मुख्य कर्त्तव्य नागरी भाषा का सीखना और उसी भाषा में वार्त्तालाप तथा पत्र-व्यवहार और अपने मित्रवर्गों को उसी भाषा की उन्नति में प्रस्तुत करना होगा।

(ख) इस सभा के सभासदों को अन्य भाषा की पुस्तकों को नागरी भाषा में उलथा करना व कराना भी होगा।

(ग) इस सभा के सभासदों को हिंदी समाचार-पत्रों में प्राय: हिंदी भाषा की उन्नति के विषय में लेख लिखने होंगे।

(घ) इस सभा के सभासदों को भारतवर्ष के अन्य स्थानों में भी नागरीप्रचारिणी सभाओं को स्थापित करना होगा।

(ङ) इसको भारतवर्ष की अन्य २ सभाओं से भी हिंदी-प्रचारार्थ पत्र-व्यवहार करना होगा।

(च) इस सभा के सभासदों का उद्देश्य एकता का फैलाना भी होगा।

नियम

१—( क ) इस सभा के तीन अधिवेशन हुआ करेंगे, साप्ताहिक, त्रिमासिक और वार्षिक।

( ख ) किसी योग्य पुरुष के आ जाने वा किसी ऐसे कारण के उपस्थित होने से और सभा के उचित समझने पर नैमित्तिक सभा भी हो सकती है।

२—इस सभा का साप्ताहिक अधिवेशन प्रति शनिवार को हुआ करेगा जिसमें गत सप्ताह की संक्षिप्त कार्यवाही का सुनाना, राजनैतिक और धर्म-संबंधी विषयों को छोड़ नियत विषय पर नियमानुसार विवाद हुआ करेगा।

३—इस सभा के निम्नलिखित अधिकारी होंगे—सभापति, मंत्री, उपमंत्री और कोशाध्यक्ष।

४—इस सभा में प्रत्येक पुरुष मंत्री के पास निवेदन-पत्र लिखने पर सभासद् बन सकता है।

५—प्रत्येक सभासद् को कम से कम एक आना मासिक देना होगा।

जो मासिक न देवेंगे वे इसके सहायक समझे जाएँगे।

६—सभा अपने में से प्रबंधकर्त्ता व अधिकारियों को बना सकती है।"

३२ आषाढ़, १९५० वि० की बैठक में इतने ही नियम बन सके थे। इसके उपरांत ७ श्रावण, १९५० वि० ( २३ जुलाई, १८९३ ई० ) की बैठक में और नियम बनाए गए जो अविकल रूप में इस प्रकार हैं—

"७—इस सभा में प्रत्येक सभासद् को नीच शब्दों को कहना वा किसी पुरुष की भाषा और चाल-व्यवहार पर कटाक्षों को करना या किसी संकेत से ऐसी बातों का प्रकट करना जिससे प्रेम-भाव घटकर शत्रुता प्रबल हो न करना होगा। ऐसा करने पर सभा की सूचनानुसार उसे सभा से क्षमा माँगनी होगी।

८—प्रत्येक सभासद् तथा कार्यकर्त्ता को उचित है कि नियत समय पर सभा-भवन में उपस्थित रहे।

९—इस सभा के प्रत्येक सभासद् को सर्वसाधारण नियमों में स्वतंत्र और सभा के उन्नतिदायक नियमों में परतंत्र रहना होगा।

१०—इस सभा का कोई नियत सभापति न होगा। प्रत्येक अधिवेशन में यथायोग्य चुन लिया जायगा।

११—सभापति को अधिवेशन के समय-विभाग पर उचित रीति से ध्यान देना होगा और नियमों के विरुद्ध कोई काम न होने देना होगा। सभा-समय के बीच सभापति की आज्ञा अंतिम समझी जायगी यदि सभासदों का अधिकांश उस आज्ञा के विरुद्ध न होगा।

१२—( क ) मंत्री का कार्य प्रत्येक सप्ताह की संक्षिप्त कार्यवाही का लिखना और उसे प्रत्येक सभा में पढ़ना होगा।

( ख ) प्रत्येक सूचना को समाचारपत्रों में भेजना, जिसके विषय में प्रबंधकर्तृणी वा साधारण सभा ने बहु पक्षांश निराकरण किया हो।

( ग ) सभा के प्रत्येक अधिवेशन का यथा-नियम विज्ञापन देना होगा।

( घ ) मंत्री को अधिकार होगा कि यदि किसी समय पर साधारण सभा का अधिवेशन होना उचित समझे और प्रबंधकर्तृणी

सभा का होना असंभव हो तो प्रबंध-
कर्तृणी सभा के दो सभासदों की सम्मति
ले उस काम को करे।

(ङ) मंत्री को उपमंत्री और कोशाध्यक्ष के
कामों को भी देखना होगा।

(च) प्रत्येक अधिवेशन और समय पर मंत्री
को इस बात पर ध्यान देना होगा कि
किसी प्रकार से सभा की हानि न हो।
और यदि कोई ऐसा कारण देख पड़े
और यदि सभा का होना उस काल में
असंभव हो तो प्रबंधकर्तृणी सभा के कम
से कम दो सभासदों की सम्मति से उसका
प्रतिकार करे।

(छ) मंत्री बिना प्रबंधकर्तृणी सभा की आज्ञा
के दो आना खर्च कर सकता है।

१३—उपमंत्री मंत्री की अनुपस्थिति में सब कार्यों
को सँभालेगा और मंत्री को आवश्यक कार्यों
में उसकी प्रेरणानुसार सहायता देगा।

१४—कोशाध्यक्ष को सभा के सब आय-व्यय का
यथोचित हिसाब रखना और प्रबंधकर्तृणी
सभा की आज्ञानुसार यथासमय मंत्री को
दिखाना और प्रबंधकर्तृणी सभा में जिस कार्य
के लिये जितना धन स्वीकृत हो बिना मंत्री के
हस्ताक्षर के न देना और जो धन बाहर से आवे
उसका स्वीकारपत्र भेजना और धन को भले
प्रकार से रक्षित रखना, जिसके नष्ट होने पर
वही उत्तरदाता होगा।"

७ श्रावण, १९५० वि० (२३ जुलाई, १८९३)
की बैठक में सभा के नियमों के निर्माण का कार्य पूरा
कर दिया गया और प्रबंधकारिणी सभा के नियम
बनाने के लिए २९ जुलाई, १८९३ को सभा करने का
निश्चय हुआ। तदनुसार सभा की गई और उसमें
प्रबंधकारिणी सभा के जो नियम बनाए गए वे अवि-
कल रूप में इस प्रकार हैं—

"१—इस सभा संबंधी एक प्रबंधकर्तृणी सभा होगी,
जिसके अधिकारी निम्नलिखित तीन प्रकार के
होंगे—(१) वे लोग जो प्रधान मंत्री, उपमंत्री
आदि चुने जाएँगे, (२) प्रतिष्ठित जन जो किसी
विशेष गुण वा विद्या के कारण योग्य समझे जावें
परंतु समस्त सभा में एक तृतीयांश से अधिक
न होंगे, (३) प्रतिनिधि कि जिनको उन उनके
समुदाय नियुक्त करेंगे।

२—इस सभा की चुनाई प्रति तीन मास हुआ
करेगी जिसमें सम्मति देने का अधिकार सर्व
सभासदों को होगा। परंतु प्रतिनिधि चुनने
का अधिकार मासिक देनेवालों के व्यतिरिक्त
और किसी को न होगा और इस सभा के
अधिकारी और प्रतिनिधि सभासदों के वास्ते
लिखित सम्मति ली जायगी।

३—जो पुरुष कुछ भी मासिक नहीं देते वे अधि-
कारी कदापि नहीं हो सकते।

४—इस सभा को अधिकार होगा कि किसी पुरुष
के दुष्टाचरण इत्यादि के सत्य समाचार पाकर
बहु पक्षांश सभा से पृथक् कर दे।

५—इस सभा का पाक्षिक अधिवेशन हुआ करेगा
और कम से कम आधे सभासदों की उपस्थिति
में कार्यवाही प्रारंभ होगी और मान्य समझी
जायगी।

६—इस सभा को आवश्यक होगा कि सभासदों,
अधिकारियों तथा साधारण सभाओं के कार्यों

पर ध्यान दे कि इसको किसी प्रकार की हानि न होवे। अन्यथा होने पर यही सभा उत्तरदातृ समझी जावेगी।"

इसके अनंतर ७ माघ, १९५० वि० (२० जनवरी, १८९४) की बैठक में कई अन्य सभाओं की नियमावलियाँ देखकर श्री राधाकृष्णदासजी आदि सभ्यों के विचारानुसार सभा की नियमावली में संशोधन किए गए और इसकी प्रतियाँ पत्रों में प्रकाशनार्थ भेज दी गईं। ये संशोधित नियम इस प्रकार थे—

"१—यह सभा नागरीप्रचारार्थ स्थापित हुई है, अतएव इसका नाम नागरी-प्रचारिणी सभा रखा गया और इसका पाक्षिक अधिवेशन हिंदी भाषा के पुनर्जन्मदाता भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्रजी के स्कूल में प्रत्येक प्रतिपदा को ४॥ बजे हुआ करेगा।

२—इस सभा का मुख्य कर्त्तव्य—

(क) हिंदी भाषा की त्रुटियों को दूर करना,

(ख) हिंदी को उत्तम और आवश्यक विषयों के ग्रंथों से अलंकृत करना (नवीन ग्रंथ अथवा दूसरी भाषाओं के अनुवाद द्वारा) और

(ग) हिंदी भाषा के प्रचार तथा उचित अधिकार पाने के लिये सरकार तथा एतद्देशीय और परदेशीय सज्जनों में उद्योग करना।

३—इस सभा के सभासद् हिंदी भाषा के रसिक मात्र हो सकते हैं। जिन महाशयों को सभासद् होने की इच्छा हो, वे पत्र द्वारा अथवा किसी सभासद् द्वारा अपनी इच्छा प्रकट करने पर सभासद् हो सकते हैं। सभा को यह भी अधिकार होगा कि हिंदी भाषा के प्रसिद्ध रसिकों में से जिनको चाहे उनसे सभासद् बनने के लिये प्रार्थना करे।

४—सभासदों के कर्त्तव्य ये होंगे—

(क) सभा की सहायता द्रव्य से मासिक, वार्षिक अथवा एककालीन, यथारुचि करना।

(ख) यथासंभव हिंदी भाषा प्रचारार्थ तन मन धन से चेष्टा करना।

(ग) हिंदी भाषा के प्राचीन कवियों के जीवन-चरित्र तथा उत्कृष्ट ग्रंथों की समालोचना द्वारा उनके गुणों को स्पष्ट करके दर्साना; गद्य, पद्य, नाटक, उपन्यास, इतिहास, समाचारपत्रादि का इतिहास इत्यादि आवश्यक विषयों पर लेख लिखकर सभा में उपस्थित करना और सुंदर सुंदर ग्रंथों से हिंदी भाषा के भंडार को भरना।

(घ) जो पुस्तक सभा प्रकाशित करेगी वा जिसके छपने की सभा आज्ञा देगी उसकी एक एक प्रति सब सभासदों को अवश्य खरीदना होगा।

५—जो ग्रंथकर्त्ता लोग अपने ग्रंथ सभा में कृपापूर्वक भेजेंगे उन पर विचारपूर्वक समालोचना लिखी जायगी और वार्षिकोत्सव के अवसर पर सबको योग्यतानुसार प्रशंसापत्र दिया जायगा। समयानुसार पारितोषिक देकर उत्तम उत्तम ग्रंथों के बनवाने का भी उद्योग किया जायगा।

६—इस सभा में कोई विषय राजनैतिक वा धर्म्मसंबंधी न लिया जायगा।"

२ कार्तिक, १६५१ ( १६ अक्तूबर, १८६४ ई० ) को प्रबंधकारिणी सभा ने पुराने नियमों पर पुन: विचार किया और कुछ नए नियम भी बनाए। फिर ये नियम साधारण सभा की ४ कार्तिक, १६५१ वि० ( २१ अक्तूबर, १८६४ ई० ) की बैठक में उपस्थित किए गए और काफी बहस के बाद निम्नलिखित नियम स्वीकृत हुए—

**नाम—**

१—इस सभा का नाम "नागरीप्रचारिणी सभा" रखा गया और इसका पाक्षिक अधिवेशन प्रति द्वितीय चंद्रवार को संध्या के ५ बजे हुआ करेगा।

**उद्देश्य—**

२—इस सभा का मुख्य कर्त्तव्य—

( क ) हिंदी भाषा की त्रुटियों को दूर करना,

( ख ) हिंदी भाषा को उत्तम और आवश्यक विषयों के ग्रंथों से ( नवीन अथवा दूसरी भाषा के अनुवाद द्वारा ) अलंकृत करना,

( ग ) हिंदी भाषा के प्रचार तथा उचित अधिकार पाने के लिये सरकार तथा एतद्देशीय और परदेशीय सज्जनों में उद्योग करना और

( घ ) समय समय पर पारितोषिक देकर हिंदी पढ़ने तथा जाननेवालों का उत्साह बढ़ाना।

**सभासद्—**

३—इस सभा के सभासद् हिंदी भाषा के प्रेमी मात्र हो सकते हैं। जिन महाशयों को सभासद् होने की इच्छा हो वे स्वीकारपत्र ( यह मंत्री के पास से प्रत्येक पुरुष को मिल सकता है ) पर हस्ताक्षर कर मंत्री के पास भेजने से सभासद् हो सकते हैं।

४—किसी महाशय के सभासद् नियत होने पर मंत्री द्वारा उन्हें इस बात की सूचना दी जायगी कि अमुक तिथि के अधिवेशन में आप सभासद् नियत किए गए। और उनके पास एक प्रति नए नियमों की भेज दी जायगी।

५—सभासदों के कर्त्तव्य ये होंगे—

( १ ) सभा की सहायता द्रव्य द्वारा यथारुचि वार्षिक चन्दे ( यह एक रुपये से कम न होगा ) से करना। यह चंदा सभासदों को विज्ञापन पाने के उपरांत एक मास के भीतर देना चाहिए।

( २ ) यथासंभव हिंदी-प्रचारार्थ तन-मन-धन से यत्न करना और

( ३ ) हिंदी भाषा के नवीन व प्राचीन कवियों के जीवनचरित्र तथा उत्कृष्ट ग्रंथों की समालोचना द्वारा उनके गुणों को स्पष्ट करके दर्साना; गद्य, पद्य, नाटक, उपन्यास, इतिहास आदि आवश्यक विषयों पर लेख लिखकर सभा में उपस्थित करना और सुंदर सुंदर ग्रंथों स हिंदी भाषा के भंडार को भरना।

६—प्रत्येक सभासद् को अपना वार्षिक चंदा अगस्त मास में प्रति वर्ष देना होगा। जो महाशय वर्ष के बीच में सभासद् होंगे उनसे उनके सभासद् नियत होने की तिथि से अगस्त मास तक का ही चंदा लिया जायगा।

७—जो सभासद् तीन रुपया वार्षिक चंदा देंगे उन्हें उनके सभासद् नियत होने की तिथि से जितनी पुस्तकें व कागज़ सभा की ओर से प्रकाशित होंगे बिना मूल्य के दिये जायँगे और जो सभासद्

तीन रुपये से कम वार्षिक देंगे उनको पुस्तकादि देने का प्रबंध समय-समय पर प्रबंधकारिणी सभा करेगी।

**प्रबंधकर्त्तागण--**

८--इस सभा के प्रबंधकर्त्तागण ये होंगे--एक सभापति, दो उपसभापति, एक मंत्री, एक सहायक मंत्री, एक उपमंत्री और एक कोशाध्यक्ष।

**सभापति--**

९--सभापति के अधिकार और कर्त्तव्य ये होंगे--

( १ ) सभा के प्रत्येक अधिवेशन में उपस्थित हो सभापति का आसन ग्रहण करना और उसकी कार्यवाही पर ध्यान रखना।

( २ ) नियम के विरुद्ध किसी कार्य को न होने देना।

( ३ ) प्रत्येक सभा का, जो किसी विशेष कार्य के लिये नियत की जायगी, सभ्य होना।

**उपसभापति--**

सभापति की अनुपस्थिति में उपसभापति उनका सब कर्त्तव्य करेंगे।

**मंत्री--**

१०--मंत्री के अधिकार और कर्त्तव्य ये होंगे--

( १ ) सभा संबंधी पत्र-व्यवहार आदि करना।

( २ ) सभा के प्रत्येक अधिवेशन में उपस्थित होना, उसकी कार्यवाही लिखना और सभा के आरंभ में उसे पढ़ना।

( ३ ) गत पक्ष में जो पत्रादि आए हों और जो उत्तर आदि सभा की ओर से गए हों उन्हें सभा के आरंभ में उपस्थित करना।

( ४ ) प्रत्येक पत्र और सभा संबंधी कागज को रक्षापूर्वक रखना।

( ५ ) सभा के प्रत्येक कार्य पर ध्यान रखना।

( ६ ) प्रत्येक सभा का, जो किसी विशेष कार्य के लिये समयानुसार नियत की जायगी, सभ्य होना।

**सहायक मंत्री और उपमंत्री--**

सहायक मंत्री और उपमंत्री के कार्य, मंत्री को सहायता देना, पुस्तकालय का प्रबंध करना और मंत्री की अनुपस्थिति में उनके सब कार्यों को करना, हैं।

११--यदि ऐसे समय में जब कि न साधारण और न प्रबंधकारिणी सभा हो सकती है, कोई कार्य आवश्यक आ जाय तो मंत्री को अधिकार होगा कि सभापति अथवा दोनों उपसभापति की सम्मति द्वारा उस कार्य का निर्वाह करे।

**कोशाध्यक्ष--**

१२--कोशाध्यक्ष को सभा के आय-व्यय का पूरा पूरा हिसाब रखना होगा। इसमें किसी प्रकार की गड़बड़ होने से कोशाध्यक्ष उत्तरदाता समझे जायँगे।

**दर्शक--**

१३--दर्शकों को बिना सभापति की आज्ञा के विषय चुनने वा नियमादि बनाने में सम्मति देने का कोई अधिकार न होगा।

**प्रबंधकारिणी सभा--**

१४--इस सभा संबंधी एक प्रबंधकारिणी सभा होगी जिसके सभासद् सभापति, दोनों उपसभापति, मंत्री और ६ अन्य अन्य नगरस्थ सभासद् होंगे जो प्रतिवर्ष सामान्य सभा के सभ्यों में से चुन

लिए जाया करेंगे। इस सभा का अधिवेशन प्रतिमास के प्रथम सप्ताह में हुआ करेगा। आवश्यकतानुसार बीच में भी इस सभा के अधिवेशन हो सकते हैं।

१५—प्रबंधकारिणी सभा के निम्नलिखित अधिकार और क व्य होंगे :—

(१) सभा का पूरा पूरा प्रबंध करना, आवश्यकतानुसार ऐसे नियम बनाना जिनसे सभा का उद्देश्य साधन हो।

(२) सभा के आय-व्यय का हिसाब देखना और समयानुसार व्यय करने की आज्ञा प्रदान करना।

(३) सभा के कागज और पुस्तकों आदि के छपने का प्रबंध करना।

(४) प्रत्येक वर्ष का विवरण आदि तैयार करना।

(५) यदि कोई प्रबंधकर्त्ता वा सभासद् कोई ऐसा निंदनीय कार्य करे जिससे सभा को हानि हो वा उसका किसी प्रकार से उपहास हो तो उसको अपने पद से च्युत करने वा उस पर विचार करने का अधिकार भी इसी सभा को होगा।

१६—इस सभा में कोई विषय राजनैतिक व धर्म संबंधी न लिया जायगा।

१७—साधारण सभा में ५ सभ्यों के एकत्रित होने पर और प्रबंधकारिणी सभा में ३ सभ्यों के एकत्रित होने पर सभा का काम आरंभ कर दिया जायगा।

१८—सभा का कार्य नियत समय पर आरंभ हो जायगा और यदि उस समय तक सभापति वा उपसभापति उपस्थित न हों तो १५ मिनट तक उनका आसरा देखकर सभा का कार्य आरंभ कर दिया जायगा।

१९—प्रत्येक विषय के विचार की स्थिरता निर्वाचन (वोट) द्वारा होगी। सभ्यों में समान विभाग होने पर सभापति का निश्चय अंतिम निश्चय समझा जायगा।

२०—जो पुस्तक सभा निज व्यय से प्रकाशित करेगी उसकी कितनी प्रतियाँ ग्रंथकार को दी जायँगी और सभा को उस पुस्तक के स्वत्व पर क्या अधिकार होगा यह प्रबंधकारिणी सभा निश्चित करेगी।

२१—जो ग्रंथकर्त्ता महाशय कृपा कर अपनी बनाई पुस्तक सभा में समालोचनार्थ भेजेंगे उनपर यथोचित समालोचना की जायगी।

२२—यह सभा समय-समय पर द्रव्यादि देकर भी पुस्तक लिखाएगी।

२३—इस सभा संबंधी पुस्तकालय का नाम 'नागरी-भंडार' होगा।

२४—इस पुस्तकालय की पुस्तकों और समाचारपत्रों को सर्व साधारण पुस्तकालय में आकर देख सकते हैं।

२५—नागरीप्रचारिणी सभा के सभासद् पुस्तक तथा समाचारपत्र घर भी ले जा सकते हैं।

(क) एक साथ दो पुस्तकें १५ दिन के लिये दी जायँगी।

(ख) दैनिक पत्र दो दिन तक, साप्ताहिक पत्र एक सप्ताह तक और मासिक एक महीने तक पुस्तकालय में रखने के पीछे दिए जायँगे। विदित रहे कि इनको दो दिन के भीतर लौटा देना चाहिए।

२६—जो महाशय केवल पुस्तकालय से संबंध रक्खेंगे अर्थात् सभा के सभासद् न होंगे उन्हें ।) आना मासिक चंदा देना होगा। पुस्तकालय के संबंध में उन्हें भी वही अधिकार रहेंगे जो सभा के सभासदों को हैं।

२७—जो महाशय कोई पुस्तक ले जायँगे और खो देंगे उन्हें उस पुस्तक का मूल्य देना होगा। और जो उसे बिगाड़ देंगे उसे ठीक बनवा देना या बदलवा देना होगा।

२८—हाथ की लिखी और अलभ्य पुस्तकें पुस्तकालय के बाहर किसी को न दी जायँगी। ऐसी पुस्तकों पर सूची में चिह्न कर दिया जायगा।

२९—जो महाशय पुस्तकालय को धन अथवा पुस्तकों से सहायता देंगे उन्हें सभा की ओर से रसीद दी जायगी और उनकी उदारता का उल्लेख धन्यवादपूर्वक सभा के वार्षिक विवरण में किया जायगा।

३०—सभा को आवश्यकतानुसार इन नियमों के घटाने बढ़ाने का भी अधिकार है।"

ऊपर के इस विवरण से स्पष्ट है कि आरंभ में यह सभा हिंदी-प्रेमी बालकों की वाद-विवाद-संबंधिनी संस्था के रूप में चली और समय समय पर ज्यों ज्यों बड़े बड़े लोग इसमें सम्मिलित होते गए और इसके कार्य का विस्तार होता गया त्यों त्यों इसके नियमों में परिवर्तन होता गया। आरंभिक अवस्था के परिचायक इन नियमों का महत्व इसी में है कि ये इस बात को स्पष्ट करते हैं कि कैसे यह सभा बालकों की वाद-विवाद संबंधिनी संस्था से आगे बढ़ी और इसने अपना महत्वपूर्ण नया रूप धारण किया।

इस प्रकार ये नियम प्रयोग में आने लगे और सभा का कार्य चल पड़ा। आगे चलकर आवश्यकतानुसार यथासमय नए नियम बनाए गए अथवा उनका संशोधन या परिवर्धन समय समय पर होता रहा।

२४ आश्विन, १९७५ वि० (१० अक्तूबर, १९१८) के विशेष अधिवेशन में श्री शिवप्रसाद गुप्त के प्रस्ताव और श्री रामचंद्र वर्मा के अनुमोदन पर पुनः यह निश्चय किया गया कि

"नियमावली पर फिर से विचार करके नियमों के परिवर्तन के संबंध में अपनी सम्मति देने के लिये निम्नलिखित सज्जनों की समिति बनाई जाय—बाबू श्यामसुंदरदास बी० ए०, बाबू गौरीशंकरप्रसाद बी० ए०, एल-एल० बी०, पंडित गोविंद राव जोगलेकर, पंडित रामनारायण मिश्र बी० ए०, बाबू शिवप्रसाद गुप्त, बाबू हरिहरनाथ बी० ए०, बाबू रामचंद्र वर्मा, बाबू वेणीप्रसाद, बाबू श्रीप्रकाश बी० ए०, बैरिस्टर, और बाबू रामदास गौड़ एम० ए० (संयोजक)।"

२२ मार्गशीर्ष, सं० १९७५ वि० (८ दिसंबर, १९१८) से २५ मार्गशीर्ष, सं० १९७५ वि० (११ दिसंबर, १९१८) तक इस समिति की बैठक होती रही। समिति ने जिन संशोधनों का प्रस्ताव किया वे १० फाल्गुन, १९७५ वि० (२२ फर्वरी, १९१९) की साधारण सभा में उपस्थित किए गए, जिसमें निश्चय हुआ कि

"यह प्रस्तावित नियमावली नागरी-प्रचारिणी पत्रिका में प्रकाशित करके सभासदों की सम्मति माँगी जाय और तब आए हुए प्रस्ताव सहित किसी विशेष अधिवेशन में उपस्थित की जाय।"

इस बीच प्रबंधकारिणी समिति ने भी अपनी ३०,३१ ज्येष्ठ और २ आषाढ़, १९७६ वि० (१३,१४,१६

जून, १६१६ ) की बैठकों में प्रस्तावित नियमावली पर विचार करके उसके संबंध में अपनी सूचनाएँ तैयार कर ली थीं। तदनंतर नियम संशोधन-समिति की प्रस्तावित नियमावली तथा प्रबंधकारिणी समिति की भेजी हुई सूचना और बाहर से आई हुई संमतियों और सुधारों पर विचार करने के लिये साधारण सभा का एक विशेष अधिवेशन ७, ८ और ६ आषाढ़, १६७६ वि० ( २१, २२ और २३ जून, १६१६ ) तक होता रहा। इसमें गहरे वाद-विवाद और विचार-विमर्ष के उपरांत नई नियमावली स्वीकृत की गई और अलग पुस्तकाकार छापकर समस्त सभासदों के पास भेज दी गई। इस नियमावली में पुराना विषयानुक्रम बिलकुल बदलकर नया रखा गया। नए नियम के अनुसार सभा के कार्यों में ईसाई सन् की जगह विक्रमीय संवत् और सौर तिथियों का व्यवहार करना आवश्यक कर दिया गया। सभासदों का चंदा ३) तीन रुपये वार्षिक कर दिया गया और १।।) डेढ़ रुपयोंवाला वर्ग तोड़ दिया गया ( प्रबंधकारिणी समिति की १३, १४, १६ जून, १६१६ की कार्रवाई )।

इन संशोधनों के पश्चात् ५ वर्ष तक नियमों में फिर कोई परिवर्त्तन नहीं किया गया। १२ ज्येष्ठ, १६८१ वि० ( २५ मई, १६२४ ) के वार्षिक अधिवेशन, २१ चैत्र, १६८१ वि० ( ४ अप्रैल, १६२५ ) के विशेष अधिवेशन, १० ज्येष्ठ, १६८२ और १३ ज्येष्ठ, १६८५ ( २७ मई, १६२८ ) के वार्षिक अधिवेशनों में भी नियमों में संशोधन-प्रवर्धन किए गए।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि कभी सभा की संपत्ति की रक्षा के लिये, कभी अधिक आर्थिक सहायता देनेवाले सज्जनों के संमान और प्रतिष्ठित विद्वानों के आदर के लिये, कभी सभा के कार्यकलाप अधिक व्यापक बनाने और उसके कार्यों में अधिक से अधिक लोगों का सहयोग प्राप्त करने के लिये और कभी सभा के उद्देश्यों को अधिक व्यापक बनाने तथा उनकी पूर्ति के लिये एवं विघ्न-बाधाओं का निराकरण करने के लिये समय समय पर नियमों का परिवर्धन, संशोधन तथा नए नियमों का निर्माण किया गया। माघ, १९५० ( जनवरी, १८६४ ) में जो नियम बने और अब जो नियम प्रचलित हैं उनको परस्पर मिलाने से ऊपर लिखी बातें स्पष्ट हो जायँगी।

सभा की सं० १६६६ तक की संशोधित वर्तमान नियमावली इस प्रकार है—

## नाम, उद्देश्य * और अधिकार

१—इस सभा का नाम 'नागरीप्रचारिणी सभा' होगा।

२—इस सभा के उद्देश्य ये होंगे—

( क ) देश-विदेश में हिंदी भाषा और नागरी लिपि का प्रचार करना तथा उसे उचित अधिकार दिलाने के लिये उद्योग करना।

( ख ) हिंदी भाषा की उन्नति करना आवश्यक विषयों के ग्रंथों से उसे अलंकृत करना और उसके प्राचीन भांडार की रक्षा करना।

( ग ) हिंदी को शिक्षा का माध्यम बनाने का उद्योग करना।

( घ ) ऐसा संग्रहालय खोलना जिसके द्वारा हिंदी भाषा, नागरी लिपि तथा भारतीय संस्कृति की रक्षा और उन्नति हो।

---

* इस सभा की रजिस्ट्री 'दि सोसायटीज रजिस्ट्रेशन एक्ट, १८६०' अर्थात् सन् १८६० के एक्ट नं० २१ के अनुसार हुई है, अतः जहाँ किसी विषय पर कोई विशेष नियम नहीं है वहाँ उक्त विधान के नियम प्रयुक्त होंगे।

(ङ) अन्य ऐसे कार्य करना जो सभा के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये उपयुक्त और आवश्यक हों।

३—हिंदी भाषा तथा नागरी लिपि संबंधी प्रश्नों के अतिरिक्त इस सभा में राजनीतिक विषय वा मतमतांतर-संबंधी वाद-विवाद न किया जायगा।

अधिकार—

४—इस सभा को अधिकार होगा कि अपने उद्देश्यों की सफलता के लिए धन तथा स्थावर और जंगम संपत्ति एकत्र करे वा बढ़ाए, तथा बढ़ाने के लिये ही उनकी दशा वा प्रभुत्व में परिवर्तन करे, कंपनियों के हिस्से प्राप्त करे वा बेच दे, डिबेंचर ऋणों तथा प्रामिसरी नोट आदि धन-संबंधी कागजों का लेन-देन करे, तथा अन्य ऐसे व्यवहार करे जिनसे सभा की आर्थिक उन्नति होने के साथ ही उसके उद्देश्यों में किसी प्रकार की भी बाधा न पड़े।

५—इस सभा की समस्त आय और संपत्ति इसी सभा के उद्देश्यों की पूर्ति में लगाई जायगी। इसका कोई भाग उन लोगों को जो सभा के सभासद हैं वा रहे हों वा उनमें से किसी को वा उनके द्वारा किसी अन्य को किसी प्रकार के लाभ, आय, हिस्सा या और किसी रूप में नहीं दिया जायगा परंतु सभा के किसी नौकर अथवा किसी सभासद या किसी दूसरे मनुष्य को यदि वह सभा का कोई काम करे तो पुरस्कार या वेतन देने में यह नियम बाधा न डालेगा।

६—सभा की जो कुछ आय हो उस पर तथा समस्त संपत्ति पर साधारण सभा को पूर्ण अधिकार होगा कि उद्देश्यों की सिद्धि के लिये (क) उनका उपयोग करे, (ख) उनमें वृद्धि के उपाय करे, (ग) हानि से उनकी रक्षा करे और (घ) इन आवश्यकताओं तथा उद्देश्यों के अनुसार (१) संरक्षक, (२) कार्याधिकारी, (३) प्रबंधसमिति और (४) अन्य समितियों तथा उपसमितियों को चुने वा उनका संस्थान करे, (५) अधिवेशन करे और (६) नियमों की रचना तथा नियमों में परिवर्तन वा परि-वर्द्धन करे।

७—यदि सभा के धन वा संपत्ति के प्रबंध या प्रयोग में कोई हानि हो तो उसके लिये कोई एक सभा-सद उत्तरदाता न होगा जब तक कि वह हानि उसने जान बूझकर न की होगी।

८—यदि कभी इस सभा के उठ जाने पर सब लहना देना साफ करके कुछ संपत्ति वा धन बच जायगा तो वह सभा के सब सभासदों या उनमें से किसी एक को न दिया जायगा, वरन् वह किसी ऐसी दूसरी सभा या समाज को दे दिया जायगा जिसके उद्देश्य इस सभा के उद्देश्यों के समान होंगे। इसका निर्णय उन सभासदों में से कम से कम $\frac{3}{5}$ के सहमत होने पर होगा जो उस समय स्वयं या प्रतिनिधि द्वारा उपस्थित होंगे। यदि ऐसा न हो सका तो इसका निर्णय किसी ऐसे जज वा न्यायालय द्वारा होगा जिसको इसके संबंध में फैसला करने का अधिकार होगा। परंतु किसी विशेष दान की संपत्ति के दाता ने उसके संबंध में जो शर्तें रखी होंगी उनके अनुसार उस अंश के संबंध में निश्चय किया जायगा।

**स्थान और वर्ष—**

९—इस सभा का स्थान काशी होगा और इसका वर्ष विक्रम संवत् के सौर वैशाख मास में प्रारंभ होगा। सभा में इसी संवत् का व्यवहार होगा।

**जाँच—**

१०—इस सभा की समस्त स्थावर तथा जंगम संपत्ति की और आय-व्यय तथा हानि-लाभ की जाँच एक वा अधिक प्रामाणिक जाँचकर्ताओं द्वारा प्रति मास के अथवा प्रति वर्ष के अंत में हुआ करेगी। वार्षिक अधिवेशन में जो लेखा उपस्थित किया जायगा वह जाँचा हुआ तथा जाँचकर्ता के प्रमाणपत्र सहित होगा।

**मुखपत्र—**

११—इस सभा की एक मुखपत्रिका होगी जिसका नाम नागरीप्रचारिणी पत्रिका होगा, जो नियत समय पर प्रकाशित हुआ करेगी, जिसमें विविध विषय के गद्य-पद्यमय लेखों और समालोचनाओं के अतिरिक्त सभा की प्रगति तथा सभा संबंधी आवश्यक समाचार, सूचनाएँ आदि प्रकाशित हुआ करेंगी और जिसकी एक एक प्रति प्रत्येक सभासद के पास बिना मूल्य भेजी जाया करेगी। सभा संबंधी विषयों के अतिरिक्त अन्य लेखों की उत्तरदात्री सभा न होगी।

१२—इस सभा को अधिकार होगा कि अन्य समान उद्देश्योंवाली संस्थाओं से संबंध तथा सहकारिता करे, एक या अधिक पुस्तकालय वा वाचनालय स्थापित करे, पुस्तकें प्रकाशित करने और बेचने का प्रबंध करे, किसी विषय पर सुबोध व्याख्यान कराए और उपदेशक वा प्रतिनिधि-मंडल अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिये भेजे।

१३—सभा की ओर से जब कभी उपदेशक, प्रतिनिधि-मंडल वा एजेंट बाहर भेजे जायँगे तब उन्हें सभापति और प्रधान मंत्री दोनों के हस्ताक्षर और सभा की मुहर के साथ अधिकार-सूचक पत्र दिया जायगा जिसके बिना उन्हें सभा की ओर से कुछ कार्य करने वा धन एकत्र करने का अधिकार न होगा।

**स्थायी कोश—**

१४—इस सभा का एक स्थायी कोश होगा जिसमें (क) स्थायी सदस्य होने का चंदा, (ख) साधारण सदस्यों के चंदे की आय का कम से कम बीसवाँ अंश, (ग) स्थायी कोष के निमित्त ही दिया हुआ धन वा दान, तथा (घ) वार्षिक आय से बचा हुआ जो अंश प्रबंध-समिति दे सके, प्रतिवर्ष जमा हुआ करेगा।

१५—इस सभा के स्थायी कोश पर तथा उसकी स्थावर संपत्ति पर पूर्ण अधिकार साधारण सभा का होगा। साधारण सभा का यह कर्त्तव्य होगा कि इस कोश तथा संपत्ति से जो आय हो उसे सभा के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये ही व्यय करे। स्थायी कोश का मूलधन व्यय नहीं किया जायगा पर उसका व्याज मुख्यतः कार्यालय के खर्च में लगाया जायगा।

१६—स्थावर संपत्ति का रूपांतर तब तक न किया जायगा जब तक प्रबंध-समति के प्रस्ताव पर तथा सभा के विशेष अधिवेशन में उपस्थित सभासदों का कम से कम ⅔ भाग वैसा करने

की स्पष्ट आज्ञा और संमति न दे। इस संबंध में पत्र द्वारा भी संमति मान्य होगी।

नियम—

१७—साधारण सभा को अधिकार होगा कि समय समय पर प्रबंध-समिति, वा सात सभासदों के सहमत प्रस्ताव पर किसी नियम में परिवर्तन वा परिवर्द्धन करे वा नए नियम बनाए, परंतु यह संशोधन वा परिवर्द्धन पत्रिका में प्रकाशित होकर प्रबंध-समिति द्वारा संकलित किए जायगे और वार्षिक अधिवेशन में स्वीकृत होने पर उनका व्यवहार होगा और उनका समावेश नियमावली में किया जायगा।

१८—कार्यालय, पुस्तकालय तथा कलाभवन की व्यवस्था पर, पुस्तक प्रकाशन वा संपादन पर, परीक्षाओं वा पुरस्कार पर वा अन्य ऐसे विषयों पर, जिनके नियम नहीं बनाए गए हैं प्रबंध-समिति को अधिकार होगा कि उद्देश्यों की सीमा के भीतर ही सभा के नियमों के अनुकूल और अनुगामी उपनियम बनाए और प्रकाशित करे और साधारण सभा को अधिकार होगा कि यदि आवश्यक हो तो इन उपनियमों पर विचार करे और इनमें सुधार करे।

१९—जब कभी किसी नियम का परिवर्तन या परिवर्धन होगा तब प्रत्येक सभासद को नागरी-प्रचारिणी पत्रिका द्वारा उसकी सूचना दी जायगी।

## सभा का संघटन और उसके अंग—

### ( १ ) सभासद्—

२०—हिंदी भाषा और नागरी लिपि के प्रेमी मात्र जिनकी अवस्था १८ वर्ष से कम न हो, इस सभा के सभासद हो सकते हैं। ये सभासद पाँच प्रकार के होंगे।

प्रकार—

(क) 'साधारण सभासद' जिनकी संख्या अपरिमित रहेगी। काशी के रहनेवाले 'स्थानीय' और बाहर के रहनेवाले 'बाहरी' कहलाएँगे। इस श्रेणी के सभासदों को प्रति वर्ष कम से कम ३) वार्षिक चंदा देना होगा।

(ख) 'वाचस्पत्य सभासद'—जिनकी संख्या २१ होगी, वे सज्जन होंगे जिन्होंने हिंदी भाषा तथा साहित्य के निर्माण में स्थायी तथा प्रतिष्ठित कार्य किया हो। इन सदस्यों का निर्वाचन ऐसी प्रबंध-समिति की सर्वसम्मति से होगा जिसमें कम से कम १२ सदस्य उपस्थित होंगे।

( ग ) 'मान्य सभासद' जिनकी संख्या ५० से अधिक न होगी, वे ही सज्जन हो सकेंगे जो हिंदी भाषा और साहित्य की सेवा कर रहे हों या जिन्होंने हिंदी भाषा और साहित्य की सेवा की हो अथवा जिनसे सभा हिंदी भाषा वा अपने उपकार की कुछ विशेष आशा रखती हो और जो विद्या-बुद्धि और चारित्र्य के लिये प्रसिद्ध हों।

( घ ) 'स्थायी सभासद'—जिनकी संख्या अपरिमित होगी, वे ही महाशय परिगणित हो सकेंगे जो सभासद होने के लिये सभा को १००) वा उससे अधिक धन एक साथ वा एक वर्ष वा अधिक से अधिक दो वर्ष के भीतर देंगे।

( ङ ) 'विशिष्ट सभासद'—जिनकी संख्या अपरिमित होगी, वे ही महाशय कहलाएँगे जो सभा के किसी उद्देश्य की सफलता के लिए ५००) या उससे अधिक धन एक साथ वा एक वर्ष वा अधिक से अधिक दो वर्ष के भीतर देंगे।

जो सज्जन ५००) या अधिक की ऐसी संपत्ति देंगे जिसका सभा उपयोग कर सके वे भी विशिष्ट सभासद हो सकेंगे।

२१—सब श्रेणी के सभासदों को उनके सभासद होने के वर्षारंभ से सभा की मुखपत्रिका बिना मूल्य दी जायगी। पत्रिका के पुराने अंक और सभा द्वारा प्रकाशित अन्य पत्रिका तथा पुस्तकों की एक-एक प्रति विशिष्ट सभासद ½ मूल्य में, स्थायी सभासद ¾ मूल्य में तथा अन्य प्रकार के सभासद ¾ मूल्य में ले सकते हैं। परंतु प्रबंध-समिति को अधिकार होगा कि साधारण सभा की अनुमति से किसी विशेष पुस्तक को इस नियम के बाहर रखे।

## चुनाव—

२२—( क ) जिन महाशयों की सभासद होने की इच्छा हो उन्हें निम्नलिखित आशय के पत्र पर हस्ताक्षर कर उसे प्रधान मंत्री के पास भेजना होगा—

श्रीयुत प्रधान मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी।
महाशय,

मैं काशी नागरीप्रचारिणी सभा का सभासद होना चाहता हूँ। मैं हिंदी भाषा और नागरी लिपि का प्रेमी हूँ। मैं......रु० चंदे का भेजूँगा। / भेजता हूँ। मैंने सभा के उद्देश्य समझ लिए हैं और सभा के प्रति मेरी पूर्ण श्रद्धा और सहानुभूति है। यथासाध्य हिंदी भाषा और नागरी लिपि का स्वयं व्यवहार करूँगा और इनके प्रचारार्थ निरंतर उद्योग करता रहूँगा। मेरी अवस्था १८ वर्ष से कम नहीं है।

भवदीय—

तिथि.......... { नाम...................
पता...................

हमारी संमति में ये सभासद होने के योग्य हैं।

.........प्रस्तावकर्ता
सभासद, ना० प्र० सभा।

यह पत्र साधारण सभा में स्वीकारार्थ उपस्थित किया जायगा और किसी सभासद के प्रस्ताव पर तथा उपस्थित सभासदों की कम से कम ⅔ सम्मति से स्वीकृत होने पर उनका नाम सभासदों की श्रेणी में लिखा जायगा।

( ख ) वाचस्पत्य, मान्य, स्थायी तथा विशिष्ट सभासद प्रबंध-समिति के प्रस्ताव पर साधारण सभा में बहुमत से चुने जायँगे।

( ग ) कोई सभासद जो किसी कारण सभा से अलग हो गया हो नियमानुसार पुनः प्रार्थना करने पर और जिस कारण से अलग हो गया हो उसके दूर करने पर पुनः सभासद चुना जा सकता है।

## चंदे के नियम—

२३—साधारण सभासदों को अपना अग्रिम वार्षिक चंदा प्रत्येक सौर वैशाख मास के पहले दे देना होगा। जिनका अग्रिम चंदा नियत समय पर न आ जायगा उन्हें सभा की मुखपत्रिका वी० पी० द्वारा भेजी जायगी और तब तक दूसरा

संख्या न भेजी जायगी जब तक चंदा न आ जायगा। चंदा भेजने की सूचना और चैत्र मास के पूर्व प्रकाशित हो जाया करेगी।

२४—प्रबंध-समिति को अधिकार होगा कि किसी हिंदी-प्रेमी को बिना चंदे के भी सभासद चुने अथवा किसी साधारण सभासद का चंदा क्षमा कर दे। ऐसे सभासदों की संख्या प्रति सैकड़ा पाँच से अधिक न होगी। परंतु ऐसे सभासदों के विषय में प्रबंध-समिति प्रति तीसरे वष फिर से विचार किया करेगी।

२५—जो महाशय वर्ष के बीच में सभासद होंगे उनको भी पूरे वर्ष का चंदा देना होगा और उन्हें उस वष के आरंभ से पत्रिका तथा पुस्तक आदि पाने का अधिकार होगा। पर जो सज्जन वर्ष के अंतिम तीन मास में सभासद होंगे उन्हें उस वष की पत्रिका का केवल चौथा अंक प्राप्त होगा। उनका चंदा अगले वर्ष में जमा होगा और तभी से उन्हें सभासद के अधिकार प्राप्त होंगे।

२६—वाचस्पत्य, मान्य, विशिष्ट और स्थायी सभासदों को वार्षिक चंदा देना आवश्यक न होगा।

**कर्तव्य——**

२७—प्रत्येक सभासद के निम्नलिखित कर्तव्य होंगे—

(क) हिंदी भाषा तथा नागरी लिपि का स्वयं यथासाध्य व्यवहार करना और उसके प्रचारार्थ यत्न करना तथा सभा के सहायक और सभासद बढ़ाने का उद्योग करते रहना।

(ख) हिंदी के भांडार की रक्षा करना और उसे समृद्ध करना।

(ग) सभा के अधिवेशनों में उपस्थित होना, किसी प्रस्ताव को उपस्थित अथवा अनुमोदित करना वा उपस्थित विषयों पर उचित संमति देना।

(घ) आवश्यकतानुसार सभा का कार्यभार लेना।

(ङ) सभा के हानिलाभ तथा उसके उद्देश्यों की पूर्ति पर सदा ध्यान रखना और सभा की भलाई के लिये यत्नशील रहना।

**अधिकार——**

२८—सभासद को अधिकार होगा कि—

(क) कम से कम ४ दिन पहले लिखित सूचना देकर सभा-संबंधी किसी विषय पर प्रधान मंत्री से सभा के किसी अधिवेशन में प्रश्न करे, परंतु उत्तर को स्पष्ट करने के लिये तत्काल और प्रश्न भी चाहे तो करे।

(ख) जब आवश्यकता हो, ३ दिन की सूचना देकर जिस समय कार्यालय खुला रहे सभा के लिखित कार्यविवरण को देखे, उसकी प्रतिलिपि करे, सभा के किसी या सब प्रकाशित सामग्री को देखे तथा खरीदे, परंतु इनके छापने छपवाने का अधिकार उस समय तक न होगा जब तक कि प्रबंध-समिति से इस संबंध में आज्ञा न प्राप्त कर ले। प्रतिलिपि लेनेवाला यदि चाहे तो उसके ठीक नकल होने के प्रमाण में सहायक मंत्री के हस्ताक्षर ले ले।

(ग) सभा की प्रबंध-समिति, अन्य समितियों वा उप-समितियों का सदस्य न होते हुए भी उसकी अनुमति से उनमें दर्शक की भाँति उपस्थित हो।

( घ ) यदि स्वयं उपस्थित न हो सके तो सभा के विचाराधीन विषयों पर संमति देने के लिये प्रतिनिधि-पत्र द्वारा किसी अन्य सभासद को अपना प्रतिनिधि बनाकर भेजे, पर कोई सभासद अपने अतिरिक्त तीन से अधिक सभासदों का प्रतिनिधि न हो सकेगा। इस पत्र पर दो आने का रसीदी टिकट लगा होगा और सभासद के हस्ताक्षर होंगे। यह प्रतिनिधि-पत्र सभा कार्यालय में अधिवेशन से ४८ घंटा पूर्व आ जाना चाहिए। प्रतिनिधि-पत्र के मत गिने जायँगे।

२९—( क ) जो महाशय वर्षारंभ के छः मास के भीतर सभासद चुन लिए जायँगे उन्हें अगले वार्षिक अधिवेशन से तथा जो उसके बाद चुने जायँगे उन्हें अगले वार्षिक अधिवेशन के बाद से किसी विषय के निश्चय में मत देने का अधिकार होगा।

( ख ) जो महाशय सभासद चुने जाने की तिथि से कम से कम एक वर्ष के पुराने सभासद न होंगे वे अधिकारी या प्रबंध-समिति अथवा अन्य किसी उपसमिति के सदस्य न हो सकेंगे।

( ग ) जो सभासद सभा के किसी कार्य पर कुछ मासिक वेतन देकर नियत किए जायँगे अथवा जिनका व्यापारिक* संबंध सभा से होगा उन्हें अपने संबंध में मत देने या पदाधिकारी अथवा प्रबंध-समिति के सदस्य होने का अधिकार न होगा।

* सभा के लिये पुस्तकों का लेखन, संपादन, संकलन, संशोधन और अनुवाद व्यापारिक कार्य न समझा जायगा।

३०—कोई सभासद पत्र द्वारा इच्छा प्रकट करने पर सभा से अलग हो सकता है।

३१—वर्ष के पहले दिन जिन सदस्यों के जिम्मे दो वर्ष का चंदा अर्थात् एक वर्ष का पिछला और एक वर्ष का अग्रिम शेष ठहरेगा उनका नाम सूची 'ख' में लिखा जायगा, उन्हें सभासद के अधिकार प्राप्त न होंगे और उन्हें इस विषय की सूचना एक पक्ष के भीतर ही पत्र द्वारा दी जायगी। यदि इस सूचना के जाने तथा साधारण सूचना ( २३ व नियम के अनुसार ) के प्रकाशित होने के दो मास के भीतर चंदे की समस्त बाकी रकम न आ जायगी तो सभा को अधिकार होगा कि उनका नाम सभासदों की सूची से मंतव्य स्थिर करके काट दे।

३२—यदि कोई अधिकारी वा सभासद कोई ऐसा निंदनीय कार्य करेगा जिससे सभा की हानि हो वा सभा का किसी प्रकार से उपहास हो तो वह विचारपूर्वक अपने पद से च्युत किया जायगा। जिस पर दोष लगाया जायगा उसे सूचना और अपनी सफाई का अवसर देकर इस संबंध का प्रस्ताव प्रबंध-समिति साधारण सभा में करेगी और उसका निर्णय उपस्थित सभासदों की कम से कम $\frac{3}{4}$ संमति द्वारा होगा।

## (२) संरक्षक—

३३—ऐसे महानुभाव जो नागरी अक्षर, हिंदी भाषा अथवा सभा की विशेष सहायता करेंगे इस सभा के संरक्षक चुने जा सकेंगे और यह चुनाव प्रबंध-समिति के प्रस्ताव और साधारण सभा के

अनुमोदन पर सभा के वार्षिक अधिवेशन में होगा। प्रबंध-समिति अपने प्रस्ताव में इस बात को स्पष्ट करके लिख देगी कि जिनके संरक्षक चुने जाने के लिये वह प्रस्ताव करती है उन्होंने नागरी अक्षर, हिंदी भाषा अथवा सभा की क्या विशेष सहायता की है। इनको स्थायी सभासदों के अधिकार होंगे।

## (३) सभा के कार्याधिकारी—

### उल्लेख—

३४—इस सभा के कार्याधिकारी एक सभापति, दो उपसभापति, एक प्रधान मंत्री, एक वा अधिक विभाग मंत्री, एक वा अधिक वैतनिक सहायक मंत्री, एक वा अधिक वैतनिक वा अवैतनिक आय-व्यय-निरीक्षक होंगे। प्रबंध-समिति को अधिकार होगा कि वह समय-समय पर विभाग मंत्री की संख्या और उनके कार्यों की सीमा निर्धारित कर दे।

३५—सभापति तथा उपसभापतियों में से कम से कम एक का तथा आय-व्यय-निरीक्षक के सिवाय अन्य सभी कार्याधिकारियों का काशीस्थ होना अनिवार्य होगा और सभा के कार्याधिकारी ही प्रबंध-समिति के भी कार्याधिकारी होंगे।

### अवधि—

३६—समस्त अवैतनिक कार्याधिकारियों की अवधि एक वर्ष की होगी और अगले वार्षिक निर्वाचन के समय ही उनका पदत्याग समझा जायगा। उनका पुनर्निर्वाचन हो सकेगा परंतु कोई सभासद लगातार तीन वर्ष से अधिक एक ही पद पर कार्याधिकारी न चुना जा सकेगा।

३७—सहायक मंत्री या सहायक मंत्रियों की नियुक्ति प्रबंध-समिति द्वारा आवश्यकतानुसार हुआ करेगी। अन्य सभी कार्याधिकारियों का चुनाव वार्षिक अधिवेशन में हुआ करेगा।

३८—अवधि के भीतर ही यदि किसी कार्याधिकारी वा समिति के सदस्य का स्थान रिक्त होगा तो साधारण सभा को अधिकार होगा कि शेष अवधि के लिये उसके स्थान पर दूसरा अधिकारी या सभासद चुने।

### अनधिकरण—

३९—कोई सभासद एक ही समय एक ही सभा, समिति तथा उपसमिति में दो पद पर नियुक्त न हो सकेगा।

### सभापति के कर्तव्य—

४०—सभापति का कर्तव्य होगा कि

( क ) सभा के अधिवेशनों में उपस्थित होकर सभापति का आसन ग्रहण करे और उसके तथा कार्यालय के कार्यों का नियमानुकूल संचालन करे तथा

( ख ) नियम के विरुद्ध और सभा को संकट में डालनेवाले किसी कार्य को न होने दे, परंतु इस संबंध में अपनी आज्ञा का उल्लेख कार्य-विवरण में करे।

### सभापति के अधिकार—

४१—सभापति को अधिकार होगा कि (१) सभा का कोई अधिवेशन किसी समय किसी विषय के विचारार्थ करे, (२) साधारण अधिवेशन में किसी समागत सज्जन को उस अधिवेशन का सभापति चुने, तथा (३) किसी विषय में

संमति का सम-विभाग होने पर एक अधिक मत देकर निर्णय करे और (४) कार्यों के क्रम अथवा नियमों के अर्थ में विवाद या मत-भेद होने पर अपना निर्णय दे जो उस अधिवेशन के लिये सर्वथा मान्य होगा।

**उपसभापति—**

४२—सभापति की अनुपस्थिति में प्रथम उपसभापति और प्रथम उपसभापति की अनुपस्थिति में द्वितीय उपसभापति सभापति का सब कार्य कर सकेंगे और उनके अधिकार और कर्तव्य सभापति के ही होंगे।

**प्रधान मंत्री—**

४३—प्रधान मंत्री के कर्तव्य ये होंगे—

(क) सब आवश्यक पत्र-व्यवहार अपने निरीक्षण में कराना तथा भिन्न-भिन्न विभाग-मंत्रियों के कार्य की ऐसी व्यवस्था करना जिसमें सबका कार्य सुचारु रूप से सामंजस्यपूर्वक चले।

(ख) सभा तथा प्रबंध-समिति के अधिवेशनों में उपस्थित होना, कार्यक्रम, पत्र, रिपोर्ट तथा आवश्यक प्रस्ताव उपस्थित करना, यथासंभव प्रत्येक का कार्य-विवरण तत्काल ही लिखाकर उसी अधिवेशन के अंत में स्वीकार करा लेना।

(ग) सभा का रुपया प्रबंध-समिति द्वारा निश्चित बंक या बंकों में रखना। आवश्यकता पड़ने पर अपने हस्ताक्षर से लेना वा निकालना।

(घ) प्रत्येक बिल या पुरजे की स्वीकृति तत्संबंधी विभाग के अधिकारी से कराकर उसका रुपया चुकाना।

(ङ) सभा के सब कामों का प्रबंध, रुपए आदि का लेन-देन तथा मामलों मुकदमों की व्यवस्था करना और सभा की ओर से सब प्रकार के अदालती कागज तथा दस्तावेज आदि पर हस्ताक्षर करना।

**विभाग-मंत्री—**

४४—विभाग-मंत्रियों के कर्तव्य—प्रबंध-समिति के आदेशानुसार प्रधान मंत्री के तत्त्वावधान में अपने अपने विभागों का सब प्रकार का प्रबंध करना और उसके लिये उत्तरदायी होना तथा प्रति तीसरे महीने अपने विभाग की रिपोर्ट प्रबंधसमिति में उपस्थित करना।

**सहायक मंत्री—**

४५—सहायक मंत्री के कर्तव्य ये होंगे—

(क) प्रत्येक पत्र और सभा-संबंधी लेखादि की रक्षा करना।

(ख) सभा के प्रत्येक कार्य को मंत्रियों के आदेशानुसार संपादन करते रहना और सभा की सब प्रकार की संपत्ति की रक्षा करना तथा उसके लिये उत्तरदायी होना।

(ग) आय-व्यय का ब्योरेवार हिसाब रखना तथा हिसाब जाँचनेवालों से जँचवाकर प्रबंध-समिति के मंत्री द्वारा उपस्थित कराना।

(घ) प्रधान मंत्री तथा विभाग मंत्रियों की अनुपस्थिति में उनके कर्तव्यों का पालन करना।

आयव्यय-निरीक्षक—

४६—हिसाब जाँचनेवालों को सभा का हिसाब जाँचना होगा और उस पर अपनी संमति लिखनी होगी। हिसाब जाँचनेवाले सभासदों के अतिरिक्त दूसरे सज्जन भी हो सकेंगे, परंतु कोई पदाधिकारी अथवा प्रबंध-समिति का सभासद इस काम के लिये नहीं चुना जा सकता।

## ( ४ ) प्रबंध तथा अन्य समितियाँ

संस्थान—

४७—सभा के कार्यों का संपूर्ण प्रबंध एक प्रबंध-समिति के अधीन रहेगा जिसमें एक सभापति, दो उपसभापति, एक प्रधान मंत्री, एक वा अधिक विभाग-मंत्री, ये कार्याधिकारी तथा उनतालीस सभासद जिनमें कम से कम एक महिला सभासद का रहना आवश्यक होगा इस प्रकार होंगे—

( क ) काशीस्थ सभासद १५

( ख ) काशी के बाहर संयुक्त प्रांत के सभासद ५

( ग ) असम, ब्रह्मदेश, बंगाल, उत्कल, बिहार, दिल्ली, पंजाब और सीमाप्रांत, सिंध, बंबई, मध्यदेश और बरार, मद्रास तथा सिंहल इनमें प्रत्येक से एक एक १२

( घ ) मध्यभारत और राजपूताना की तथा अन्य रियासतों से एक एक ७

(ग) तथा (घ) में लिखित प्रांतों में से किसी में जब सभासदों की संख्या ५ से कम होगी तब उस प्रांत के किसी सभासद के बदले किसी निकटवर्ती प्रांत का कोई सभासद चुन लिया जायगा। पर प्रबंध समिति को अधिकार होगा कि किसी प्रांत में ५ से कम सभासद रहने पर भी उस प्रांत से प्रबंध-समिति के लिये सभासद निर्वाचित करे।

४८—प्रबंध-समिति के प्रत्येक सभासद की अवधि तीन वर्ष की होगी और प्रति वर्ष तेरह सभासदों का चुनाव वार्षिक अधिवेशन में होगा जिनमें से पाँच स्थानीय होंगे और आठ बाहरी।

४९—अवधि के बीच में यदि कोई सभासद कार्याधिकारी चुन लिया जाय तो जब तक वह कार्याधिकारी रहे तब तक के लिये उसके स्थान में किसी और सभासद को सभा प्रबंध-समिति का सदस्य चुन देगी।

५०—सभा के कार्याधिकारी ही प्रबंध-समिति के भी कार्याधिकारी होंगे, परंतु उनकी अवधि एक ही वर्ष की हुआ करेगी।

५१—प्रबंध-समिति के जो नगरस्थ सभासद वर्ष भर में कम से कम चार अधिवेशनों में उपस्थित न होंगे अथवा जो बाहरी सभासद कम से कम चार अधिवेशनों में कार्य पर अपनी संमति न भेजेंगे अथवा उसके बदले में कम से कम दो अधिवेशनों में उपस्थित न होंगे अथवा जो काशीस्थ सभासद बाहर रहने लगे हों या जिन बाहरी सभासदों ने अपना प्रांत, या संयुक्त प्रांत के बाहरी सभासदों ने अपना नगर छोड़ दिया हो, उनका स्थान खाली समझा जायगा। प्रबंध-समिति के कार्य-विवरण में प्रत्येक सभासद की उपस्थिति तथा संमति भेजनेवाले सभासदों के नामों का स्पष्ट उल्लेख रहा करेगा।

**अधिवेशन—**

५२—प्रबंध-समिति का अधिवेशन प्रति सौर मास के अंतिम शनिवार को अथवा उसके पहले ही हो जाया करेगा।

**विशेष अधिवेशन—**

५३—सभापति, कोई उपसभापति, प्रधान मंत्री अथवा प्रबंध-समिति के कोई तीन सभासद प्रधान मंत्री द्वारा अथवा उसके न करने पर स्वयं अपने हस्ताक्षर से प्रबंध-समिति का विशेष अधिवेशन करा सकते हैं जिसमें केवल उसी विषय पर विचार होगा जिसके लिये वह अधिवेशन किया गया होगा। परंतु इस नियम के अनुसार एक अधिकारी वा सभासदों द्वारा विशेष अधिवेशन की सूचना सभा-कार्यालय में पहुँच जाने पर दूसरे अधिकारी वा उन्हीं अथवा अन्य सभासदों को उसी कार्य या उससे संबंध रखनेवाले कार्यों के लिये दूसरा अधिवेशन करने का अधिकार न होगा।

विशेष अधिवेशन की सूचना बाहरी सभासदों को देना आवश्यक न होगा।

५४—पाँच सभासदों के उपस्थित रहने पर प्रबंध-समिति का कार्य होगा।

**कर्तव्य—**

५५—प्रबंध-समिति के कर्तव्य ये होंगे—

(क) सभा की स्थावर तथा जंगम संपत्ति की रक्षा।

(ख) सभा के कार्यों का प्रबंध।

(ग) सभा द्वारा प्रकाश्य पुस्तकों का निश्चय तथा उनकी रचना और संपादनादि का प्रबंध।

(घ) सभा की पुस्तकों और लेखादि के छपने, बिकने तथा यदि आवश्यक हो तो दूसरी पुस्तकों के लेने का प्रबंध।

(ङ) प्रत्येक वर्ष सभा का वार्षिक विवरण प्रस्तुत करना।

(च) सभा के कार्य के लिये वेतन पर कार्यकर्ता नियुक्त करना वा पुरस्कार पर कोई काम कराना।

(छ) सभा के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये समय समय पर उचित प्रबंध कराना।

**अधिकार—**

५६—प्रबंध-समिति के सभासदों के अतिरिक्त अन्य किसी को उसके विचाराधीन किसी विषय पर वोट देने का अधिकार न होगा, परंतु समिति की आज्ञा से प्रत्येक सभासद को संमति देने का अधिकार होगा। पत्र द्वारा विचारार्थ संमति भेजने का सब सभासदों को सर्वथा अधिकार होगा।

५७—प्रबंध-समिति को अधिकार होगा कि वह किसी सभासद को अपने किसी अधिवेशन में विचाराधीन विषयों पर संमति देने के लिये निमंत्रित करे।

**अन्य समिति वा उपसमिति का संस्थान—**

५८—किसी विशेष कार्य के संपादन के लिये साधारण सभा कोई समिति, तथा प्रबंध-समिति कोई उपसमिति, नियुक्त कर सकेगी जिसके सदस्य सभासदों में से ही चुने जायँगे, जिनकी संख्या पाँच वा अधिक हुआ करेगी और जिनका कोरम साधारणत: तीन हुआ करेगा। समिति-रचना के साथ ही संयोजक की नियुक्ति, कर्तव्य का

निश्चय और समय तथा अवधि का निर्धारण भी हुआ करेगा। ऐसी समिति वा उपसमिति का कर्त्तव्य होगा कि अपनी रचयित्री सभा वा समिति के पास नियत समय तक अपना निश्चय लिखकर भेज दे।

## सभा के अधिवेशन और वार्षिक निर्वाचन

### (१) अधिवेशन—

**प्रकार—**

५९—साधारण सभा के अधिवेशन तीन प्रकार के होंगे—

(क) साधारण, (ख) विशेष और (ग) वार्षिक।

**साधारण अधिवेशन का कार्यक्रम—**

६०—साधारण अधिवेशन प्रति सौर मास के अंतिम शनिवार को हुआ करेगा जिसका कोरम सात सभासदों का होगा। परंतु यदि किसी कारण अंतिम शनिवार को यह न हो सका तो किसी दूसरे दिन हो सकेगा। कार्रवाई इस प्रकार होगी—

(क) यदि सभापति, वा उपसभापति, अनुपस्थित होंगे तो उपस्थित सभासदों में से कोई जो सभापति चुन लिया जाय, सभापति का आसन ग्रहण करेगा। तत्काल चुने हुए सभापति के कर्तव्य और अधिकार भी उस अधिवेशन के लिये स्थायी सभापति के ही होंगे।

(ख) प्रबंध-समिति वा अन्य समितियों के भेजे हुए प्रस्ताव को छोड़कर जिन्हें प्रधान मंत्री उपस्थित करेगा, अन्य प्रस्ताव वा सुधार पर बिना अनुमोदन हुए विचार न किया जायगा। किसी प्रस्ताव पर यदि सुधार उपस्थित होगा तो सुधार पर पहले ही विचार किया जायगा।

(ग) वे ही प्रस्ताव कार्यक्रम में रखे जायँगे जो प्रस्ताव के रूप में लिखे हुए प्रधान मंत्री के पास अधिवेशन से कम से कम दस दिन पहले पहुँच चुके रहेंगे। साधारण कार्यक्रम के अतिरिक्त प्रस्तावों की और विशेष काम होने पर उस काम की पूरी सूचना अधिवेशन से ३ दिन पहले स्थानीय सभासदों को प्रधान मंत्री देगा। परंतु अत्यावश्यक प्रस्ताव सभापति की अनुमति से, बिना पूर्व सूचना के तत्काल ही उपस्थित हो सकेंगे।

(घ) प्रत्येक सभासद को प्रत्येक प्रस्ताव पर एक ही बार बोलने का अधिकार होगा; परंतु प्रस्तावक अंत में उत्तर देने का अधिकारी होगा और अनुमोदक, समर्थक वा अन्य किसी सभासद को यदि सभापति चाहे तो फिर बोलने की आज्ञा दे सकता है।

(ङ) प्रत्येक विषय पर संमति हाथ उठाकर अथवा एक भी सभासद के अनुरोध पर गोली द्वारा अथवा कागज पर लिखकर ली जायगी और निश्चय अधिक संमति से होगा।

(च) जिस प्रस्ताव पर एक बार विचार हो चुका हो वह सात सभासदों के अनुरोध करने पर पुनः दो अधिवेशनों के अनंतर किसी अधिवेशन में विचारार्थ उपस्थित किया जा सकता है, पर इसकी सूचना पहले से देना आवश्यक होगा। किसी प्रस्ताव पर दो बार विचार हो जाने के अनंतर वह फिर एक वर्ष के पीछे प्रबंध-समिति के अनुरोध से विचारार्थ उपस्थित किया जा सकता है।

(छ) यदि ऐसे समय में जब कि न साधारण सभा और न प्रबंध-समिति हो सकती हो, कोई कार्य अत्यंत आवश्यक आ जाय तो प्रधान मंत्री को अधिकार होगा कि सभापति की अथवा दोनों उपसभापतियों की संमति से उस कार्य का निर्वाह करे और आगामी अधिवेशन में उसकी सकारण सूचना दे।

(ज) साधारण सभा में कार्य इस प्रकार होंगे—

(१) कार्य-विवरण का सुनाया जाना।

(२) प्रबंध-समिति के कार्यविवरण का सूचनार्थ तथा प्रस्तावों का विचारार्थ उपस्थित किया जाना।

(३) सभासद होनेवालों के पत्र या सभासदों के त्यागपत्र आदि पर विचार होना।

(४) पत्रों तथा प्राप्त पुस्तकों की सूची का उपस्थित किया जाना।

(झ) यदि कोई सभासद प्रबंध समिति के किसी कार्य वा निश्चय से असंतुष्ट हो और अपना असंतोष-प्रकाशक पत्र कम से कम पाँच सभासदों के हस्ताक्षर कराकर प्रधान मंत्री के पास, जिस अधिवेशन में वह निश्चय हुआ हो उसके कार्य-विवरण की स्वीकृति के एक मास के अंदर, भेजे तो उस पर साधारण सभा विचार करेगी और प्रबंध-समिति को उचित आदेश देगी जिसका पालन प्रबंध-समिति अवश्य करेगी। इस अधिवेशन का कार्य तभी होगा जब साधारण सभा में २५ वा उससे अधिक सभासद उपस्थित होंगे। इस अधिवेशन की सूचना प्रबंध-समिति के सभासदों को विशेष रूप से प्रधान मंत्री कम से कम ३ दिन पहले देगा और समिति के सदस्यों को चाहिए कि इस अधिवेशन में उपस्थित हों।

(ञ) जिस प्रस्ताव का अनुमोदन न होगा, वह उठा दिया जायगा, परंतु उसको कोई जब चाहे पुनः किसी और अधिवेशन में उपस्थित कर सकेगा।

(ट) जब तक एक सभासद बोल रहा हो, दूसरा कोई बोलने का अधिकारी न होगा। परंतु नियम-विरुद्ध वा अश्लील वाक्यों वा व्यक्तिगत आक्षेपों के आने पर कोई सभासद उसे रोकने का प्रस्ताव कर सकेगा और सभापति को उचित आज्ञा करने का अधिकार होगा जो सर्वथा मान्य होगी।

(ठ) प्रस्तावों पर सुधार तत्काल भी उपस्थित हो सकेंगे, परंतु सुधार ऐसे शब्दों में न

होंगे जिनसे अर्थ की दृष्टि से प्रस्ताव का खंडन होता हो।

( ड ) इस बात का प्रस्ताव कि

( १ ) अधिवेशन अमुक समय फिर होने के लिये स्थगित कर दिया जाय वा

( २ ) प्रस्तुत वादग्रस्त विषय पर अगले अधिवेशन में विचार कियो जाय वा

( ३ ) प्रस्तुत विषय वा प्रस्ताव उठा दिया जाय वा छोड़ दिया जाय वा

( ४ ) प्रस्तुत विषय को छोड़कर कार्यक्रम में निर्दिष्ट अगले विषय पर विचार किया जाय वा

( ५ ) अधिवेशन का विसर्जन कर दिया जाय। अधिवेशन-काल में किसी भी समय उपस्थित किया जा सकेगा और इस प्रस्ताव के उपस्थित होते ही इस पर विचार करना अनिवार्य होगा, परंतु इस तरह का प्रस्ताव उस समय उपस्थित न किया जायगा जब कोई बोल रहा हो।

( ढ ) नियत समय पर ही अधिवेशन का आरंभ होगा। कोरम के लिये नियत समय के उपरांत १५ मिनट तक प्रतीक्षा करना सभासदों का कर्तव्य होगा। उतना काल बीत जाने पर उस दिन अधिवेशन न हो सकेगा।

### विशेष अधिवेशन—

६१—पाँच सभासदों के लिखने पर वा सभापति के आदेश से वा स्वयं आवश्यकतानुसार प्रधान मंत्री सभा का विशेष अधिवेशन कर सकता है जिसमें नियत विशेष कार्य के अतिरिक्त और कोई कार्य न होगा। यदि पाँच सभासदों के लिखने पर या सभापति के आदेश से प्रधान मंत्री सूचना पाने के दस दिन के भीतर ऐसा अधिवेशन न करे तो सभापति वा कोई उपसभापति वा कोई सात सभासद अपने हस्ताक्षर से ऐसा अधिवेशन एक सप्ताह के अंदर कर सकते हैं। विशेष अधिवेशन की अन्य साधारण कार्रवाई साधारण अधिवेशन के नियमों के अनुसार होगी। इस अधिवेशन की सूचना बाहरी सभासदों को देना आवश्यक न होगा। परंतु इस नियम के अनुसार एक अधिकारी या सभासदों द्वारा विशेष अधिवेशन की सूचना सभा-कार्यालय में पहुँच जाने पर दूसरे अधिकारी या सभासदों को उसी कार्य वा उससे संबंध रखने वाले कार्यों के लिये दूसरा विशेष अधिवेशन करने का अधिकार न होगा।

### वार्षिक अधिवेशन का कार्यक्रम—

६२—वार्षिक अधिवेशन सौर वैशाख मास के तृतीय सप्ताह में हुआ करेगा जिसकी तिथि प्रबंध-समिति निश्चित करेगी। वार्षिक अधिवेशन का कार्यक्रम इस प्रकार होगा—

( क ) वार्षिक विवरण और वार्षिक आय-व्यय का स्वीकृत होना, नियमों के संबंध में प्रबंध-समिति द्वारा संकलित संशोधनों पर विचार, कार्याधिकारियों और प्रबंध-समिति के सभासदों का चुनाव तथा इसके अतिरिक्त जो कोई और आवश्यक कार्य आ जाय उपस्थित सभासदों के अधिकांश के उसके पक्ष में होने पर उसपर विचार।

(ख) निर्वाचन का परिणाम देखने के लिए सभापति द्वारा दो ऐसे सभासद उसी स्थान पर चुन लिए जायँगे जिनके नाम निर्वाचन-सूची में न आए होंगे।

(ग) १५ सभासदों के उपस्थित रहने पर वार्षिक अधिवेशन का काय किया जायगा। परंतु यदि कार्यों की अधिकता वा कोरम न होने से सभा का अधिवेशन दूसरे दिन पर टल जायगा तो दूसरे दिन केवल दस सभासदों के उपस्थित रहने पर कार्य किया जायगा।

**अधिकार का विस्तार —**

६३—सौर वैशाख मास की निश्चित तिथि को वा अगले दिन किसी विशेष कारण से यदि वार्षिक अधिवेशन न हो सका तो जब तक अधिवेशन न हो और नए कार्याधिकारी न चुने जायँ यथास्थित प्रबंध-समिति को नियमानुसार कार्य करने का पूर्ण अधिकार होगा और वही इस अवस्था में वार्षिक अधिवेशन के लिये दूसरी तिथि नियत करेगी।

## (२) वार्षिक निर्वाचन

**सूची-निर्माण—**

६४—(क) प्रति वर्ष प्रबंध-समिति एक सूची इस प्रकार बनाएगी जिसमें (१) वार्षिक चुनाव के लिये जो पद खाली होंगे उनके नाम, (२) उनका अवधि-काल, (३) उस पद पर जो महाशय स्थित हैं उनका नाम, (४) स्थान रिक्त होने का कारण, (५) प्रबंध-समिति की संमति में जिनको अगली अवधि के लिये चुनना उचित होगा उनका नाम तथा (६) सभासद को दूसरे नाम का प्रस्ताव करने के लिए स्थान रहेगा।

(ख) इस सूची में किसी ऐसे महाशय का नाम प्रबंध-समिति द्वारा प्रस्तावित नहीं होगा जिसने उस पद के लिये अपनी स्वीकृति न दे दी होगी।

(ग) प्रत्येक सभासद को अधिकार होगा कि इस सूची में नवीन प्रस्ताव करने के लिये जो स्थान खाली हो उसमें किसी अन्य सभासद के लिये उसकी अनुमति लेकर प्रस्ताव करे, पर प्रत्येक पद के लिये एक से अधिक नाम का नवीन प्रस्ताव न हो सकेगा।

(घ) इस सूची पर प्रत्येक सभासद का जो वार्षिक चुनाव में संमति देना चाहे, हस्ताक्षर रहेगा और यह हस्ताक्षर सहित सूची मत मानी जायगी। जिस सूची पर हस्ताक्षर न होगा वह मान्य न होगी।

(ङ) सभासदों को अधिकार होगा कि इस सूची को वार्षिक अधिवेशन के पहले प्रधान मंत्री के नाम से एक बंद लिफाफे में जिस पर निर्वाचन शब्द लिखा होगा, भेज दें। इन लिफाफों को प्रधान मंत्री अपनी रक्षा में रखेगा और वे वार्षिक अधिवेशन के सामने खोले जायगे।

( च ) वार्षिक अधिवेशन में उपस्थित सभासद उसी समय इस सूची पर हस्ताक्षर करके दे सकते हैं जो मान्य होगी।

( छ ) यह सूची तथा वार्षिक अधिवेशन में होनेवाले कार्यों की सूचना वार्षिक अधिवेशन की तिथि के कम से कम १५ दिन पूर्व सब सभासदों के पास भेज दी जायगी।

( ज ) वार्षिक निर्वाचन का निश्चय अधिक संमति से होगा और उसमें प्रतिनिधि-पत्र का प्रयोग न होगा।

## सभा के कार्यक्षेत्र

### ( १ ) पुस्तकालय

६५—सभा के अधिकार में एक पुस्तकालय होगा जिसका नाम आर्यभाषा पुस्तकालय होगा। इसके निरीक्षण के लिये प्रबंध-समिति प्रतिवर्ष अपने में से पाँच सदस्यों की एक उपसमिति नियत कर दिया करेगी जो पुस्तकालय उपसमिति कहलाएगी और जिसके कर्तव्यों का निश्चय प्रबंध-समिति करेगी।

### सार्वजनिक अधिकार—

६६—पुस्तकालय की पुस्तकों और समाचार-पत्रों को सर्वसाधारण पुस्तकालय में आकर पढ़ने के अधिकारी होंगे।

६७—पुस्तकालय से पुस्तकों और पत्रों के बाहर जाने, उनके मँगवाने, सुरक्षित रखने, पुस्तकालय के सहायक बनाने आदि से संबंध रखनेवाले उपनियम बनाना प्रबंध-समिति का कर्तव्य होगा।

### ( २ ) प्रकाशन विभाग

६८—सभा की ओर से प्रबंध-समिति के अधिकार में संपादन तथा प्रकाशन विभाग भी होगा जिसके द्वारा हिंदी की पुस्तकें संपादित होंगी और बेची जायँगी। प्रबंध-समिति को अधिकार होगा कि इस काय के लिये संपादक और प्रकाशक तथा एजेंट नियुक्त करे, कार्य-निरीक्षण के लिये किसी एक सदस्य को वा उपसमिति को निरीक्षक बनाए और इस विषय के उपनियम बनाकर कर्तव्यों का निर्देश करे।

### ( ३ ) संबद्ध सभाएँ

६९—इस सभा के समान उद्देश्य रखनेवाली सभाओं का संबंध इस सभा से होगा।

७०—जो सभाएँ इस सभा से संबंध स्थापित करना चाहें, उन्हें इस विषय का आवेदनपत्र अपनी नियमावली तथा पदाधिकारियों के नाम सहित इस सभा के पास भेजना चाहिए। यह पत्र प्रबंध-समिति में उपस्थित किया जायगा और उसके स्वीकार करने पर तथा साधारण सभा की अनुमति से संबंध स्थापित किया जायगा।

### अधिकार—

७१—संबद्ध सभाओं को सभा की पत्रिका आधे मूल्य पर दी जायगी और जो सभाएँ पत्रिका की नियत संख्या एक साथ लेंगी, उन्हें प्रबंध-समिति के निश्चय के अनुसार पत्रिका कम मूल्य पर मिला करेगी। संबद्ध सभाओं के महत्व के कार्यविवरण प्राप्त होने पर उनका सार पत्रिका में प्रकाशित हुआ करेगा तथा संबद्ध सभाओं

को सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकें आदि उसी मूल्य पर मिलेंगी जिसपर वे सभा के सभासदों को प्राप्त होंगी।

**अनधिकरण—**

७२—संबद्ध सभाओं को कोई ऐसा कार्य न करना चाहिए जो इस सभा के उद्देश्यों के विरुद्ध हो वा जिससे इस सभा को हानि पहुँचे। यदि वे ऐसा करेंगी तो यह सभा उनसे अपना संबंध छोड़ देगी।

७३—संबद्ध सभाओं को उचित है कि यदि वे कोई ऐसा कार्य करें जिससे उनके नगर के अतिरिक्त और स्थानों से भी संबंध हो तो इस सभा को उसकी सूचना दे दें।

## ( ४ ) परीक्षा, व्याख्यान और प्रचार

७४—सभा की ओर से समय समय पर ( १ ) नागरी अक्षरों को सुंदर अथवा शीघ्र लिखने का परीक्षाएँ हुआ करेंगी जिनमें प्रमाणपत्र, पुरस्कार वा पदक दिए जायँगे, ( २ ) हिंदी साहित्य तथा विज्ञान संबंधी लेख वा ग्रंथ लिखाए जायँगे जिन पर उचित समझने पर पुरस्कार, पारितोषिक, पदक, प्रमाणपत्रादि देने का सभा को अधिकार होगा, ( ३ ) हिंदी में सुबोध व्याख्यान दिलाए जायँगे तथा ( ४ ) शिक्षा का माध्यम हिंदी को बनाने और नागरी अक्षरों तथा हिंदी भाषा का विशेष प्रचार करने के लिये इसी तरह के अन्य उपाय किए जायँगे। इस संबंध में प्रबंध-समिति आवश्यक उपनियम बनाएगी तथा प्रबंध करेगी।

## ( ५ ) संग्रहालय

७५—सभा म एक संग्रहालय रहेगा जिसका नाम भारतकला-भवन होगा और जिसमें भारतीय पुरातत्त्व, कला तथा संस्कृति संबंधी वस्तुएँ रहेंगी। यह भवन हिंदी के द्वारा भारतीय संगीत तथा चित्रादि कलाओं का प्रचार और शिक्षण-कार्य करेगा।

इस विवरण से यह स्पष्ट विदित हो जाता है कि ज्यों ज्यों किसी संस्था का कार्य बढ़ता है त्यों त्यों कार्य को सुचारु रूप से चलाने के लिये कई प्रतिबंधों का लगाना इसलिये आवश्यक हो जाता है कि उसके काय में जो विघ्न-बाधाएँ उपस्थित होने की संभावना हो सकती है यथासाध्य उनका प्रतिरोध कर दिया जाय। इस सिद्धांत के अनुसार सभा के नियमों में समय समय पर परिवर्धन और परिवर्तन हुए। नियमों के विषय में यह कहना कठिन है कि आगे उनमें हेरफेर करने की आवश्यकता न होगी। समय और काल की प्रवृत्ति के अनुसार जब जैसा उचित जान पड़ेगा किया जायगा।

---

# ३—संघटन

## सभासद्

सार्वजनिक संस्था का कलेवर उसके सभासद् होते हैं और प्राण उसका कार्य। जिस प्रकार मनुष्य के जीवन में अनेक उतार-चढ़ाव होते हैं उसी प्रकार संस्थाओं के जीवन में भी। किसी संस्था के सदस्यों की संख्या कभी एकरूप नहीं रह सकती। उसमें घटती-बढ़ती होते रहना स्वाभाविक है। जिस दिन सभा की स्थापना हुई थी उस दिन के अधिवेशन में बारह महानुभाव उपस्थित थे और वे ही उसके सर्व प्रथम सदस्य बने। पहले वर्ष की समाप्ति तक इनकी संख्या ८२ हो गई। यह संख्या इक्कीसवें वर्ष तक निरंतर बढ़ती गई; इस वर्ष १३६७ सभासद् थे। किंतु इसके बाद यह संख्या घटने लगी और चौवालीसवें वर्ष तक प्रायः घटती ही गई। किसी वर्ष चाहे दस-बीस सदस्य बढ़ भी जाते थे, पर झुकाव घटने की ओर ही था। चौवालीसवें वर्ष में इनकी संख्या केवल ५१७ रह गई। इसका मुख्य कारण यह था कि चंदा अग्रिम लिए बिना सभासदों के पास नागरीप्रचारिणी पत्रिका का भेजना बंद कर दिया गया था। सभासदों की संख्या में कमी होने का दूसरा कारण यह भी था कि सदस्यता का वार्षिक चंदा १।।) से ३) कर दिया गया था। सभासदों की संख्या घट अवश्य रही थी किंतु संतोष की बात यह थी कि समय पर चंदा देनेवालों की संख्या बढ़ रही थी। पैंतालीसवें (सं० १९९४) वर्ष से इसमें विशेष वृद्धि आरंभ हुई और केवल ६ वर्षों में यह संख्या १३७५ तक पहुँच गई। सं० २००० में यह और भी बढ़ी, मार्गशीर्ष तक १७३५ हो गई और अब बराबर बढ़ती ही जा रही है। इन ६ वर्षों में विशिष्ट और स्थायी सदस्यों की संख्या में भी वृद्धि हुई है। सं० १९९४ तक कोई विशिष्ट सभासद् नहीं था। अब इनकी संख्या ४१ है और स्थायी सदस्यों की संख्या जो ४७ से ऊपर कभी नहीं पहुँची थी, अब २७४ है। इस वृद्धि का कारण यह है कि जैसा उद्योग इसके लिये इन वर्षों में किया गया वैसा संभवतः पहले कभी नहीं किया गया था। इस वृद्धि का सबसे अधिक श्रेय श्री रामनारायण मिश्र को है जिन्होंने इस वृद्धावस्था में भी गरमी, सरदी और रेल की असुविधाओं की परवाह न कर इसके लिये अनेक लंबी-लंबी यात्राएँ कीं और जो दिन रात सभा की आर्थिक दशा को सुदृढ़ बनाने के उद्योग में लगे रहते हैं। बीकानेर के श्री रामलोटनप्रसाद और काशी के श्री मुरारलाल केडिया ने भी इस कार्य में श्लाघनीय उद्योग किया है।

## अधिवेशन

सभा की स्थापना के प्रथम वर्ष में ५ फाल्गुन १९५० वि० (१७ फरवरी १८९४) तक उसकी २५ बैठकें साप्ताहिक हुईं। पीछे कई वर्ष तक के पाक्षिक होती रहीं। नवें वर्ष से वे मासिक कर दी गईं और तब से अब तक यही क्रम चल रहा है। साप्ताहिक और पर्याप्त दिनों तक पाक्षिक अधिवेशनों की यह विशेषता रही कि उनमें व्यवस्था आदि के कार्यों के अतिरिक्त सुंदर सुंदर लेख भी पढ़े जाते थे जो उपयोगी और उच्च कोटि के होते थे। पहले वर्ष में इक्कीस विषयों पर भाषण हुए थे। प्रथम चार बैठकों में केवल नियमादि का ही निर्माण हुआ। पाँचवीं

बैठक में 'एकता' विषय पर श्री गोपालप्रसाद का सर्व प्रथम भाषण हुआ। आरंभिक बैठकों में निर्धारित विषयों पर पक्ष-विपक्ष का विधान करके वाद-विवाद हुआ करता था। विषय भी हिंदी-संबंधी नहीं होते थे। ८ पौष सं० १६५० ( २३ दिसंबर १८६३ ) की उन्नीसवीं बैठक में श्री रामनारायण मिश्र का 'द्वारकानाथ टैगोर का जीवनचरित्र' शीर्षक लेख पढ़ा गया। इस लेख ने विषयों का मार्ग ही बदल दिया। उस दिन की कार्रवाई में लिखा है—

> "...यह प्रथम अधिवेशन था कि हमारा पूर्व प्रस्ताव प्रचलित हुआ ( पूर्व प्रस्ताव हो चुका है कि हम लोगों को प्रायशः किसी पुरुष के जीवन चरित्र आदि ऐसे विषय लेना चाहिए कि जिससे हम लोगों के उद्योग का अभिप्राय अर्थात् सत्य हिंदी देवी का प्रचार इसमें उन्नति होय ) सो... इस अधिवेशन से हमारी सभा की नवीन अवस्था आरंभ हुई कहना चाहिए।"

यह पहला लेख था जिसको पुस्तकाकार छपाने की आज्ञा सभा ने दी थी। इससे पहली बैठक में भी श्री रामनारायण मिश्र ने ही 'इतिहास और उसके गुण' शीर्षक लेख पढ़ा था। अनंतर बाईसवें अधिवेशन में 'हिंदी-हिंदू-हिंदुस्तान' विषय रखा गया। इसी बैठक में श्री राधाकृष्णदास सर्वप्रथम संमिलित हुए थे। तेईसवीं बैठक में भी यही विषय रहा। इसमें श्री रामनारायण मिश्र सभापति और प्रथम वक्ता थे। उन्होंने केवल 'हिंदी' पर ही अपना लेख लिखा था जो बहुत पसंद किया गया। अब तो हिंदी की चर्चा चल पड़ी। चौबीसवीं बैठक में सर्वश्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' और कार्त्तिकप्रसाद संमिलित हुए और छब्बीसवीं में महामना मालवीयजी, राजा रामपाल सिंह और ए० जी० ग्रियर्सन सभा के रक्षक सदस्य बनाए गए। फिर उनतीसवीं बैठक में तो हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों की खोज तथा हिंदी-कोश-निर्माण आदि के प्रस्ताव आने लगे और नागरी-प्रचारिणी सभा का प्रकृत कार्य आरंभ हो गया।

## संरक्षक और पदाधिकारी

इस ब्योरे से दृष्टि हटाकर जब उसके संरक्षकों और पदाधिकारियों पर दृष्टि डालते हैं तब यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत की लोकभाषा हिंदी और उसके साहित्य के संरक्षण में योग देने के लिये सब प्रकार की श्रेणियों के व्यक्ति तत्पर रहते आए हैं। जनता तथा उसके विभिन्न वर्गों के नेताओं के अतिरिक्त देशी नरेशों का भी सहयोग और संरक्षण इसे निरंतर प्राप्त होता रहा है। सभा इतने दिनों में जो इतना कार्य संपन्न करने में समर्थ हो सकी है उसका कारण भारत की आत्मा का अखंड योग ही है। सभा के पदाधिकारियों ने आरंभ से अब तक कैसी सुव्यवस्था, संघटन और मनोयोग से कार्य किया है इसका उत्तर उनका कार्य स्वयं दे रहा है।

सभासदों के प्रकार, चंदे और नियमों की चर्चा 'उद्देश्य और नियम' शीर्षक प्रकरण में पहले की जा चुकी है। प्रथम वर्ष और पचासवें वर्ष के सभासदों की नाम-सूची और संरक्षकों तथा पदाधिकारियों की नाम-सूचियाँ परिशिष्ट में दी गई हैं। यहाँ आरंभ से अब तक के सभासदों की संख्या और उसी के साथ साधारण सभा और प्रबंध-समिति की बैठकों और विशेष अधिवेशनों की संख्या भी वर्ष-क्रम से पृथक् पृथक् दी जाती है। विशेष अधिवेशनों में ही वार्षिक अधिवेशन भी संमिलित हैं।

## सभा के संरक्षक
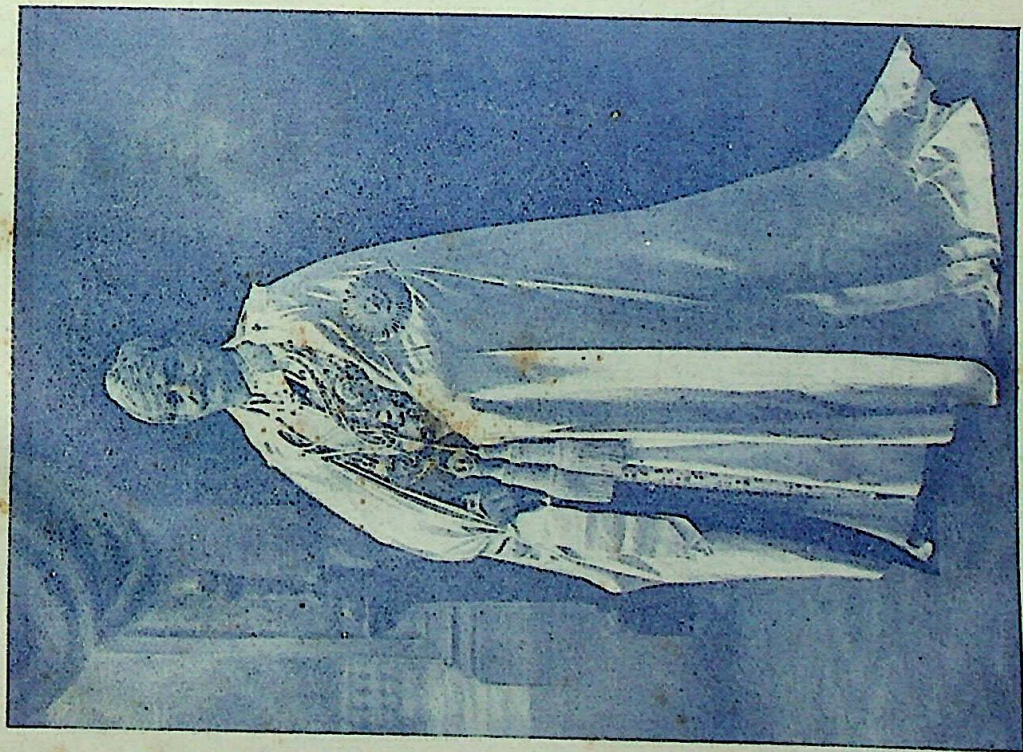
दिवंगत कोटा-नरेश श्रीमन्महाराज लेफ्टिनंट कर्नल तत्रभवान् महाराजा उम्मेदसिंहजी बहादुर, जी० सी० एस० आई०, जी० सी० आई० ई०, जी० बी० ई०, एल-एल० डी० ।

## सभा के संरक्षक

कोटा-नरेश तत्रभवान् श्रीमन्महाराजाधिराज महाराजा महिमहेंद्र महाराव राजाजी श्री भीमसिंहजी साहब बहादुर ।
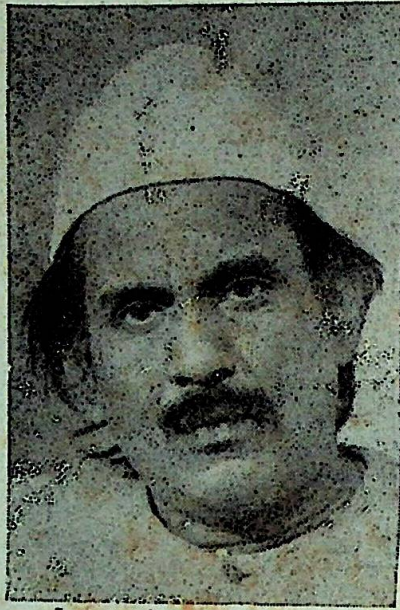
श्री संपूर्णानंद
( सभापति )

श्री रामचंद्र वर्मा
( प्रधान मंत्री )

श्री मुरारिलाल केडिया
( अर्थ-मंत्री )

श्री राय कृष्णदास
( संग्रहाध्यक्ष )

| वर्ष | संवत् | सभासद् | | | | | | | अधिवेशन | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | मान्य | विशिष्ट | स्थायी | साधारण | योग | स्थानीय | बाहरी | साधारण सभा | प्रबंध समिति | विशेष |
| १ | १ ५० | — | — | — | ८२ | ८२ | — | — | ३६ | — | १ |
| २ | १९५१ | — | — | — | १४५ | १४५ | — | — | १३ | १० | ४ |
| ३ | १९५२ | ७ | — | ५ | १३६ | १४८ | ५१ | ८५ | १८ | ७ | ३ |
| ४ | १९५३ | ९ | — | ५ | १८७ | २०१ | ५८ | १९९ | ११ | ३ | १ |
| ५ | १९५४ | १० | — | ५ | २०७ | २२२ | ५८ | २०७ | २० | ५ | १ |
| ६ | १९५५ | १० | — | ५ | २३२ | २४७ | ६४ | ८३ | १६ | ९ | १ |
| ७ | १९५६ | ९ | — | ६ | २५५ | २७० | ६५ | २०५ | १५ | १२ | १ |
| ८ | १९५७ | ९ | — | ९ | २७४ | २९२ | ६९ | २२३ | १५ | १३ | २ |
| ९ | १९५८ | ११ | — | १५ | ३६५ | ३९१ | ६९ | २९६ | १० | २० | १ |
| १० | १९५९ | ११ | — | १९ | ४२८ | ४५८ | ८६ | ३७२ | १० | २२ | १ |
| ११ | १९६० | १२ | — | २४ | ५४० | ५७६ | १२८ | ४४८ | १२ | २२ | ३ |
| १२ | १९६१ | १४ | — | २८ | ६२० | ६६२ | १५३ | ५०९ | १२ | २० | १ |
| १३ | १९६२ | १८ | — | ३१ | ६२७ | ६७७ | १२९ | ४९८ | १० | २० | १ |
| १४ | १९६३ | १८ | — | ३८ | ६२५ | ६८१ | १३४ | ४५७ | १० | १५ | १ |
| १५ | १९६४ | १८ | — | ३० | ६५६ | ७०४ | १३४ | ५१२ | १२ | १९ | १ |
| १६ | १९६५ | १९ | — | २८ | ६९५ | ७४२ | १४९ | ५४६ | १२ | १६ | २ |
| १७ | १९६६ | १६ | — | २८ | ७५२ | ७९६ | १६८ | ६०४ | १३ | १५ | २ |
| १८ | १९६७ | १७ | — | ३१ | ९४२ | ९९० | १८६ | ७४१ | ११ | १६ | २ |
| १९ | १९६८ | १८ | — | ३२ | १२७२ | १३२२ | १९९ | १०५६ | १३ | १३ | १ |
| २० | १९६९ | १७ | — | ३८ | १२८८ | १३४३ | २०५ | १०६९ | १२ | १२ | १ |
| २१ | १९७० | १६ | — | ४६ | १३०५ | १३६७ | २०४ | १०८७ | ९ | ९ | १ |
| २२ | १९७१ | १४ | — | ४७ | ११४० | १२०१ | २०० | ९२४ | १० | ९ | १ |
| २३ | १९७२ | १४ | — | ४७ | ११६७ | १२२८ | २०४ | ९४८ | ९ | १० | १ |
| २४ | १९७३ | १४ | — | ४७ | ९९१ | १०५२ | २१४ | ७६६ | १२ | १२ | २ |
| २५ | १९७४ | १२ | — | ४१ | ९५४ | १००७ | २२७ | ७१६ | १० | १२ | ४ |
| २६ | १९७५ | ११ | — | ४१ | ७७६ | ८२८ | २०३ | ५९२ | १८ | १७ | १ |

| वर्ष | संवत् | सभासद् | | | | | | | अधिवेशन | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | मान्य | विशिष्ट | स्थायी | साधारण | योग | स्थानीय | बाहरी | साधारण सभा | प्रबंध समिति | विशेष |
| २७ | १९७६ | १२ | — | ४२ | ६३७ | ६९१ | १३२ | ४४ | ८ | ८ | १ |
| २८ | १९७७ | १२ | — | ४२ | ५२३ | ५७७ | ९५ | ४१७ | ९ | ९ | १ |
| २९ | १९७८ | १२ | — | ४० | ४७६ | ५२८ | ८८ | ४०८ | १० | १० | १ |
| ३० | १९७९ | ११ | — | ३९ | ४९२ | ५४२ | ८१ | ४०१ | १४ | ९ | १ |
| ३१ | १९८० | १० | — | ३७ | ४६९ | ५१६ | ८५ | ३७५ | ६ | ६ | १ |
| ३२ | १९८१ | ११ | — | ३७ | ४९२ | ५४० | ८७ | ३९८ | १० | १० | १ |
| ३३ | १९८२ | ९ | — | ३७ | ५०१ | ५४७ | ७२ | ४२२ | १० | १३ | १ |
| ३४ | १९८३ | ९ | — | ३७ | ४०० | ५४६ | ७३ | ४२२ | ८ | १२ | १ |
| ३५ | १९८४ | १० | — | ३७ | ५३२ | ५७९ | ७६ | ४४९ | ७ | ११ | १ |
| ३६ | १९८५ | १० | — | ३७ | ५३२ | ५७९ | ८२ | ४४२ | ११ | १५ | २ |
| ३७ | १९८६ | १२ | — | ३९ | ५२३ | ५७४ | ८७ | ४३० | ११ | १२ | १ |
| ३८ | १९८७ | १२ | — | ३८ | ५५९ | ६०९ | ८६ | ४६६ | ७ | ९ | १ |
| ३९ | १९८८ | १२ | — | ३८ | ४८४ | ५३४ | ८२ | ३९५ | ११ | ९ | १ |
| ४० | १९८९ | ११ | — | ४० | ४९७ | ५४८ | ८९ | ४०१ | ७ | १२ | १ |
| ४१ | १९९० | १४ | — | ४१ | ४७१ | ५२६ | ८६ | ३७९ | ८ | १७ | १ |
| ४२ | १९९१ | १३ | — | ४१ | ४८४ | ५३८ | ८९ | ३८९ | ७ | १४ | १ |
| ४३ | १९९२ | १३ | — | ४० | ४९९ | ५५२ | ९७ | ३९७ | ७ | ९ | १ |
| ४४ | १९९३ | १५ | — | ४२ | ४६० | ५१७ | ८९ | ३६७ | १२ | १३ | १ |
| ४५ | १९९४ | २५ | — | ४४ | ६३३ | ६०२ | १२९ | ३९९ | १४ | ११ | १ |
| ४६ | १९९५ | ३० | १३ | ९२ | ५३० | ६६५ | १७५ | ४९० | ११ | १२ | १ |
| ४७ | १९९६ | ४० | १४ | ११० | ६४२ | ८०६ | १७८ | ६२८ | १२ | ११ | १ |
| ४८ | १९९७ | ४८ | १८ | १२६ | ८४० | १०३२ | १८३ | ८४९ | १० | १२ | १ |
| ४९ | १९९८ | ४९ | २४ | १५८ | ९८३ | १२१४ | १८४ | १०३० | १६ | ११ | १ |
| ५० | १९९९ | ५० | ३३ | २०९ | १०८३ | १३७५ | १८९ | ११८६ | ९ | ९ | १ |
| ५१ | २००० (मार्गशीर्ष) | ५० + ७वाचस्पत्य | ४१ | २७४ | १३६३ | १७३५ | २३६ | १४९९ | ८ | ८ | × |

## ४—सभाभवन

ऊपर कहा जा चुका है कि नागरीप्रचारिणी सभा पहले 'नार्मल स्कूल' नाम के भवन में, उसके बाद बड़ी पियरी में श्री मथुराप्रसाद के बाग में और फिर श्री जीवनदास के नीचीबाग वाले मकान में होती रही। यहाँ २८ श्रावण, १९५० वि० (१३ अगस्त, १८९३) की बैठक में यह निश्चय हुआ कि आगामी सप्ताह से सभा की बैठकें बुलानाले पर स्थित श्री प्रमदादास मित्र के संन्यासियों वाले मकान में हुआ करें। मित्र महोदय ने अपने उक्त भवन में सभा की बैठकें करने की अनुमति प्रदान कर दी थी। ये सज्जन संस्कृत के प्रसिद्ध विद्वान् थे, हिंदी से अतिशय प्रेम रखते थे और जब तक जीवित रहे सभा के हितैषी बने रहे। २८ श्रावण, १९५० वि० के पश्चात् १७ भाद्रपद, १९५० वि० (२ सितंबर, १८९३) तक कोई नियमित बैठक न हो सकी। इसके बाद १७ भाद्रपद, १९५० को श्री शंकरनाथ के सभापतित्व में सभा की बैठक इस नए भवन में हुई। ९ मार्गशीर्ष, १९५० वि० (२५ नवंबर, १८९३) तक सभा की बैठकें मित्र महोदय के उक्त भवन में ही होती रहीं। पर उनकी उदारता का लाभ अधिक दिनों तक न उठाया जा सका। यहाँ सभा करने से कुछ साधुओं को कष्ट होने लगा। निदान १८ कार्त्तिक, १९५० वि० (४ नवंबर, १८९३) की बैठक में सभा की बैठकें श्री हरिश्चंद्र स्कूल में जो उस समय खूड़िया मोहल्ले में था, करने की अनुमति प्राप्त करने के लिये श्री राधाकृष्णदास को पत्र लिखा गया। उनकी अनुमति मिल जाने पर २३ मार्गशीर्ष, १९५० वि० (९ दिसंबर, १८९३) को श्री हरिश्चंद्र स्कूल में श्री उमराव सिंह के सभापतित्व में सभा की बैठक पहले पहल हुई जिसमें श्री रामनारायण मिश्र ने 'इतिहास और उसके गुण' विषय पर व्याख्यान दिया था। २३ मार्गशीर्ष, १९५० से ६ श्रावण, १९५२ (९ दिसंबर, १८९३ से २२ जुलाई, १८९५) तक सभा की बैठकें श्री हरिश्चंद्र स्कूल में ही होती रहीं। इसके अनंतर सभा ने नैपाली खपरे के हरिप्रकाश यंत्रालय में ४) मासिक किराए पर कुछ कमरे लेकर उसमें अपना कार्यालय और पुस्तकालय रखा और २५ श्रावण, १९५२ वि० (१० अगस्त, १८९५) से वहीं सभा की बैठकें होने लगीं।

प्रबंधकारिणी समिति की २२ आषाढ़, १९५३ वि० (६ जुलाई, १८९६) की बैठक में निश्चय हुआ कि

> "सभा के आधुनिक गृह को छोड़ना चाहिए और ऐसी जगह ली जाय जिसमें किराया न देना पड़े। किराए का रुपया आवश्यकतानुसार घटा व बढ़ाकर एक लेखक (क्लर्क) रखा जाय। गृह के लिये मुंशी माधोलाल से चौकवाले कमरे के लिये और महाराज जम्मू से लाहौरी टोलेवाले मकान के लिये प्रबंध किया जाय।"

इस प्रस्ताव के पास होने के लगभग एक मास पश्चात् (३ अगस्त, १८९६) को सभा की साधारण बैठक में श्री राधाकृष्णदास का इस आशय का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ कि एक प्रतिनिधि-मंडल मुंशी

माधोलाल के यहाँ उनसे बिना किराया मकान देने की प्रार्थना करने के लिये भेजा जाय। सर्वश्री राधाकृष्ण-दास, जगन्नाथप्रसाद मेहता, डाक्टर छन्नूलाल, जगदेव-प्रसाद गौड़ और श्यामसुंदरदास उक्त प्रतिनिधि-मंडल के सदस्य चुने गए। किंतु इसका कोई फल न हुआ। इसलिये सभा की बैठकें नैपाली खपरे में कुछ दिनों तक होती रहीं। यहीं पर दो कमरे किराए पर लेकर उनमें सभा का कार्यालय रखा गया। कुछ दिनों बाद सभा ने यह स्थान भी बदल दिया और २५ आश्विन, १९५४ वि० ( १० अक्टूबर, १८९७ ) से सभा की बैठकें बुलानाले में किराए पर लिए गए मकान में होने लगीं।

२५ आषाढ़, १९५५ वि० ( ९ जुलाई १८९८ ) की बैठक में सभा का अपना भवन हो जाने के विषय में सबसे पहला प्रस्ताव रखा गया जो इस प्रकार था—

"सभा का स्थान न होने से बहुत कष्ट होता है अतएव निश्चय हुआ कि उद्योग करके एक मकान बनवाया जाय, जिसका व्यय अनुमान से पाँच सहस्र समझा गया और मंत्री ( श्री राधाकृष्ण-दास ) के प्रस्ताव तथा व्यास रामशंकर शर्मा के अनुमोदन पर निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकृत हुए—

१—"इस कार्य के लिये चंदा किया जाय।

२—"इसके सब प्रबंध के लिये निम्नलिखित सज्जनों की एक उपसमिति बनाई जाय—बाबू गदाधरसिंह, राय शिवप्रसाद, बाबू देवकी-नंदन खत्री, बाबू इंद्रनारायण सिंह एम० ए० और बाबू राधाकृष्णदास।

३—"इसके लिये सभा से ३००) रु० दिया जाय।"

चंदे की सूची भी बनाई गई और उसी समय निम्नलिखित चंदा लिखा गया—

३००) नागरीप्रचारिणी सभा, काशी
३००) श्री गदाधरसिंह
१००) श्री राधाकृष्णदास
१००) श्री देवकीनंदन खत्री
१००) श्री दुर्गाप्रसाद मिश्र
२५) श्री रामशंकर व्यास
१०) श्री अमीर सिंह
५) श्री संकठाप्रसाद
५) श्री पन्नालाल पंड्या
९४५) योग

इस बैठक के सभापति श्री गदाधरसिंह थे। सभा के उत्साही कार्यकर्त्ता और सदस्य लगभग दो वर्ष तक समय समय पर भवन के लिये द्रव्य आदि एकत्र करने और उपयुक्त भूमि की टोह में लगे रहे। ३ वैशाख, १९५७ वि० ( १६ अप्रैल, १९०० ) की बैठक में राय शिवप्रसाद ने कहा कि

"अब इसकी बड़ी आवश्यकता है कि सभा के लिये एक स्वतंत्र निज का स्थान बन जाय, क्योंकि इसके बिना बड़ा कष्ट हो रहा है। अतएव सभा की ओर से इस बात का उद्योग हो कि कंपनी बाग का वह अंश सभा को मिल जाय जो विश्वेश्वरगंज की ओर पड़ता है।"

सभा ने इस प्रस्ताव को प्रबंधकारिणी समिति में निश्चय के लिये भेज दिया। समिति ने अपनी १० वैशाख, १९५७ वि० ( २३ अप्रैल, १९०० ) की बैठक में इस प्रस्ताव पर विचार करके निश्चय किया कि—

"इस भूमि को प्राप्त करने का उद्योग किया जाय, कंपनी बाग का एक नकशा बनवाया जाय और

सभा-भवन ( सामने से )
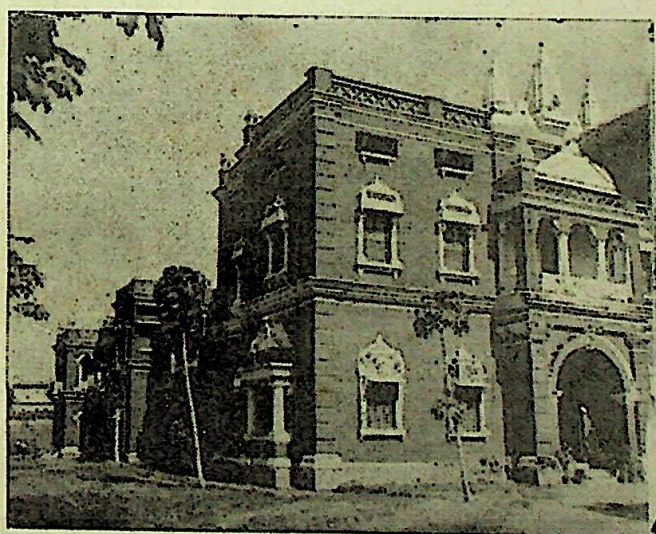
सभा-भवन ( पार्श्व से )

## वर्त्तमान पदाधिकारी और कर्मचारी

( बाईं ओर से बैठे ) सर्वश्री श्रीनारायण मिश्र, जनार्दन पांडे, रामलाल रवानी, संपूर्णानंद मिश्र, सत्यनारायण मिश्र। ( कुर्सियों पर ) शंभुनाथ वाजपेयी, शंभुनारायण चौबे, कृष्णानंद, विश्वनाथप्रसाद मिश्र, रामचंद्र वर्मा, रामनारायण मिश्र, संपूर्णानंद, शिवकुमार सिंह, कृष्णदेवप्रसाद गौड़, पद्मनारायण आचार्य, वेदव्रत शास्त्री। ( खड़े आगे ) जगन्नाथप्रसाद गुप्त, जगन्नाथप्रसाद, देवीविशाल दीक्षित, उदयशंकर त्रिवेदी, विजयकृष्ण, गिरिजाशंकर गौड़, सत्यनारायण शर्मा, गिरिधरप्रसाद, वेदव्यास राय, मन्नूसिंह, हरिहरसिंह, दौलतराम जुयाल, विद्याधर त्रिवेदी, श्रीकृष्ण वर्मा। ( खड़े पीछे ) शिवनंदन, सूर्यभान मिश्र, हरदेव, पाँचू, कल्लूराम, छेदीलाल, प्रयागप्रसाद, महादेव, केदारनाथ खत्री।

इस विषय में सब प्रकार का उद्योग करने के लिये निम्नलिखित महाशयों को पूर्ण अधिकार दिया जाय—(१) बाबू गोविंददास, (२) बाबू रामप्रसाद चौधरी, (३) बाबू राधाकृष्णदास, (४) बाबू श्यामसुंदरदास (५) राय शिवप्रसाद ( मंत्री )।"

यह सभा का सातवाँ वर्ष था। सभा का कार्य बहुत बढ़ गया था और सभा के संचालक उसके लिये निजी भवन की आवश्यकता विशेष रूप से अनुभव करने लगे थे। सभा की उपयोगिता सर्वमान्य हो चली थी और उसके संचालकों के हृदय में सभा को चिरस्थायी बनाने के लिये पूर्ण उद्योग करने की बात समा चुकी थी। इसके लिये दो बातों की आवश्यकता थी। एक तो सभा के पास अपना स्थायी कोश हो और दूसरे अपना भवन। पूर्वोक्त पाँच सज्जनों की समिति इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये प्रयत्न करती रही और आठवें वर्ष में २६ माघ, १९५७ वि० ( ८ फरवरी, १९०१ ) को स्थायी कोश के लिये ट्रस्टी चुने गए (इसका विस्तृत विवरण 'आर्थिक स्थिति' शीर्षक के अंतर्गत अन्यत्र दिया गया है )। संचालकों ने निश्चय किया कि इस कोश से आवश्यकतानुरूप द्रव्य लेकर सभा का भवन बनवाया जाय और शेषांश को उसी ( स्थायी कोश ) में पड़ा रहने दिया जाय तथा सभाभवन बन जाने पर स्थायीकोश में कम से कम एक लाख रुपए अवश्य बच रहें। स्थायीकोश का संचय करने और उसकी आय को उचित रीति से व्यय में लाने के लिये 'बोर्ड आफ ट्रस्टीज' ( संरक्षक मंडल ) स्थापित किया गया, जिसके तेरह सदस्य बनाए गए और जिसके लिये १५ नियम निर्धारित हुए।

अब चंदा इकट्ठा करने का उद्योग आरंभ हुआ। काशी तथा दूसरे नगरों में चंदा किया गया और सर्वश्री माधवराव सप्रे, रामराव चिंचोलकर, विश्वनाथ शर्मा और माधवप्रसाद संयुक्त प्रदेश के भिन्न-भिन्न नगरों में चंदा एकत्र करने के लिये भेजे गए। ये लोग तीन मास तक लगातार घूमते रहे और सभा के लिये चंदा एकत्र करते रहे।

इधर कंपनी बाग वाली भूमि को प्राप्त करने के लिये भी प्रयत्न हो रहा था। सभा के संचालकों को तत्कालीन ज़िला मजिस्ट्रेट रेडिचे महोदय का सहयोग प्राप्त था। सभा के लिये उक्त भूमि प्राप्त करने में रेवरेंड एडविन ग्रीव्स और श्री गोविंददास ने बहुत उद्योग किया। यह इन दोनों महानुभावों के उद्योग और रेडिचे महोदय के सहयोग का ही फल था कि सभा को १८७ फुट लंबी और १३७ फुट चौड़ी वह भूमि ३५००) में मिल गई। इसकी प्राप्ति में पहले तो अनेक बाधाएँ आईं पर धीरे-धीरे सब दूर होती गईं और अंत में ६ मार्गशीर्ष, संवत् १९५९ वि० ( २२ नवंबर, १९०२) को इस भूमि के बैनामे की रजिस्ट्री हो गई।

इस भूमि पर भवन बनवाने में लगभग १६००) और अन्य सामान आदि लगाने में २७५०) व्यय होने का अनुमान लगाया गया। इस प्रकार भवन-निर्माण के लिये उन्नीस-बीस हजार का प्रबंध करना आवश्यक था। सभा की ओर से जो चार सज्जन पहली बार चंदा करने के लिये संयुक्त प्रांत के नगरों में निरंतर तीन मास तक घूमे थे, उन्होंने १४३७८॥=) का चंदा लिखाने में सफलता प्राप्त की थी। इसमें से ९०६१॥) तो नगद मिल गया था और १४०८॥≡) अगले वर्ष उगाहा गया। दूसरे वर्ष एक प्रतिनिधि मंडल, जिसमें सर्वश्री श्यामसुंदरदास, जुगलकिशोर,

माधवप्रसाद और राधाकृष्णदास थे, मिर्जापुर गया। वहाँ १५५२॥) चंदा लिखा गया। इस कार्य में सभा के सभासद् श्री काशीप्रसाद जायसवाल, उनके पूज्य पिता श्री महादेवप्रसाद तथा श्री लक्ष्मीशंकर द्विवेदी ने विशेष उद्योग किया था। दूसरा प्रतिनिधि मंडल, जिसमें सर्वश्री सुधाकर द्विवेदी, माधवप्रसाद और श्यामसुंदरदास संमिलित थे, अयोध्या पहुँचा और वहाँ अयोध्या-नरेश से मिला। महाराज ने दो हजार देना स्वीकार किया। इतना अधिक उद्योग करने पर भी पूरा धन एकत्र न हो सका। किंतु संचालकों ने पूरा द्रव्य प्राप्त हो जाने तक भवन-निर्माण का कार्य रोके रखना उचित न समझा। अब तक जितना रुपया एकत्र हो चुका था, उसी से कार्य आरंभ कर देने का निश्चय कर ६ पौष, १९५९ वि० (२१ दिसंबर, १९०२) को श्रीमान् काशी-नरेश महाराज सर प्रभुनारायण सिंह बहादुर जी० सी० आई० ई० के कर-कमलों द्वारा सभा के भवन का शिलान्यास करा दिया गया। इस अवसर पर एक महती सभा हुई जिसमें काशी के सभी श्रेणियों के लोगों के अतिरिक्त अन्य नगरों के भी कुछ सभासदों ने योग दिया था। यह उत्सव बड़े समारोह के साथ मनाया गया।

जिस भूमि पर सभाभवन की नींव पड़ी, उसके ठीक सामने सरकारी तारघर था (आजकल यहाँ नगर का बड़ा डाकघर है)। उसका तार का एक बड़ा खंभा सभा की भूमि में उस स्थान पर खड़ा था जहाँ मुख्य द्वार बनवाने का विचार था। इसे हटवाने के लिये सभा को अथक उद्योग करना पड़ा। बड़ी दौड़-धूप और लिखा-पढ़ी के बाद कहीं जाकर वह खंभा वहाँ से हटा। सभाभवन की नींव खुदने के बीच भी एक अड़चन आ पड़ी। नींव में एक बड़ा सा नल निकल आया। यदि यह नल जहाँ का तहाँ पड़ा रहने दिया जाता तो भवन के कमजोर हो जाने का डर था और यदि ऐसा न करके इमारत ही हटा दी जाती तो वह कोने में जा पड़ती और उसकी वह सारी शोभा मारी जाती जो आज उसमें वर्त्तमान है। कई महीने निरंतर उद्योग करने पर म्यूनिसपलटी के इंजीनियर की कृपा से वह नल स्थानांतरित हो सका। इस प्रकार इस कार्य में सभा को अनेक विघ्न-बाधाओं का सामना करना पड़ा। पर सभा के संचालकों के अदम्य-उत्साह और अथक उद्योग के सामने न तो कोई विघ्न ही टिक सका और न कोई बाधा ही खड़ी रह सकी।

सभा-भवन का जो नकशा बना था उसमें बाईं ओर पुस्तकालय, दाहिनी ओर कार्यालय और पीछे एक बड़ा हाल तथा दो छोटी-छोटी कोठरियाँ रखी गई थीं। यह नकशा बनारस जिले के तत्कालीन इंजिनियर राय बहादुर श्री विपिनविहारी चक्रवर्ती ने स्वयं तैयार किया था और वे भवन बनते समय भी कभी कभी काम देखने आ जाया करते थे। सभा ने एक ओवरसीयर भी नियत कर दिया था जो भवन के काम की देख-भाल बराबर करता रहता था। भवन के निर्माण-कार्य का निरंतर निरीक्षण करने के लिये सभा के निम्नलिखित ६ सभासदों की उपसमिति भी बना दी गई थी—सर्वश्री गोविंददास, रामनारायण मिश्र, माधवप्रसाद, मोतीराम, छन्नूलाल और श्यामसुंदरदास।

भवन की नींव पड़ते समय यह आशा की गई थी कि यदि आवश्यक द्रव्य की सहायता यथासमय मिलती रही तो भवन सं० १९६० के कार्त्तिक (१९०३ के अक्तूबर) तक बनकर तैयार हो जायगा। किंतु

धन की यथेष्ट सहायता न मिल सकी। कई धनी-मानी व्यक्तियों ने वचन देकर भी पैसा देने में बहुत विलंब कर दिया और कई ने तो दिया ही नहीं। फलतः भवन के निर्माण में विलंब अनिवार्य हो गया। इस कठिन परिस्थिति में भी सभा के संचालकों ने जैसे-तैसे रुपयों का प्रबंध किया। तीन हजार सात सौ रुपए तो दो महानुभावों से उधार लिए गए और ३२३॥=)॥ सभा के स्थायीकोश से दिए गए। उक्त रकम दे देने पर सभा के स्थायी कोश में २१=)१ ही बचे। इस द्रव्य के अतिरिक्त ५०००) ठेकेदार को और दिए जाने का अनुमान लगाया गया था और कम से कम १०००) दूसरे सामानों के लिये अपेक्षित थे। फिर भी किसी न किसी प्रकार उद्योग करके, पूरा तो नहीं पर काम चलाने लायक भवन तैयार कर ही लिया गया।

सभा ने निश्चय किया था कि सभाभवन का गृह-प्रवेशोत्सव धूम-धाम से मनाया जाय। यह शुभ कार्य ग्वालियर-नरेश के कर-कमलों द्वारा संपन्न कराने का निश्चय कर महाराज को लिखा गया। पर सभा पर विशेष कृपा रखते हुए भी कई निजी कारणों से उन्होंने अनुरोध स्वीकार करने में असमर्थता प्रकट की। तब इसके लिये संयुक्त प्रदेश के लेफ्टिनेंट गवर्नर सर जेम्स लादूश महोदय से प्रार्थना की गई। उन्होंने ६ फाल्गुन, १९६० (१८ फरवरी, १९०४) का दिन नियत करके भवन का उद्घाटन करना स्वीकार कर लिया। इस अवसर पर लाट साहब को जो अभिनंदन-पत्र दिया जानेवाला था उसे हिंदी में श्री राधाकृष्णदास ने पद्यबद्ध तैयार किया था और अँगरेजी में मसविदा बनाकर सर्वश्री मदनमोहन मालवीय, गंगाप्रसाद और डाक्टर सर तेजबहादुर सप्रू को दिखा लिया गया था। गृह-प्रवेशोत्सव के कार्यक्रम का प्रबंध करने के लिये बारह सदस्यों की स्वागत समिति भी बना दी गई थी। इन सदस्यों में सर्वश्री मदनमोहन मालवीय, राजा कमलानंद सिंह, राय शिवप्रसाद, लाला हंसराज (लाहौर) और सुधाकर द्विवेदी के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

बृहस्पतिवार ६ फाल्गुन, १९६० वि० (१८ फरवरी, १९०४) को सभा का गृह-प्रवेशोत्सव बड़े समारोह के साथ सभाभवन के सामने विशाल मंडप में मनाया गया। मंडप बेल-बूटों से अच्छी तरह सजाया गया था। काशी के अनेक गण्यमान्य विद्वान्, रईस और सरकारी अधिकारी इस उत्सव में संमिलित हुए थे। दर्शकों की भारी भीड़ थी। इस अवसर पर लाट साहब को सभा द्वारा संपादित रामचरितमानस की एक प्रति भी भेंट की गई थी जिसे स्वीकार करते हुए उन्होंने कहा था कि इसे मैं यावज्जीवन अपने पास रखूँगा।

सभा-भवन अभी तक पूरा नहीं बन पाया था। काम लगा हुआ था और आशा की जाती थी कि महीने-दो महीने में पूरा हो जायगा। मार्गशीर्ष (नवंबर) तक भवन का बहुत सा काम समाप्त हो गया। अब भवन को और उसके चौखट-किवाड़ों को केवल रँगवाना और उसके चारों ओर पड़ी हुई खाली ज़मीन चौरस और सुंदर बनवाना भर शेष रह गया था। भवन के लिये लकड़ी के जिस सामान की आवश्यकता थी वह ठेके पर बना था और यथास्थान लगा दिया गया था। सभा-भवन की शोभा बढ़ाने के लिये सभा के तत्कालीन उपसभापति श्री गोविंददास ने एक फुहारा अपनी ओर से सभा को भेंट किया, जिसका उद्घाटन काशी के तत्कालीन जिला मजिस्ट्रेट ई० एच० रेडिचे महोदय ने

१ मार्गशीर्ष, १९६१ वि० ( १७ नवंबर, १९०४ ) को किया। इसी वर्ष काशी की म्यूनिसपलटी ने सभाभवन को पानी और नल के कर से मुक्त कर दिया। भवन-कर ( हाउस-टैक्स ) पहले तो कुछ दिनों तक देना पड़ा किंतु आगे चलकर उद्योग करने पर उससे भी छुटकारा मिल गया। सभाभवन की शोभा और उसका ऐतिहासिक महत्त्व बढ़ाने के लिये उसमें हिंदी के प्रमुख सहायकों, श्री-वर्धकों और प्रेमियों के तैलचित्र बनवाकर टाँगने का भी उद्योग किया गया।

## नए भवन के लिये धन की अपील

१५ ज्येष्ठ, १९७३ वि० (२९ मई, १९१६) की बैठक में प्रबंधकारिणी समिति ने निश्चय किया कि पुस्तकालय सभा के हाल में रखा जाय, क्योंकि पुस्तकालय का विस्तार बहुत बढ़ गया था और पुस्तकालय के कमरे में उसके लिये पर्य्याप्त स्थान नहीं था। किंतु उसके हाल में चले जाने पर भी स्थान की कमी बनी रही। दिन-दिन इस कमी का अधिकाधिक अनुभव होने लगा और सभा के बढ़ते हुए कार्य को देखकर यह बात निश्चित रूप से मान ली गई कि सभाभवन का और विस्तार किए विना काम न चलेगा। निदान सर्वश्री गौरी-शंकर हीराचंद ओझा, श्यामसुंदरदास, चंद्रधर शर्मा गुलेरी, देवीप्रसाद मुंसिफ, राजेंद्रसिंह ( टिकरा स्टेट ) और गौरीशंकरप्रसाद के हस्ताक्षरों से एक अपील निकाली गई। उसमें कहा गया था कि

"सन् १९०३ में सभा का जो वर्त्तमान भवन बना था वह यद्यपि छोटा नहीं है तथापि सभा की वर्त्तमान और दिन दिन बढ़ती हुई आवश्यकताओं को देखते हुए वह बहुत ही अपर्याप्त है। एक कमरे में सभा का कार्यालय और दूसरे में कोश विभाग है। बीच के बड़े हाल में, जिसमें पहले सभाएँ और वक्तृताएँ हुआ करती थीं आजकल पुस्तकालय है। एक तो दिन पर दिन बढ़ती हुई पुस्तकों की संख्या के कारण हाल ही पुस्तकालय के लिये यथेष्ट नहीं है, दूसरे सभाओं और व्याख्यानों आदि के समय बड़ी अड़चन हुआ करती है। विवश होकर पुस्तकालय बंद करना पड़ता है और मेज, कुर्सी आदि हटाने पड़ते हैं। वर्त्तमान समय की जागृति को देखते हुए सभा के व्याख्यानों के लिये यह हाल भी बहुत छोटा प्रतीत होता है। स्टाक के लिये इस समय सभा के पास कोई यथेष्ट और उपयुक्त स्थान नहीं है। आगे चलकर जब देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तक-माला तथा सूर्यकुमारी पुस्तकमाला का कार्य बढ़ेगा उस समय सभा को स्थान के अभाव के कारण और भी अधिक कठिनता होगी। इन सब बातों का ध्यान करके सभा चाहती है कि कुछ थोड़ी सी नई जमीन लेकर उस पर एक बड़ा हाल बनावे, जिसमें व्याख्यानों का प्रबंध रहे। इसके अतिरिक्त पुस्तकों के स्टाक के लिये भी कुछ नई जमीन निकलनी चाहिए। सभा ने यह भी संकल्प किया है कि प्राचीन ताम्रपत्रों, शिला-लेखों, प्राचीन हस्तलिखित पुस्तकों, तथा हिंदी-प्रेमियों के चित्रों आदि के संग्रह के लिये एक अजायबघर खोला जाय। इसके लिये भी एक नया और विस्तृत भवन चाहिए। सभा जो भवन बनाना या बढ़ाना चाहती है वह हिंदी के गौरव-साधन के लिये, हिंदी-प्रेमियों और हिंदी-भाषियों के कीर्त्ति-प्रसार के लिये। अजायबघर

बनने से खोजियों और जिज्ञासुओं को लाभ होगा, हाल बनने से सर्वसाधारण का उपकार होगा और स्टाक रखने का प्रबंध होने से सभा की पुस्तकें आदि सुरक्षित दशा में रहेंगी। यदि यह नया भवन न बना तो केवल यही नहीं होगा कि सभा का कार्यक्षेत्र न बढ़े बल्कि सभा की बहुत बड़ी हानि होगी। नए भवन तथा नए सामान के लिये सभा को इस समय १५००००) की परम आवश्यकता है।"

इस अपील का कोई विशेष फल नहीं हुआ और सभा को अपेक्षित धन न मिल सका। पर सभा का कार्य बढ़ता ही गया और स्थान की कमी बहुत अधिक खटकने लगी। हाल में भी सब स्थान भर गया था और नई पुस्तकों के रखने तक को स्थान नहीं था। निदान यह सोचा गया कि हाल के तीनों ओर जो बरामदे हैं उनमें दरवाजे लगवाकर दो खंड बनवा दिये जायँ तो अलमारियाँ रखने के लिये छगुना स्थान हो जायगा, अर्थात् जहाँ पहले १२ अलमारियाँ रखी जा सकती थीं वहाँ नया स्थान निकल आने पर ७२ रखी जा सकेंगी। इसके लिये १००००) के व्यय का अंदाजा किया गया। सभा की बिक्री की पुस्तकों के लिये भी स्थान की बड़ी तंगी हो रही थी। पुस्तक-प्रकाशन का कार्य तक स्थगित करना पड़ रहा था। इस नए स्थान के लिये भी १००००) की आवश्यकता थी और इन नए परिवर्धित स्थानों के लिये अलमारी आदि लकड़ी के सामान के लिये ५०००) का व्यय कूता गया था। इस प्रकार २५०००) के संग्रह का प्रबंध होना तुरंत आवश्यक था। इस धन के लिये सभा ने प्रयत्न करना आरंभ कर दिया और आवश्यक नकशे आदि भी तैयार करा लिए।

स्थान की इतनी कमी थी कि सभा को बिक्री की पुस्तकों का स्टाक रखने के लिये भैरव बावली में एक मकान किराए पर लेना पड़ा। उस मकान में लगभग ६५२) मूल्य की पुस्तकें दीमकों ने खा डालीं और सभा को वह मकान १४ भाद्रपद, १९८१ वि० (३० अगस्त १९२४) को छोड़ देना पड़ा। निदान सभा ने १० चैत्र, १९८० वि० को सभा के पीछे वाली म्युनिसपलटी की जमीन ४०००) में खरीद ली। इस स्थान को प्राप्त करने का उद्योग सभा बहुत दिनों से कर रही थी किंतु अनेक बाधाओं के कारण सफलता नहीं मिल सकी थी। इस समय यह भूमि सभा को मिल जाने का बहुत कुछ श्रेय म्युनिसपलटी के तत्कालीन अध्यक्ष डाक्टर भगवान्‌दास को है। इस भूमि का मूल्य श्री बटुकप्रसाद खत्री से रुपया उधार लेकर चुकाना पड़ा था, क्योंकि अभी तक इस कार्य के लिये कोई विशेष आर्थिक सहायता जनता से नहीं मिल सकी थी। स्थान के अभाव की यह दशा थी कि जो पुस्तकें अलमारियों में रखी जानी चाहिए थीं वे संदूकों में भरी पड़ी थीं। न पुस्तकें विषय-क्रम से लगाई जा सकती थीं और न पुस्तकालय की सूची ही ठीक करके प्रकाशित की जा सकती थी। निदान अपनी पूर्व-योजना के अनुसार संवत् १९८३ में सभा ने इस अभाव की पूर्ति का आयोजन आरंभ कर दिया। हाल के तीनों ओर के बरामदों को दो मंजिला करने का कार्य आरंभ हो गया। हाल के कुछ अंश को भी पाटकर दोमंजिला बनाने और दोनों कोनों की कोठरियों तथा कार्यालय की छत पर भी दूसरी मंजिल बनवाने का निश्चय किया गया। कार्य आरंभ हो चुका था। सभा का विचार था कि सभाभवन के दक्षिण ओर जो मंजिल

पाटी जाय उसमें सभा का कार्यालय रहे और शेष सब भाग पुस्तकालय के लिये छोड़ दिया जाय।

सभा अब तक भूमि, भवन-निर्माण और मेज-कुरसी आदि में सब मिलाकर ३६०००) खर्च कर चुकी थी। स्थान की कमी दूर करने के लिये अभी कुछ और भूमि खरीदने की आवश्यकता थी, जिसमें १००००) खर्च होने का अनुमान किया गया था। भवन-परिवर्द्धन के लिये २७०००), नया हाल बनवाने के लिये ६८०००), लकड़ी के सामान के लिये १६०००) और अन्य फुटकल कार्यों के लिये ३४००), इस प्रकार सब मिलाकर १२४४००) की सभा को और आवश्यकता थी। यदि ३६०००) भी इसमें जोड़ दिया जाय तो सभा-भवन पर सभा का १६३४००) लगना निश्चित था। सभा ने इसके लिये प्रांतीय सरकार को लिखा और प्रार्थना की कि वह इस रकम का आधा सभा को प्रदान करने की कृपा करे। इस कार्य के निमित्त सर्वश्री गौरीशंकरप्रसाद, रामनारायण मिश्र तथा श्यामसुंदरदास नैनीताल गए और वहाँ युक्तप्रदेश के शिक्षा-विभाग के अध्यक्ष मिस्टर ए० एच० मेकेंजी तथा शिक्षा-मंत्री राय राजेश्वर बली से मिले और उनके सामने सभा का आवश्यकताएँ उपस्थित करके गवर्नमेंट से सहायता दिलाने की प्रार्थना की। यह यात्रा बड़ी सफल रही। सन् १९२७—२८ के बजट में इस काम के लिये २३४००) की सहायता सभा को देने का निश्चय हुआ। अब तक जनता से भी ६०००) इस कार्य के लिये प्राप्त हो चुके थे। शेष की प्राप्ति के लिये भी सभा ने यत्न करना आरंभ कर दिया था।

सभा-भवन के कुछ भाग को दोमंजिला बनाने का जो विचार किया गया था वह संवत् १९८४ में पूरा हो गया और लकड़ी का आवश्यक सामान भी बनवा लिया गया। यह समस्त कार्य श्री गौरीशंकर-प्रसाद, बी० ए०, एल्-एल्० बी० की देख-रेख में संपन्न हुआ। इस वर्ष प्रांतीय सरकार से भी २२९००) सभा को मिल गए। यदि सभा कुछ धन जनता से भी इकट्ठा कर लेती तो सरकार से और भी मिलने की आशा थी।

ऊपर की मंजिल में जो एक बड़ा हाल बनवाया गया था उसमें पहले सभा का कार्यालय रखने का विचार था। पर हाल बन जाने पर निश्चय हुआ कि उसमें प्राचीन तथा कला-कौशल की वस्तुओं का संग्रहालय रखा जाय जिसमें भारतवर्ष की प्राचीन ऐतिहासिक सामग्री तथा विशेषकर हिंदी-साहित्य से संबंध रखनेवाली वस्तुओं का संग्रह हो। इस समय तक स्थान की कमी बहुत कुछ दूर हो गई थी, पर पुस्तकालय के लिये जितना स्थान दिया गया था सं० १९८६ आते आते वह भी कम पड़ गया। क्योंकि श्री राय कृष्णदास की कृपा से भारत-कला-परिषद् सभा में संमिलित कर दी गई और उसके 'कलाभवन' की सामग्री सें सभा-भवन के ऊपरी भाग का सारा स्थान भर गया। पुस्तकालय की पुस्तकों को ऊपर से हटाना आवश्यक हो गया और यह अनुभव होने लगा कि जब तक सभा का कार्यालय, स्टाक का कमरा और समिति-गृह पुस्तकालय में संमिलित न कर दिए जाएँगे तब तक पुस्तकालय के लिये स्थान की संकीर्णता बनी ही रहेगी। यह अभाव तभी दूर हो सकता है जब नया हाल बनकर तैयार हो जाय और कार्यालय आदि को हटाकर उनके लिये कोई नया स्थान बनवा दिया जाय। सभा-भवन के पीछे वाली भूमि जो ४०००) में मोल ली गई थी, नए बड़े हाल

के लिये काफी नहीं थी। पर यह कमी भी श्री राय कृष्ण जी की उदारता से संवत् १९८५ में दूर हो गई। उन्होंने सभा की भूमि के दक्षिण-पूर्व की ओर का १५०००) की मालियत का अपना मकान सभा को दान कर दिया। इस मकान के मिल जाने से नए हाल के लिये सभा के पास पर्याप्त भूमि हो गई।

हिंदी शब्दसागर की समाप्ति के उपलक्ष में इसी वर्ष वसंतपंचमी के अवसर पर २ और ३ फाल्गुन सं० १९८५ वि० (१४ और १५ फरवरी १९२९) को सभा ने कोशोत्सव मनाने का आयोजन किया और यह भी निश्चय किया कि नई खरीदी हुई जमीन पर जो नया हाल बनेगा उसका शिलान्यास भी इसी दिन महामना श्री मदनमोहन मालवीय के कर-कमलों द्वारा संपन्न करा लिया जायगा। निश्चयानुसार २ फाल्गुन, गुरुवार, सं० १९८५ वि० (१४ फरवरी, १९२९) को वसंतपंचमी के दिन प्रातःकाल के समय महामना मालवीयजी ने शास्त्र-विधि से नए हाल का शिलान्यास-संस्कार अनेक गण्य मान्य विद्वानों की उपस्थिति में संपन्न किया। एक प्रस्तर-मंजूषा में ताम्रपत्र, सभा की नियमावली, कोशोत्सव का पूरा कार्य-क्रम, नागरी-प्रचारिणी पत्रिका की एक प्रति, मध्य हिंदी व्याकरण, सभा का ३५ वर्षों का कार्य-विवरण और प्रचलित सिक्के रखे गए और वह मंजूषा नींव में रख दी गई। इस मंजूषा में जो ताम्रपत्र रखा गया है उस पर खुदा है—

"भारतेंदु हरिश्चंद्र के गोलोकवास के आठ वर्ष के उपरांत हिंदी भाषा और नागरी लिपि के प्रचार, प्रसार तथा उन्नति के उद्देश्य से सं० १९५० में काशी नागरी-प्रचारिणी सभा की स्थापना हुई। उसने अपने ३६ वर्ष के जीवन में अब तक हिंदी भाषा और नागरी लिपि की अमूल्य तथा गौरव-प्रद सेवा की है। इस काल में इस सभा के उद्योग से हिंदी भाषा ने राष्ट्र-भाषा और देव-नागरी लिपि ने राष्ट्रलिपि बनने की योग्यता प्राप्त कर ली है और शनैः शनैः सभी प्रांत उसको उस रूप में ग्रहण करते जा रहे हैं। हिंदी के पठन-पाठन में आशातीत उन्नति हुई है। उसका अध्ययन, अध्यापन वर्तमान विश्वविद्यालयों की उच्चतम कक्षाओं में भी होता है। उसके गद्य और पद्य साहित्य की भाषा प्रायः एक हो रही है और उसकी अक्षयनिधि नित्य नए रत्नों से सुशोभित होती जाती है। उसका प्रचार दूरस्थ द्रविड़ तथा कामरूप प्रांतों तक में हो रहा है। अब हिंदी न जानना और उसका आदर न करना देश-काल की अनभिज्ञता का सूचक माना जाता है। इस सभा का पहला भवन जो इस नवीन भवन के दक्षिण ओर है सं० १९६० में बना था। आज माघ शुक्ल ५, गुरुवार, संवत् १९८५ को इसके दूसरे नवीन भवन का शिलान्यास-संस्करण देश के पूज्य नेता पंडित मदनमोहन माल-वीयजी द्वारा संपन्न हुआ है। ईश्वर इस सभा की नित्य उन्नति करे, हिंदी भाषा तथा नागरी लिपि का स्वावलंबी भारतवर्ष में अखंड राज्य हो और इनके द्वारा भारतवासीमात्र एकता के सूत्र में बँधकर राष्ट्र के निर्माण में सफल प्रयत्न हों।

श्यामसुंदर दास—सभापति,
माधवप्रसाद खन्ना—प्रधान मंत्री"

इस अवसर के लिये नई भूमि पर चार बड़े शामियाने लगाकर मंडप तैयार किया गया था।

शिलान्यास के समय यह विशाल मंडप अनेक गरय मान्य व्यक्तियों और दर्शकों से पूरी तरह भरा था।

इसी वर्ष श्रीमान् डाक्टर सर तेजबहादुर सप्रू ने सभा-भवन में बिजली का प्रबंध करने के लिये २०००) देने का वचन दिया, जिसमें से १५००) सभा को तुरंत मिल गए। इस दान से सभा-भवन में एक विशेष आवश्यकता की पूर्ति हो गई और भवन की शोभा भी बढ़ गई।

इस समय तक सभा-भवन पर कुल ५३०००) के लगभग व्यय हो चुका था, जिसमें प्रांतीय सरकार से प्राप्त २३४००) भी संमिलित है। नया हाल और उसके लिये लकड़ी का सामान आदि बनवाने के लिये सभा एक लाख रुपए की और आवश्यकता समझती थी जिसमें आधी रकम हिंदीप्रेमी जनता से मिल जाती तो बाकी आधी के लिये प्रांतीय सरकार से प्रार्थना की जा सकती थी।

कला-भवन की वस्तुओं के आ जाने पर देखा गया कि ऊपर का स्थान आधी वस्तुओं के लिये भी मुश्किल से काफी हो सकता है। उधर पुस्तकालय में भी स्थान की संकीर्णता का अनुभव होने लगा और सभा ने शीघ्र से शीघ्र उसके लिये उद्योग करने की ठानी। सभा ने विचार किया कि स्थान की असुविधा तब तक दूर नहीं हो सकता जब तक संग्रहालय के लिये अलग भवन न हो और प्रस्तावित नया हाल बन कर तैयार न हो जाय। उन्हीं दिनों देश में सत्याग्रह-आंदोलन छिड़ गया। ऐसी हलचल की स्थिति में चंदा मिलने की आशा नहीं की जा सकती था और सरकार से भी ऐसी दशा में सहायता मिलने की संभावना नहीं थी। अतः कुछ समय के लिये मौन रहना ही उचित समझा गया। धन संग्रह तो न हो सका पर कलकत्ते के सुप्रसिद्ध स्थापत्य विशारद श्री श्रीशचंद्र चटर्जी ने कृपा करके प्रस्तावित भवन का एक बहुत सुंदर नक्शा सभा को प्रदान किया।

स्थान की कमी के कारण आर्यभाषा पुस्तकालय की अनेक पुस्तकें और कलाभवन की अनेक वस्तुएँ आलमारियों में नहीं रखी जा सकीं, इधर-उधर संदूकों में ही बंद पड़ी थीं। अतः और कोई उपाय न देखकर सभा ने विचारा कि जो उत्तम मूर्त्तियाँ आँगन में ही दैव के भरोसे पड़ी रहती हैं उनकी रक्षा के लिये आँगन को पाट दिया जाय। सं० १९९५ में श्री मुरारिलाल केड़िया ने अपनी स्वर्गीया बहन और बहनोई के स्मारक स्वरूप मूर्ति-विभाग के आँगन को पाटने और उसे गैलरी के रूप में परिणत करा देने के लिये १००१) सभा को प्रदान किया। इससे आधुनिक ढंग की प्राकृतिक तथा कृत्रिम प्रकाशयुक्त सुंदर गैलरी तैयार करा ली गई और इस नए हाल का नाम 'श्री काशीदेई चंडीप्रसाद मूर्त्ति मंदिर' रखा गया। इसका उद्घाटन प्रयाग-संग्रहालय के प्राण रायबहादुर श्री ब्रजमोहन व्यास ने किया था। इस नए हाल से कला-भवन का कुछ काम तो चल गया। पर नए भवन की कमी ज्यों की त्यों बनी है।

सभा-भवन के पूर्व की ओर गोदाम के पास एक स्टॉक रूम भी संवत् १९९७ में बनवाया गया। प्रबंध-समिति की १० कार्त्तिक, १९९७ ( २७ अक्तूबर, १९४० ) की बैठक में निश्चय हुआ था कि

> "सूर्यकुमारी, देवीप्रसाद और बालाबख्श राजपूत-चारण पुस्तकमाला के रुपए से इन मालाओं की पुस्तकों के लिये अलग कमरे बनवाए जायँ। पहले बालबख्श चारण पुस्तकमाला के रुपए से गोदाम के पास एक कमरा बनवाया जाय।"

इस निश्चय के अनुसार यह कमरा उसी वर्ष तैयार करा लिया गया। बालाबख्श राजपूत चारण पुस्तकमाला से इस कमरे के निर्माणार्थ रुपया लेने के लिये इस माला की निधि के संरक्षकों (ट्रस्टियों) और काशी के जिला-जज से अनुमति प्राप्त की गई। जज महोदय ने ११००) तक व्यय करने की स्वीकृति दी। पर इस कार्य में ९०२।।) ही व्यय हुए।

पिछले वर्षों में राजघाट की खुदाई से जो वस्तुएँ प्राप्त हुईं, स्थानाभाव से उनका समुचित प्रदर्शन नहीं हो सका। उनके लिये एक बड़े कमरे की आवश्यकता का अनुभव करके प्रबंध-समिति ने २९ आषाढ़, १९९८ (१३ जुलाई, १९४१) की बैठक में मूर्त्ति मंदिर के ऊपर एक बड़ा कमरा बनवाने के लिये कुछ रुपए की स्वीकृति दी और श्री रामभरोसे सेठ की देखरेख में कार्य आरंभ कर दिया गया। सं० १९९८ में इस कार्य पर ७५०) व्यय हुए, किंतु इतने से पूरा कमरा न बन सका और अर्थाभाव के कारण कुछ दिनों तक यह कार्य रोकना पड़ा। सं० १९९९ में ७७५) रुपए और व्यय हुए तब कहीं यह कमरा बन कर तैयार हुआ।

सभाभवन के उत्तर सभा की भूमि की सीमा पर एक कुआँ है। यह मिट्टी से ढक गया था। सं० १९९७ में श्री पुरुषोत्तमदास हलवासिया ने इसके लिये ४००) देने की कृपा की। ४१७=)॥ व्यय करके सं० १९९८ में इस कुँए का जीर्णोद्धार किया गया। सड़क की ओर जनता के सुभीते के लिये जल लेने का मार्ग तथा जगत रायबहादुर सेठ रामदेव चोखानी ने अपने धन से बनवा देने की कृपा की।

सभा-भवन की उत्तरी सीमा के कुछ अंश पर लोहे का जो जंगला लगा हुआ था उसे सं० २००० में हटाकर पूरी उत्तरी सीमा पर एक ऊची दीवार ३२८॥) के व्यय से बनवा दी गई।

सभा के आर्य-भाषा पुस्तकालय का कार्य बहुत बढ़ गया है। प्रति वर्ष हजारों प्रकाशित और हस्तलिखित पुस्तकें आ रही हैं, किंतु उनको रखने के लिये स्थान का नितांत अभाव है। केवल इस समय तक एकत्र हुई पुस्तकालय की समस्त पुस्तकों को ही सुरक्षित अवस्था में ठीक तरह से रखने के लिये सभा के पूरे भवन की आवश्यकता है। भवन के जिस अंश में आज कल सभा का भारत कला-भवन है उसे भी पुस्तकालय के उपयोग में लाने से उसकी आवश्यकता-पूर्त्ति हो सकती है। कला-भवन का कार्य भी बहुत बढ़ गया है; उसमें वस्तुओं का संग्रह दिन दिन इतना बढ़ता जा रहा है कि उनके ठीक ठीक प्रदर्शन के लिये पूरे सभा-भवन से भी बड़े भवन की आवश्यकता है। उसकी अब तक की संगृहीत समस्त वस्तुओं का सुव्यवस्थित प्रदर्शन करने के लिये सभा-भवन से दूने विशाल-भवन के बिना काम नहीं चल सकता। कला-भवन का सुंदर विशाल भवन जिस दिन बन जायगा उस दिन स्थानाभाव की शिकायत बहुत कुछ दूर हो जायगी।

---

## ५—आर्यभाषा पुस्तकालय

नागरीप्रचारिणी सभा के आर्यभाषा पुस्तकालय को आज हिंदी संसार में विशिष्ट स्थान प्राप्त है। इसकी एक विशेषता यह भी है कि इसकी प्राय: सभी पुस्तकें अनेक महानुभावों से विना मूल्य ही प्राप्त हुई हैं। सभा की स्थापना के पश्चात् पुस्तकालय की आवश्यकता का अनुभव होना स्वाभाविक था। स्थापना के प्रथम वर्ष में ही सभा ने हिंदी का पुस्तकालय स्थापित करने का विचार किया और धीरे धीरे पुस्तकों का संग्रह आरंभ हो गया। जिन नवयुवक छात्रों ने मिलकर सभा की स्थापना की थी वे आरंभ में एक दूसरे से लेकर कुछ थोड़ी सी ही पुस्तकें एकत्र कर सके थे। १० चैत्र सं० १९५० (२४ मार्च, १८९४) की बैठक में खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर के स्वामी कुँवर रामदीनसिंह ने अपनी सब पत्रिकाएँ और पुस्तकें सभा को देने का वचन दिया। पुस्तकालय के लिये यह पहला दान था।

पुस्तकें तो मिलने लगीं किंतु सभा के पास उनको रखने के लिये कोई उपयुक्त स्थान नहीं था। इसलिये २१ ज्येष्ठ, १९५१ वि० (४ जून, १८९४) की बैठक में पुस्तकालय की बात उठाई गई तो "गृह तैयार होने पर उसका कार्य आरंभ किया जायगा" इतना ही निश्चय करके छोड़ दिया गया। पर पुस्तकालय की आवश्यकता इस प्रकार टाली नहीं जा सकती थी। फलत: कुछ दिनों तक सभा का यह भावी पुस्तकालय सभा के मंत्री श्री श्यामसुंदरदास के निवासस्थान पर ही रहा। पर शीघ्र ही (लगभग एक मास के पश्चात्) नैपाली खपरे के हरिप्रकाश यंत्रालय में, जहाँ सभा का कार्यालय था, एक बड़ा कमरा लेकर पुस्तकों को भी स्थान देना पड़ा। इस पुस्तकालय का नाम 'नागरीभंडार' रखा गया। २० आषाढ़, १९५१ वि० (४ जुलाई, १८९४) को बैठक में इसके लिये कतिपय नियमों का भी निर्माण हुआ—

"१—प्रत्येक पुस्तक सभासदों को मिल सकती है।

२—दो पुस्तकों से अधिक एक बेर किसी सभासद् को न दी जायगी।

३—एक सप्ताह से अधिक कोई पुरुष कोई पुस्तक न रखने पायगा। यदि अधिक दिन रखने की इच्छा हो तो फिर से लेनी पड़ेगी।

४—पुस्तक खराब हो जाने से उसको दूसरी प्रति ला देनी होगी वा उसका मूल्य देना पड़ेगा।"

सभा के पास न तो धन था और न सदस्यों के चंदे से ही इतनी आय होती थी कि पुस्तकालय के लिये पुस्तकें मोल ली जा सकतीं। अत: इधर उधर से जो पुस्तकें बिना मूल्य प्राप्त हो जाती थीं उन्हीं पर संतोष करना पडता था और अधिक से अधिक पुस्तकें इस प्रकार एकत्र करने के लिये सभा के कार्यकर्त्ता सदा प्रयत्नशील रहते थे। उनकी इस प्रयत्नशीलता का ही यह फल था कि 'भारतजीवन' पत्र के संपादक तथा भारतजीवन प्रेस के स्वामी श्री रामकृष्ण वर्मा ने अपनी प्रकाशित समस्त पुस्तकें विना मूल्य देना स्वीकार किया। इसी प्रकार श्री उमाप्रसाद ने भी अपने यहाँ की सब पुस्तकें देने का वचन दिया। राजा रामपाल सिंह अपना दैनिक पत्र 'हिंदोस्तान' बिना मूल्य देने लगे। श्री बदरीनारायण चौधरी का

'नागरी नीरद', श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' का 'साहित्य-सुधानिधि', प्रयाग से निकलनेवाला 'प्रयाग समाचार' और जबलपुर का 'शुभचिंतक' बिना मूल्य आने लगे। सभा के प्रथम वर्ष में नागरी-भंडार की यही शैशवावस्था थी।

संवत् १९५२ में श्री राधाकृष्णदास के उद्योग से बंबई के सेठ खेमराज श्रीकृष्णदास ने अपने यहाँ की प्रकाशित समस्त हिंदी पुस्तकें सभा को देने का वचन दिया और सं० १९५३ में इनकी ११२ पुस्तकें उसके पुस्तकालय में आ गईं। संवत् १९६३ में सेठजी काशी आए और एक दिन सभा में भी पधारे। पुस्तकालय को देखकर वे बहुत प्रसन्न हुए और पाँच सौ रुपयों की पुस्तकें उसे प्रदान कीं।

उन दिनों काशी के हनुमान सेमिनरी स्कूल की देखरेख में एक पुस्तकालय था जिसकी बहुत दुर्दशा हो रही थी। सं० १९५१ में सभा का ध्यान उसकी ओर गया। उस पुस्तकालय का नाम 'आर्यभाषा पुस्तकालय' था और उसमें लगभग दो हजार पुस्तकें थीं। श्री गदाधरसिंह ने पत्नी के दिवंगत होने पर निःसंतान होने के कारण अपने उत्तराधिकारी के रूप में वह पुस्तकालय सं० १९४१ वि० ( सन् १८८४ ई० ) में मिर्जापुर में स्थापित किया था। श्री गदाधरसिंह पेशकार थे। सरकारी नौकर होने के कारण उनकी बदली होती रहती थी और पुस्तकालय को अपने साथ साथ लिए फिरना असंभव था। सं० १९४७ वि० ( सन् १८९० ) तक तो वह मिर्जापुर में ही रहा। परंतु उस वर्ष के अंत में जब उनकी बदली मिर्जापुर से इटावे को हुई, उन्होंने उसे काशी रखना निश्चित किया और उसका प्रबंध बनारस के हनुमान सेमिनरी स्कूल को सौंपा। स्वयं इटावा चले गए। इनकी अनुपस्थिति में उचित देखरेख न होने के कारण पुस्तकालय की उन्नति होना तो दूर उलटे अवनति होने लगी। उसकी यह दुर्दशा देख सभा ने ११ भाद्रपद, संवत् १९५१ वि० ( २७ अगस्त, १८९४ ) की बैठक में यह निश्चय किया कि—

"एक प्रस्ताव सभा से मिर्जापुर के बाबू गदाधरसिंह के पास जो कि अब इटावे में हैं, भेजा जावे कि वे अपनी लायब्रेरी को जो यहाँ बड़ी दुर्दशा में है नागरीप्रचारिणी सभा में मिला दें।"

श्री गदाधरसिंह ७ माघ, सं० १९५० (२० जनवरी, १८९४ ) को सभा के साधारण सदस्य बन चुके थे। उनसे पुस्तकालय के विषय में पत्र-व्यवहार चलता रहा। कुछ तो बहुत समय तक निरंतर कार्य करते रहने से ऊब कर और कुछ अपने पुस्तकालय की स्थिति सुधारने की इच्छा से उन्होंने दो वर्ष की छुट्टी ली और सं० १९५३ ( १८९६ ) में वे काशी चले आए। उस समय सभा ने अपना प्रस्ताव पुनः उनके संमुख रखा। सभा का सुप्रबंध देखकर वे विशेष प्रभावित हुए और अपना आर्यभाषा पुस्तकालय सभा के प्रबंध में देने के लिये सहमत हो गए। फलस्वरूप सभा के निश्चयानुसार २ आषाढ़, सं० १९५४ ( १६ जून, १८९७ ) को रायबहादुर श्री लक्ष्मीशंकर मिश्र के घर पर पुस्तकालय के नियमों के निर्णयार्थ अर्थात् पुस्तकालय के दान की शर्तों और उसके प्रबंध आदि के विषय में विचार करने के लिये सभा के सभापति श्री लक्ष्मीशंकर मिश्र, मंत्री श्री राधाकृष्णदास और आर्यभाषा पुस्तकालय के स्वामी श्री गदाधरसिंह एकत्र हुए। परस्पर पर्याप्त विचार विनिमय के पश्चात् निर्णीत नियमों का स्वीकार-पत्र उक्त तीनों महानुभावों के हस्ताक्षर सहित तैयार किया गया जिसकी एक प्रति श्री गदाधरसिंह

को दी गई और दूसरी सभा में रखी गई। स्वीकार-पत्र इस प्रकार था—

"श्रीयुत नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

महाशयगण;

सभा के मंतव्य के अनुसार आज हम लोगों ने एकत्र होकर यह विचार स्थिर किया है जो नीचे लिखा है। आशा है कि सभा इसे स्वीकार करेगी वा अपनी इच्छानुसार आवश्यक परिवर्तन करेगी। स्थान के लिये हम लोगों की यह संमति है कि इस समय बाबू भगवतीप्रसाद का मकान खाली है। उसके स्वामी से प्रार्थना की जाय। यदि वे किराए पर दें तो उसमें सभा का आफिस, पुस्तकालय तथा आर्यभाषा-पुस्तकालय उठा दिया जाय और बाबू गदाधरसिंह को लिख दिया जाय कि आर्यभाषा पुस्तकालय की कुल सामग्री उस स्थान पर भेज दें।

१—काशी नागरीप्रचारिणी सभा का स्थान नं० १ नैपाली खपरा बदल दिया जाय और नए स्थान में पुस्तकालय के साथ सभा का कार्यालय भी रहे तथा वहीं सभा की मीटिंग भी हुआ करे।

२—पुस्तकालय का नाम—"आर्यभाषा पुस्तकालय—जिसमें नागरीभंडार संमिलित है" हो।

३—यदि दैवात् सभा टूट जाय तो समस्त पुस्तकालय सामग्रीसहित सर्वसाधारण के उपयोग के लिये बाबू गदाधरसिंह को दे दिया जाय और यदि कोई ऐसा दैवी कारण उपस्थित हो जिससे पुस्तकालय को किसी प्रकार की हानि के पहुँचने की संभावना हो तो पुस्तकालय में जितनी पुस्तकें व सामग्री बाबू गदाधरसिंह ने दी हो वा उनके द्वारा आई हो उनको फेर दी जाय। कदाचित् बाबू गदाधरसिंह उस समय जीवित न रहें तो वह सर्वसाधारण की संपत्ति हो जायगी और उसका प्रबंध उस समय के उपस्थित विद्वानों के हाथ में सौंप दिया जाय।

४—नागरीप्रचारिणी सभा को पुस्तकालय की सामग्री पर केवल संरक्षण का अधिकार होगा, हस्तांतर करने का अधिकार न होगा।

५—पुस्तकालय के हित के लिये सभा जो कुछ प्रबंध करे उसमें बाबू गदाधरसिंह को मंतव्य प्रकाश करने का अधिकार होगा।

६—पुस्तकालय के सहायतार्थ ५) रु० मासिक सभा देगी और उतना ही बाबू गदाधरसिंह भी देंगे।

७—इस १०) रु० मासिक आय में से पुस्तकालय के गृह का किराया, एक क्लर्क ( जो नागरीप्रचारिणी सभा के आफिस का भी काम करेगा ) का वेतन तथा अन्य ऐसे ही व्यय किए जायँगे। उससे जो बचेगा वह पुस्तकालय की उन्नति में व्यय होगा।

८—पुस्तकालय के प्रबंध के लिये एक सब कमेटी निम्नलिखित पाँच महाशयों की बना दी जाय। यह कमेटी बिना किसी विशेष कारण के बदली न जाय। इस कमेटी के बाबू गदाधरसिंह स्थायी ( लाइफ ) मंत्री होंगे और इस कमेटी को अपनी सहायता के लिये एक वा अधिक सभासद् बढ़ा लेने का अधिकार होगा।

## नाम सभासदों के

१—रायबहादुर पंडित लक्ष्मीशंकर मिश्र, एम० ए०

२—बा० गदाधरसिंह।

३—बा० राधाकृष्णदास।

४ —बा० कार्तिकप्रसाद।
५—पं० जगन्नाथप्रसाद मेहता।
आज १६ जून सन् १८६७ ई० वार बुध को हम लोगों ने इसे स्वीकार कर इस पर निज हस्ताक्षर कर दिये।

ह० लक्ष्मीशंकर मिश्र
सभापति नागरीप्रचारिणी सभा, काशी
ह० गदाधरसिंह
स्वामी आर्यभाषा पुस्तकालय
ह० श्री राधाकृष्णदास
मंत्री नागरीप्रचारिणी सभा, काशी"

सभा ने इसे स्वीकार कर लिया और इस प्रकार श्री गदाधरसिंह का आर्यभाषा पुस्तकालय उसके संरक्षण में आ गया। उस समय इसमें १६८६ पुस्तकें थीं।

अगले वर्ष ( सं० १६५४ ) तक आर्यभाषा पुस्तकालय का कार्य नियमित रूप स चल निकला। १७ पौष, १६५४ ( १ जनवरी, १८६८ ) से प्रतिदिन प्रातः और सायं दोनों समय जनता के लिये इसके खुलने का प्रबंध कर दिया गया। पुस्तकालय का प्रबंध करने के लिये इन सात सदस्यों की एक उपसमिति बनाई गई—सर्वश्री हनुवंत सिंह, श्यामसुंदरदास, रामनारायण मिश्र, टेकचंद आर्य, ठाकुरदास, राधाकृष्णदास, गदाधरसिंह ( स्थायी मंत्री )।

सं० १६५५ के आरंभ में ११ श्रावण सं० १६५५ (२७ जुलाई १८६८) को प्रातःकाल श्री गदाधरसिंह का अचानक देहावसान हो गया। साधारण सभा ने अपनी १६ श्रावण, सं० १६५५ (१ अगस्त १८६८) की बैठक में उनकी मृत्यु पर शोक प्रकट किया और श्री राधाकृष्णदास के प्रस्ताव तथा श्री श्यामसुंदरदास के अनुमोदन पर सर्वसम्मति से निश्चित हुआ कि

"उक्त बाबू साहब के स्मारक स्वरूप सभा का पुस्तकालय 'नागरीभंडार' आगे से 'आर्यभाषा पुस्तकालय' में जो कि उक्त बाबू साहब का स्थापित है, मिला दिया जाय और कार्यालय में उनका चित्र टाँग दिया जाय।"

उसी दिन सभा की प्रबंधकारिणी की बैठक में यह भी निश्चय किया गया कि

"बाबू गदाधरसिंह की मृत्यु से पुस्तकालय की आय में जो ५) मासिक की कमी हुई है उसके लिये साधारण सभा से प्रार्थना की जाय कि वह सभा से दिया जाना स्वीकार करे।"

निश्चयानुसार इसी वर्ष ( सं० १६५५ ) नागरीभंडार आर्यभाषा पुस्तकालय में मिला दिया गया और नाम भी आर्यभाषा पुस्तकालय ही स्वीकार कर लिया गया। नागरीभंडार और आर्यभाषा पुस्तकालय दोनों के एक हो जाने पर हिंदी पुस्तकों की संख्या २४६५ और अँगरेजी पुस्तकों की ८३ हो गई। वाचनालय में २२ समाचारपत्र आने लगे। पुस्तकालय में पुस्तकें और समाचारपत्र पढ़ने आनेवालों की दैनिक संख्या भी बढ़ चली।

श्री गदाधरसिंह अपनी मृत्यु के पूर्व ६ श्रावण, १६५५ (२५ जुलाई, १८६८) को वसीयतनामा लिखकर पुस्तकालय की यथोचित उन्नति और उसे चिरस्थायी बनाने के लिये अपनी समस्त संपत्ति सभा को अर्पण कर गए थे। उन्होंने श्री राधाकृष्णदास को उसका संरक्षक ( 'वसीह' ) नियत किया था। तदनुसार सं० १६५५ (१८६८) में जज साहब की अदालत में 'प्रोबेट' के लिये प्रार्थनापत्र दिया गया। इसके विरुद्ध कई विपक्षियों ने उद्योग किया। फलतः सभा को भी मुकदमा

लड़ना पड़ा। मुकदमे के खर्च का प्रबंध रुपए उधार लेकर किया गया। लगभग एक वर्ष तक यह मुकदमा बनारस की दीवानी अदालत में चलता रहा। ३१ आषाढ़, १९५६ (१५ जुलाई, १८९९) को विद्वान् जज ने श्री गदाधरसिंह के वसीयतनामे को ठीक मानकर उनकी समस्त संपत्ति का अधिकार सभा को दे दिया। इस सफलता का श्रेय विशेष रूप से श्री राधाकृष्णदास की सहिष्णुता और कार्य-तत्परता को है। किंतु मुकदमा यहीं समाप्त न होकर, हाईकोर्ट तक गया और कई वर्षों तक चलता रहा। संवत् १९६१ में जाकर कहीं यह निपट सका। हाईकोर्ट ने भी अपना निर्णय सभा के ही पक्ष में दिया। इस मुकदमे में सर्वश्री मदनमोहन मालवीय, छन्नूलाल वकील और सर सुंदरलाल ने सभा के पक्ष में बहुत उद्योग किया था। आरंभ में अनुमान किया गया था कि श्री गदाधरसिंह की जायदाद आदि से सात-साढ़े सात हजार मिलेंगे और सब देना चुकाकर तथा उनके क्रिया-कर्म आदि में आवश्यक व्यय करके सभा को तीन-साढ़े तीन हजार बच रहेंगे। किंतु उनकी संपत्ति से जो कुछ मिला वह सब मुकदमे में ही स्वाहा हो गया और पुस्तकालय को उससे कोई आर्थिक सहायता न मिल सकी।

३२ आषाढ़, १९५५ वि० (१६ जुलाई, १८९८) के वार्षिक अधिवेशन में पुस्तकालय समिति का चुनाव प्रतिवर्ष होना आवश्यक कर दिया गया और उसी अधिवेशन में पुस्तकालय के लिये सर्वश्री श्यामसुंदरदास, राधाकृष्णदास (मंत्री), शिवप्रसाद, कार्त्तिकप्रसाद, किशोरीलाल गोस्वामी, अमीरसिंह और गोविंददास इन सात सदस्यों की एक नई उपसमिति बना दी गई। पुस्तकालय-उपसमिति की प्रार्थना पर २६ भाद्रपद १९५६ (११ सितंबर १८९९) की साधारण बैठक में यह भी निश्चय कर दिया गया कि पुस्तकालय का हिसाब भी सभा का हिसाब जाँचनेवाले महाशय ही जाँचा करें। सं० १९५७ में यह व्यवस्था बदल दी गई। १३ चैत्र, १९५७ वि० (२७ मार्च, १९०१) की बैठक में सभा ने निश्चय किया कि पुस्तकालय उपसमिति भंग कर दी जाय, पुस्तकालय का प्रबंध सभा की प्रबंधकारिणी सभा के किसी एक सदस्य को प्रतिवर्ष सौंप दिया जाय और पुस्तकालय का हिसाब सभा के हिसाब में संमिलित कर लिया जाय। इस निश्चय के अनुसार ४ श्रावण, १९५८ वि० (२० जुलाई, १९०१) की बैठक में प्रबंधकारिणी सभा ने एक वर्ष के लिये श्री माधवप्रसाद को पुस्तकालय का प्रबंधकर्त्ता नियत किया। पुस्तकालय-उपसमिति के टूट जाने पर पुस्तकालय के सर्वप्रथम प्रबंधकर्त्ता श्री माधवप्रसाद ही थे।

पुस्तकालय के नियमों पर सं० १९५८ में २६ अगस्त, १९०१ को प्रबंधकारिणी सभा की बैठक में विचार हुआ और निम्नांकित १३ नियम स्वीकार किए गए—

(१) इस पुस्तकालय का नाम आर्यभाषापुस्तकालय है।

(२) पुस्तकालय की पुस्तकों और समाचारपत्रों को सर्व साधारण आकर देख सकते हैं।

(३) जो लोग आर्यभाषा पुस्तकालय के सहायक हुआ चाहें उन्हें निम्नलिखित आशय के निवेदनपत्र पर हस्ताक्षर करके सुपरिंटेंडेंट के पास भेजना चाहिए।

श्रीयुत सुपरिंटेंडेंट आर्यभाषा पुस्तकालय,

नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

महाशय,

मैं आर्यभाषा पुस्तकालय का सहायक हुआ चाहता हूँ। कृपा कर मेरा नाम सहायकों की नामावली में लिख लीजिए। मैं नागरीप्रचारिणी सभा का सभासद् भी हूँ। आपके नियमानुकूल वार्षिक मासिक चंदा दूँगा और एक वर्ष मास का चंदा भेजता हूँ।

भवदीय

ता०　　　　　} नाम————————
　　　　　　　} पता————————

(४) यह पत्र काशी नागरीप्रचारिणी सभा के एक सभासद् से हस्ताक्षर कराके भेजना चाहिए। जब तक किसी सभासद् का हस्ताक्षर न होगा तब लों कोई महाशय जो सभा के सभासद् नहीं हैं, पुस्तकालय के सहायक नहीं हो सकेंगे। किसी सभासद् के हस्ताक्षर न होने पर जमानत की भाँति ५) जमा करना होगा और यह रुपया उन महाशय के सहायकों से अलग होने पर उन्हें लौटा दिया जायगा।

(५) जो महाशय इस पुस्तकालय के सहायक होंगे उन्हें कम से कम ।) मासिक अथवा ३) वार्षिक देना होगा।

(६) जो लोग ।) मासिक अथवा ३) वार्षिक देंगे उन्हें केवल एक पुस्तक और एक समाचार पत्र पढ़ने के लिये मिल सकेगा, जो लोग ।।) मासिक अथवा ६) वार्षिक देंगे उन्हें दो पुस्तकें और दो समाचार-पत्र पढ़ने को मिल सकेंगे और जो लोग १) मासिक वा १२) वार्षिक देंगे उन्हें ५ पुस्तकें और ३ समाचारपत्र दिए जा सकेंगे।

(७) नागरीप्रचारिणी सभा के सभासदों को कम से कम =) मासिक अथवा १) वार्षिक देना होगा। विशेष अधिकार के लिये उन्हें साधारण सहायकों का आधा चंदा देने पर अधिकार प्राप्त होंगे।

(८) प्रत्येक पुस्तक अधिक से अधिक १५ दिन के लिये दी जा सकेगी, परंतु यदि और कोई सहायक उस पुस्तक को न चाहेगा तो वह पुनः उसी सहायक को मिल सकेगी।

(९) दैनिक पत्र दो दिन तक, साप्ताहिक एक सप्ताह तक, पाक्षिक एक पक्ष तक और मासिक पत्र एक मास तक पुस्तकालय में रहने पर दिए जा सकेंगे। विदित रहे कि दैनिक एक दिन, साप्ताहिक दो दिन, पाक्षिक तीन दिन और मासिक को एक सप्ताह पीछे लौटा देना होगा।

(१०) जो महाशय कोई पुस्तक खो देंगे उन्हें दूसरी पुस्तक मँगा देनी होगी अथवा डाक व्यय सहित उसका मूल्य देना होगा और जो बिगाड़ देंगे उन्हें उसे ठीक करवा या बदलवा देना होगा।

(११) हाथ की लिखी और अलभ्य पुस्तकें पुस्तकालय के बाहर किसी को न दी जायगी जब तक कि प्रबंधकारिणी सभा की विशेष आज्ञा किसी महाशय के लिये न होगी। ऐसी पुस्तकों पर सूची में चिह्न रहेगा।

(१२) सहायकों के अतिरिक्त किसी को कोई पुस्तक या पत्र घर ले जाने को नहीं दिया जायगा। परंतु प्रबंधकारिणी सभा को अधिकार होगा कि किसी ऐसे पुरुष को जो सहायक न हो पुस्तक ले जाने की आज्ञा दे।

(१३) यह पुस्तकालय सर्वसाधारण के लाभार्थ पहली अप्रैल से ३० सितंबर तक प्रातःकाल ६ बजे से ९ बजे तक और सायंकाल ३।। बजे से ६।। बजे तक और पहिली अक्तूबर से ३१ मार्च तक प्रातः-

काल ७॥ बजे से १०॥ बजे तक और सायंकाल २॥ बजे से ५॥ बजे तक खुला रहेगा।

२० कार्त्तिक, १९५९ (६ नवंबर, १९०२) की बैठक में एक नियम यह और बढ़ाया गया—"जिस सहायक के यहाँ तीन मास का चंदा बाकी रहेगा उसका नाम सहायकों की नामावली से काट दिया जायगा।" इसके बाद सं० १९७८ में भी कई कारणों से पुस्तकालय के नियमों में कई परिवर्त्तन करने पड़े। पुस्तकालय का चंदा और पुस्तकें प्रायः सहायकों के यहाँ रह जाती थीं। अतः प्रत्येक सहायक से ५) उपनिधि (अमानत) के रूप में जमा कराना आवश्यक करना पड़ा। वार्षिक चंदे में भी कुछ परिवर्त्तन किए गए। इन नियमों के बनने पर आरंभ में सहायकों की संख्या बहुत घट गई, किंतु पुस्तकालय अवश्य ही अधिक सुरक्षित हो गया और उसकी अनेक बहुमूल्य पुस्तकें नष्ट होने या खो जाने से बच गईं। सहायकों की संख्या भी अधिक समय तक कम नहीं रही। शीघ्र ही उसमें वृद्धि आरंभ हो गई। इन परिवर्त्तनों के पश्चात् भी अनेक बार कई छोटे-मोटे परिवर्त्तन, संशोधन और प्रवर्द्धन पुस्तकालय के नियमों में समय-समय पर होते रहे। इस समय (११ आषाढ़ सं० २०००) तक संशोधित जिस नियमावली के अनुसार पुस्तकालय का कार्य हो रहा है वह इस प्रकार है—

१—काशी नागरीप्रचारिणी सभा के पुस्तकालय का नाम आर्यभाषा पुस्तकालय है और इसका सब प्रबंध पुस्तकालय के निरीक्षक के अधीन रहेगा जिसे प्रतिवर्ष प्रबंध-समिति चुनेगी।

२—यह पुस्तकालय सर्वसाधारण के लाभार्थ १ अप्रैल से ३१ अक्तूबर तक प्रातःकाल ६ बजे से ९ बजे तक तथा सायंकाल ५ बजे से ८ बजे तक और १ नवंबर से ३१ मार्च तक प्रातःकाल ७ बजे से १० बजे तक तथा सायंकाल ४ बजे से ७ बजे तक खुला रहेगा, परंतु प्रबंध-समिति को अधिकार होगा कि सर्वसाधारण की सुविधा के लिये वह उपर्युक्त समयों में परिवर्तन करे।

३—पुस्तकालय के सब विभागों की पुस्तकों तथा समाचार-पत्रों को सर्वसाधारण पुस्तकालय में आकर देख सकते हैं। हस्तलिखित पुस्तकें देखने अथवा उनकी प्रतिलिपि करने के लिये प्रबंध-समिति की अनुमति आवश्यक होगी।

४—जो सज्जन पुस्तकालय में पुस्तक पढ़ेंगे उन्हें उस पुस्तक की रसीद पुस्तकाध्यक्ष को देनी होगी जो उन्हें पुस्तक लौटाने पर लौटा दी जायगी। यदि वे उस रसीद को न लौटा लेंगे तो समझा जायगा कि उन्होंने पुस्तकाध्यक्ष को पुस्तक नहीं लौटाई है और वे उस पुस्तक को अथवा उसके मँगवाने के डाक-व्यय सहित उसके मूल्य को देने के लिये बाध्य होंगे।

५—पुस्तकालय में पढ़ने के लिये एक से अधिक पुस्तकें उन्हीं सज्जनों को दी जा सकेंगी जो किसी विशेष ग्रंथ के लिखने के लिये सहायता चाहते हों।

६—पुस्तकें, गठरी-मोटरी आदि फालतू चीजों को लेकर कोई सज्जन पुस्तकालय के भीतर न आ सकेंगे।

७—पुस्तकालय के भीतर जोर से बातचीत, वाद-विवाद, हँसी-मजाक करना, सिगरेट-बीड़ी आदि पीना तथा पत्र-पत्रिकाओं को स्थानांतरित करना मना है। जो सज्जन इन नियमों का उल्लंघन करेंगे, उन्हें ऐसा करने से रोकने का अधिकार पुस्तकाध्यक्ष को होगा।

८—प्रति शनिवार को पुस्तकालय वंद रहेगा, किंतु वाचनालय खुला रहेगा। हिंदू पर्वों तथा विशेष अवसरों पर प्रबंध-समिति के निश्चय के अनुसार पुस्तकालय वंद रहेगा, परंतु विशेष पर्वों को छोड़कर वाचनालय प्रति दिन खुला रहेगा।

९—जो सज्जन आर्यभाषा-पुस्तकालय के सहायक होना चाहें उन्हें निर्धारित आवेदनपत्र पर अपना हस्ताक्षर करके निरीक्षक के पास भेजना चाहिए।

श्रीयुत निरीक्षक महाशय,

आर्यभाषा-पुस्तकालय,

नागरीप्रचारिणी सभा, काशी।

महोदय,

मैं आर्यभाषा-पुस्तकालय का सहायक होना चाहता हूँ। कृपा कर मेरा नाम सहायकों की श्रेणी में लिख लीजिए। मैंने पुस्तकालय के नियमों को भली भाँति समझ लिया है। मैं उनका तथा पारवर्तित या नवीन नियमों का पूर्ण रीति से पालन करूँगा। मैं नियमानुसार ॥), ।॥), १) मासिक चंदा अथवा ३), ४), ५), वार्षिक चंदा अमानत के ५),१०),१५) सहित भेजता हूँ।

भवदीय

तिथि.......... नाम....................

स्थायी पता....................

....................

वर्तमान पता....................

....................

१०—जो सज्जन पुस्तकालय के सहायक होंगे उन्हें सभा में १५), १०) या ५) अमानत की भाँति जमा करना होगा और ५), ४) या ३) अग्रिम वार्षिक चंदा देना होगा। १५) अमानत और ५) वार्षिक चंदा देनेवाले सहायकों को तीन पुस्तकें, १०) अमानत और ४) वार्षिक चंदा देनेवाले सहायकों को दो पुस्तकें तथा ५) अमानत और ३) वार्षिक चंदा देनेवाले सहायकों को एक पुस्तक ले जाने का अधिकार होगा।

११—जो सज्जन कुछ मास के लिये पुस्तकालय से लाभ उठाना चाहते हैं, वे पुस्तकालय के मासिक सहायक बन सकते हैं। मासिक सहायकों में जो तीन पुस्तकें लेना चाहें उन्हें अमानत के १५) के साथ १) अग्रिम मासिक चंदा, जो दो पुस्तकें लेना चाहें उन्हें अमानत के १०) के साथ ।॥) अग्रिम मासिक चंदा और जो एक पुस्तक लेना चाहें उन्हें अमानत के ५) के साथ ॥) अग्रिम मासिक चंदा देना होगा।

पुस्तकालय से संबंध छोड़ने पर सहायकों को उनकी अमानत के रुपए लौटा दिए जायँगे। परंतु यदि उनसे किसी प्रकार की हानि हुई होगी तो उनकी अमानत से उसकी पूर्ति की जायगी।

१२—जो सज्जन एक साथ १००) या उससे अधिक नगद अथवा पुस्तकालय के उपयोग में आने योग्य १००) वा उससे अधिक की ऐसी संपत्ति वा २००) या उससे अधिक की ऐसी पुस्तकें जिन्हें प्रबंध-समिति स्वीकार करे, पुस्तकालय को दान देंगे वे उसके सहायक समझे जायँगे और आजीवन एक पुस्तक पढ़ने के लिये ले सकेंगे।

१३—साधारणतः सहायकों को अपनी अमानत से कम मूल्य की पुस्तक लेने का अधिकार होगा। अभीष्ट पुस्तक यदि अधिक मूल्य की हो तो उसे मँगवाने के डाक-व्यय सहित उसका मूल्य जमा

कराके दी जा सकेगी। पुस्तक वापस होने पर जमा की हुई रकम वापस कर दी जायगी।

१४—जिन सहायकों का चंदा मास अथवा वर्ष के आरंभ में ही अग्रिम नहीं आ जायगा उनको तब तक पुस्तक लेने का अधिकार न होगा जब तक वे अपना चंदा जमा न कर दें। जिनके यहाँ दो वर्ष अथवा दो मास का चंदा बाकी पड जायगा उनका नाम सहायकों की श्रेणी से पृथक् कर दिया जायगा और अमानत के रुपए में से चंदा तथा पुस्तकों का मूल्य यदि बाकी हो तो काट लिया जायगा।

१५—प्रत्येक पुस्तक अधिक से अधिक १५ दिनों में लौटा देनी होगी परंतु यदि और कोई सहायक उस पुस्तक को न लेना चाहेंगे तो वह पुनः उसी सहायक को मिल सकेगी।

१६—पुस्तकें नियत समय के भीतर ही यदि वापिस न की जायँगी तो जितने दिन विलंब से वे लौटाई जायँगी पुस्तकाध्यक्ष को अधिकार होगा कि उसके तिगुने समय तक उन्हें कोई पुस्तक न दें। एक मास पश्चात् पुस्तकाध्यक्ष पत्र द्वारा सहायक को इसकी सूचना देंगे और यदि सूचना देने के पंद्रह दिन के भीतर उनके यहाँ से पुस्तक वापस न आयेगी तो पुस्तकाध्यक्ष को अधिकार होगा कि वे सहायक की अमानत से दूसरी पुस्तक मँगा लें।

१७—यदि किसी सहायक से कोई पुस्तक खो जाय तो जब तक वे उस क्षति की पूर्ति न करेंगे उन्हें कोई पुस्तक लेने का अधिकार न होगा।

१८—जो महाशय कोई पुस्तक खो देंगे उन्हें दूसरी पुस्तक मँगा देनी होगी अथवा मँगाने के डाक व्यय सहित उसका मूल्य देना होगा और जो कुछ बिगाड़ देंगे उन्हें उसे ठीक करवा अथवा बदलवा देना होगा।

१९—हाथ की लिखी, अंग्रेजी तथा अन्य भाषाओं की पुस्तकें, दाताओं के विशेष संग्रहों की पुस्तकें, आकर ग्रंथ ( बुक्स आव् रिफरेंस ) पत्र-पत्रिकाएँ तथा उपलब्ध न होने वाली पुस्तकें प्रबंध-समिति की आज्ञा के बिना किसी को पुस्तकालय से बाहर ले जाने के लिये न दी जा सकेंगी।

२०—सहायकों के अतिरिक्त और किसी को कोई पुस्तक घर ले जाने के लिये नहीं दी जायगी, परंतु जो लोग किसी साहित्य संबंधी कार्य के लिये, जैसे पुस्तक या निबंध आदि लिखने के लिये, पुस्तकों या पत्र-पत्रिकाओं की सहायता चाहेंगे, उन्हें सहायक बनाकर एक साथ अधिक संख्या में पुस्तकों तथा पत्रिकाओं को ले जाने की अनुमति प्रबंध-समिति से मिल सकेगी। ऐसी पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओं की संख्या ५ से अधिक न होगी।

२१—तात्कालिक आवश्यकता पड़ने पर पुस्तकालय के निरीक्षक सभा के सभापति की अनुमति से किसी ऐसी पुस्तक अथवा पत्र-पत्रिका को पुस्तकालय के बाहर ले जाने की अनुमति दे सकेंगे जो नियमानुसार बाहर नहीं जा सकती है, किंतु उन्हें इसकी स्वीकृति आगामी प्रबंध-समिति की बैठक में ले लेनी होगी।

२२—सभा के पदाधिकारियों तथा प्रबंध-समिति के सदस्यों को उनके कार्यकाल में सभा के पुस्तकालय से एक साथ दो पुस्तकें विना शुल्क लेने का अधिकार होगा।

२३—सभा के कर्मचारियों को पढ़ने के लिये पुस्तकालय से एक समय एक पुस्तक निःशुल्क मिल सकेगी।"

सं० १९५९ में पुस्तकालय की समस्त पुस्तकों की जिल्दें बँधकर तैयार हो गईं। इस वर्ष एक भी पुस्तक ऐसी नहीं रही जिसकी जिल्द न बँधी हो।

पुस्तकों की सूची का छपना भी इस वर्ष आरंभ हो गया और वह सं० १९६० में छपकर तैयार हो गई, मूल्य ≈) रखा गया। १८ भाद्रपद, सं० १९६१ (३ सितंबर, १९०४) की बैठक में निश्चय हुआ कि पुस्तकालय की पुस्तकों की एक सूची विषय-क्रम से तैयार की जाय। इस कार्य के लिये सर्वश्री राधाकृष्णदास और श्यामसुंदरदास की एक उप-समिति बना दी गई। किंतु इस वर्ष यह कार्य न हो सका और सं० १९६२ में इस कार्य के लिये सर्वश्री रामनारायण मिश्र, रेवरेंड ई० ग्रीव्स, राधाकृष्णदास और राय शिवप्रसाद की एक उपसमिति पुनः संघटित की गई जिसके निरीक्षण में तीन क्रम—विषय-क्रम, पुस्तकों के नाम-क्रम और ग्रंथकर्त्ता के नाम-क्रम—से सूची बनाने का कार्य आरंभ हुआ। कइ वर्ष तक यह कार्य चलता रहा। बीच में कई बार इस कार्य को शिथिल और कई बार बंद भी करना पड़ा। इसका कारण विशेष रूप से पुस्तकाध्यक्ष श्री केदारनाथ पाठक का लंबे समय तक रुग्ण रहना था। इसी रुग्णता के कारण अंत में पाठक जी को सं० १९७१ में पुस्तकालय से अलग हो जाना पड़ा और उनके स्थान पर सं० १९७२ में श्री कन्हैयालाल शर्मा पुस्तका-ध्यक्ष नियत हुए। पुस्तक-सूची की तैयारी में विलंब होने का दूसरा कारण यह भी था कि पुस्तकों की गणना कई बार करनी पड़ी। अनेक ऐसी पुस्तकें इस जाँच के फलस्वरूप मिलीं जिनकी तीन-तीन, चार-चार प्रतियाँ पुस्तकालय में थीं। सं० १९७० में अंतिम गणना के पश्चात् पुस्तकालय में हिंदी-पुस्तकों की संख्या ६०२५ थी। इसी वर्ष पूरी सूची भी तैयार हो गई और छपने के लिये प्रेस में भेज दी गई। किंतु सं० १९७१ में प्रेस की ढिलाई के कारण पूरी सूची न छप सकी। सं० १९७२ में कहीं यह सूची छपकर तैयार हुई। 'अ' से 'ब' तक की पुस्तकों की यह पूरी सूची थी। सं० १९७७ में इस सूची का दुहराना आरंभ हुआ। अनेक पुस्तकें ऐसी मिलीं जो दो बार उसमें आ गई थीं। कई बार प्रयत्न करने पर भी यह कार्य सं० १९९० से पूर्व पूरा न हो सका। सं० १९९० में पुस्तकालय की पूरी सूची बनकर तैयार हो गई किंतु अर्थाभाव के कारण प्रेस में न दी जा सकी। सं० १९९६ में विषय-क्रम से नवीन रीति के अनुसार संख्या लगाने तथा उनको निर्धारित विषयों में विभक्त करके अलग-अलग रखने का कार्य किया गया। आधुनिक रीति से पुस्तकों का वर्गीकरण धन-जन-सापेक्ष है। सभा के पास धन का अभाव था। फिर भी सभा ने यह कार्य जैसे-तैसे चलाए रखा। कई मास तक पुस्तकालय के पुस्तक-विभाग को बंद रखना पड़ा और अनेक छात्रों का अमानत का रुपया शेष चंदे के साथ लौटा दिया गया। इस वर्गीकरण के लिये तीन अतिरिक्त दफ्तरी नियुक्त करने पड़े जिन्होंने पुस्तकों की मरम्मत और कार्ड आदि लगाने का काम किया। इस वर्ष लगभग ५००० पुस्तकों की जिल्दें बनीं और मरम्मत की गई। यह पूरा वर्ष इस कार्य में लग गया, फिर भी कार्य पूरा न हो सका। यह कार्य सं० १९९७ में पूरा हुआ। अब नवीन प्रणाली के अनुसार पुस्तकालय की दाशमिक वर्गीकृत नवीन सूची छपने के लिये तैयार हो गई।

पर अनेक कठिनाइयों के कारण वह छप न सकी। सं० १९९८ में जो पुस्तकें आईं उनको भी इस सूची में संमिलित करना आवश्यक था। अतः यह कार्य सं० १९९९ में प्राप्त पुस्तकों की सूची सहित सं० २००० के आरंभ में पूरा हुआ। सं० १९९९ में श्री सेठ रामकृष्ण डालमिया ने ७१५) का कागज यह सूची प्रकाशित करने के लिये सभा को प्रदान किया और संवत् २००० के आरंभ में सूची का छपना आरंभ हो गया।

सं० १९६० में बनारस जिला बोर्ड से २५०) की सहायता पुस्तकें खरीदने के लिये पुस्तकालय को मिली। सं० १९६४ में बनारस म्युनिसिपल बोर्ड ने ३६०) वार्षिक और बनारस जिला बोर्ड ने ५०) वार्षिक की सहायता देनी आरंभ की। इस सहायता के मिलने का बहुत कुछ श्रेय बोर्ड के तत्कालीन अध्यक्ष श्री रेडिचे महोदय को है। उन्हीं की प्रेरणा से पुस्तकालय को उक्त सहायता प्राप्त हो सकी। बनारस म्यूनिसिपल बोर्ड से ३६०) वार्षिक अभी तक बराबर मिल रहे हैं। सं० १९८२ में प्रांतीय सरकार ने भी पुस्तकालय को ३६०) वार्षिक सहायता देना स्वीकार कर लिया। सं० १९८५ में यह सहायता १०००) वार्षिक कर दी गई जो अब तक मिल रही है। इसके अतिरिक्त सहायकों के वार्षिक चंदे तथा फुटकर दान आदि से भी दो वर्षों से पुस्तकालय को पहले की अपेक्षा कुछ अधिक वार्षिक लाभ हो जाता है। पुस्तकों का अधिकांश संग्रह पुस्तकदाताओं की कृपा से ही हो सका। इस मद में सभा को अधिक पैसा व्यय करना नहीं पड़ा।

पुस्तकालय में पुस्तकों की संख्या दिन दिन बढ़ती ही जाती है। आरंभ से प्रतिवर्ष अनेक महानुभावों के द्वारा पुस्तकालय को पुस्तकें प्राप्त हो रही हैं। इसके अतिरिक्त इसके लिये विशेष उद्योग भी किया गया जिसमें अच्छी सफलता मिली। सं० १९७२ में श्री शिवप्रसाद गुप्त के उद्योग से अमेरिका के स्मिथ सोनियन इंस्टिट्यूट से बहुत सी पुस्तकें पुस्तकालय के अँगरेजी विभाग को प्राप्त हुईं और अब तक इस संस्था के नवीन प्रकाशन बराबर पुस्तकालय में आ रहे हैं। सं० १९७३ में सभा की ओर से चौबीसवें वार्षिक विवरण में पुस्तक-प्रकाशकों के लिये एक नोट दिया गया था जिसमें कहा गया था—

> "यदि हिंदी पुस्तकों के सभी प्रकाशक कृपा करके अपने यहाँ की छपी हुई पुस्तकों की एक एक प्रति पुस्तकालय में भेजा करें तो सभा का पुस्तकालय बहुत उन्नत अवस्था में हो जाय। ऐसा होना कुछ कठिन नहीं है। लंदन के ब्रिटिश म्यूजियम तथा आक्सफोर्ड और कैंब्रिज के प्रधान पुस्तकालयों में संसार के प्रत्येक स्थान की छपी हुई अँगरेजी पुस्तकें प्रकाशकों द्वारा अवश्य भेजी जाती हैं। यदि इस प्रकार के कुछ नियम हम लोग अपने लिये बनालें तो कम से कम भारतवर्ष में एक पुस्तकालय तो ऐसा हो जाय जिसमें हिंदी की सभी पुस्तकें प्राप्त हो सकें।"

इसके पश्चात् सं० १९७५ में भी इसी विषय का निम्नलिखित नोट २६वें वार्षिक विवरण में दिया गया—

> "हिंदी के उत्साही ग्रंथकार, पुस्तक-प्रकाशक और हिंदी-हितैषी मात्र से सभा प्रार्थना करती है कि वे निज रचित, प्रकाशित और संपादित प्रत्येक नई पुस्तक की एक एक प्रति पुस्तकालय को प्रदान करके उसकी उन्नति में सहायक हों जिससे किसी समय हिंदी-प्रेमियों का यह आदर्श पुस्तकालय हो सकता है।"

फलतः कई प्रकाशकों और ग्रंथकर्त्ताओं ने अपनी पुस्तकें पुस्तकालय में भेजनी आरंभ कर दीं। इनमें हरिदास कंपनी कलकत्ता, हिंदी ग्रंथरत्नाकर कार्यालय बंबई, ज्ञानमंडल काशी और कलकत्ते के विद्वान् श्री पूरणचंद नाहर के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। सं० १९८२ में इंडियन प्रेस प्रयाग ने अपनी प्रायः समस्त नवीन प्रकाशित पुस्तकों की एक एक प्रति पुस्तकालय को विना मूल्य प्रदान की।

इसी प्रकार हिंदी-साहित्य-संमेलन, गुजरात वर्नाक्यूलर सोसायटी, हिंदुस्तानी एकेडमी, भारतीय पुरातत्त्व विभाग, सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा, गीताप्रेस, लीडर प्रेस, ज्ञानमंडल, सस्ता साहित्यमंडल, स्वाध्यायमंडल, आर्य साहित्यमंडल, हिंदी पुस्तकभंडार, भारतीभंडार, जैनसिद्धांत-भवन, शारदामंदिर, ज्ञानमंदिर, हिंदीमंदिर, दरबार साहित्य कमेटी, हिंदी ग्रंथरत्नाकर कार्यालय आदि बहुत से प्रकाशकों और काश्मीर तथा उदयपुर आदि राजदरबारों से उनके प्रकाशन प्राप्त होते रहते हैं।

संवत् १९८० में हिंदी के सुप्रसिद्ध विद्वान् साहित्यसेवी आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने अपना जूहीवाला समस्त संग्रह पुस्तकालय को प्रदान किया। इसमें २४३४ प्राचीन प्राप्य, अप्राप्य भिन्न-भिन्न भाषाओं के ग्रंथ, मासिक पत्रिकाएँ तथा अलभ्य चित्रों का संग्रह है जो हिंदी के विद्वान् साहित्यसेवियों के लिये अत्यंत महत्त्व की सामग्री है। इसमें छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी सभी प्रकार की पुस्तकें हैं। प्रायः हरेक पुस्तक के मुखपृष्ठ पर द्विवेदी जी का हस्ताक्षर और प्राप्ति की तारीख है। समालोचनार्थ प्राप्त पुस्तकों पर समालोचना की तारीख भी लिखी है। उनकी समालोचना कैसी पांडित्यपूर्ण होती थी इसका प्रमाण पुस्तकों के प्रत्येक पृष्ठ पर मिलता है। प्रूफ की भूलों पर भी उनका निशान विद्यमान है। इस संग्रह में 'सरस्वती' के संपादन-काल में द्विवेदी जी द्वारा संपादित समस्त लेखों की हस्तलिखित प्रतियाँ, उन पर किए गए द्विवेदी जी के संशोधनों सहित ज्यों की त्यों विद्यमान हैं। इनको देखकर ही इनके महत्त्व का ज्ञान हो सकता है। यह सब सामग्री अलग-अलग अलमारियों में रख दी गई है और अलमारियों पर 'पंडित महावीरप्रसाद द्विवेदी जी का संग्रह' लिख दिया गया है। इस संग्रह के साथ द्विवेदी जी ने अपने संपादकत्व में सरस्वती में प्रकाशित समस्त लेखों तथा अपने पत्र-व्यवहार का संग्रह भी सभा को दे दिया। सं० १९८४ में अपने अमूल्य संग्रह से द्विवेदी जी ने पुनः ८७१ पुस्तकें, १५४ पत्रिकाएँ और १४१ पत्रिकाओं की फुटकर संख्याएँ पुस्तकालयको प्रदान कीं। संवत् १९९६ में स्वर्गीय द्विवेदी जी के संग्रह की १५०७ पुस्तकें उनके भागिनेय श्री कमलाकिशोर त्रिपाठी से पुस्तकालय को प्राप्त हुईं। अब इस संग्रह में ४३२१ पुस्तकें हैं।

संवत् १९८९ में स्वर्गीय श्री जगन्नाथदास रत्नाकर के सुयोग्य पत्र श्री राधेकृष्णदास ने अपने पूज्य पिता के ग्रंथों का संपूर्ण संग्रह सभा को प्रदान कर दिया। इस संग्रह में ११८९ पुस्तकें तथा पत्र-पत्रिकाएँ हैं। सूर, बिहारी और नंददास के हस्तलिखित ग्रंथों का अच्छा संग्रह है। यह संग्रह भी द्विवेदी-संग्रह के समान ही 'रत्नाकर-संग्रह' के नाम से पृथक् अलमारियों में सजाकर रख दिया गया है। इस संग्रह में ३३८ प्राचीन हस्तलेख हैं जिनमें से कई में एक से अधिक ग्रंथ संमिलित हैं। संवत् १९९० में इस संग्रह की भी सूची तैयार हो गई है।

इस वर्ष श्रीमान् ओरछा-नरेश ने नई पुस्तक खरीदने के लिये पुस्तकालय को १०००) दिया। संवत् १९९२ में भारत-सरकार ने १०८ पुस्तकों की विशेष सहायता प्रदान की। इसी वर्ष निजाम हैदराबाद के गृहसचिव नवाव जुलकदर जंगबहादुर ने अपनी अमूल्य पुस्तक 'खिलाफत इ उन्दुलूस' पुस्तकालय को भेंट की। कानपुर के श्री चंद्रशेखर शुक्ल से भी हिंदी को कानून संबंधी ३६ पुस्तकें इसी वर्ष मिलीं। संवत् १९९५ में श्री राय कृष्णदास के द्वारा स्वर्गीय श्री जगन्नाथप्रसादजी की लगभग ६०० पुस्तकें पुस्तकालय को प्राप्त हुईं। संवत् १९९७ में बिहार के प्रसिद्ध साहित्यसेवी श्री अक्षयवट मिश्र ने अपनी संपूर्ण कृतियाँ एक छोटी अलमारी में सजाकर अपने जीवन के अंतिम काल में पुस्तकालय को भेंट कीं। इस प्रकार का संग्रह खोज और साहित्य के इतिहास-निर्माण में विशेष उपयोगी सिद्ध होगा।

संवत् १९९८ में श्री रामनारायण मिश्र ने ४१३ पुस्तकों का अपना एक संग्रह पुस्तकालय को प्रदान किया। पुस्तकों के अतिरिक्त इसमें पत्रिकाओं का भी संग्रह है। यह संग्रह अलग दो अलमारियों में रखा गया है। इसी वर्ष राय बहादुर डाक्टर श्री श्यामसुंदरदास ने भी ७५०) मूल्य की ६२३ पुस्तकें पुस्तकालय को भेंट कीं। इनमें सभा के प्रकाशन, उनकी अपनी रचित पुस्तकें और हिंदी-साहित्य के अन्य कई उत्तम ग्रंथ थे। किंतु अधिकांश ग्रंथों की प्रतियाँ पुस्तकालय में पहले से विद्यमान होने के कारण दाता की अनुमति से सभा ने ४३२ पुस्तकें २३५।।) में साहित्य-सदन अबोहर को दे दीं। इस धन से नई पुस्तकें खरीदी जायँगी। शेष पुस्तकें पुस्तकालय में विद्यमान हैं।

डाक्टर हीरानंद शास्त्री का संग्रह भी इसी वर्ष प्राप्त हुआ। इस संग्रह में १०१२ ग्रंथ हैं जिनमें २५५ हस्तलिखित पुस्तकें हैं। जैन विद्वानों के संस्कृत ग्रंथ, सर्वश्री आत्मानंद, वुलनर, आशुतोष मुकर्जी, स्वामी दयानंद आदि के स्मारक ग्रंथ, हिंदी में गुरु ग्रंथ साहब की एक सुंदर प्रति और चित्रकला आदि पर अच्छी अच्छी पुस्तकें इस संग्रह में हैं। इस संग्रह की पुस्तकें भी अलग अलमारियों में रख दी गई हैं।

इस वर्ष संवत् २००० में श्री रामनारायण मिश्र पुस्तकालय के निरीक्षक हैं। उनके उद्योग से स्वर्गीय श्री मयाशंकर याज्ञिक का हस्तलिखित ग्रंथों का संग्रह, जो श्री जीवनशंकर याज्ञिक और राय साहब डा० भवानीशंकर याज्ञिक के पास था, इन दोनों भाइयों के अनुग्रह से पुस्तकालय को मिल गया है। याज्ञिक जी का यह संग्रह हिंदी में विख्यात है। इसकी प्राप्ति के लिये कई संस्थाएँ लालायित थीं। इस संग्रह में ११७९ हस्तलिखित ग्रंथ हैं। बहुत दिनों से सभा का विचार था कि पुस्तकालय के इन विशेष संग्रहों का किसी योग्य विद्वान् द्वारा उद्घाटन कराया जाय। याज्ञिक-संग्रह की प्राप्ति के समय इसका अच्छा अवसर समझ श्री जीवनशंकर याज्ञिक के कर-कमलों से ही उक्त संग्रहों का उद्घाटन-कार्य संपन्न कराया गया।

पुस्तकालय में सभा के खोज-विभाग द्वारा संगृहीत हस्तलिखित पुस्तकों का भी एक संग्रह है। इसमें लगभग १५०० हिंदी के हस्तलिखित ग्रंथ और लगभग ३०० संस्कृत के हस्तलिखित ग्रंथ हैं। इनके अतिरिक्त सभा के भारत-कला-भवन में भी एक हजार ग्रंथ संगृहीत हैं जिनमें आकर ग्रंथ, हस्तलिखित ग्रंथ और कला संबंधी उच्च कोटि के अनेक ग्रंथ हैं।

स्व० श्री मयाशंकर याज्ञिक, बी० ए०

( इनका हस्तलिखित ग्रंथों का संग्रह इस वर्ष सभा को प्राप्त हुआ है )

## अर्द्धशताब्दी के सहायक

श्री राजा डाक्टर बलदेवदास बिड़ला

रा० ब० सेठ रामदेव चोखानी
( उपसभापति )

पुस्तकालय में हिंदी की प्रायः सब विषयों की मुद्रित पुस्तकें हैं। हिंदी के अतिरिक्त अन्य छपी हुई पुस्तकों में संस्कृत की ७७६, बँगला की १६६, मराठी की २३८, गुजराती की ३६१, अँगरेजी की ४४५८, उर्दू की १२४ तथा अन्य भाषाओं की ५५ पुस्तकें हैं।

इस प्रकार इस समय सभा के आर्यभाषा पुस्तकालय और उसके विशेष संग्रहों की पुस्तक-संख्या इस प्रकार है—

| | |
|---|---|
| १—सभा-पुस्तकालय | २१८६७ |
| २—द्विवेदी-संग्रह | ४३२१ |
| ३—रत्नाकर संग्रह | ११८६ |
| ४—रामनारायण मिश्र संग्रह | ४२६ |
| ५—डा० हीरानंद संग्रह | १०१२ |
| ६—याज्ञिक संग्रह | ११७६ |
| ७—कलाभवन संग्रह | १००० |
| ८—सर्व योग | ३०९९४ |

इन पुस्तकों को सुरक्षित रखने के लिये पुस्तकालय में इस समय बड़ी बड़ी ६६ अलमारियाँ और १२ टाँड ( रेक ) हैं।

घर, गाँव, महल्ले आदि में जो लोग छोटे मोटे पुस्तकालय स्थापित करना चाहते हैं उनकी जानकारी और सुभीते के लिये सभा ने सं० १०६४ में ५०० पुस्तकों की एक सूची तैयार कराई थी जिसमें पुस्तक और लेखक का नाम, विषय, मूल्य और प्राप्ति-स्थान का पता दिया गया था। इसमें केवल वे पुस्तकें ही रखी गईं जो जनता का ज्ञान बढ़ाने में सहायक हो सकें और जिन्हें भाई अथवा पिता निःसंकोच भाव से अपनी बहन या कन्या को पढ़ने के लिये दे सकें। इसके अतिरिक्त सौ-सौ पुस्तकों की दो और सूचियाँ भी तैयार कराई गईं जिनमें एक सूची केवल बालोपयोगी पुस्तकों की और दूसरी महिलोपयोगी पुस्तकों की थी। उक्त तीनों सूचियाँ इस पुस्तकालय की सहायता से ही तैयार हुई थीं। किंतु कई कारणों से वे छपवाई न जा सकीं।

प्रतिवर्ष पुस्तकालय का उपयोग बढ़ता ही जा रहा है। स्वाध्याय, ग्रंथ-रचना तथा प्रबंध (थीसिस) आदि लिखने के लिये भी इसका उपयोग उत्तरोत्तर बढ़ रहा है। सं० १९९६ में काशी हिंदू विश्वविद्यालय और प्रयाग विश्वविद्यालय के छात्रों ने अपनी खोज और अनुशीलन के प्रबंध प्रस्तुत करने में आर्यभाषा पुस्तकालय से यथेष्ट लाभ उठाया। संवत् १९९७ में प्रयाग विश्वविद्यालय के 'राजा पन्नालाल वृत्ति'-भोगी श्री उमाशंकर शुक्ल ने भी इस पुस्तकालय में अपनी खोज का कार्य किया और लखनऊ विश्वविद्यालय के एक छात्र ने भी इसके संग्रह से समुचित लाभ उठाया। काशी हिंदू विश्वविद्यालय से हिंदी में डाक्टर की उपाधि प्राप्त करनेवाले श्री डाक्टर केसरीनारायण शुक्ल ( अध्यापक हिंदी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय ) ने भी इसकी सहायता ली। इस संग्रह की उपयोगिता को दृष्टि में रखकर सभा ने अपनी ओर से अनुशीलन-विभाग की स्थापना भी की है। इस विभाग में अनुशीलन का कार्य करनेवालों को सभा अपने संग्रहों के अतिरिक्त कुछ और सुविधाएँ भी देगी। छात्र-वृत्तियाँ देने का भी प्रबंध किया गया है। इस विषय की विस्तृत चर्चा 'अनुशीलन-विभाग' शीर्षक प्रकरण में अन्यत्र की गई है।

आर्यभाषा पुस्तकालय में ही सभा का वाचनालय भी है। पहले वर्ष सं० १९५० में 'हिंदोस्थान', 'नागरी नीरद', 'साहित्य-सुधानिधि', 'शुभचिंतक'

और 'प्रयागसमाचार' ये पाँच समाचारपत्र उसमें आने आरंभ हुए थे। दूसरे वर्ष ग्यारह आने लगे। तीसरे वर्ष उनकी संख्या बीस हो गई और प्रतिवर्ष यह संख्या उत्तरोत्तर विषम गति से बढ़ने लगी। इस वर्ष सं० २००० में आनेवाले पत्रों और पत्रिकाओं की संख्या १३७ है जिनमें ७ दैनिक, २ द्विदैनिक, ३२ साप्ताहिक, ५ पाक्षिक, ५७ मासिक और ३४ त्रैमासिक हैं। वाचनालय में आनेवाली पत्र-पत्रिकाओं के नाम आरंभ से ही प्रतिवर्ष सभा के वार्षिक विवरण में प्रकाशित होते आ रहे हैं।

पुस्तकालय के भवन की चर्चा 'सभा-भवन' प्रकरण में की जा चुकी है और उसके आय-व्यय का लेखा सभा के आय-व्यय के परिशिष्ट के साथ अंत में दिया गया है।

---

## ६—नागरी पाठशाला

सभा की १३ दिसंबर १८६७ की बैठक में जबलपुर के श्री नंदलाल दुबे का 'हिंदी युनिवर्सिटी' शीर्षक लेख पढ़ा गया था। इसे दुबेजी ने प्रस्ताव के रूप में सभा के पास भेजा था। उस समय जितने सभासद् उपस्थित थे सभी ने इस लेख के प्रस्ताव और उद्देश्य की सराहना की। श्री श्यामसुंदरदास और श्री हनुमंतसिंह ने इस विषय में दुबेजी को सभा की ओर से उत्साहवर्द्धक पत्र भेजने का प्रस्ताव किया। श्री गदाधरसिंह ने भी इसका समर्थन करते हुए यह विचार उपस्थित किया कि

'यह प्रस्ताव बहुत ही उत्तम है अतः सभा को उचित है कि हिंदी स्कूल यहाँ जारी कर दे और जो लाइब्रेरियन रहेगा वही अभी लड़कों को पढ़ाया करेगा। इसमें सभा का कुछ व्यय न होगा। आगे आगे जैसे जैसे फीस बढ़ेगी पढ़ानेवाले बढ़ाए जायँगे।'

इस पर सभा ने निश्चय किया कि

'इस विषय पर विचार करने के लिये निम्नलिखित एक सब-कमिटी बना दी जाय जिसके सेक्रेटरा गदाधरसिंह हों। इस कमिटी की रिपोर्ट आने पर विचार किया जाय—बा० गदाधरसिंह, ठाकुर हनुमंतसिंह, बा० राधाकृष्णदास, बा० श्यामसुंदरदास और पंडित रामनारायण मिश्र।'

इस उपसमिति के सुझावों पर सभा की २७ दिसंबर १६६७ की बैठक में विचार हुआ और निश्चय हुआ कि

"१—स्कूल खोला जाय और उसकी सहायता के लिये सभा से १) रु० मासिक दिया जाय।

२—स्कूल सभा के कार्यालय में हो और उसका सब प्रबंध स्कूल कमेटी करे।

३—पंडित सिद्धेश्वर शर्मा भी उस कमेटी के सभासद् नियत किए जायँ तथा आगे के लिये कमेटी को अधिकार दिया जाय कि वह जिन महाशयों से सहायता प्राप्त हो उन्हें ( चाहे वे ना० प्र० सभा के सभासद् हों या न हों ) अपनी कमेटी का सभासद् बनावे वा जिसे उचित समझे कम करे।

४—पंजाब युनिवर्सिटी से पूछा जाय कि १८६८-६६ का कोर्स क्या है और काशी आदि स्थानों में परीक्षा होने के नियम क्या हैं।

५—जबलपुर के पं० नंदलाल दुबे को लिख दिया जाय कि हमने एक स्कूल खोल दिया है। आपकी युनिवर्सिटी खुलने पर उससे मिला देंगे।"

इस निश्चय के अनुसार १ जनवरी १८६८ से एक छोटी-सी पाठशाला केवल नागरी की शिक्षा देने के लिये सभा की ओर से खोल दी गई। पाठशाला का नाम 'नागरी पाठशाला' रखा गया। प्रतिदिन सुबह-शाम यह खुलती थी जहाँ छोटे बालक नागरी को प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करते थे। आगे चलकर २५ ज्येष्ठ, १६५५ वि० ( ८ जून, १८६८ ) की प्रबंधकारिणी और ३० ज्येष्ठ, १६५५ वि० ( १३ जून १८६८ ) की साधारण बैठक के निश्चयानुसार प्रबंध में कुछ अड़चनें पड़ने के कारण पाठशाला-समिति

तोड़ दी गई और पाठशाला के प्रबंध का कार्य भी पुस्तकालय समिति को ही सौंप दिया गया। इस कार्य में श्री गदाधरसिंह की विशेष अभिरुचि थी और वे ही इस पाठशाला के संचालन का अधिकांश कार्य किया करते थे। ११ श्रावण, १९५५ वि० ( २७ जुलाई १८९८ ) को अचानक उनका देहांत हो गया। उनके स्थान पर श्री श्यामसुंदरदास २७ भाद्रपद ( १२ सितंबर ) को पुस्तकालय-कमेटी में चुने गए। उसी दिन उन्होंने साधारण बैठक में प्रस्ताव किया कि 'सभा की नागरी पाठशाला १४ आश्विन (३० सितंबर ) से बंद कर दी जाय और अग्रवाल-समाज को लिखा जाय कि यदि वे लोग उचित समझें तो निज स्कूल में अन्य जाति के लड़कों के पढ़ने का भी प्रबंध करें।' प्रस्ताव सर्वसंमति से स्वीकृत हो गया और नागरीपाठशाला १४ आश्विन १९५५ वि० (३० सितंबर, १८९८) से बंद कर दी गई।

———

# ७—भारत-कला-भवन

भारत-कला-भवन नागरीप्रचारिणी सभा का एक बहुत महत्त्वशाली अंग है। भारतीय कला और संस्कृति की रक्षा के साथ साथ पुरातत्त्व और इतिहास के अध्येताओं के लिये इसमें संगृहीत सामग्री विशेष उपयोगी सिद्ध हुई है। कला-भवन के जन्म, उन्नति और वर्त्तमान समृद्धि का संपूर्ण श्रेय हिंदी जगत् के प्रख्यात कलाविद् श्री राय कृष्णदास को है।

पहले पहल कलाकृतियों के संग्रह का विचार सभा के संचालकों के मन में चित्रों के संग्रह के रूप में आया था। सभा की इच्छा थी कि प्राचीन कवियों, विख्यात हिंदी लेखकों आदि के चित्र एकत्र किए जायँ और अप्राप्य प्राचीन हस्तलिखित हिंदी ग्रंथों का संग्रह तो बहुत पहले से ही सभा द्वारा हो रहा था। शनैः शनैः कुछ काल में अनेक तैल चित्र भी सभा के हाल की शोभा बढ़ाने लगे। इनके अतिरिक्त प्राचीन मुद्राओं और ताम्रपत्रों का संग्रह भी सभा करना चाहती थी, क्योंकि हिंदी भाषा, हिंदी साहित्य और नागरी लिपि के इतिहास से इनका घनिष्ठ संबंध है। प्रबंध-समिति की ६ भाद्रपद, संवत् १९८५ (२५ अगस्त, १९२८) की बैठक में ठाकुर चतुरसिंह वर्मा का एक प्रस्ताव उपस्थित किया गया जिसमें कहा गया था कि मोहेंजोदड़ो और हरप्पा की खुदाई में जो भिन्न भिन्न प्रकार की वस्तुएँ प्राप्त हो रही हैं उनका विवरण नागरीप्रचारिणी पत्रिका में प्रकाशित किया जाना चाहिए। इसके अनंतर राय बहादुर श्री बटुकप्रसाद खत्री ने १२ अक्तूबर, १९२८ को एक पत्र सभा को भेजा जिसमें उन्होंने लिखा था कि सभा एक उत्तम कला-भवन का आयोजन करना स्वीकार करे तो वे ८०००) के ३½ टकिया प्रामिसरी नोट इस कार्य के लिये सभा को देंगे। यह पत्र ५ कार्त्तिक, १९८५ (२२ अक्तूबर, १९२८) की प्रबंध-समिति की बैठक में उपस्थित किया गया और निश्चय हुआ कि सभा में प्राचीन-वस्तु-संग्रहालय की स्थापना की जाय जिसमें भारतवर्ष से, विशेष कर हिंदी साहित्य से संबंध रखने वाली वस्तुएँ संगृहीत हों। यह संग्रहालय सभा-भवन के ऊपरवाले नए हाल में रखा जाय और राय बहादुर श्री बटुकप्रसाद जी से स्वीकृति मिलने तथा ८०००) मूल्य के प्रामिसरी नोटों के आ जाने पर इस कार्य का आरंभ किया जाय। सभा का यह निश्चय श्री बटुकप्रसाद के पास भेज दिया गया जिसका उत्तर प्रबंध-समिति की ४ फाल्गुन, १९८५ (१६ फरवरी, १९२९) की बैठक में उपस्थित किया गया। श्री बटुकप्रसाद ने उत्तर में लिखा था कि जिस संग्रहालय को स्थापित करने के लिये ८०००) के प्रामिसरी नोट मैंने सभा को देना स्वीकार किया है उसका नाम बटुकप्रसाद प्राचीन संग्रहालय रखा जाय। प्रबंध-समिति ने इस विषय पर पुनः विचार करके निश्चय किया कि इतने धन से संग्रहालय चलाना संभव नहीं है। इसके लिये कम से कम २५०००) की आवश्यकता है। यदि राय बहादुर साहब इतना रुपया देना स्वीकार करें तो सभा उनके प्रस्तावानुसार इसका आयोजन करेगी। किंतु श्री बटुकप्रसाद इतना

रुपया देने को तैयार न हुए। उन्होंने फिर कोई उत्तर भी न दिया। इस प्रकार प्राचीन वस्तु-संग्रहालय की स्थापना की बात यहीं तक रह गई। पर सभा के हितचिंतकों ने यह विचार छोड़ा नहीं। उन्होंने दूसरा उद्योग आरंभ किया और श्री राय कृष्णदास से भारत-कला-परिषद् के संग्रहालय को सभा में सम्मिलित कर देने का अनुरोध किया जिसके फलस्वरूप एक ही मास के पश्चात् ६ चैत्र, १६८५ की बैठक में भारत-कला-परिषद् के मंत्री का १३ मार्च, १६२६ का पत्र उपस्थित किया गया। उसमें उन्होंने लिखा था कि

"भारत-कला-परिषद् के संग्रहालय को यदि सभा पर्याप्त और उपयुक्त स्थान दे और निम्नलिखित शर्तें स्वीकार करे तो हम अपना संग्रहालय सभा में भेज देंगे—

(१) इस संग्रहालय का नाम भारत-कला-भवन होगा।

(२) उक्त भवन में भारतकला-परिषद् का समस्त संग्रह ( जिसे उसने क्रय, भेंट और मँगनी द्वारा एकत्र किया है ) और पुस्तकालय तथा काशी-नागरीप्रचारिणी सभा की हस्तलिखित पुस्तकें और वह सब सामग्री रहेगी जिसका संबंध भारतवर्ष के कला-कौशल, पुरातत्त्व तथा हिंदी के इतिहास से होगा और जो समय समय पर प्राप्त या क्रय की जायगी।

(३) काशी-नागरीप्रचारिणी सभा इस भवन की उन्नति और प्रबंध के लिये कम से कम ६००) वार्षिक व्यय करेगी और आवश्यकता तथा सामर्थ्य के अनुसार इस धन को बढ़ाती रहेगी।

(४) इस संग्रहालय का समस्त प्रबंध एक समिति के अधीन रहेगा जिसके सात सदस्य होंगे। इनमें से तीन भारत-कला-परिषद् की कमेटी आजीवन नियत करेगी और तीन को काशी नागरीप्रचारिणी सभा की प्रबंध-समिति आजीवन नियत करेगी। राय कृष्णदास इसके सातवें आजीवन सदस्य होंगे। उनके न रहने पर यह समिति सातवाँ व्यक्ति चुनेगी। इस समिति को विशेष कार्य के लिये तीन और सदस्य सम्मिलित करने का अधिकार होगा। ऐसे सम्मिलित सदस्यों की कार्य-अवधि तीन वर्ष तक की होगी। कार्य अवधि के बाद वे पुनः सम्मिलित किए जा सकेंगे।

(५) यदि समिति के किसी यावज्जीवन सदस्य का स्थान किसी कारण खाली होगा तो उसके लिये अन्य व्यक्ति को वही संस्था चुनेगी जिसने पहले व्यक्ति को चुना होगा। पर किसी अवस्था में एक ही कुटुंब का एक से अधिक व्यक्ति इस समिति का आजीवन सदस्य न रह सकेगा और यदि किसी सदस्य का स्थान खाली होने पर उसके स्थान की पूर्ति करनेवाली संस्था उस रिक्त स्थान की पूर्ति एक वर्ष के भीतर न करेगी तो दूसरी संस्था को उस स्थान की पूर्ति का अधिकार रहेगा।

(६) कला-भवन की रक्षा और प्रबंध के लिये कला-परिषद् और नागरीप्रचारिणी सभा से अविरुद्ध नियम, उपनियम आदि बनाने, उनमें परिवर्त्तन करने आदि का इसे पूर्ण अधिकार होगा।

(७) समिति अपने कार्य की एक वार्षिक रिपोर्ट काशी नागरीप्रचारिणी सभा तथा भारत-कलापरिषद् को देगी जो उनके वार्षिक विवरणों में सम्मिलित की जायगी।

(८) कला-भवन के आय-व्यय का समस्त लेखा सभा के बहीखातों में निरंतर लिखा जायगा और उसके आडीटरों द्वारा यथानियम उसकी जाँच हुआ करेगी। इस जाँचे हुए हिसाब का एक प्रमाणित चिट्ठा सभा प्रतिवर्ष भारत-कला-परिषद् को दिया करेगी।

(९) इस भवन के निश्शुल्क संग्रहाध्यक्ष ( आनरेरी क्यूरेटर ) राय कृष्णदास होंगे और जब तक वे इस पद को स्वयं न छोड़ दें तब तक उस पर बने रहेंगे।

(१०) संग्रहाध्यक्ष का पद खाली होने पर समिति दूसरा संग्रहाध्यक्ष किसी नियत काल के लिये चुनेगी और जब जब आवश्यकता होगी ऐसी नियुक्ति करती रहेगी। एक ही व्यक्ति की एक से अधिक काल के लिये नियुक्ति समिति की इच्छा से हो सकेगी।

(११) परिषद् के संग्रह की उन वस्तुओं पर जो मँगनी की हैं यदि मँगनी को कोई शर्त है तो यह नया प्रबंध उससे बँधा रहेगा।

(१२) परिषद् को अपनी प्रकाशित पुस्तकों, चित्राधारों वा अन्य प्रकाशनों में संग्रहालय के चित्र आदि प्रकाशित करने का अधिकार रहेगा परंतु सभा को छोड़कर किसी भी अन्य व्यक्ति अथवा संस्था को इस बात की अनुमति विना उक्त समिति की आज्ञा के न दी जायगी।

(१३) समिति की विशेष आज्ञा के विना संग्रहालय की कोई भी वस्तु सभा के अहाते के बाहर न जा सकेगी।

(१४) यदि सभा इन शर्तों को पूरा न करे अथवा यदि किसी समय इस कलाभवन के संग्रहालय की इतनी उन्नति हो कि उसके लिये सभाभवन का वह भाग जो उसके लिये अलग किया जाय पर्याप्त न हो तथा काशी नागरीप्रचारिणी सभा अधिक स्थान अथवा नए भवन का उपयुक्त प्रबंध करने में असमर्थ हो और भारत-कला-परिषद् उपयुक्त स्थान का प्रबंध कर सके तो जो सामग्री उक्त परिषद् द्वारा इस संग्रहालय में संगृहीत होगी वह उसे वापिस मिल सकेगी। अन्य किसी अवस्था में यह संग्रह किसी और संस्था को न दिया जायगा।"

सभा ने उक्त शर्तों पर पूर्णतया विचार करने के अनंतर चौथी, पाँचवीं और चौदहवीं शर्तों में निम्न-लिखित परिवर्त्तन करना उचित समझा—

(४) इस संग्रहालय का समस्त प्रबंध एक समिति के अधीन रहेगा जिसके आठ सदस्य होंगे। इनमें से तीन भारत-कलापरिषद् की कमेटी आजीवन नियत करेगी और तीन को काशी नागरीप्रचारिणी सभा की प्रबंध-समिति तीन वर्षों के लिये चुना करेगी। सातवें सदस्य सभा के प्रधान मंत्री होंगे और राय कृष्णदास आठवें आजीवन सदस्य होंगे। उनके न रहने पर यह समिति आठवाँ व्यक्ति चुना करेगी। इस समिति को विशेष कार्य के लिये उपसमिति बनाने का अधिकार होगा जिसमें उसे उस विषय के जाननेवाले तीन योग्य सदस्यों तक को नियत करने का अधिकार होगा। इस प्रकार सम्मिलित किए हुए सदस्यों की कार्य-अवधि कला-भवन-समिति नियत करेगी।

(५) पाँचवीं शर्त में 'आजीवन' शब्द दो बार आया है। दोनों ही स्थानों से यह शब्द निकाल दिया जाय।

(१४) चौदहवीं शर्त का अंतिम वाक्य इस प्रकार बदल दिया जाय 'अन्य किसी अवस्था में अथवा राय कृष्णदास के संग्रहाध्यक्ष न रहने पर वह संग्रह लौटाया या स्थानांतरित न किया जा सकेगा।'

२० चैत्र, १९८५ ( ३ अप्रैल, १९२९ ) की बैठक में प्रबंध-समिति ने इस विषय पर पुनः विचार विमर्ष किया। इस बैठक में राय कृष्णदासजी भी निमंत्रित किए गए थे। पर्य्याप्त विचार के पश्चात् शर्तों में निम्न-लिखित परिवर्त्तन करना भी आवश्यक समझा गया—

चौथी शर्त बदल कर इस प्रकार कर दी गई—

"इस संग्रहालय का समस्त प्रबंध एक समिति के अधीन रहेगा जिसके आठ सदस्य होंगे। इनमें से तीन भारत-कलापरिषद् की कमेटी प्रति तीन वर्षों के लिये चुना करेगी। सातवें सदस्य सभा के प्रधान मंत्री होंगे और राय कृष्णदास आठवें आजीवन सदस्य होंगे। उनके न रहने पर आठवाँ सदस्य भारत-कला-परिषद् का मंत्री हुआ करेगा। इस समिति को किसी विशेष कार्य के लिये उपसमिति बनाने का अधिकार होगा जिसमें उसे उस विषय के जाननेवाले तीन योग्य सदस्यों तक को नियत करने का अधिकार होगा। इस प्रकार सम्मिलित किए हुए सदस्यों की कार्य-अवधि कला-भवन-समिति नियत करेगी।"

ग्यारहवीं शर्त के अंत में 'उससे बँधा रहेगा' के स्थान पर 'उससे सदैव बँधा रहेगा' किया गया और चौदहवीं शर्त को इस प्रकार बदल दिया गया—

"यदि सभा इन शर्तों को पूरा न करे तो अथवा यदि किसी समय इस कला-भवन के संग्रहालय की इतनी उन्नति हो कि उसके लिये सभा-भवन का वह भाग जो उसके लिये अलग किया जाय पर्य्याप्त न हो तथा काशी-नागरीप्रचारिणी सभा अधिक स्थान अथवा नए भवन का उपयुक्त प्रबंध करने में असमर्थ हो और भारत-कला-परिषद् उपयुक्त स्थान का प्रबंध कर सके तो जो सामग्री उक्त परिषद् द्वारा इस संग्रहालय में संगृहीत होगी वह उसे वापस मिल सकेगी। किंतु २५ वर्ष तक इस प्रबंध के सुचारु रूप से चलने पर यह संग्रह हस्तांतरित न किया जा सकेगा।"

इन परिवर्त्तनों को भारत-कला-परिषद् ने अपने १४ मई, १९२९ के $\frac{५७१-२९}{१५२९}$ संख्यक पत्र द्वारा निम्न-लिखित संशोधनों के साथ स्वीकार कर लिया—

( १ ) पहली शर्त में 'इस संग्रहालय' के उपरांत जोड़ा जाय 'और चित्रशाला'।

( २ ) छठी शर्त में 'से अविरुद्ध' के स्थान पर 'के नियमों के अनुकूल' कर दिया जाय।

( ३ ) दसवीं शर्त में 'समिति दूसरा' के उपरांत 'वैतनिक वा अवैतनिक' बढ़ाया जाय।

( ४ ) चौदहवीं शर्त का रूप यह हो—"यदि सभा इन शर्तों को पूरा न करे तो अथवा यदि किसी समय इस कला-भवन के संग्रहालय की इतनी उन्नति हो कि उसके लिये वह व्यय जो नियत किया जाय तथा सभा-भवन का वह भाग जो उसके लिये अलग किया जाय पर्य्याप्त न हो तथा काशी-नागरीप्रचारिणी सभा पर्य्याप्त व्यय एवं अधिक स्थान अथवा नए भवन का उपयुक्त प्रबंध करने में असमर्थ हो और भारत

## सभा के संस्थापक

ठाकुर शिवकुमारसिंह

श्री रामनारायण मिश्र
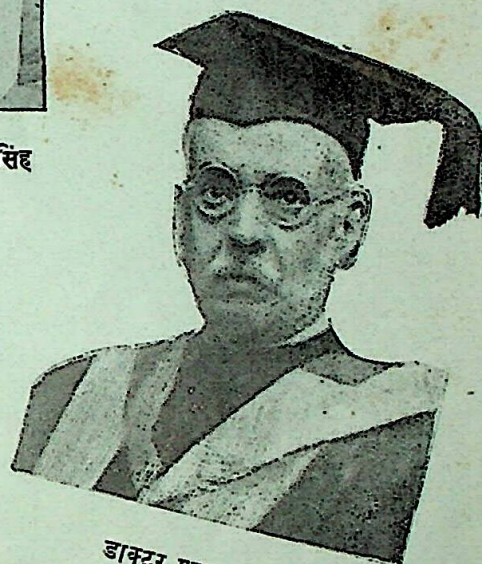
डाक्टर श्यामसुंदरदास

## कलाभवन के संस्थापक और संग्रहाध्यक्ष

श्री राय कृष्णदास
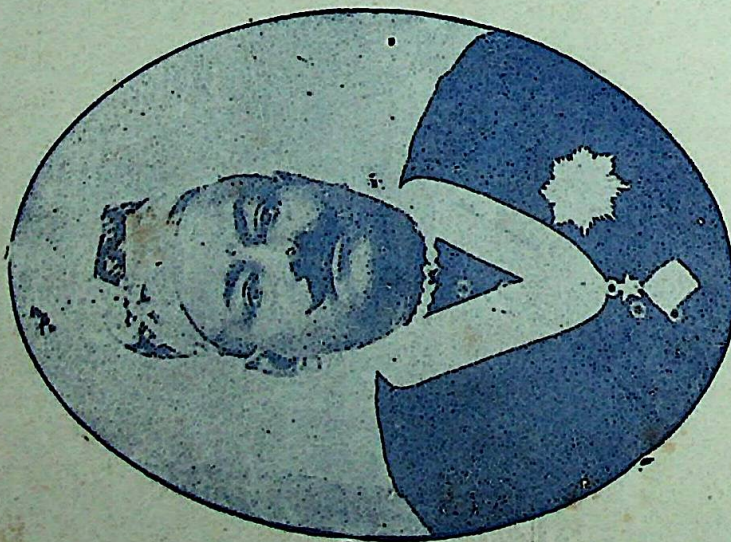
सभा के संरक्षक

दिवंगत काशी नरेश तत्रभवान् श्रीमन्महाराज सर आदित्य नारायणसिंह बहादुर, के० सी० एस० आई०, एल-एल० डी०

सभा के संरक्षक

दिवंगत छत्तरपुर-नरेश तत्रभवान् श्रीमन्महाराज विश्वनाथ सिंहजू देव बहादुर।

कला-परिषद् पर्य्याप्त व्यय तथा उपयुक्त स्थान का प्रबंध कर सके तो जो सामग्री उक्त परिषद् द्वारा इस संग्रहालय में संगृहीत होगी वह उसे वापिस मिल सकेगी। किंतु तीस वर्ष तक इस प्रबंध के सुचारु रूप से चलने पर यह संग्रह हस्तांतरित न किया जा सकेगा।

( ५ ) चौदहवीं शर्त के बाद एक नई शर्त और बढ़ा दी जाय कि 'ये शर्तें १ वैशाख, सं० १६८६ से लागू मानी जायँगी।'

उक्त पत्र पर प्रबंध-समिति ने अपनी ११ ज्येष्ठ, १६८६ (२५ मई १६२६) की बैठक में विचार किया और परिषद् के संशोधन पर निम्नलिखित निश्चय हुआ—

"( १ ) स्वीकार किया जाय।

( २ ) इस संशोधन की आवश्यकता नहीं है।

( ३ ) यह भी स्वीकार किया जाय।

( ४ ) इसका रूप नीचे लिखे अनुसार रखा जाय—

"यदि सभा इन शर्तों को पूरा न करे तो अथवा यदि किसी समय इस कला-भवन के संग्रहालय की इतनी उन्नति हो कि उसके लिये सभा-भवन का वह भाग जो उसके लिये अलग किया जाय पर्य्याप्त न हो तथा काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा अधिक स्थान अथवा नए भवन का उपयुक्त प्रबंध करने में असमर्थ हो और भारत-कला-परिषद् उपयुक्त स्थान का प्रबंध कर सके तो जो सामग्री उक्त परिषद् द्वारा इस संग्रहालय में संगृहीत होगी वह उसे वापस मिल सकेगी, किंतु ३० वर्ष तक इस प्रबंध के सुचारु रूप से चलने पर यह संग्रह हस्तांतरित न किया जा सकेगा।"

( ५ ) स्वीकार किया जाय।

प्रबंध-समिति की इसी बैठक में भारत-कला-परिषद् के मंत्री का १८ मई, १६२६ का $\frac{५७३-२६}{१५३१}$ संख्यक पत्र भी उपस्थित किया गया जिसमें मंत्री ने सूचित किया था कि उनकी परिषद् ने कला-भवन-समिति के लिये सर्वश्री सीताराम शाह, न्हानालाल चमनलाल मेहता और दुर्गाप्रसाद को अपने प्रतिनिधि नियत किया है। सभा की ओर से भी प्रबंध-समिति ने उक्त समिति के लिये सर्वश्री श्यामसुंदरदास, केशव-प्रसाद मिश्र और राय बहादुर हीरालाल को प्रतिनिधि नियत कर दिया और निश्चय किया कि इस समिति की पहली बैठक श्री राय कृष्णदास करें।

इस प्रकार भारत-कला-परिषद् का संग्रहालय सभा में सम्मिलित कर लिया गया।

श्री राय कृष्णदास की कला-प्रियता उनकी पूजनीया माता की देन है। उनको देवताओं और प्राकृतिक दृश्यों के चित्र संग्रह करने का बहुत शौक था। उसी की छाप बालक कृष्णदास के हृदय पर भी पड़ी जिसने पोषित होते होते सन् १६०८ से उनके मन में एक चित्रशाला बनाने की भावना का रूप धारण किया। सन् १६१० में श्री अवनींद्रनाथ ठाकुर के उपदेश ने उस भावना को भारतीयता के रंग में रँग डाला और राय कृष्णदास के हृदय की वह चित्रशाला भारतीय चित्रशाला हो गई। किंतु संग्रह कार्य जारी रहने पर भी १६२० के पहले उनका वह स्वप्न मूर्त्त न हो सका। तब तक एक ओर उनकी कला-संग्रहालय और चित्र-शिक्षालय की योजना तैयार हुई दूसरी ओर उन्हीं दिनों काशी में होनेवाले अखिल भारतीय संगीत-सम्मेलन के तीसरे अधिवेशन में उसके संचालक ने एक संगीत परिषद् स्थापित करने की इच्छा प्रकट की।

विचार-विनिमय से दोनों योजनाएँ एक हो गईं और इस प्रकार १ जनवरी, १९२० को श्री भगवानदास के निर्देश और सर्वश्री सीताराम शाह तथा शिवेंद्रनाथ वसु की सहकारिता में भारतकला-परिषद् की स्थापना हुई। श्री रवींद्रनाथ ठाकुर ने उसका सभापतित्व सहर्ष स्वीकार कर लिया। कार्य होने लगा, किंतु आगे चलकर, आर्थिक कठिनाइयों के कारण संग्रहालय के साथ चित्र और संगीत विद्यालय चलाना संभव न जान पड़ा। तीन वर्ष तक गुदौलिया पर किराए के मकान में परिषद् का कार्य चलता रहा। सन् १९२३ में कवींद्र के आदेशानुसार सारी शक्तियाँ केवल संग्रहालय के विकास में केंद्रित करने का निश्चय हुआ। पर अपना स्थान न होने के कारण परिषद् को बड़ी अड़चन का सामना करना पड़ा। दो वर्ष तक इसी कठिनाई के कारण समस्त संग्रह राय साहब के मकान पर बंद पड़ा रहा। सन् १९२६ में श्री रामनारायण मिश्र की कृपा से सेंट्रल हिंदू स्कूल का एक बहुत बड़ा भाग संग्रह के प्रदर्शन के लिये परिषद् को मिल गया। सन् १९२८ तक वहाँ प्रदर्शन का कार्य चलता रहा। उन्हीं दिनों, जैसा कि ऊपर कहा गया है, सभा में भी एक संग्रहालय खोलने की चर्चा चल रही थी। फलतः श्री श्यामसुंदरदास की प्रेरणा से यह संग्रह भारत-कला-भवन के नाम से सभा में चला आया। अब यह उसकी स्थायी संपत्ति है।

इस संग्रहालय में पर्याप्त सामग्री थी जो सब धीरे धीरे सभाभवन के नए बने हुए ऊपरी भाग में पहुँचा दी गई। इस सामग्री का मूल्य उस समय लगभग एक लाख रुपया कूता गया था। इस संग्रहालय को अपने साथ सम्मिलित करने के लिये बड़ी बड़ी संस्थाओं के संचालक उत्सुक थे किंतु सर्वश्री राय कृष्णदास और श्यामसुंदरदास के उद्योग से उक्त समस्त संग्रह प्राप्त करने का सौभाग्य काशी-नागरीप्रचारिणी सभा को ही प्राप्त हुआ।

इसी वर्ष सभा की ओर से कला-भवन के लिये एक अपील समाचार-पत्रों में प्रकाशित कराई गई जिसमें कहा गया था कि

"कला-भवन में संगृहीत चित्रों आदि की संख्या इतनी अधिक होने पर भी कुछ नहीं के बराबर है। क्योंकि योरोप तथा अमेरिका में भारतीय कला-कौशल के इतने बड़े संग्रह हैं कि हमारे कला-भवन का सारा सामान उनके एक कोने में समा जाय। सात समुद्र पार तो भारतीय कला के निरीक्षण और अध्ययन की इतनी सामग्री हो और हम इस छोटे से संग्रह को लेकर ही संतुष्ट हो जायँ—ऐसा नहीं होना चाहिए। हमें अधिक से अधिक वस्तुओं का संग्रह कला-भवन में करके उसे सर्वांगपूर्ण बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। किंतु रुपये के बल पर अब भारतीय कला-संबंधी वस्तुओं का संग्रह करना हमारे देश की शक्ति के बाहर है। क्योंकि पहले तो असली चीजें मिलतीं ही नहीं, मिलती भी हैं तो उनका मूल्य विदेशी पूजीपतियों ने इतना बढ़ा दिया है कि एक अच्छी मूर्ति या तसवीर के लिये हजारों रुपये भी कम पड़ते हैं। हाँ, यदि हमारे उत्साही सदस्य और सहायक अपने घरों से प्राचीन चित्रों, सिक्कों और कलापूर्ण बर्तन-भाँड़ों, अलंकृत वस्त्रों आदि तथा प्राचीन खँडहरों से मूर्तियों को खोज खोजकर कला-भवन को प्रदान

करने लगें तो बात की बात में यह भवन उस उच्चासन को प्राप्त कर ले जिसका यह पात्र है।

"यह एक निश्चित बात है कि प्राचीन वस्तुओं की रक्षा और समुचित आदर ऐसे संग्रहालयों में ही होता है। घरों में उन वस्तुओं के नष्ट-भ्रष्ट और छिन्न-भिन्न होने के सिवाय अन्य गति नहीं होती। आज जिनके यहाँ ऐसी सामग्री सुरक्षित भी है वहाँ कल उसके खराब हो जाने की पूरी आशंका है। अतएव हमारे उदाराशय देशवासियों को इस याचना पर ध्यान देकर हमारे इस संग्रह को परिपूर्ण और अद्वितीय बनाना चाहिए। हमारे पंजाब के सदस्य और सहायक पहाड़ी चित्रों तथा धातु, कपड़े और लकड़ो की कारीगरी का, राजस्थान के सदस्य और सहायकगण जैन और राजपूत चित्रों, मूर्तियों तथा सिक्कों और धातु की कारीगरी का, पश्चिमी युक्तप्रांत के सदस्य और सहायकगण चित्रों तथा सिक्कों का और बिहार, मध्यभारत तथा मध्यप्रांत के सदस्य और सहायक मूर्तियों और सिक्कों का बहुत बड़ा संग्रह कलाभवन को प्रदान करके पुण्य और यश के भागी हो सकते हैं।

"स्वयं काशी में ही इस प्रकार के अनेक रत्न इधर-उधर बिखरे हुए हैं जो हमारे सहायकों के जरा-सा ध्यान देने से कला-भवन में अपना समुचित स्थान पाकर अपने दाताओं की कीर्ति अचल कर सकते हैं।"

यह अपील महात्मा गांधो ने अपने 'यंगइंडिया' में भी प्रकाशित की थी और लिखा कि

"यह विज्ञप्ति मिलने से पहले ही मैं उस विशाल भवन को देख चुका था जिसमें संग्रहालय स्थायी रूप से रहेगा। मैंने वहाँ रखी हुई वे दर्शनीय वस्तुएँ भी देखी हैं। आशा है सभा की अपील के उत्तर में कला-प्रेमी जनता की ओर से उसे समुचित एवं उदार सहायता मिलेगी।"

अगले वर्ष सं० १९८६ में कलाभवन के बहुमूल्य चित्र, मूर्त्तियाँ, सिक्के तथा अन्यान्य सामग्री सभा-भवन के द्वितीय खंड में यथास्थान सजा दी गई। इसमें राजपूत, मुगल तथा काँगड़ा शैली के लगभग एक हजार चित्र थे। प्राचीन मूर्तियों को संख्या एक सौ से भी अधिक थी और प्राचीन सिक्के ३०० के लगभग थे। इनके अतिरिक्त बहुमूल्य साहित्यिक और ऐतिहासिक ग्रंथों, सोने और चाँदी की बनी हुई मूल्यवान् मीनाकारी की वस्तुओं, हाथीदाँत, पीतल तथा अन्य धातुओं की बनी हुई वस्तुओं और ऊनी, रेशमी तथा सूती प्राचीन वस्त्रों आदि का भी महत्त्व-पूर्ण संग्रह था।

भारत-कलाभवन का उद्घाटनोत्सव १९ फाल्गुन, १९८६ ( ३ मार्च, १९३० ) को बड़े समारोह के साथ मनाया गया। बंगाल के प्रसिद्ध कला-मर्मज्ञ श्री अर्द्धेंदुकुमार गांगुली ने इस उत्सव का सभापतित्व ग्रहण करके कलाभवन के उद्घाटन का कार्य संपन्न किया। इस उत्सव में १००० से भी अधिक संभ्रांत पुरुष और महिलाएँ उपस्थित हुई थीं जिनमें अनेक बाहर से भी आए थे। लाहौर अजायबघर के संग्रहाध्यक्ष, पंजाब के डिप्टी डाइरेक्टर आव आर्केया-लाजी, रायल एशियाटिक सोसायटी कलकत्ता के मंत्री, महामहोपाध्याय श्री हरप्रसाद शास्त्री, श्री दयाराम साहनी और बंबई के श्री कन्हैयालाल हीरालाल आदि महा-नुभावों ने, जो इस उत्सव में उपस्थित नहीं हो सके थे, अपनी सहानुभूति और बधाई के पत्र सभा को भेजे

थे। श्री काशीप्रसाद जायसवाल ने श्री गांगुली महोदय को प्राचीन ढंग का एक चित्र और चाँदी की एक जालीदार थाली सभा की ओर से भेंट की।

इस वर्ष सभा ने कला-भवन पर १६०६॥।) व्यय किया। लगभग २॥ हजार दर्शकों ने कला-भवन को देखा जिनमें महात्मा गांधी भी थे।

इसी वर्ष काशी के पुराने रईस श्री गोपालदास रघुनाथप्रसाद ने कला-भवन को कई बहुमूल्य चित्र प्रदान किए। इसी प्रकार मुंशी कन्हैयालाल ने ताड़-पत्र पर लिखी एक प्राचीन पोथी, मथुरा के श्री भोलानाथ ने ताँबे के चार दुष्प्राप्य सिक्के और कलकत्त के श्री अजित घोष ने स्कंद गुप्त के चाँदी के दो सिक्के कला-भवन को भेंट किए।

गत वर्ष वाली अपील इस वर्ष भी सभा के वार्षिक विवरण में प्रकाशित की गई। इस अपील के फल-स्वरूप सं० १६८७ में २० चित्र, २४ मूर्तियाँ, ४३ सिक्के और ६ हस्तलिखित पुस्तकें सभा को भेंट में प्राप्त हुईं। इस वर्ष क्रय द्वारा भी कला-भवन में २१ चित्र, ३ सिक्के, ४ मूर्तियाँ और ५ हस्तलिखित पुस्तकें संगृहीत की गईं। कला-भवन की चुनी हुई १६ वस्तुओं के सचित्र कार्डों का एक सेट भी तैयार कराया गया जिसे कला-मर्मज्ञों ने बहुत पसंद किया। इस वर्ष हिंदी के विशाल भारत, भारत, हंस तथा गंगा, बँगला के प्रवासी तथा उत्तरा और अँगरेजी के टाइम्स आव इंडिया, लीडर तथा माडर्न रिव्यू पत्रों ने कला-भवन के संबंध में सचित्र लेख प्रकाशित करके उसका प्रचार और प्रोत्साहन किया।

सं० १६८८ में भी अनेक चित्र, मूर्तियाँ, हस्त-लिखित पुस्तकें, सिक्के तथा अन्य अनेक संग्रहणीय वस्तुएँ दान में और क्रय द्वारा कला-भवन को प्राप्त हुईं। श्री शिवप्रसाद गुप्त के द्वारा 'मोहेंजोदड़ो' की एक ईंट भी मिली। आकार-प्रकार में यह आजकल की अँगरेजी ईंट से मिलती-जुलती है। इसे देख-कर यह कहना असंगत न होगा कि पाश्चात्य स्थापत्य-विज्ञान भवन-निर्माण के संबंध में जैसी सुकला खोज निकालने का गर्व करता है वह आज से कम से कम ५००० वर्ष पूर्व भारतवर्ष में प्रचलित थी।

कला-भवन में अगले वर्ष एक साहित्य-विभाग खोल देने का निश्चय भी इस वर्ष किया गया। इसमें हिंदी-जगत् के सभी नए पुराने व्यक्तियों के चित्र, हस्तलिपियाँ आदि जो स्मृति-चिह्न प्राप्त हो सकें, एकत्र करने का विचार था। कलाकारों के संबंध में भी एक ऐसा ही संग्रह रखने का निश्चय हुआ। अल्मोड़ा के श्री गंगाप्रसाद खत्री ने अपने स्वर्गवासी भाई श्री शिवलाल मेहरोत्रा की स्मृति में कला-भवन को १००) की एक निधि भी इस वर्ष प्रदान की। इस निधि के ब्याज से कला-भवन के लिये प्राचीन सिक्के खरीदे जाते हैं।

सं० १६८६ में रूस के विख्यात चित्रकार श्री रोरिक ने अपने बारह मौलिक चित्र, जिनका मूल्य तीस हजार रुपए के लगभग होगा, कला-भवन को प्रदान किए। ये चित्र श्री रोरिक के नाम पर कला-भवन के एक अलग कमरे में सजा दिए गए हैं। रोरिक महोदय को भारत से, विशेष कर उसके हिमालय से इतना प्रेम है कि वे उसकी कुल्लू घाटी में वर्षों से निवास कर रहे हैं और उसी को अपना घर बना लिया है। इनके अतिरिक्त इस वर्ष नवीन और प्राचीन २० चित्र खरीद कर प्राप्त किए गए। मूर्तियों के संग्रह में भी वृद्धि हुई।

इस वर्ष एक दिन कला-भवन के कई ताले टूटे हुए पाए गए और आठ-दस हजार के मूल्य की सोने, चाँदी तथा मीने की चीजें, चाँदी-सोने के सिक्के आदि चोरी चले गए। सभा के तत्कालीन प्रधान मंत्री श्री राय कृष्णदास ने प्रबंध-समिति की २५ माघ, १९८९ ( ७ फरवरी, १९३३ ) की बैठक में इस चोरी की सूचना इस प्रकार उपस्थित की थी—

"ता० ३१ जनवरी, १९३३ को रात्रि के समय सभा-भवन की ऊपरी मंजिल में कला-भवन में किवाड़ का कुंडा काटकर चोरी हो गई और निम्नलिखित वस्तुएँ चोर ले गए—

१—सोने के चौदह सिक्के जो गुप्तकाल के थे और जिन्हें आजकल हनुमंता मुहर कहते हैं, तौल प्रत्येक सिक्के की ७ माशे के लगभग—मू० ७००)

२—मीना किया हुआ एक सिरपेच सोने का जिसमें तीन टिकड़े सोने के थे और जिन पर मोर तथा अन्य पक्षी मीने में बने थे, तौल लगभग ५ तोले—मूल्य १०००)

३—मीने का एक भुज सोने का जिस पर हनुमानजी, रामजी तथा दुर्गाजी की मूर्तियाँ बनी हुई थीं। तौल अन्दाजन ५ तोला—मूल्य १०००)

४—सोने की तीन अँगूठियाँ मीने की जिन पर हरा, सफेद तथा पिश्तई मीना किया हुआ था। तौल अनुमान से ४ तोला—मूल्य ४००)

५—सोने के कड़े का एक टुकड़ा जिस पर गुलाबी मीना किया हुआ था। तौल अनुमान से ३ भरी-मूल्य १५०)

६—एक खासदान चाँदी का मीना किया हुआ। तौल अनुमान से १०० भरी—मूल्य ५००)

७—एक तश्तरी चाँदी की मीना की हुई। तौल अनुमान से १२५ भरी—मूल्य ६२५)

८—दो चाँदी की अँगूठियाँ जिनमें से एक पर पीले अकीक पर हिंदी में 'श्रीराम' खुदा हुआ था और दूसरी पर फालसई पत्थर पर संस्कृत का एक श्लोक खुदा हुआ था—मूल्य ३०)

९—चाँदी की एक सुराही काश्मीरी काम की। तौल अनुमान से १२५ भरी—मूल्य १२५)

१०—एक शाल पुरमतन पिश्तई रंग का अनुमान से $३\frac{१}{३} \times १\frac{३}{४}$ गज, हाशिया बुनावटी, बीच का हिस्सा सुई से काढ़ा हुआ, उन्नाबी रंग का, कश्मीर का बना हुआ—मूल्य २५०)

११—एक फर्शी और चिलम मीने की। तौल अनुमान से ६० भरी—मूल्य ३००)

१२—पराने मनकों की चार लड़ियाँ मूल्य १०) प्रत्येक लड़ी का।

इस चोरी की सूचना कोतवाली में दी गई थी पर किसी माल का पता नहीं चला। पुलिस ने सभा-भवन में नौकरों के रहने की कोठरियों की तलाशी ली थी जिसमें सभा की तीन तलवारें और तीन भाले रखे थे।"

इस सूचना पर विचार करके सभा ने निश्चय किया कि

"( क ) सभा-भवन की रखवाली के लिये एक चौकीदार जितना शीघ्र संभव हो उचित वेतन पर रख लिया जाय। यह चौकीदार सदैव सभा-भवन में ही रहा करे और इसका काम रात्रि के ९ बजे से सूर्योदय तक घूमकर पहरा देना हो। इस चौकीदार से अगोरदारी और रख-

वाली के सिवाय सभा का और कोई काम न लिया जाय।

(ख) यह चौकीदार फौजी रिजर्विस्टों में से रखा जाय और इसकी नियुक्ति के लिये लखनऊ के रेक्रूटिंग आफिसर को लिखा जाय।

(ग) चोरी की चीजों को बरामद करनेवालों को १००) पुरस्कार दिया जाय।

(घ) सभा के प्रत्येक विभाग की वस्तुओं का स्टॉक रजिस्टर तुरंत बनवाया जाय और प्रत्येक वस्तु पर उसका नंबर लगा दिया जाय। कला-भवन की वस्तुओं का रजिस्टर राय कृष्णदासजी अपने तत्त्वावधान में तैयार करावें और जितना समय इसके तैयार कराने में लगे उतने समय तक बाबू रामचंद्र वर्मा सभा-कार्यालय का काम सँभालें। सभा की अन्य वस्तुओं की सूची ठाकुर शिवकुमार सिंह जी तैयार करवा दें। बिक्री की पुस्तकों का स्टॉक-रजिस्टर सहायक मंत्री तैयार करवा दें। पुस्तकालय की सब पुस्तकें मिलान कर ली जाय तथा सूची म चढ़ा ली जायँ और बाबू रामचंद्र वर्मा इसका प्रबंध कर दें। ये सब कार्य दो सप्ताह के भीतर समाप्त हो जायँ और इनके पूर्ण हो जाने की सूचना सभा के सभापति को दी जाय। तारीख २५ फरवरी, १९३३ को प्रबंध-समिति का एक अधिवेशन किया जाय जिसमें इन कार्यों की रिपोर्ट तथा वस्तुओं की सूचियाँ उपस्थित की जाय।"

श्री श्यामसुंदरदास के प्रस्ताव पर यह भी निश्चय हुआ कि प्रति वर्ष १५ वैशाख तक सभा के प्रत्येक विभाग की सब वस्तुओं की जाँच हो जाया करे और जो वस्तुएँ सभा द्वारा मोल ली जायँ उनका मूल्य तब तक न दिया जाय जब तक वे स्टॉक रजिस्टर में न लिख ली जायँ।

संवत् १९९० में कलाभवन की सूची प्रस्तुत करने का कार्य आरंभ किया गया। डाक्टर मोतीचंद्र ने इस कार्य का भार अपने ऊपर लिया और बड़ी लगन तथा तत्परता के साथ इसे किया। इस वर्ष भी भेंट-रूप में अनेक वस्तुएँ कलाभवन को प्राप्त हुईं।

संवत् १९९१ में कलाभवन की ओर से वैराट नामक स्थान में खुदाई का कार्य आरंभ कराने का विचार किया गया। यह स्थान काशी से उत्तर पूर्व दिशा में लगभग २२ मील पर है। यहाँ मीलों तक अति प्राचीन टीले फैले हुए हैं। इन टीलों की प्राचीनता इसी बात से समझी जा सकती है कि उनकी ऊपरी सतह पर ही मौर्यकालीन मिट्टी के बर्तनों के टुकड़े, शुंगकालीन वस्तुएँ, कुशनराज्य के सिक्के आदि पड़े हुए मिलते हैं। कोई आश्चर्य नहीं जो इस स्थान से ऐसे महत्त्व की ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त हो जिसके कारण हमारे प्राचीन इतिहास के कई परिच्छेद फिर से लिखने पड़ें। किंतु इस कार्य को पूरा करने के लिये कम से कम बीस हजार रुपए की आवश्यकता थी और सरकार से अनुमति प्राप्त करना भी आवश्यक था। अतः सं० १९९२ में एक प्रतिनिधि-मंडल कलाभवन की ओर से पुरातत्त्व-विभाग के डाइरेक्टर-जनरल से मिला। उन्होंने मंडल के उद्देश्य से पूरी सहानुभूति प्रकट की और उसे सफल बनाने का भी वचन दिया। खुदाई का कार्य आरंभ कराने के लिये एक ऐसे आदमी की आवश्यकता थी जो इस काम को जानता हो। अतः पुरातत्त्व-विभाग के डिपुटी डाइरेक्टर के आदेशानुसार यह काम सीखने के लिये डाक्टर मोतीचंद लौरिया नंदनगढ़ भेजे गए। कलकत्ता म्यूजियम के

पुरातत्त्व-विभाग के अध्यक्ष श्री मणिगोपाल मजूमदार वहाँ की खुदाई का संचालन कर रहे थे। उन्होंने बड़े प्रेम से डाक्टर साहब को इस विषय का अध्ययन कराया।

कलाभवन के इस आरंभिक जीवन में यह वर्ष विशेष महत्त्वपूर्ण रहा। आर्थिक कठिनाइयों के होते हुए भी दाताओं की कृपा तथा डाक्टर मोतीचंद के उत्साह और परिश्रम से इस वर्ष कलाभवन को बड़े महत्त्व की वस्तुएँ प्राप्त हुईं। इलाहाबाद म्यूजियम के प्राण राय बहादुर श्री व्रजमोहन व्यास ने भी कलाभवन को अनेक बहुमूल्य वस्तुएँ प्रदान करने की कृपा की। इस वर्ष कलाभवन के लिये सभा ने बनारस म्युनिसिपल बोर्ड से आर्थिक सहायता प्राप्त करने का उद्योग किया था किंतु कई कारणों से यह मिलते मिलते रह गई।

कलाभवन ने इस वर्ष श्री केशवप्रसाद मिश्र कृत मेघदूत का खड़ी बोली में पद्यानुवाद प्रकाशित किया। इस सुंदर ग्रंथ में ठाकुर शैली के प्रसिद्ध चित्रकार श्री शैलेंद्र दे के बनाए हुए ( १२ रंगीन और एक सादा ) चित्र दिए गए हैं।

इस वर्ष कलाभवन में फिर चोरी हुई जिससे उसकी गहरी हानि हुई। चुराए गए चित्रों की संख्या एक सौ से भी अधिक थी पर उनमें आठ बहुत ही महत्त्व के थे। इस चोरी का भी पता न चला। इस चोरी के परिणाम-स्वरूप सभा के कई वैतनिक कार्यकर्त्ता कार्य से हटा दिए गए।

जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है, कलाभवन सन् १९२९ के आरंभ में सभा में आया था। उस समय जो नियम बनाए गए थे उनमें मुख्य बात यह थी कि सभा इस भवन पर प्रतिवर्ष कम से कम ६००) व्यय करेगी और कलाभवन का समस्त प्रवंध एक उपसमिति के अधीन रहेगा जिसके आठ सदस्य होंगे। १९२९ से १९३६ तक कलाभवन की मद में १३८३१।=) व्यय हुए जिनमें से ४८३३॥–)॥– चंदे से प्राप्त हुए थे और शेष ८९९६।।।) सभा ने अपने पास से व्यय किए थे। इस प्रकार निश्चित वार्षिक व्यय से कहीं अधिक व्यय सभा कलाभवन पर करती रही। कलाभवन की उपयोगिता को देखते हुए यह अनिवार्य था कि उसका खर्च प्रतिवर्ष बढ़ता जाय। वह व्यय उठाना सभा की शक्ति के बाहर की बात थी। कलाभवन में दो बार चोरी हो चुकी थी और बहुत प्रयत्न करने पर भी कलाभवन की वस्तुओं की न तो विस्तृत सूची ही तैयार हो पाई थी और न सब चीजें यथास्थान सजाकर ताले में ही रखी जा सकी थीं। सभा की अपनी आर्थिक स्थिति भी अच्छी नहीं थी। इसलिये कलाभवन भारतकला-परिषद् को लौटा देने पर सभा विचार कर रही थी, पर अपना पैसा खर्च करते हुए भी उसके संग्रह पर सभा का स्वत्व कितना है यह भी एक विचारणीय प्रश्न था और कलाभवन के प्रवंध के संबंध में कुछ मतभेद भी उत्पन्न हो गया था। इसलिये कलाभवन के पुराने नियमों पर फिर से विचार करना और उसकी वैधानिक परिस्थिति की छानबीन करना आवश्यक हो गया। सं० १९९३ में कलाभवन तथा कलापरिषद् के परस्पर संबंध पर कानूनी दृष्टि से विचार करने पर विदित हुआ कि भारतकला-परिषद् की रजिस्ट्री सन् १८६० ई० के २१वें ऐक्ट के अनुसार हुई है और कलाभवन उस रजिस्टर्ड संस्था की संपत्ति है। निदान कला-परिषद् के सदस्यों को १८ अप्रैल, १९३६ ई० को पत्र लिखकर पूरी व्यवस्था बता दी गई और उनसे पूछा गया कि क्या वे लोग कलाभवन को सदा के लिये

काशी-नागरीप्रचारिणी सभा को सौंप देने को तैयार हैं। अधिकांश सदस्यों ने इस प्रस्ताव को स्वीकार किया। स्वीकार करनेवालों के नाम इस प्रकार हैं—सर्वश्री रवींद्रनाथ ठाकुर, हीरालाल अमृतलाल शाह, मैथिलीशरण गुप्त, सी० के० देसाई और राय कृष्णदास।

इसके बाद २७ भाद्रपद, १९९३ (१२ सितंबर, १९३६) की बैठक में श्री रामनारायण मिश्र के प्रस्ताव और श्री रामचंद्र वर्मा के अनुमोदन पर कलाभवन के संबंध में निम्नलिखित नियम स्वीकार किए गए—

"भारतकला-परिषद् ने निम्नलिखित पाँच सदस्यों की लिखित स्वीकृति पर अपनी संपूर्ण संपत्ति काशी-नागरीप्रचारिणी सभा को एक ट्रस्ट के रूप में जनता के हितार्थ निम्नलिखित शर्तों पर दे दी है—

१. श्री रवींद्रनाथ ठाकुर
२. श्री मैथिलीशरण गुप्त
३. श्री हीरालाल अमृतलाल शाह
४. श्री सी० के० देसाई
५. श्री राय कृष्णदास

(१) सभा को आगे लिखी शर्त ३ की अवस्था को छोड़कर अन्य किसी अवस्था में भारतकला-भवन की वस्तुओं को हस्तांतरित करने का अधिकार न होगा। आवश्यकता पड़ने पर सन् १८६० के २१वें विधान के अनुसार कार्य होगा।

(२) कलाभवन का संपूर्ण प्रबंध एक समिति के अधीन होगा जिसका संघटन प्रति तीसरे वर्ष होगा। इस समिति के अधिक से अधिक नौ तक सदस्य होंगे। इनमें से एक तो राय कृष्णदास आजीवन सदस्य होंगे और एक नागरीप्रचारिणी सभा के प्रबंध-मंत्री पदेन सदस्य रहा करेंगे। शेष सात में से कम से कम तीन तथा अधिक से अधिक पाँच सदस्य, प्रबंध-समिति, नागरीप्रचारिणी सभा के सदस्यों में से नियुक्त करेगी जिनका अवधिकाल इस समिति के अवधिकाल के बराबर होगा। शेष दो सदस्यों तक को, जिनका सभा का सदस्य होना आवश्यक न होगा, संमिलित करने का अधिकार समिति को अपने अवधिकाल में किसी निश्चित समय के लिये होगा। राय कृष्णदास का स्थान रिक्त होने पर प्रबंध-समिति सभा के सदस्यों में से उस स्थान की पूर्ति करेगी।

समिति अपने पदाधिकारी स्वयं नियुक्त करेगी। इस समिति की गणपूरक संख्या कम से कम तीन होगी।

(३) जो वस्तुएँ भारतकला-परिषद् ने दूसरों से जिन शर्तों पर उधार ली हैं उन शर्तों से नागरीप्रचारिणी सभा भी बँधी रहेगी। परंतु समिति इसका संपूर्ण विवरण सभा में एक मास के भीतर भेज देगी।

(४) कलाभवन के प्रकाशनों पर, जो सभा द्वारा बिकेंगे, सभा ३० प्रतिशत कमीशन लेगी। इस तीस प्रतिशत में कार्यालय का संपूर्ण खर्च तथा पुस्तक-विक्रेताओं का कमीशन भी संमिलित होगा।

कलाभवन के प्रकाशनों की बिक्री से जो बचत होगी वह कलाभवन की उस प्रकार की आय मानी जायगी जिसका उल्लेख आगे शर्त १० घ में हुआ है।

(५) सभा ६०० रुपये प्रति वर्ष अपनी आय में से अथवा विशेष दान या विशेष सहायता प्राप्त करके कलाभवन को देगी। इसके अतिरिक्त

यथासंभव समिति के प्रस्ताव पर दे सकेगी। परंतु उपर्युक्त ६००) की वार्षिक सहायता किसी भी कारण बंद न की जायगी। इस ६००) के अतिरिक्त कलाभवन के लिये सभा ५०) वार्षिक तक डाक-व्यय करेगी।

(६) सभा-विभाग से, जो पुस्तकें कला-भवन के उपयोगी हों, वे कला-भवन के आवश्यकतानुसार प्रबंध-समिति की अनुमति से दी जा सकेंगी।

अँगरेजी विभाग तथा हस्तलिखित पुस्तकें कला-भवन के अधीन रहेंगी।

(७) कला-भवन के संग्रहाध्यक्ष का चुनाव समिति के प्रस्ताव पर प्रबंध-समिति करेगी, जिसे समिति की तत्त्वावधानता में कार्य करना होगा।

राय कृष्णदास कला-भवन के आजीवन संग्रहाध्यक्ष रहेंगे। समिति के प्रस्ताव पर आवश्यकतानुसार उपसंग्रहाध्यक्ष की नियुक्ति प्रबंध-समिति करेगी।

(८) समिति को कला-भवन के समान, या उसी प्रकार की उद्देश्यवाली संस्थाओं को, जिन पर किसी प्रकार का आर्थिक या दूसरा भार न हो, प्रबंध समिति की अनुमति से कला-भवन में अंतर्भुक्त कर लेने का अधिकार होगा।

(९) जब तक कला-भवन की विशेष हानि न बताई जाय, समिति के नीचे लिखे अधिकारों में परिवर्त्तन या परिवर्धन प्रबंध-समिति के साठ प्रतिशत सदस्यों के एकमत से ही हो सकेगा।

(१०) इस समिति के निम्नलिखित अधिकार होंगे—

क—समिति कला-भवन के उद्देश्यों की पूर्ति, संरक्षण, उन्नति एवं व्यवस्था का पूर्ण प्रबंध करेगी और यथासाध्य कला-परिषद् के उद्देश्यों की पूर्ति की चेष्टा करेगी।

ख—समिति को इन शर्तों के अनुकूल और साथ ही सभा के नियमों के अविरुद्ध अपने नियम उपनियम, बनाने तथा उनमें संशोधन, परिवर्तन एवं परिवर्धन करने का अधिकार होगा। समिति ऐसे नियम, उपनियम बनाकर प्रबंध-समिति के पास स्वीकारार्थ भेज दिया करेगी।

ग—समिति कला-भवन का बजट प्रतिवर्ष तैयार करके प्रबंध-समिति में सूचनार्थ भेजेगी। पर यदि सभा ६००) रु० से अधिक सहायता देगी तो वह उसके निश्चय के अनुसार व्यय होगा।

घ—समिति किसी विशेष कार्य के लिये आवश्यकतानुसार विशेष सहायता प्राप्त करेगी और उसको उसके खर्च करने का अधिकार होगा, परंतु उसका पूरा जमा खर्च सभा-कार्यालय में रहेगा और वह सभा द्वारा समिति की अनुमति के अनुसार व्यय होगा, किंतु उसके लिये समिति उत्तरदायी होगी।

ङ—समिति को कला-भवन-निर्माण के लिये चंदा करने तथा अन्य प्रकार की सहायता प्राप्त करने का अधिकार होगा परंतु उस रकम को प्रबंध-समिति की आज्ञा के बिना व्यय करने का अधिकार न होगा।

च—समिति को अपने वैतनिक कर्मचारियों के नियुक्त करने तथा पृथक् करने का अधिकार होगा और तत्संबंधी संपूर्ण कार्य समिति करेगी।

छ—समिति कला-भवन को या उसके किसी अंश को किसी अवस्था में प्रबंध-समिति की अनुमति के बिना सभा-भवन से बाहर ले जाने तथा किसी

व्यक्ति या संस्था को किसी प्रकार से देने या उधार देने की अधिकारिणी न होगी।

ज—केवल एकाधिक मिट्टी की मूर्तियों या एकाधिक मनकों को छोड़कर समिति को कला-भवन के संग्रह की किसी वस्तु को बेचने का अधिकार न होगा। परंतु प्रबंध-समिति के खास इसी कार्य के लिये किए गए अधिवेशन में प्रबंध-समिति के साठ प्रतिशत सभासदों की एकमत स्वीकृति से किसी विशेष अवस्था में, कला-भवन की उन्नति के लिये कला-भवन की कोई एकाधिक वस्तु किसी दूसरी महत्त्वपूर्ण वस्तु से किसी व्यक्ति वा संस्था से, परिवर्तन की जा सकेगी।

किंतु यदि (१) उक्त एकाधिक वस्तु ऐसी हो जिसके जोड़ की चीज किसी और संग्रह में न हो, वा (२) वह सोने-चाँदी की, वा रत्न उपरत्न अथवा किसी कीमती पत्थर वा कीमती मसाले की हो तो वह परिवर्तित न की जा सकेगी और न बेंची जा सकेगी।

साथ ही किसी प्रकार की एकाधिक वस्तु जो कला-भवन को किसी दाता ने प्रदान की हो यदि १—वह मिट्टी की मूर्ति वा मनका हो तो उस समय तक बेंची न जा सकेगी तथा यदि २—वह कोई और वस्तु हो तो उस समय तक परिवर्तित न की जा सकेगी जब तक उसके दाता ने ऐसा करने के विरुद्ध अपनी लिखित अनुमति न दी हो। इस प्रकार के विक्रय वा परिवर्तन से जो वस्तु प्राप्त होगी वह उसी दाता के दान-स्वरूप कला-भवन में दर्ज तथा प्रदर्शित की जायगी।

ऐसी एकाधिक मिट्टी की मूर्तियों तथा मनकों की जिन्हें समिति विक्रययोग्य समझेगी एक अलग सूची रहेगी और एक अलग स्थान पर रखे जायँगे तथा समिति के निश्चय के अनुसार बेंचे वा परिवर्तन किए जायँगे। इसके द्वारा जो आय होगी वह १० घ के अनुसार व्यय होगी।

झ—समिति प्रबंध-समिति की आज्ञा प्राप्त करके संग्रहाध्यक्ष की जिम्मेदारी पर उनके द्वारा किसी वस्तु को मरम्मत कराने, ब्लाक बनवाने या विशेषज्ञ की संमति प्राप्त करने को भेज सकेगी।

ञ—समिति की पूर्व अनुमति के विना किसी प्रकार का खर्च न होगा।

(११) यदि इन नियमों में से किसी के भाव, अर्थ या तात्पर्य में कभी मतभेद होगा तो सभा की प्रबंध-समिति के विशेष अधिवेशन का, जो इसी कार्य के लिये बुलाया जायगा, निर्णय मान्य होगा।

नोट—ऊपर के नियमों में 'समिति' का तात्पर्य 'भारत-कलाभवन समिति' और 'प्रबंध-समिति' का तात्पर्य 'काशी नागरी-प्रचारिणी सभा की प्रबंध-समिति' है।"

इसके अनंतर सभा को यह सूचना मिली कि संगृहीत वस्तुओं में ७९ ( उनासी ) वस्तुएँ जिनकी सूची श्री राय कृष्णदास ने १ कार्त्तिक, १९९३ ( १८ अक्तूबर, १९३६ ) की प्रबंधसमिति में उपस्थित की थी, उनकी निजी संपत्ति हैं जो उन्होंने कलापरिषद् को मँगनी दी थीं। समिति ने अपनी ५ मार्गशीर्ष, १९९३ ( २१ नवंबर, १९३६ ) की बैठक में यह निश्चय किया कि वस्तुएँ श्री राय कृष्णदास को लौटा दी जायँ।

इतना सब होने पर भी आर्थिक कठिनाई ज्यों की त्यों बनी रही। इस समय सभा के ऊपर लगभग २५०००) का ऋण हो गया था जो बराबर बढ़ता जा रहा था। २४ माघ, १९९३ ( ६ फर्वरी, १९३७ )

की प्रबंधसमिति की बैठक में प्रधान मंत्री श्री कृष्णदेवप्रसाद गौड़ ने इस संबंध में एक पंचवर्षीय योजना उपस्थित की। इसी अधिवेशन में श्री राय कृष्णदास का ३ फर्वरी, १९३७ का पत्र भी उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने प्रधान मंत्री की पंचवर्षीय अर्थ-योजना पर सहमति प्रकट करते हुए लिखा था कि

"इस प्रश्न पर भी विचार किया जाय कि सभा यदि कलाभवन को न रखने का निश्चय कर ले तो उसे कुछ रुपए एकमुश्त मिल जायँ तथा ६५०) प्रतिवर्ष का खर्च टूट जाय वा यदि यह संभव न हो तो कलाभवन का केवल वह अंश जो भारतकला-परिषद् द्वारा संगृहीत है लौटा दिया जाय और जो चीजें सभा के पास बच रहें वे आर्यभाषा-पुस्तकालय से संबद्ध कर दी जायँ। इस प्रकार सभा को एकमुश्त तो कुछ न मिलेगा किंतु ६५०) वार्षिक खर्च कम हो जायगा।"

तत्कालीन सभापति राय बहादुर श्री बैजनाथ पंड्या ने इस पत्र पर ४ फर्वरी, १९३७ को यह नोट लिखा कि "सभा की आर्थिक कठिनाइयों के कारण कलाभवन को रखना वा उसमें खर्च करना इस समय बहुत अड़चन का कार्य मालूम पड़ता है।"

इस पत्र पर विचार होने के बाद निश्चय हुआ कि भारत-कलाभवन सभा से स्वतंत्र कर दिया जाय और जितनी वस्तुएँ भारतकला-परिषद् से आई हों वे भारतकला-परिषद् को लौटा दी जायँ तथा जो वस्तुएँ बच रहें उनकी सूची तैयार करके मंत्री उपस्थित करें। सभा १ फाल्गुन, १९९३ से कलाभवन का व्यय बंद कर दे और इस प्रस्ताव की सूचना कला-परिषद् के प्रत्येक सभासद् के पास जवाबी रजिस्ट्री से भेज दी जाय। यह निश्चय तो हो गया किंतु कला-परिषद् की सामग्री किसे लौटाई जाय यह प्रश्न अभी शेष था। निदान अगले वर्ष २८ आषाढ़, १९९४ (१२ जुलाई, १९३७) की बैठक में सभापति राय बहादुर श्री श्यामसुंदरदास ने कलाभवन लौटा देने के संबंध में यह प्रस्ताव उपस्थित किया—

"आरंभ में जो वस्तुएँ भारतकला-परिषद् से सभा में आई थीं उनमें से जो अभी तक सभा में रक्षित हैं वे भारतकला-परिषद् के मंत्री श्री राय कृष्णदासजी को सहेजकर लौटा दी जायँ।"

इस प्रस्ताव पर काफी बहस हुई और कई संशोधन भी उपस्थित किए गए। अंत में सर्वश्री बलराम उपाध्याय, ठाकुरदास और व्रजरत्नदास इन तीन सज्जनों की एक वैधानिक उपसमिति सभापति महोदय के उक्त प्रस्ताव पर कानूनी दृष्टि से विचार करके २५ जुलाई, १९३७ तक अपनी रिपोर्ट सभा को देने के लिये बना दी गई। इस उपसमिति ने निम्नलिखित रिपोर्ट १३ आश्विन, १९९४ (२९ सितंबर, १९३७) के अधिवेशन में उपस्थित की—

"हम लोगों ने कला-परिषद् व सभा के बीच जो दो शर्तनामे हुए हैं उनको ध्यानपूर्वक पढ़ने और विचार करने पर पाया कि प्रथम तथा मुख्य प्रश्न यह है कि जब सभा ने एक बार ट्रस्ट स्वीकार कर लिया तब उसको इसे छोड़ने का अधिकार है या नहीं। इस संबंध में जो दो शर्तनामे ता० २५-५-२९ व ता० १२-६-३६ को हुए हैं उनसे स्पष्ट ज्ञात होता है कि सभा को ट्रस्ट की वस्तुओं को लौटाने का अधिकार पहिले शर्तनामे के अनुसार केवल उसी अवस्था में है जब कि सभा उनके रखने योग्य स्थान का प्रबंध न कर सके और परिषद् उसका प्रबंध कर सके। अन्य किसी अवस्था में उसे

लौटाने का अधिकार नहीं है। दूसरे शर्तनामे में केवल मँगनी की वस्तु को लौटाने मात्र का अधिकार है अन्य किसी वस्तु का नहीं है। इसके अतिरिक्त कानून से भी जब एक बार ट्रस्ट स्वीकार कर लिया गया तब उसकी वस्तु न्यायालय की आज्ञा से अथवा शर्तनामे में यदि लौटाने की शर्त हो तभी लौटाई जा सकती है। तात्पर्य यह कि किसी भी अवस्था में सभा को सामान लौटाने का अधिकार नहीं है। यदि शर्तनामे के अनुसार लौटाया जाय तो केवल उसी प्रकार संस्था को लौटाया जा सकता है। इस समय भारत-कला परिषद् के अस्तित्व का कोई पता नहीं चलता। वह तो सभा को कुछ सामान सिपुर्द करके अपना अंत कर चुकी सी मालूम होती है। केवल राय कृष्णदास को सामान लौटा लेने का कोई अधिकार नहीं है। इसलिये हम लोगों की राय में ये वस्तुएँ किसी को लौटाई नहीं जा सकतीं। इस कारण अब यह विचार करने की आवश्यकता ही नहीं है कि क्या लौटाया जाय, किस प्रकार लौटाया जाय इत्यादि।"

जिस समय यह रिपोर्ट प्रबंध-समिति में पढ़ी गई उसी समय इसी सिलसिले में कला-भवन के खर्च के संबंध में श्री राय कृष्णदास का २६-६-३७ का पत्र भी पढ़ा गया। इस पत्र में कहा गया था—

"कला-भवन के संबंध में जो कानूनी रिपोर्ट आई है उससे संभव है कि कला-भवन सभा में ही रहे। किंतु इस समय सभा की जैसी आर्थिक परिस्थिति हो रही है उसमें मैं यह उचित समझता हूँ कि कला-भवन के कारण सभा पर कोई अतिरिक्त बोझ न पड़े; अतएव कलाभवन के लिये मैं चंदा जमा कर लूँगा। यह चंदा ज्यों ज्यों आता जायगा त्यों त्यों सभा में इकट्ठा होता चलेगा, वहीं इसका जमा-खर्च रहेगा। सूचनार्थ निवेदन है।

सभा को यह जानकर हर्ष होगा कि जिस दिन कला-भवन बंद हुआ उस दिन तक जो वस्तुएँ कलाभवन में थीं वे सब सूची पर चढ़ चुकी हैं।"

सभा ने उक्त रिपोर्ट और पत्र पर विचार करके निश्चय किया—

"उक्त रिपोर्ट में दिए हुए इन दो कारणों से कि भारतकला-परिषद् का अब अस्तित्व नहीं है और कानून से किसी भी अवस्था में सामान लौटाने का सभा को अधिकार नहीं, सभा ही भारतकला-परिषद् की संपत्ति की ट्रस्टी है। अतः भारत-कला-परिषद् का सामान नहीं लौटाया जा सकता।

"सभा अपनी वर्त्तमान आर्थिक अवस्था में कला-भवन पर कुछ भी व्यय नहीं कर सकती। अतः वह राय कृष्णदास जी को धन्यवाद देती है कि उन्होंने उसका खर्च चलाने के लिये रुपया जमा करने का भार अपने ऊपर लिया है। परंतु इस प्रकार की सहायता प्राप्त करने के कारण श्रीराय कृष्णदास का कोई नया स्वत्व कला-भवन पर न होगा।

"एक उपसमिति बनाई जाय जो कला-भवन के पुराने नियमों को देखकर यह प्रस्ताव करे कि भविष्य में कला-भवन का संचालन किस प्रकार हो। उपसमिति के सदस्य निम्नलिखित सज्जन हों—

श्री पं० रामनारायण मिश्र, श्री बा० ठाकुरदास, श्री ठा० शिवकुमार सिंह, श्री पं० बलराम

उपाध्याय, श्री बा० व्रजरत्नदास, श्री बा० माधो-प्रसाद, श्री राय कृष्णदास, श्री बा० कृष्णदेवप्रसाद गौड ( संयोजक )।"

इसके पश्चात् ४ फाल्गुन, १९९४ ( १६ फर्वरी, १९३८ ) की बैठक में प्रबंध-समिति ने ज्वाएंट स्टाक कंपनी के रजिस्ट्रार के पत्र के उत्तर में, जिसमें कहा गया था कि भारतकला-परिषद् एक रजिस्टर्ड संस्था है, निश्चय किया—

"राय कृष्णदास जी को लिखा जाय कि वे रजिस्ट्रार ज्वाएंट स्टाक कंपनीज को सूचना दें कि भारत-कला-परिषद् का अस्तित्व अब १६-२-३८ से नहीं है, वह नागरीप्रचारिणी सभा में मिला दिया गया है और उसकी समस्त संपत्ति नागरीप्रचारिणी सभा को ट्रस्ट के रूप में दे दी गई है और इसी प्रकार सभा भी एक पत्र ज्वाएंट स्टाक कंपनीज के रजिस्ट्रार को लिखे कि सभा ने परिषद् की संपत्ति ट्रस्ट रूप में प्राप्त की और भारतकला-परिषद् सभा में मिला लिया गया।"

इसी अधिवेशन में सभा की नियमावली में भी कुछ संशोधन किए गए। नियम २ ( ख ) इस प्रकार कर दिया गया—

"ऐसा संग्रहालय खोलना जिसके द्वारा हिंदी भाषा, नागरी लिपि तथा भारतीय संस्कृति की रक्षा और उन्नति हो।"

नियमावली के ३०वें पृष्ठ पर चौहत्तरवीं धारा के आगे पचहत्तरवीं धारा इस रूप में जोड़ी गई—

"५—संग्रहालय

सभा में एक संग्रहालय रहेगा जिसका नाम 'भारत-कला-भवन' होगा और जिसमें भारतीय पुरातत्त्व, कला तथा संस्कृति-संबंधी वस्तुएँ रहेंगी। हिंदी में भारतीय संगीत, चित्र आदि कलाओं की शिक्षा देने के लिये विद्यालय भी खोला जायगा।"

इसके पश्चात् २८ फाल्गुन, १९९४ ( ११ मार्च, १९३८ ) की बैठक में कलाभवन नियमोपसमिति की ( ९ मार्च, १९३८ ) की रिपोर्ट उपस्थित की गई और कला भवन के संचालन के लिये निम्नलिखित नियम स्वीकार किए गए। यही अंतिम शर्तनामा है।

"शर्तनामा

आमुख : ( प्रिएम्बुल )

भारतकला-परिषद् ने (जिसका उल्लेख आगे परिषद् शब्द से किया जायगा ) अपने निम्नलिखित पाँच सदस्यों की लिखित स्वीकृति पर अपना संपूर्ण संग्रह तथा संपत्ति काशी-नागरीप्रचारिणी सभा को ( जिसका उल्लेख आगे सभा शब्द से किया जायगा ) एक ट्रस्ट के रूप में, जनता के हितार्थ, निम्नलिखित शर्तों पर, जिनमें उन अवस्थाओं को छोड़कर जिनका उल्लेख नीचे यथास्थान हुआ है, अन्य किसी अवस्था में परिवर्तन न हो सकेगा, सौंप दी है।

सर्वश्री

१—रवींद्रनाथ ठाकुर

२—मैथिलीशरण गुप्त

३—हीरालाल अमृतलाल शाह

४—सी० के० देसाई

५—राय कृष्णदास

नाम

१—इस संग्रहालय तथा चित्रागार का नाम भारतकला-भवन रहेगा ( जिसका उल्लेख आगे कलाभवन शब्द से किया जायगा )।

## उद्देश्य

२ क—इस कलाभवन में परिषद् का समस्त संग्रह और पुस्तकालय तथा सभा की हस्तलिखित पुस्तकों और ऐसी सब सामग्री का सुरक्षित रखना, जिसका संबंध भारत एवं बृहत्तर भारत के कला-कौशल तथा संस्कृति एवं प्रत्न तथा हिंदी के इतिहास से हो और जो संग्रह करके, क्रय करके एवं निधान के लिये ( ऑन लोन ) प्राप्त करके एकत्र की जाय।

ख—आर्थिक तथा अन्य सुविधाओं के अनुसार, परिषद् के निम्नलिखित उद्देश्यों को पूर्ण करना—

२ ( ए ) ओपनिंग ए स्कूल ऐंड ए स्टुडियो फॉर टीचिंग इंडियन म्यूजिक, पेंटिंग, स्कलपचर, ऐंड अदर इंडियन आर्ट्स ऐंड क्रैफ्ट्स।

( डी ) एन्करेजिंग दि स्टडी, प्रैक्टिस ऐंड डिवैलपमेंट आव सच आर्ट्स बाई प्रोवाइडिंग स्कालरशिप्स, ऑनोरेरिया, ऐंड सच अदर असिस्टैंस ऐज़ मे बी नेसेसरी।

( ई ) प्रोमोटिंग पब्लिक इंटरेस्ट इन सच आर्ट्स ऐंड सिक्योरिंग फ़ार देम देयर प्रापर प्लेस इन नेशनल लाइफ़ ऐंड कल्चर, बाइ आर्गैनाइजिंग पापुलर लेक्चर्स, कन्वर्सेशन्स, कान्फरेंसेज, एग्जिबिशन्स एटसेटरा, एटसेटरा, ऐंड ब्रिंगिंग आउट सूटेब्ल लिटरेचर ऐंड आर्ट रिप्रोडक्शन्स।

(एफ़) प्रिजर्विंग दि इंडिवीजुएलिटी आव इंडियन आर्ट्स ऐंड क्रैफ्ट्स।

(एच) ऐडाप्टिंग सच अदर मीन्स ऐज़ विल प्रोमोट दीज़ ऑब्जेक्ट्स।"

## नियम

३—निधान ( लोन) की, रजिस्टर में दर्ज वस्तुओं को छोड़कर तथा आगे धारा १३, ज, फ में उल्लिखित अवस्थाओं को छोड़कर सभा को अन्य किसी अवस्था में कला-भवन-संग्रह को वा उस संग्रह के किसी अंश को हस्तांतरित करने का अधिकार ( राइट ऐंड पावर ) न होगा।

४—कला-भवन के उद्देश्यों को, जो ऊपर धारा २ क, ख में विवृत हैं, पूरा करने के लिये तथा कलाभवन की रक्षा, उन्नति एवं व्यवस्था के लिये कला-भवन का संपूर्ण प्रबंध एक उप-समिति के (जिसका उल्लेख आगे उप-समिति शब्द से किया जायगा ) अधीन रहेगा, जिसका संघटन प्रति तीन वर्ष पर होगा।

इस उपसमिति के कुल ग्यारह सदस्य होंगे। इनमें से एक सभा के प्रधान मंत्री पदेन सदस्य रहा करेंगे। दूसरे राय कृष्णदास आजीवन सदस्य होंगे। शेष नौ में से सभा के ऐसे छः सदस्यों को जो कलाभवन के उद्देश्यों के प्रेमी हों सभा की प्रबंध-समिति ( जिसका उल्लेख आगे प्रबंध-समिति शब्द से किया जायगा ) इस उपसमिति के अवधिकाल के लिये नियुक्त करेगी। शेष ऐसे तीन व्यक्तियों को, जो कलाभवन के उद्देश्यों

के प्रेमी हों और जिनका सभा का सदस्य होना आवश्यक न होगा, उपसमिति के अवधिकाल में किसी निश्चित समय के लिये उपसमिति सम्मिलित करेगी।

राय कृष्णदास का स्थान रिक्त होने पर कलाभवन का संग्रहाध्यक्ष पदेन उपसमिति का सदस्य हुआ करेगा। इस उपसमिति की गणपूरक संख्या ३ होगी।

नोट—वर्त्तमान उपसमिति इस धारा के अनुसार संघटित मानी जायगी और उसका कार्यकाल १ वैशाख, १९९४ से चालू माना जायगा।

५—उपसमिति के पदाधिकारी एक सभापति, एक उपसभापति एवं एक मंत्री होंगे।

उपसमिति अपने पदाधिकारी, अपने अवधि-काल के लिये, अपने सदस्यों में से नियुक्त करेंगी।

मंत्री पद पर साधारणतः ( आर्डिनरिली ) संग्रहाध्यक्ष हुआ करेंगे।

६—तीन वर्ष पर नई उपसमिति के संघटन के पूर्व उस समय वर्त्तमान उपसमिति को कार्य संपादन का अधिकार होगा।

७—उपसमिति को, विशेष कार्यों के संबंध में परामर्श एवं सहायता देने के लिये एक वा अधिक विशेषज्ञ उपसमिति नियुक्त करने का अधिकार होगा जिसमें वह तत्-तत् विषय में योग्य पाँच व्यक्तियों तक को प्रबंध समिति की स्वीकृति से रख सकेगी।

ऐसी विशेषज्ञ उपसमितियों की अवधि उपसमिति नियत करेगी, किंतु वह अवधि समिति के अवधिकाल से अधिक न होगी।

८—सभा आर्थिक सुविधा के अनुसार साधारणतः छः सौ रुपया प्रतिवर्ष कलाभवन को देगी और आवश्यकता तथा सामर्थ्य के अनुसार इस वार्षिक सहायता को बढ़ाती रहेगी। इसके अतिरिक्त आवश्यकतानुसार उपसमिति के प्रस्ताव पर यथा-साध्य विशेष सहायता भी देगी।

उक्त छः सौ के अतिरिक्त सभा पचीस रुपया प्रतिवर्ष कलाभवन को डाक-तार व्यय के लिये देगी।

उक्त छः सौ रुपये की वार्षिक सहायता तथा डाक-तार व्यय की रकम आर्थिक कठिनाई के सिवा अन्य किसी भी कारण बंद न की जायगी।

नोट—यदि सभा के साधारण सदस्यों के वार्षिक चंदे तथा पुस्तकों की आय वर्तमान वर्ष से २० प्रतिशत कम हो जाय तो सभा उसी अनुपात में कलाभवन की सहायता में कमी कर देगी।

९—कलाभवन के प्रकाशनों पर, जो सभा द्वारा बिकेंगे, सभा ३५ प्रतिशत कमीशन लेगी। इस पैंतीस प्रतिशत में कार्यालय का संपूर्ण व्यय तथा पुस्तक-विक्रेताओं का कमीशन भी सम्मिलित होगा।

कलाभवन के प्रकाशनों की बिक्री से जो बचत होगी वह कलाभवन की उसी प्रकार की आय लेखी जायगी जिसका उल्लेख आगे धारा १३ ग में हुआ है।

१०—कलाभवन के अवैतनिक संग्रहाध्यक्ष राय कृष्ण-दास होंगे और जब तक वे उस पद को स्वयं न छोड़ दें, इस पर बने रहेंगे।

११—संग्रहाध्यक्ष का पद खाली होने पर उपसमिति वैतनिक वा अवैतनिक संग्रहाध्यक्ष किसी नियत काल के लिये चुनेगी जिसकी नियुक्ति प्रबंध-समिति करेगी। एक ही व्यक्ति की एक से

अधिक काल के लिये नियुक्ति प्रबंध-समिति की इच्छा से हो सकेगी।

आवश्यकतानुसार वैतनिक वा अवैतनिक उप-संग्रहाध्यक्ष की किसी नियत समय के लिये नियुक्ति उपसमिति के प्रस्ताव पर प्रबंधसमिति करेगी।

संग्रहाध्यक्ष तथा उपसंग्रहाध्यक्ष को उप-समिति की व्यापक तत्त्वावधानता ( जनरल सुपर्विज़न ) में काम करना होगा।

१२—उपसमिति को कलाभवन के समान वा उसी प्रकार की उद्देश्यवाली संस्थाओं को, जिन पर किसी प्रकार का आर्थिक अथवा दूसरा भार न हो, प्रबंधसमिति की अनुमति से कलाभवन में अंतर्भुक्त कर लेने का अधिकार होगा।

१३—उपसमिति को अधिकार होगा कि—

( क ) कलाभवन की रक्षा, प्रबंध और उन्नति के लिये इन शर्तों के अनुकूल, साथ ही सभा के नियमों से अविरुद्ध अपने नियम उपनियम बनावे तथा आवश्यकतानुसार उनमें संशोधन-परिवर्त्तन करे।

नोट—उपसमिति ऐसे नियम उपनियम बनाकर वा आव-श्यकतानुसार उनमें संशोधन-परिवर्त्तन करके प्रबंधसमिति में स्वीकारार्थ भेज दिया करेगी।

( ख ) कलाभवन का बजट तैयार करे तथा पास करे एवं आवश्यकतानुसार उसमें परिवर्त्तन करे।

नोट—ऐसा बजट पास करके वा आवश्यकतानुसार उसमें परिवर्त्तन करके उपसमिति उसे सूचनार्थ प्रबंध-समिति में भेज दिया करेगी।

( ग ) कलाभवन के कार्यों के लिये एककालीन, सामयिक ( पीरियोडिकल ) वा विशेष आर्थिक सहायता, स्थायी निधि एवं हर प्रकार का चंदा करे तथा उगाहे।

कलाभवन का स्थायी कोश स्थापित करे और उसमें भवन-निर्माण एवं विशेष कार्य के लिये प्राप्त तथा सभा की वार्षिक सहायता के अतिरिक्त संपूर्ण आय का दशमांश प्रतिवर्ष जमा किया करे।

कलाभवन संबंधी सब प्रकार के व्यय बजट या परिवर्त्तित बजट के अनुसार करे तथा बिल पास करे।

नोट—१ स्थायी कोश में से प्रबंध-समिति की अनुमति से निश्चित समय के लिये स्थायी कोश का केवल सूद प्रतिवर्ष उपसमिति की आय में संमिलित किया जायगा।

नोट—२ कलाभवन की कोई आय उपसमिति की अनुमति के विना व्यय न होगी और ऐसे व्यय के लिये उपसमिति उत्तरदायी होगी, परंतु उसका कुल जमा-खर्च सभा के कार्यालय में रहेगा।

( घ ) कलाभवन की इमारत बनाने के लिये चंदा करे और उगाहे तथा प्रबंध-समिति की अनुमति से उसे व्यय करे।

( ङ ) कलाभवन के वैतनिक कर्मचारियों को नियुक्त तथा पृथक् करे और तत्संबंधी संपूर्ण कार्य करे और उसकी सूचना प्रबंध-समिति को तत्काल भेज दे।

( च ) कलाभवन संग्रह के लिये प्रबंध-समिति की अनुमति से निधान वस्तुएँ ( ऑब्जेक्ट्स आन लोन ) प्राप्त करे, ऐसे निधान की शर्तें तै करे और उन शर्तों को पूरा करे।

(छ) अपने समस्त सदस्यों के ३ : ५ बहुमत से कलाभवन-संग्रह की किसी भी वस्तु की मरम्मत, जीर्णोद्धार, फोटो, ब्लाक तथा अन्य प्रकार की प्रतिकृति और विशेषज्ञ की सम्मति के लिये, संग्रहाध्यक्ष की लिखित जिम्मेदारी पर, उनके हस्ते, सभा के अहाते के बाहर भेजे, जिसकी सूचना सभा को दे दी जाया करेगी।

(ज) अपने समस्त सदस्यों के ३ : ५ बहुमत से कलाभवन की बढ़ती के लिये—

(१) एक स्थान से प्राप्त ऐसे सोने, चाँदी, ताँबे तथा अन्य धातुओं के सिक्कों की, जिनकी दो से अधिक प्रतियाँ कलाभवन में हों, तीसरी वा उससे ऊपर की प्रतियों को,

(२) एक स्थान से प्राप्त ऐसी मिट्टी की मूर्त्तियों की, जिनकी दो से अधिक प्रतियाँ कलाभवन में हों, तीसरी वा उससे ऊपर की प्रतियों को,

(३) एक स्थान से प्राप्त ऐसे मनकों के, जिनके सदृश ६ से अधिक मनके कलाभवन में हों, सातवें या उससे ऊपर के मनकों को,

दूसरी वस्तुओं से परिवर्तित करे एवं विक्रय करे और इस प्रकार बिक्री द्वारा जो आय हो उसे कलाभवन-संग्रह की अभिवृद्धि में धारा १३ ग के अनुसार व्यय करे।

नोट—उक्त कारणवश जिन सिक्कों, मिट्टी की मूर्त्तियों तथा मनकों को उपसमिति विक्रय किंवा परिवर्त्तन के योग्य समझेगी उनकी प्रबंध-समिति की स्वीकृत की हुई एक सूची रहेगी। वे एक अलग स्थान पर रखे जायँगे तथा उपसमिति के निश्चय किए हुए मूल्य पर प्रबंधसमिति की अनुमति से बेचे जायँगे वा परिवर्तन किए जायँगे।

सिक्कों तथा मिट्टी की मूर्त्तियों की उक्त अधिक प्रतियाँ तथा मनकों के उक्त अतिरिक्त दाने यदि किसी दाता के प्रदान किए हुए हों तो वे उसी अवस्था में बिक्री वा परिवर्त्तन किए जा सकेंगे जब उनके दाता ने ऐसी बिक्री वा परिवर्त्तन की लिखित मनाही न की हो। इस प्रकार की बिक्री वा परिवर्त्तन में जो वस्तु प्राप्त होगी वह कलाभवन में उसी दाता के दान-स्वरूप दर्ज तथा प्रदर्शित की जायगी।

(झ) अपने समस्त सदस्यों के ३ : ५ बहुमत प्रस्ताव पर, प्रबंधसमिति की अनुमति प्राप्त करके, किसी खास अवस्था में, कलाभवन की उन्नति के लिये, कलाभवन-संग्रह की कोई एकाधिक (डुप्लिकेट) वा अतिरिक्त (सरप्लस) वस्तु, किसी व्यक्ति वा संस्था से परिवर्त्तन कर ले।

नोट—किंतु यदि

१—उक्त एकाधिक वा अतिरिक्त वस्तु ऐसी हो जिसके जोड़ की चीज देश के किसी अन्य सार्वजनिक संग्रह में न हो वा

२—वह सोने, चाँदी की वा रत्न, उपरत्न वा किसी कीमती पत्थर वा किसी कीमती उपादान की हो तो वह परिवर्त्तन न की जा सकेगी।

यदि उक्त परिवर्त्त्य वस्तु किसी दाता की प्रदान की हुई हो तो वह उसी अवस्था में परिवर्त्तन की जा सकेगी जब उसके दाता ने ऐसे परिवर्त्तन की लिखित मनाही न की हो।

इस प्रकार परिवर्त्तन से जो वस्तु प्राप्त होगी वह उसी दाता के दान स्वरूप, कलाभवन में दर्ज तथा प्रदर्शित की जायगी।

( ञ ) आवश्यकता पड़ने पर प्रबंधसमिति के अधिवेशनों में अपने स्वतंत्र प्रतिनिधि भेजे।

नोट—ऐसे प्रतिनिधियों को प्रबंधसमिति में वोट देने का अधिकार न होगा, किंतु उनका मत तथा दृष्टि-कोण प्रबंधसमिति के कार्य विवरण में दर्ज किया जायगा।

( ट ) ऐसे अन्य सब कार्य करे जो कलाभवन की रक्षा, व्यवस्था और उन्नति के लिये आवश्यक हों।

१४—निधान की वस्तुओं को छोड़कर तथा धारा १३ ज, झ में उल्लिखित अवस्थाओं को छोड़कर अन्य किसी अवस्था में उपसमिति कला-भवन-संग्रह को वा उस संग्रह के किसी अंश को प्रबंधसमिति की अनुमति के विना सभा के अहाते के बाहर ले जाने की वा ले जाने देने की अधिकारिणी न होगी।

प्रबंध-समिति की ऐसी अनुमति के लिये उसका इसी कार्य के लिये किया गया अधिवेशन तथा कुल प्रबंधसमिति के समस्त सदस्यों के ५० प्रतिशत से अधिक का बहुमत आवश्यक होगा।

१५—धारा १३ में विवृत समिति के अधिकारों में किसी विशेष कारण से परिवर्त्तन हो सकेगा। किंतु इसके लिये प्रबंधसमिति का इसी कार्य के लिये किया गया अधिवेशन तथा समस्त प्रबंधसमिति के समस्त सदस्यों का ३ : ५ बहुमत आवश्यक होगा।

१६—सभा के किसी प्रकार के किसी आर्थिक भार की कोई जिम्मेदारी कलाभवन अथवा उसकी किसी वस्तु पर न होगी।

१७—यदि इन शर्तों में से किसी के भाव, अर्थ वा तात्पर्य में कभी सभा और उपसमिति में मत-भेद हो तो प्रबंध-समिति एवं उपसमिति के एक संयुक्त अधिवेशन का, जो इसी कार्य के लिये बुलाया जायगा, निर्णय मान्य होगा।

१८—कोई अत्यंत आवश्यक कार्य आ जाने पर, ऐसे समय में जब उपसमिति और प्रबंधसमिति की बैठक करना असंभव हो, संग्रहाध्यक्ष, सभा के सभापति तथा मंत्री की संमति से उस कार्य का निर्वाह करेंगे। यदि व्यय करने की आवश्यकता हो तो बजट के अंदर या विशेष चंदा करके व्यय करेंगे तथा उपसमिति के आगामी अधिवेशन में सकारण उसकी स्वीकृति के लिये रिपोर्ट उपस्थित करेंगे।

१९—( परमात्मा न करे ) यदि कभी सभा टूट जाय तो सभा तथा उपसमिति के सांमलित सदस्यों की बैठक में, जिसमें ६० प्रतिशत सदस्य उपस्थित हों, उपस्थित सज्जनों के $\frac{3}{4}$ सदस्यों की अनुमति से कला-भवन हिंदू विश्वविद्यालय या किसी ऐसी संस्था को, जिसमें कला-भवन के उद्देश्यों की पूर्त्ति हो और जो काशीस्थ हो अथवा उसके अभाव में भारतवर्ष के भीतर कहीं स्थित हो, हस्तांतरित कर दिया जाय।"

प्रबंध-समिति की ६ वैशाख, १९९५ की बैठक में नियमावली के पृष्ठ १ में सभा के कार्यक्षेत्र में इतना और बढ़ा दिया गया—'(५) कला-भवन'।

संवत् १९९४ की विजयादशमी को कला-भवन का कार्य फिर आरंभ हो गया। उसी दिन युक्त-प्रांतीय एसेंबली के तत्कालीन अध्यक्ष माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टंडन ने कला-भवन का अवलोकन किया। इस वर्ष यद्यपि कला-भवन केवल पाँच ही महीने खुला रह सका फिर भी इतने ही समय में इसके संग्रह में कितनी ही महत्त्वपूर्ण वस्तुओं की वृद्धि हुई। श्री राय कृष्णदास के उद्योग से इस वर्ष कला-भवन का चलता व्यय चंदे के द्वारा ही होता रहा।

अन्य वर्षों की भाँति संवत् १९९५ में भी कला-भवन को बहुत अधिक संख्या में वस्तुएँ प्राप्त हुईं। भारत-सरकार ने भी इस वर्ष सारनाथ की वस्तुओं में से २६ पत्थर की मूर्तियों के टुकड़े आदि तथा ६ मृण्मुद्राएँ प्रदान कीं। बनारस राज्य की ओर से वहाँ के बने शस्त्रों के दो नमूने तथा एक पुराना राजसी सैनिक लिबास कला-भवन को मिला। इस वर्ष कला-भवन में साहित्यिकों की हस्तलिपियों के नमूने एकत्र करने में बड़ी सफलता मिली। अखिल भारतीय इतिहास परिषद् के अधिवेशन के अवसर पर ऐतिहासिक वस्तुओं की प्रदर्शिनी में देश भर के सभी संग्रहालयों के अध्यक्षों ने कला-भवन द्वारा प्रदर्शित चित्रों की रक्षण तथा प्रदर्शन की रीति की मुक्त कंठ से प्रशंसा की। कला-भवन को इस वर्ष २९५१) की विशेष आर्थिक सहायता प्राप्त हुई जिसमें २२००) संयुक्त प्रांत की सरकार ने दिए थे।

संवत् १९९६ में कला-भवन को प्राप्त हुई नई वस्तुओं की संख्या बहुत अच्छी रही। इस वर्ष श्री शिवलाल शाह स्मारक संग्रह के लिये पहली वस्तु 'हमजानामा' चित्रपट का एक मूल चित्र, शाह स्मारक कोश द्वारा दो हजार रुपए में खरीदी गई। इस दुर्लभ वस्तु को प्राप्त करा देने का श्रेय प्रिंस आव वेल्स संग्रहालय बंबई के कला-विभाग के अध्यक्ष डाक्टर मोतीचंद जी को है।

पौष, १९९६ (जनवरी, १९४०) के आरंभ से ही ईस्ट इंडिया रेलवे की ओर से काशी स्टेशन को बढ़ाने के लिये स्टेशन के उत्तरवाली गंगा किनारे की भूमि का, जो काशी स्टेशन और राजघाट किले के बीच है, खोदना आरंभ हुआ था। इस खुदाई के आरंभ में इस स्थान से कई मृण्मूर्तियाँ तथा पात्र कुछ लोगों को मिले थे। इसकी सूचना मिलने पर आगे मिलनेवाली वस्तुओं को प्राप्त करने की ओर कला-भवन का ध्यान गया। कुछ वस्तुएँ इस वर्ष भारतीय पुरातत्त्व विभाग द्वारा कला-भवन के लिये प्राप्त की गईं। पुरातत्त्व-विभाग ने सारनाथ से अनेक उत्तमोत्तम हिंदू-मूर्तियाँ भी इस वर्ष कला-भवन को प्रदान कीं। साहित्यिकों की हस्तलिपियों के नमूने भी इस वर्ष एकत्र किए गए। मृण्मूर्तियाँ बैठकियों में लगाकर अस्थायी रूप से सजा दी गईं और इनको स्थायी रूप से प्रदर्शित करने के लिये लगभग सवा सौ रुपए की लागत के आधुनिक ढंग के दो शोकेस तैयार कराए गए। चित्रों, पत्थर तथा मिट्टी की मूर्तियों आदि की विवरणात्मक सूची इस वर्ष बनकर तैयार हो गई और चित्र-मंदिर में सब चित्रों पर परिचय पत्र भी लगा दिए गए। कला-भवन की 'गाइड बुक' की सब सामग्री इस वर्ष तैयार हो गई, किंतु अर्थाभाव के कारण इसका प्रकाशन न हो सका। हिंदी-साहित्य-संमेलन के अधिवेशन पर कला-भवन ने अपने साहित्यिक-

संग्रह का प्रदर्शन किया जिसमें हिंदी के पुराने लेखकों, कवियों तथा साहित्यिकों की लिपियों, मुख्यतः पत्रों और हिंदी की पूर्व-प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं की प्रथम संख्याएँ थीं। इस संग्रह को जिसने देखा उसी ने मुक्त कंठ से इसकी प्रशंसा की।

इस वर्ष से प्रांतीय सरकार ने कला-भवन को २५००) वार्षिक देना आरंभ कर दिया।

राजघाट की खुदाइ में निकलनेवाली प्राचीन वस्तुओं के संबंध में रेलवे अधिकारी उदासीन थे अतः रोजगारियों ने वहाँ अपनी सत्ता स्थापित कर ली थी। वे उक्त वस्तुएँ अधिक धन-प्राप्ति के लोभ से अन्य संग्रहालयों को भेज देते थे। इस प्रकार कला-भवन को साधारण वस्तुएँ ही मिल पाती थीं। पर्याप्त प्रयत्न करने पर सन् १९९७ से अच्छी और अधिक वस्तुएँ मिलने लगीं, जिसके फलस्वरूप इस वर्ष कला-भवन में राजघाट की खुदाई से प्राप्त अनेक महत्त्वपूर्ण वस्तुओं का संग्रह हुआ। इन वस्तुओं के समुचित प्रदर्शन के लिये श्री पुरुषोत्तमदास हलवासिया ने पाँच शोकेस भी बनवा दिए। भारतीय पुरातत्त्व-विभाग के डाइरेक्टर जेनरल ने कला-भवन की उत्तरोत्तर समृद्धि एवं उन्नति से संतुष्ट होकर इस वर्ष से यह निश्चय कर दिया कि सारनाथ के अतिरिक्त काशी तथा आसपास के अन्य स्थानों से पुरातत्त्व-संबंधी जो वस्तुएँ प्राप्त हुई हैं और जो भविष्य में प्राप्त होंगी वे कला-भवन में रहेंगी। इसके अनुसार अनेक वस्तुएँ इस वर्ष से ही कला-भवन को मिलने लगीं। राजघाट की वस्तुओं का एक अलग विभाग बना दिया गया जिसका उद्घाटन २ भाद्रपद, १९९७ को डाक्टर पन्नालाल आई० सी० एस०, डी० लिट्० के द्वारा हुआ। इन वस्तुओं को ठीक तरह सजाकर रखने आदि के खर्चे के लिये सं० १९९९ में श्री युगल-किशोर बिडला ने २०००) देने की कृपा की।

भारत-कला-भवन ने मुगलशैली की चित्रकला के एक मात्र वर्तमान प्रतिनिधि वयोवृद्ध उस्ताद रामप्रसाद जी के संमान में उन्हें एक हजार रुपये की थैली भेंट करने की योजना बनाई थी। समस्त भारत के गुण-ग्राही तथा गुणीजनों ने इस कार्य में सहयोग दिया और यह कार्य २२ मार्गशीर्ष, १९९७ को प्रयाग विश्वविद्यालय के वाइस चांसलर श्री अमरनाथ झा के सभापतित्व में संपन्न हुआ। (अत्यंत शोक है कि ऐसे विशिष्ट कलाकार का २६ आश्विन, २००० को देहावसान हो गया।)

संवत् १९९८ में पुरातत्त्व-विभाग ने 'मोहेंजोदड़ो' से निकली वस्तुओं का एक अच्छा सेट कला-भवन को दिया। इनके प्रदर्शन के लिये श्री गोपीकृष्ण कानोडिया ने आठ आलमारियाँ बनवा दी हैं। पहाड़ी शैली के चित्रों का संग्रह बढ़ाने में कला-भवन इस वर्ष विशेष प्रयत्नशील रहा। उक्त शैली में पिछले एक हजार वर्षों की चित्रकला अपनी सबसे ऊँची उड़ान पर पहुँची है। युद्ध के कारण विदेशी यात्रियों का आना बंद होने से अच्छे चित्रों का मिलना इस वर्ष अपेक्षाकृत सुलभ हो गया। इस परिस्थिति से लाभ उठाकर कला-भवन ने पहाड़ी शैली के ८१३ चित्र इस वर्ष प्राप्त किए। इस कार्य के लिये आर्थिक सहायता प्रदान करनेवालों में सर्व श्री महाराजकुमार सैलाना, सर बद्रीदास गोयनका, सी० आई० ई०, सेठ घनश्यामदास बिडला और मुरारिलाल मेहता के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

इस वर्ष डाक्टर भगवानदास की एक कांस्यमूर्ति बनवाने का भी निश्चय किया गया और यह कार्य

श्री जे० एल० साठे, आई० सी० एस० की सुपुत्री कुमारी इंदुमती साठे को सौंपा गया। मूर्ति तैयार हो रहा है। आशा है, शीघ्र ही बनकर तैयार हो जायगी।

संवत् १६६६ से प्रांतीय सरकार ने अपनी २५००) की वार्षिक सहायता स्थायी कर दी है।

कला-भवन का संग्रह मुख्यतः तीन भागों में विभक्त है—चित्र, मूर्ति और पुरातत्त्व। यहाँ के चित्र-संग्रह के विषय में यह निश्चय के साथ कहा जा सकता है कि भारतवर्ष में तो वह अद्वितीय है ही, विदेश के भी अच्छे भारतीय चित्र-संग्रहों के समकक्ष रखा जा सकता है। रंगीन और रेखा चित्रों को मिलाकर चित्रों की संख्या लगभग ५००० है। इनमें बारहवीं सदी की तालपत्र पर लिखी पालकालीन एक सचित्र बौद्ध पोथी है जिसमें अजंता की परंपरा के दर्शन होते हैं। इस प्रकार की पाल पोथियाँ अत्यंत दुष्प्राप्य हैं। पंद्रहवीं शती का एक जैन-संग्रह है जिसमें अजंता कला के ह्रास की सूचना मिलती है। यहाँ का अकबरकालीन मुगल चित्रों का संग्रह भी उल्लेखनीय है। शाहजहाँ कालीन चित्रों के भी उत्तमोत्तम नमूने यहाँ हैं। भारतीय चित्रकला की राजस्थानी और पहाड़ी शैलियों में हिंदी भक्ति-काल और रीति-काल के काव्य-साहित्य की चित्र रूप में अभिव्यक्ति हिंदी के उस गौरवाभिव्यंजक वाङ्मय की प्रतिकृति है जिसे सूर और तुलसी से लेकर बिहारी और देव तक ने प्रस्तुत किया है। कला-भवन में इस शैली के चित्रों का अद्वितीय संग्रह है।

यहाँ का मूर्ति-संग्रह भी अत्युत्कृष्ट संग्रहालयों में विशेष स्थान रखता है। यहाँ की प्रसाधिका की मूर्ति कुषाणकालीन माथुर मूर्तिकला की अद्वितीय प्रतिनिधि और भारतीय मूर्तिकला के गिने-चुने उदाहरणों में से है। गुप्तकालीन मूर्त्तिकला की कई सुंदर कृतियाँ यहाँ सुरक्षित हैं। गुप्तकाल के बाद मूर्तियों में कलाभासमात्र मिलता है। इस समय की भी मूर्तियाँ यहाँ हैं।

पुरातत्त्व-विभाग ने भी यथेष्ट उन्नति की है। मोहेंजोदड़ो का एक प्रतिनिधि संग्रह भारत सरकार के पुरातत्त्व विभाग ने कला-भवन को भेंट किया है। ताम्रयुग की तीन ताम्र-आकृतियाँ और उसी युग के ताँबे के शस्त्र भी कला-भवन में हैं। इनके अतिरिक्त विभिन्न कालों की पुरातत्त्व विषयक सामग्री का यहाँ अच्छा संग्रह है। राजघाट (बनारस) की सामग्री का जैसा विशाल और पूर्ण संग्रह यहाँ किया गया है वैसा कहीं नहीं। हजारों की संख्या में एक से एक बढ़कर मृण्मूर्तियाँ, प्रस्तर-प्रतिमाएँ, सैकड़ों प्रकार की मुहरें, तरह तरह के मनके और भाँति-भाँति के बर्त्तन-भाँडे संगृहीत किए गए हैं। इनमें गहरवार महाराज गोविंदचंद्र देव का कार्तिक पूर्णिमा, ११६७ वि० का दो फलकवाला ताम्र-शासन-पत्र विशेष उल्लेखनीय है।

संग्रहालय की अभिवृद्धि, उसके संरक्षण एवं प्रदर्शन के लिये जो खर्च वस्तुतः होना चाहिए, वह अभी तक, अर्थाभाव के कारण, नहीं हुआ है, जिससे प्रबंधकर्त्ताओं एवं दर्शकों को काफी असुविधा होती है। कला-भवन के प्रचार संबंधी कार्य, अर्थात् यहाँ की सचित्र सूची, चित्रों आदि की प्रतिकृति तथा कला-संबंधी पत्रिका का प्रकाशन आदि परमावश्यक होते हुए भी आर्थिक अड़चन एवं कागज आदि की प्राप्ति में कठिनाई के कारण अभी तक रुके हैं। आर्थिक कठिनाई के साथ साथ कला-भवन में स्थान का भी बहुत संकोच है जिसकी चर्चा 'सभा-भवन' के प्रकरण में ऊपर की जा चुकी है। कलाभवन के आय-व्यय का ब्यौरा परिशिष्ट में दिया गया है।

---

## ८—हिंदी के प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों की खोज

पहले पहल सं० १९२५ (सन् १८६८) में लाहौर के पंडित राधाकृष्ण के सुझाव पर भारत-सरकार ने संस्कृत-पुस्तकों की खोज का कार्य भारतवर्ष में व्यवस्थित रूप से आरंभ किया था। इसके बाद बंगाल एशियाटिक सोसायटी ने इस काम को जारी रखा। बंबई तथा मद्रास की सरकारों एवं अन्य अनेक संस्थाओं और विद्वानों द्वारा भी यह कार्य होता रहा। पर हिंदी की ओर किसी की दृष्टि न गई। सबसे पहले श्री राधाकृष्णदास ने संवत् १९५० में नागरीप्रचारिणी सभा की ८ ज्येष्ठ, १९५१ वि० ( २२ मई, १८९४ ) की बैठक में हिंदी के हस्तलिखित ग्रंथों की खोज के विषय में यह सुझाव उपस्थित किया था कि 'हिंदी के बहुत से प्राचीन, सुंदर और उपयोगी ग्रंथ ऐसे हैं जो अब तक प्रकाशित नहीं हुए हैं और न उनका पता सर्वसाधारण को लगता है कि वे उन्हें प्राप्त करें और प्रकाशित करके साहित्य का उपकार करें।' उन्होंने सभा का ध्यान खोज की ओर भी दिलाया जो काफी रुपया खर्च करके भारत-सरकार की ओर से संस्कृत-ग्रंथों की हो रही थी। इस पर सभा ने निश्चय किया कि

> "भारत-सरकार, एशियाटिक सोसायटी, पश्चिमोत्तर प्रदेश की सरकार और पंजाब सरकार से प्रार्थना की जाय कि वह संस्कृत-पुस्तकों की खोज के समय संस्कृत-पुस्तकालयों में हिंदी भाषा की पुस्तकों की भी खोज कराए और उनकी सूची प्रकाशित करने की कृपा करे।"

इस निश्चय के अनुसार १२ ज्येष्ठ, १९५१ वि० ( २६ मई, १८९४ ) को सभा की ओर से पत्र भेजे गए और भारत-सरकार ने अपने ६ सितंबर, १८९४ के पत्र द्वारा तथा बंगाल एशियाटिक सोसायटी ने संवत् १९५१ में अपने ७ जुलाई और ११ अगस्त, १८९४ के पत्रों द्वारा सभा का अनुरोध सहर्ष स्वीकार कर लेने की सूचना दी। पंजाब-सरकार ने भी प्रस्ताव को पसंद किया, पर उस प्रांत में संस्कृत-पुस्तकों की खोज का काम सन् १८८३ से बंद हो चुका था, इस कारण उसने वहाँ के प्रसिद्ध पुस्तकालयों के नाम लिख भेजे कि सभा उन पुस्तकालयों से स्वयं पत्र-व्यवहार करे। पश्चिमोत्तर प्रदेश की सरकार ने भी सभा की प्रार्थना पर विचार करना सहर्ष स्वीकार किया।

बंगाल एशियाटिक सोसायटी ने हिंदी-पुस्तकों की खोज का कार्य तुरंत आरंभ कर दिया, जिसके फल-स्वरूप ६०० उत्कृष्ट प्राचीन ग्रंथों के विवरण अगले ही वर्ष सं० १९५१ ( सन् १८९५ ) में लिए गए। इनमें भारतेंदुजी के सरस्वती-भंडार से 'मृगावती' नामक प्रेम-काव्य मिला जिसकी रचना ९०९ हिजरी ( संवत् १५६९ वि० ) में कुतबन ने की थी। इस पुस्तक का पता चलने तक मलिक मुहम्मद जायसी-रचित 'पद्मावत' ही सूफी प्रेमकाव्यों में सबसे पहला ग्रंथ मानी जाती थी। 'मृगावती' की रचना 'पद्मावत' से ३८ वर्ष पूर्व हुई थी। दूसरा 'हिततरंगिणी' नामक महत्त्वपूर्ण प्राचीन ग्रंथ श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' के यहाँ मिला जिसका रचना-काल संवत् १५९८ था। इसके रचयिता कृपाराम थे और यह रीतिशास्त्र का

ग्रंथ था। उस समय तक विद्वानों का यही मत था कि सबसे पहले केशवदासजी ने ही हिंदी में 'रसिक-प्रिया' और 'कवि-प्रिया' नामक रीति-ग्रंथ क्रमशः संवत् १६४८ और १६५८ में लिखे थे। 'हिततरंगिणी' उनसे ५० वर्ष पहले की रचना निकली। योग, सांख्य, वेदांत, ज्योतिष्, वैद्यक, नीति, इतिहास, काव्य और कोश आदि के अनेकानेक उत्कृष्ट ग्रंथों का पता भी इस खोज से लगा।

अभी तक युक्तप्रांत की सरकार ने इस विषय में कुछ नहीं किया था। इसलिये अगले वर्ष सं० १६५२ (सन् १८९६) में उसे फिर लिखा गया। इसके फल-स्वरूप सरकार ने बनारस जिले में खोज का काम करने की आज्ञा दी पर कार्य की गति संतोषजनक न रही। केवल ४३ पुस्तकों की सूची सरकार की ओर से सभा को मिली। इसके बाद दो वर्ष तक और कोई कार्य नहीं हुआ। बंगाल एशियाटिक सोसायटी ने भी सहसा यह कार्य बंद कर दिया। किंतु सं० १६५५ (सन् १८९९) में उसके वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर तत्कालीन वाइसराय लार्ड कर्जन का भाषण हुआ जिसके निम्नलिखित वाक्यों से सभा की आशा-लता फिर हरी हो उठी और उसने अपना उद्योग पुनः आरंभ कर दिया—

"भारत के सिंहासन पर आसीन होने के नाते हम संसार के लिये एक ऐसे साहित्य, ऐसे पुरातत्त्व, ऐसे इतिहास और ऐसी कला के संरक्षक बन गए हैं जो मानव-जाति की अमूल्य निधियाँ हैं। कोई तीन सहस्र वर्षों तक इस देश में नए नए राज्यों की स्थापना, नई नई जातियों का आगमन और नए नए धर्मों का उदय होता रहा। इन सभी के अति मूल्यवान् स्मृति-चिह्न पाए जाते हैं, जिनकी समीक्षा, व्याख्या और रक्षा करना हमारा कर्त्तव्य है।...अपने कार्य-काल में अतीत की निधियों की खोज कराने, उनके अध्ययन को प्रोत्साहन देने और उनके संरक्षण करने के लिये मुझसे जो कुछ भी हो सके उसे करना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ।"

लार्ड कर्जन के उक्त वाक्यों से उत्साहित होकर सभा ने प्रांतीय-सरकार की सेवा में एक प्रार्थना-पत्र भेजते हुए लिखा कि इस कार्य के लिये सरकार कुछ वार्षिक व्यय स्वीकार करे तो यह कार्य उत्तम रीति से हो। सर ऐंटानी मैकडानेल ने इस पत्र पर पूरे तौर से विचार किया और ४००) वार्षिक सहायता देना स्वीकार कर खोज का काम सभा को सौंप दिया। निश्चय हुआ कि प्रतिवर्ष १५ मार्च तक रिपोर्ट सर-कार को भेज दी जाया करे और सरकार स्वयं उसे छापकर प्रकाशित करे।

सभा ने इस कार्य के लिये सर्वश्री श्यामसुंदरदास, राधाकृष्णदास और कार्तिकप्रसाद की समिति बना दी और खोज के निरीक्षक का काम श्री श्यामसुंदरदास को सौंप दिया। उन्होंने बड़े उत्साह और लगन के साथ कार्य आरंभ किया। पहले वर्ष सं० १६५७ वि० (सन् १९००) में ही बनारस, रीवाँ, जयपुर, नागौद, लखनऊ, कालपी, आगरा और मथुरा में खोज का कार्य किया गया और २५७ हस्तलिखित पुस्तकों के विवरण लिए गए। इनमें से ३९ ग्रंथों को छोड़कर, जिनके रचयिताओं का पता न चल सका, शेष २१८ ग्रंथ २१६ कवियों के रचे हुए थे। इन ग्रंथकारों में १ बारहवीं, २ चौदहवीं, १ पंद्रहवीं, २३ सोलहवीं, १९ सत्रहवीं, २१ अठारहवीं और १६ उन्नीसवीं शती के थे। ३३ ग्रंथों का समय ठीक ठीक निश्चित न हो

सका। इनमें अधिकांश सत्रहवीं और उन्नीसवीं शती के लिखे हुए थे और एक सोलहवीं शती का भी था। इस कार्य की वार्षिक रिपोर्ट तैयार करके सरकार को नियमानुसार भेज दी गई। पुस्तकों के विवरण लेने और उन पर ऐतिहासिक टिप्पणी लिखने में विशेष सहायता सर्वश्री राधाकृष्णदास, कृष्णबलदेव वर्मा, मुंशी देवीप्रसाद मुंसिफ, भवानीदत्त जोशी और जैन वैद्य से प्राप्त हुई थी।

अगले वर्ष सं० १९५८ वि० (सन् १९०१ ई०) में भी हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों की खोज का कार्य श्री श्यामसुंदरदास के ही हाथ में रहा। इस वर्ष रीवाँ, बनारस, जोधपुर, कलकत्ता, अयोध्या, लखनऊ, बाँदा और मिर्जापुर में कार्य हुआ और २५० पुस्तकों का पता चला, जिनमें १२९ पुस्तकों के १३६ विवरण लिए गए। अन्य पुस्तकें रही थीं अथवा हिंदी की सीमा में आनेवाली भाषाओं से इतर भाषा में थीं, इसलिये उनका विवरण नहीं लिया गया। इन १२९ पुस्तकों में १२४ ग्रंथ ७३ भिन्न भिन्न ग्रंथकारों के लिखे हुए थे जिनमें से ६० का समय तो निश्चित रूप से मिल गया, पर १३ का समय निश्चित न हो सका। ज्ञात-काल की पुस्तकों में सबसे पुरानी बारहवीं शती की थी। जिन ५ पुस्तकों के रचयिताओं का पता नहीं चला उनमें से एक अठारहवीं और बाकी उन्नीसवीं शती की लिखी हुई थीं।

जैसा कि ऊपर कहा गया है सरकार ने ४००) वार्षिक खोज-कार्य के लिये देना स्वीकार किया और बराबर दो वर्ष तक यह सहायता सभा को मिलती रही। सं० १९५९ में सभा के खोज-विषयक कार्य से प्रसन्न होकर सर जेम्स लाटूश की सरकार ने यह सहायता ५००) वार्षिक कर दी। इसके अतिरिक्त इस वर्ष १००) ब्यावर (अजमेर) के सेठ श्री दामोदरदास ने भी खोज-कार्य की उन्नति के लिये प्रदान किए। हस्तलिखित हिंदी-पुस्तकों की खोज की सं० १९५७ (सन् १९००) की रिपोर्ट भी इस वर्ष भारत-सरकार द्वारा छपकर तैयार हो गई।

अब तक सभा खोज-कार्य के लिये अपने एक सभासद् को एक ही वर्ष के लिये नियुक्त करती थी। पर इस वर्ष से यह निश्चय हुआ कि इस कार्य के लिये जो सभासद् चुना जाय वह तीन वर्ष तक कार्य करे। अब तक श्री श्यामसुंदरदास ही यह कार्य कर रहे थे। अगले तीन वर्षों के लिये भी सभा ने उन्हीं को इस कार्य का निरीक्षक नियत किया।

इस वर्ष जोधपुर, मिर्जापुर और गोरखपुर में खोज की गई और ३४२ पुस्तकों के विवरण लिए गए। इसी वर्ष पहले-पहल गोरखनाथजी के ग्रंथों का पता चला। मलिक मुहम्मद जायसी का भी एक नया ग्रंथ 'अखरावट' इसी वर्ष प्राप्त हुआ। इस वर्ष खोज कार्य में मुंशी देवीप्रसाद मुंसिफ की विशेष सहायता रही।

सं० १९६० में सं० १९५७ (सन् १९०१) की रिपोर्ट भी भारत-सरकार ने प्रकाशित कर दी। सन् १९०० की रिपोर्ट का दाम ५॥) और १९०१ की रिपोर्ट का ३) रखा गया। दोनों रिपोर्टों की प्रतियाँ सरकार ने देश-विदेश के अनेक विद्वानों के पास भेजीं, जिनमें डाक्टर हार्नली, डाक्टर ग्रियर्सन, श्री ग्रीफिथ, श्री बॉर्थ, डाक्टर पिशेल आदि विद्वानों ने श्री श्यामसुंदरदास को व्यक्तिगत रूप से पत्र लिखकर इन रिपोर्टों की बहुत प्रशंसा की। भारतवर्ष की आर्यभाषाओं में हिंदी को छोड़ अन्य किसी को उस

समय तक इस प्रकार की खोज का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ था।

इस वर्ष का अधिकांश समय काशी-नरेश के सरस्वती-भंडार (राजपुस्तकालय) की जाँच में लगाया गया। पंजाब के काँगड़ा जिले में भी कुछ कार्य हुआ। सब मिलाकर १६४ पुस्तकों के विवरण लिए गए। इनमें सबसे प्राचीन पुस्तक चौदहवीं शती की थी।

संवत् १९६१ में महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री, जो बंगाल एशियाटिक सोसायटी के संयुक्त मंत्री और संस्कृत पुस्तकों की खोज के निरीक्षक थे, काशी पधारे। उनके द्वारा उक्त सोसायटी ने सभा से अनुरोध किया कि वह सोसायटी द्वारा लिए गए हस्तलिखित हिंदी-ग्रंथों के विवरणों का संपादन कर दे तो सोसायटी उन्हें छपवा ले। सभा ने यह अनुरोध स्वीकार कर लिया। यह कार्य भी श्री श्यामसुंदरदास को ही सौंपा गया।

इस वर्ष भी महाराज काशीराज के सरस्वती-भंडार में ही कार्य होता रहा। सब मिलाकर १७७ पुस्तकों के विवरण लिए गए। इनमें सबसे प्राचीन पुस्तक बारहवीं सदी की थी।

भविष्य में खोज-कार्य के लिये सभा ने निश्चय किया कि एक व्यक्ति पहले जाकर यह पता लगाए कि कहाँ कहाँ हस्तलिखित हिंदी पुस्तकें हैं और फिर उन पुस्तकों के विवरण लिए जायँ। इसी के अनुसार इस वर्ष बुंदेलखंड के कई स्थानों में खोज की गई और अनेक ग्रंथों का पता लगा।

खोज-कार्य के सुभीते के लिये श्री श्यामसुंदरदास ने इस वर्ष एक सूची उन सब कवियों, उनके ग्रंथों और रचना-काल की तैयारी की थी, जिनका उस समय तक पता लग चुका था। इसे बनाने का उद्देश्य यह था कि इस सूची का संशोधन प्रति वर्ष नई खोज के अनुसार होता रहे। क्योंकि ज्यों ज्यों नए ग्रंथों का पता लगेगा त्यों त्यों इस सूची की प्रामाणिकता का भी निर्णय होता जायगा और जो गलतियाँ मिलेंगी वे ठीक होती जायँगी। आगे चलकर इस प्रामाणिक सूची की सहायता से हिंदी का अच्छा इतिहास लिखा जा सकेगा।

संवत् १९६२ में भी खोज का कार्य बुंदेलखंड में ही हुआ और इस वर्ष कुल मिलाकर १७२ पुस्तकों के विवरण लिए गए। संयुक्त-प्रदेश की सरकार के लिखने पर मध्यभारत के 'एजेंट टु दि गवर्नर-जेनरल' ने इस वर्ष अपने अधीन सब 'पोलिटिकल एजेंटों' के नाम यह आदेश निकाल दिया था कि वे सभा के साहित्यान्वेषकों (एजेंटों) को हिंदी-पुस्तकों की खोज करने में आवश्यकतानुसार सहायता दें। इससे खोज के कार्य में बड़ा सुभीता हुआ।

सभा के निश्चयानुसार इस वर्ष खोज-विभाग के निरीक्षक का चुनाव अगले तीन वर्षों के लिये होना आवश्यक था, किंतु श्री श्यामसुंदरदास ने तीन वर्षों के लिये यह पद स्वीकार करने से अनिच्छा प्रकट की, इसलिए केवल एक वर्ष के लिये ही वे चुने गए।

श्री श्यामसुंदरदास ने इस वर्ष खोज की वार्षिक रिपोर्ट के विषय में बड़ी उपयोगी योजना प्रस्तुत की। उस योजना में बतलाया गया था कि—

"अब तक यह काम उसी प्रणाली पर चल रहा है जिसके अनुसार संस्कृत-पुस्तकों की खोज सरकार ने कराई है और अब भी करा रही है, परंतु संस्कृत और हिंदी के भंडार में भेद है।

(१) संस्कृत-ग्रंथ सब प्रांतों में पाए जाते हैं, जो हिंदी के लिये संभव नहीं है।

(२) संस्कृत-पुस्तकों की खोज का काम भिन्न भिन्न प्रांतों में भिन्न-भिन्न प्रांतों की सरकारें करती हैं, परंतु हिंदी का काम सब प्रांतों के लिये इस सभा के ही अधीन है।

(३) संस्कृत पुस्तकों की खोज का काम भिन्न भिन्न प्रांतों में भिन्न भिन्न लोग करते हैं परंतु हिंदी का काम सभा की अधीनता में एक व्यक्ति करता है।

(४) संस्कृत के लिये प्रत्येक प्रांत में हजारों रुपए व्यय किए जाते हैं परंतु हिंदी के लिये केवल ५००) वार्षिक ही व्यय होते हैं।

इन बातों के कहने से तात्पर्य यह है कि संस्कृत के लिये यह आवश्यक है कि अलग-अलग प्रांतों से अलग अलग रिपोर्टें लिखी जायँ। यदि ऐसा न होता तो जो कार्य अब तक हो सका है उसमें बहुत कुछ बाधा पड़ती, परंतु हिंदी के लिये उसी प्रणाली का अवलंबन करना आवश्यक नहीं है। इससे हिंदी की हानि है।

"हिंदी के कवि प्रायः भिन्न भिन्न प्रांतों में हुए हैं और प्रायः उनके ग्रंथ उन प्रांतों में अधिकता से मिलते हैं, इसलिये यदि किसी एक प्रांत की पूरी जाँच की जाय तो यह आशा है कि उस प्रांत के कवियों के प्राय: सब ग्रंथ मिल जायँ और अनुसंधान करने पर उन कवियों की जीवनियों का भी बहुत कुछ पता लग जाय। यह कौन कह सकता है कि किस कवि का कौन ग्रंथ कहाँ है, जब तक कि पूरी खोज न की जाय। फिर जब प्रतिवर्ष रिपोर्ट देने का बंधेज है तो इतना समय कहाँ है कि प्रत्येक कवि की जीवनी के विषय में भी खोज की जा सके। यह तो तभी संभव है कि जब इस काम के लिये कोई उपयुक्त व्यक्ति नियत किया जाय जो अपना सारा समय इसी काम में लगाए। परंतु इसके लिये धन कहाँ और व्यक्ति कहाँ ? अतएव इस अवस्था में यह उचित जान पड़ता है कि जिस ढंग से प्रतिवर्ष रिपोर्ट लिखी जाती है वह बदल दिया जाय। भारतवर्ष के जिन जिन खंडों में हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों के मिलने की संभावना हो उनके नाम चुन लिए जायँ और प्रत्येक प्रांत की पुस्तकों पर एक अच्छी रिपोर्ट लिखी जाय, चाहे एक प्रांत का काम समाप्त करने में कई वर्ष क्यों न लग जायँ। जैसे—बुंदेलखंड में पूरी पूरी जाँच की जाय और इस प्रांत की हस्तलिखित पुस्तकों पर तभी रिपोर्ट लिखी जाय जब यह अनुमान हो कि अब संभवत: इस प्रांत में और हस्तलिखित पुस्तकें न मिलेंगी। इतना हो जाने पर वहाँ की रिपोर्ट इस भाँति लिखी जाय—

(१) संक्षेप में यह वर्णन रहे कि कहाँ कहाँ खोज की गई और किस प्रकार कार्य हुआ।

(२) उस प्रांत का संक्षिप्त इतिहास ( विशेष कर विद्या-संबंधी ) जहाँ खोज हुई हो।

(३) खोज में जिन जिन कवियों और ग्रंथों का पता लगा हो उन पर नोट। उन नोटों के लिये पूरी जाँच की जाय।

(४) जिन ग्रंथों की नोटिस हुई हो उनके उद्धृत भाग।

(५) ग्रंथकर्त्ताओं तथा पुस्तकों की सूची।

इस प्रकार की रिपोर्ट से आशा है कि हिंदी के विषय में बहुत कुछ अच्छी बातों का पता लगेगा और वास्तव में वह रिपोर्ट विशेष उपकारी होगी। अब जो वार्षिक रिपोर्ट लिखी जाती है, पहले तो समय के बंधेज के कारण उसके विषय में पूरी पूरी जाँच नहीं होती और दूसरे जो बात एक वर्ष निश्चित जान पड़ती है उससे कुछ विपरीत ही दूसरे वर्ष पता लगता है। इसलिये प्रत्येक वर्ष की रिपोर्ट अधूरी रहती है और कोई व्यक्ति उसके आधार पर तब तक कोई बात निश्चित नहीं मान सकता जब तक कि वह समस्त रिपोर्टों को न देख ले। यह कहा जा सकता है कि प्रांतिक रिपोर्टों के सबंध में भी यही दोष लगाया जा सकता है कि समस्त भारतवर्ष की जब तक जाँच न हो ले तब तक वे रिपोर्टें भी अपूर्ण होंगी। यह ठीक है, परंतु प्रांतिक रिपोर्टों में उस दोष की मात्रा बहुत कम हो जायगी। यों तो कोई भी काम क्यों न हो वह सर्वथा पूर्ण कदापि नहीं हो सकता, नित्य नई बातों का पता लगता है; पर बुद्धिमानी यही है कि जहाँ तक हो सके कार्य पूर्णता से किया जाय।

"इस स्थान पर यह प्रश्न उठता है कि यदि यह प्रस्ताव स्वीकार किया जाय तो गवर्नमेंट यह कह सकती है कि हमें कैसे ज्ञात हो कि कार्य बराबर हो रहा है अथवा सभा ही प्रश्न कर सकती है कि सुपरिंटेंडेंट का कार्य चल रहा है अथवा नहीं इसकी जाँच कैसे हो। इसका उपाय यह है कि प्रति वर्ष के कार्य की एक संक्षिप्त वार्षिक रिपोर्ट लिखी जाया करे, जिसमें कार्य का संक्षिप्त वर्णन नई बातों का उल्लेख तथा जिन ग्रंथों के नोटिस हों उनकी सूची समय आदि के साथ रहे। यह सूची उसी ढंग की हो जैसी कि लेखक ( बाबू श्यामसुंदरदास) ने इंडियन ऐंटिक्वैरी में तीन वर्ष के नोटिसों से बनाकर छपवाई थी। यह रिपोर्ट छोटी होगी, शीघ्र छप सकेगी और इसके लिखने में विशेष समय भी न लगेगा। इससे मेरा अनुमान है कि गवर्नमेंट तथा सभा दोनों को आवश्यक सूचना मिल जायगी।"

यह प्रस्ताव अन्य कई विद्वानों की सम्मति सहित गवर्नमेंट के पास विचारार्थ भेजा गया। गवर्नमेंट ने इसे स्वीकार कर लिया और निश्चय किया कि प्रति वर्ष एक संक्षिप्त रिपोर्ट लिखी जाय और एक प्रांत की खोज समाप्त होने पर वहाँ की विस्तृत रिपोर्ट लिखी जाय। पर यदि किसी प्रांत का कार्य तीन वर्ष में न समाप्त हो तो प्रति तीसरे वर्ष विस्तृत रिपोर्ट अवश्य लिखी जाय।

अगले वर्ष संवत् १९६३ में बुंदेलखंड में २५० पुस्तकों की जाँच की गई। इनमें सबसे प्राचीन पुस्तक पंद्रहवीं शताब्दी की थी। इस वर्ष की खोज में अनेक नए ग्रंथों और कवियों का पता चला। इनमें स्वामी प्राणनाथ और कबीरदास तथा उनके शिष्य धर्मदास के कई ग्रंथ विशेष उल्लेखनीय हैं।

संवत् १९६४ में खोज का कार्य पन्ना, चरखारी और दतिया रियासतों में हुआ और सब मिलाकर २९२ पुस्तकों की जाँच की गई। पन्ना के राजकीय पुस्तकालय की जाँच की आज्ञा नहीं मिल सकी। प्राप्त ग्रंथों में रसनिधि और प्रतापसाहि के ग्रंथ, केशवदास-रचित वीरसिंहदेव-चरित्र, दोहा-सार-संग्रह ( जो

दारा शाह के समय में बना था ), लल्लूलाल रचित हिंदी-अँगरेजी-फारसी कोश, जिसमें ३००० अँगरेजी शब्दों का अर्थ हिंदी और फारसी में दिया है विशेष उल्लेखनीय थे। उक्त २९२ पुस्तकों में सब से प्राचीन ग्रंथ बारहवीं शती का था।

संवत् १९६५ के अंत में श्री श्यामसुंदरदास समयाभाव के कारण खोज के कार्यों से अलग हो गए और सभा ने श्री श्यामविहारी मिश्र, एम० ए० को जो उस समय डिपुटी कलेक्टर थे, यह कार्य सौंपा। इसके लिये प्रांतीय सरकार और गोरखपुर के कलेक्टर तथा कमिश्नर से लिखा-पढ़ी करके सभा ने मिश्रजी को अनुमति दिला दी थी।

अब तक श्री श्यामसुंदरदास के ऊपर ही इस कार्य का भार था। पूरे ९ वर्ष तक उन्होंने यह कार्य सफलता के साथ चलाया। इनमें से ६ वर्षों की रिपोर्टें तो छपकर प्रकाशित हो ही चुकी थीं, शेष तीन वर्षों की त्रैवार्षिक रिपोर्ट तैयार करने में कई पारिवारिक विपत्तियों के कारण श्री श्यामसुंदरदास को कुछ विलंब हो गया और इस काम को पूरा करने के लिये उनको सभा के कार्यों से दो मास का अवकाश ग्रहण करना पड़ा।

इस वर्ष ६०० ग्रंथों का विवरण लिया गया जिनमें सबसे प्राचीन पुस्तक बारहवीं शती की थी। प्रांतीय सरकार ने सभा से इस वर्ष पूछा था कि खोज के कार्य के लिये सभा ने प्रांतों का विभाग किस प्रकार किया है, किस क्रम से उनमें कार्य किया जायगा और प्रत्येक प्रांत में कितना समय लगने की संभावना है। इसके उत्तर में सभा ने लिखा कि पहले बुंदेलखंड का कार्य सन् १९०७–०८ में समाप्त कर दिया जाय, फिर यथाक्रम १९०९–१७ में राजपूताने, १९१८–२० में संयुक्त प्रांत और पंजाब, १९२१–२३ में मध्यप्रदेश और मध्यभारत और १९२४–२५ में बिहार में कार्य किया जाय। गवर्नमेंट ने उत्तर दिया कि कम से कम इस समय यह कार्य संयुक्त प्रांत और बिहार में ही किया जाय और अन्यत्र जाने के पूर्व संयुक्त प्रदेश का कार्य समाप्त कर दिया जाय। निदान संवत् १९६६ ( सन् १९०९ ) में संयुक्त प्रांत में ही कार्य आरंभ किया गया।

सभा के अन्वेषक ने सं० १९६६ में युक्तप्रांत के १३ जिलों में भ्रमण किया। ३६५ हस्तलिखित ग्रंथों का पता चला जिनमें १०९ निरर्थक थे, शेष २५६ ग्रंथों के विवरण लिए गए। इनमें सबसे प्राचीन ग्रंथ पंद्रहवीं शती का था और ५ ग्रंथ महात्मा कबीरदास के भी थे।

सभा ने इस वर्ष यह भी निश्चय किया कि खोज के कार्य की संक्षिप्त मासिक रिपोर्ट नागरी-प्रचारिणी पत्रिका में प्रकाशित हुआ करे।

सं० १९६७ में आजमगढ़, बनारस, प्रयाग और अयोध्या में खोज का कार्य होता रहा। अधिक समय बनारस में लगा, जहाँ बहुत से हस्तलिखित ग्रंथ, विशेषतः पंडित रघुनाथ शर्मा के पुस्तकालय में, प्राप्त हुए थे। पंडितजी का पुस्तकालय हिंदी के हस्तलिखित ग्रंथों से भरा हुआ था। उनको कार्य अधिक रहता था और जब उन्हें अवकाश मिलता था तभी वे अपने ग्रंथों को सभा के अन्वेषक को दिखलाते थे। इससे काफी समय लगाने पर भी इस वर्ष इस पुस्तकालय के समस्त ग्रंथों का विवरण नहीं लिया जा सका और अगले वर्ष पंडितजी का स्वर्गवास हो जाने के कारण उनके पुस्तकालय की पुस्तकें इधर-उधर हो गईं तथा वह कार्य अधूरा ही रह गया।

## सभा के संरक्षक
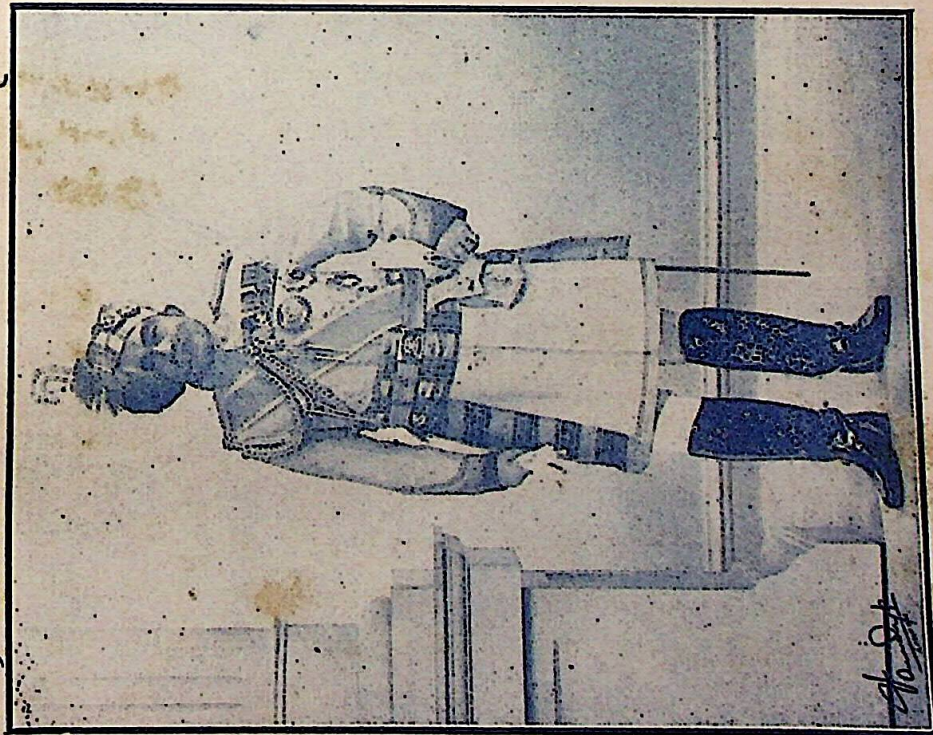
दिवंगत बीकानेर-नरेश श्रीमान जनरल तत्रभवान् महाराजाधिराज राजराजेश्वर नरेंद्र शिरोमणि महाराज श्री गंगासिंह बहादुर, जी० सी० एस० आई०, जी० सी० आई० ई०, जी० सी० वी० ओ०, जी० बी० ई०, के० सी० बी०, ए० डी० सी०, एल-एल० डी०।

## सभा के संरक्षक

दिवंगत ग्वालियर-नरेश तत्रभवान् श्रीमन्महाराजाधिराज मुख्तार-उल्-मुल्क अजीमुदइकतिदार रफीउश्शान वालाशिकोह मोहतश्मे दौरान उमदतुलउमरा आलीजाह हिशमुस्सल्तनत लेफ्टिनंट जनरल महाराज सर माधवराव सीधिया बहादुर श्रीनाथ मंसूरेजमा फिदवीये-हजरत हजरत-ए-मलिकए मुअज्जम रफीउद्दौराए इंग्लिस्तान, जी० सी० एस० आई०, जी० सी० वी० ओ०, ए० डी० सी०, एल-एल० डी०, जी० सी० एल० एम०।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल

( सभा के भूतपूर्व सभापति )

इस वर्ष २४९ नए ग्रंथों के विवरण लिए गए जिनमें सबसे प्राचीन ग्रंथ पंद्रहवीं शती का था। इन ग्रंथों में विट्ठलदास का एक ग्रंथ, गोरखनाथ की बानी, जगजीवनदास की बानी, ध्रुवदास के कई ग्रंथ, कबीरदास का जन्मबोध और नानक की सुखामणि विशेष उल्लेखनीय हैं।

संवत् १९६८ में खोज का कार्य श्री श्यामविहारी मिश्र के निरीक्षण में प्रयाग, फतहपुर, मिर्जापुर, बाँदा, झाँसी, जालौन, कानपुर, उन्नाव, फर्रुखाबाद, मैनपुरी, इटावा, आगरा और मथुरा में हुआ। इस वर्ष ३६१ ग्रंथों का पता चला जिनमें सबसे प्राचीन ग्रंथ पंद्रहवीं शती के थे। इन ग्रंथों में महात्मा कबीरदास के ३७ ग्रंथों का पता लगा। उस समय तक उनके केवल ८-९ ग्रंथ ही सर्वसाधारण को ज्ञात थे। इनके अतिरिक्त हिंदी के विख्यात कवि मतिराम के एक नवीन ग्रंथ 'सतसई' का भी पता इसी वर्ष चला।

सभा ने अगले तीन वर्षों के लिये भी श्री श्यामविहारी मिश्र को ही खोज-विभाग का निरीक्षक बना दिया।

संवत् १९६९ में सभा के सामने बड़ी कठिन समस्या उपस्थित हुई। संयुक्त प्रांत में प्राचीन हस्तलिखित पुस्तकों की खोज के लिये तीन वर्ष का समय नियत किया गया था, किंतु कार्य आरंभ होने पर ज्ञात हुआ कि इस प्रांत में खोज के लिये बहुत विस्तृत क्षेत्र है और निर्द्धारित समय बहुत थोड़ा है। उतने में कार्य पूरा न हो सकेगा, इसलिये प्रांतीय सरकार को अवधि बढ़ाने के लिये कई बार लिखा गया, पर कोई फल न हुआ। इस वर्ष सरकार ने अपनी वार्षिक सहायता भी बंद कर दी और सभा को अपने खर्च से खोज का काम जारी रखना पड़ा। अलीगढ़, बुलंदशहर, मेरठ, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, देहरादून, बिजनौर, मुरादाबाद, बरेली, पीलीभीत, शाहजहाँपुर, बदायूँ, एटा और कुछ अंश में मथुरा में इस वर्ष खोज का कार्य हुआ। १७८ ग्रंथों के विवरण लिए गए, जिनमें सबसे प्राचीन पुस्तकें सोलहवीं शती की थीं। इनमें आनंद घन की 'इश्कलता' और 'सुजानहित', गोस्वामी विट्ठलनाथ के 'यमुनाष्टक' और 'नवरत्न सटीक', गंग कवि के कुछ कवित्त, स्वामी हरिदास कृत 'केलिमाला', कुलपति मिश्र कृत 'दुर्गाभक्तिचंद्रिका', नंददास कृत 'रुक्मिणी-मंगल', दादूपंथी कवि सुंदरदास कृत 'पंचेंद्रिय-निर्णय' और 'सवैया' तथा सूरदास कृत 'भागवत' और 'सूरपचीसी' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

इसी वर्ष संयुक्त प्रांत के तत्कालीन छोटे लाट सर जेम्स मेस्टन सभा में पधारे। उनको अभिनंदनपत्र देते हुए सभा ने निवेदन किया कि

"इस प्रांत की सरकार की सहायता से सभा १३ वर्षों से हिंदी पुस्तकों की खोज का कार्य कर रही है और इस खोज के कार्य की सात रिपोर्टें सरकार की अध्यक्षता में प्रकाशित हो चुकी हैं। डाक्टर ग्रियर्सन, हॉर्नली, पिशेल और बॉर्थ जैसे विद्वानों ने इन रिपोर्टों की बड़ी प्रशंसा की है और सभा समझती है कि अब तक जो काम हुआ है वह बहुत उपयोगी हुआ है। हिंदी की पुस्तकों की खोज के लिये अभी बड़ा मैदान पड़ा है और सभा विश्वास करती है कि वह श्रीमान् के शासन-काल में इस काम को जारी रख सकेगी।"

इसके उत्तर में लाट साहब ने कहा था—

"अपने अभिनंदनपत्र में आप हिंदी पुस्तकों की खोज की सरकारी सहायता का विशेष रूप से उल्लेख करते हैं। उसके लिये जो सहायता मंजूर

हुइ थी उसकी अवधि गत वर्ष पूरी हो गई। सभा को विषय-क्रम से सूची तैयार करने और उसमें इधर हाल तक की खोजों का फल सम्मिलित करने का समय मिलना चाहिए। १९०६ से १९११ तक की त्रैवार्षिक रिपोर्ट की प्रतीक्षा संसार के विद्वान् लोग उत्सुकता के साथ कर रहे हैं और जब वह प्रकाशित हो जायगी तब मुझे पूरी आशा है कि सरकार फिर आप लोगों को इस खोज के काम में सहायता देगी।"

इस उत्तर से सभा को आगे के लिये आशा अवश्य हुई, पर उस समय का काम चलाने के लिये पैसे की कठिनाई जैसी की तैसी ही बनी रही। प्रश्न यह था कि सन् १९१३ में कार्य चलाने के लिये धन का क्या प्रबंध किया जाय। सौभाग्यवश इस प्रश्न को छत्रपुर-नरेश ने ( सन् १९१३ की खोज के लिये ) ५००) देकर हल कर दिया और खोज का काम पूर्ववत् जारी रखा जा सका।

संवत् १९७० (सन् १९१३) में गढ़वाल, नैनीताल, अलमोड़ा, खीरी, सीतापुर, हरदोई और मथुरा जिलों में खोज का कार्य हुआ। अब संयुक्तप्रांत के प्रायः सभी जिलों में सरकारी तौर पर खोज का काम समाप्त हो गया। केवल मथुरा जिले में अभी कुछ काम बाकी था।

नैनीताल और अलमोड़ा जिलों में एक भी पुस्तक नहीं मिली। गढ़वाल में भी पाँच पुस्तकों के ही विवरण लिए जा सके। सबसे अधिक पुस्तकें मथुरा में मिलीं और उसके बाद सीतापुर ( अवध ) में। इस वर्ष कोई नई प्रसिद्ध पुस्तक या नामी कवि नहीं मिला, पर महात्मा सूरदास कृत सूरसागर की एक अमूल्य प्रति देखने में आई जिसका आकार लगभग २५५०० 'श्लोकों' का था। उस समय तक प्राप्त सूरसागर की अन्य प्रतियों में ५-६ हजार पदों से अधिक नहीं मिले थे। अन्य उत्तम ग्रंथों में देव कृत 'राजरत्नाकर' और 'प्रेमचंद्रिका' तथा मतिराम कृत 'छंदसार पिंगल' उल्लेखनीय थे। इस वर्ष कुल मिलाकर २२२ ग्रंथों के विवरण लिए गए। इनमें से सबसे प्राचीन ग्रंथ सोलहवीं शताब्दी के थे।

युक्तप्रांत की इसी खोज के आधार पर मिश्र-बंधुओं का 'मिश्र-बंधु-विनोद' नामक हिंदी-साहित्य का विशाल इतिहास-ग्रंथ लिखा गया, जिसमें लगभग चार हजार लेखकों और बारह हजार ग्रंथों का विवरण दिया गया है।

सभा ने इस वर्ष खोज कार्य के संबंध में यह भी निश्चय किया कि तीर्थस्थानों में पंडों की बहियों की जाँच की जाय। इन बहियों में प्राचीन काल से लगाकर अब तक के हिंदी गद्य के उदाहरण मिल जाने की आशा थी, पर कई कारणों से यह निश्चय कार्य में परिणत न हो सका।

इस वर्ष खोज का कार्य सं० १९७० के मध्य तक अर्थात् सन् १९१३ के दिसंबर मास तक ही हुआ। इसके बाद सभा की ओर से इस कार्य के लिये भ्रमण करनेवाले अन्वेषक लाला चतुर्भुजसहाय ने सहसा त्यागपत्र दे दिया। सरकारी सहायता के बंद हो जाने के कारण आर्थिक कठिनाई भी थी इसलिये काम एक तरह बंद कर देना पड़ा। इस प्रकार सं० १९७०-७१ (सन् १९१४) में खोज का कार्य कुछ भी न हो सका। पर सं० १९७१ के अंतिम दिनों में सरकार ने १२५०) पुरानी सहायता मध्ये सभा को प्रदान कर दिए और भविष्य के लिये अपनी सहायता यथापूर्व पुनः जारी कर दी।

सं० १६७२ में प्रांतीय सरकार ने अपनी वार्षिक सहायता ५००) से बढ़ाकर १०००) कर दी। सभा ने डाक्टर ग्रियर्सन के २२ सितंबर, १६१४ के पत्र में किए गए कुछ निर्देशों के अनुसार, जिनकी ओर संयुक्तप्रांत के शिक्षा-विभाग के डाइरेक्टर ने १८ मई, १६१६ के पत्र में सभा का ध्यान आकृष्ट किया था और उसे सूचना दी थी कि प्रांतीय सरकार ने ८ मई, १६१६ के पत्र द्वारा सभा को हिंदी-पुस्तकों की खोज के लिये १०००) वार्षिक सहायता देना स्वीकार किया है, खोज-प्रणाली में कुछ आवश्यक परिवर्तन करके खोज का कार्य पुनः नए उत्साह के साथ आरंभ कर दिया।

१ भाद्रपद, १६७३ (१७ अगस्त, १६१६) के अधिवेशन में प्रबंध-समिति ने पुनः श्री श्यामविहारी मिश्र को ही इस कार्य का निरीक्षक नियुक्त किया और उन्हें अधिकार दिया कि वे ५०) मासिक पर एक अन्वेषक शीघ्र नियत कर लें। तदनुसार इसी वर्ष उन्होंने गया के श्री देवनारायण मेहता को अन्वेषक नियुक्त किया। इस वर्ष के अंत तक ३०० पुस्तकों के विवरण लिए गए।

सं० १६७३ और ७४ में खोज का कार्य यथापूर्व जारी रहा।

सं० १६७४ में सन् १६१७ के अंत तक सब मिला कर ४८० नए ग्रंथों का पता चला और उनके विवरण लिए गए। इनमें सबसे प्राचीन ग्रंथ १०वीं शती का था।

सं० १६७५ (सन् १६१८) में खोज का कोई विशेष कार्य न हो सका। अन्वेषक कुछ दिन तो इन्फ्लूएंजा ज्वर से पीड़ित रहे, फिर कुछ समय तक उन्हें सभा के २५ वर्षीय इतिहास का खोज संबंधी अंश लिखने के लिये कार्यालय में ही कार्य करना पड़ा।

सं० १६७६ (सन् १६१६-२०) के आरंभ में ही श्री देवनारायण मेहता अपने पद से अलग हो गए और इस वर्ष भी कुछ समय तक खोज का कार्य बंद रखना पड़ा। २५ श्रावण, १६७६ (१० अगस्त, १६१६) को श्री वासुदेवसहाय अन्वेषक के पद पर नियुक्त किए गए और तब से खोज का कार्य फिर सुचारु रूप से चलने लगा। इस वर्ष ७५ हस्तलिखित ग्रंथों के ही विवरण लिए जा सके। कुछ तो समय कम था, दूसरे पुस्तकों के विवरण डाक्टर ग्रियर्सन के निर्देशानुसार विशेष विस्तार से लिखे जाते थे। इससे पुस्तकों की संख्या कम हो जाना स्वाभाविक था। उक्त ७५ ग्रंथों में सबसे पुराना सोलहवीं शती का था।

सं० १६७७ (सन् १६२०-२१) में खोज का कार्य विशेष रूप से गोंडा जिले में हुआ और सब मिलाकर ७२ ग्रंथों के विवरण लिए गए, जिनमें सबसे प्राचीन ग्रंथ चौदहवीं शती का था।

खोज के कार्य के विषय में विशेष रूप से विचार करने के लिये श्री श्यामसुंदरदास के प्रस्ताव पर २७ भाद्रपद सं० १६७६ की बैठक में सर्वश्री गौरीशंकर हीराचंद ओझा, श्यामविहारी मिश्र (संयोजक), जगन्नाथदास 'रत्नाकर', काशीप्रसाद जायसवाल और श्यामसुंदरदास की एक उपसमिति बना दी गई थी। इस उपसमिति की ६ आषाढ़, १६७७ (२० जून, १६२०) की रिपोर्ट पर सभा की प्रबंध-समिति की ६ आश्विन, १६७७ (२२ सितंबर, १६२०) की बैठक में विचार हुआ और रिपोर्ट के सभी सुझाव सभा ने स्वीकार कर लिए। उपसमिति के अधिवेशन में श्री श्यामविहारी मिश्र उपस्थित न हो सके थे। उन्होंने अपने विचार लिखकर समिति के विचारार्थ भेज दिए थे और श्री चंद्रधर शर्मा गुलेरी ने भी विचाराधीन विषयों पर अपनी संमति लिखकर ही भेजी थी।

इस रिपोर्ट के सभी विशेष अंश सभा द्वारा प्रकाशित 'हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण' के प्रथम भाग में उद्धृत किए गए हैं। उपसमिति ने जो सलाह दी थी उसका सारांश था कि हिंदी पुस्तकें प्रायः कागज पर ही लिखी होती हैं, जिनके बहुत दिन तक बने रहने की संभावना नहीं है। कागज शीघ्र ही गल-सड़ जाता है और इससे अनेक ग्रंथ नष्ट हो जाते हैं। ऐसा भी देखने-सुनने में आया है कि जिन महानुभावों ने पुस्तकों का संग्रह किया था उनके उत्तराधिकारियों की उपेक्षा के कारण बहुत से ग्रंथ नष्ट हो गए तथा निरंतर होते जा रहे हैं। ऐसी अवस्था में यह बहुत आवश्यक है कि जिन प्रांतों में हिंदी पुस्तकों के मिलने की संभावना हो, वहाँ खोज का काम जितना शीघ्र हो सके आरंभ कर दिया जाय। संयुक्त प्रदेश में कार्य के दो प्रधान विभाग कर दिए जायँ और दो महाशयों को अन्वेषण का कार्य बाँट दिया जाय, जिससे शीघ्रता के साथ कार्य हो सके। इसके अतिरिक्त मध्य भारत, राजपूताना, बिहार और पंजाब में भी खोज का कार्य आरंभ किया जाय।

उक्त निश्चयानुसार इसी वर्ष पंजाब, बिहार तथा मध्यप्रदेश की सरकारों और मध्यभारत तथा राजपूताने के राज्यों से प्रार्थना की गई कि वे भी अपने अपने प्रांतों में हस्तलिखित पुस्तकों की खोज के लिये उचित सहायता प्रदान करें। पंजाब-सरकार ने इस कार्य के लिये सभा को तीन वर्ष तक ५००) वार्षिक सहायता देना स्वीकार किया। बिहार और उड़ीसा की सरकारों ने अपने प्रांतों में खोज का कार्य 'बिहार ऐंड उड़ीसा रिसर्च सोसायटी' को सौंप दिया और मध्यप्रदेश की सरकार ने इस पर विचार करने का वचन दिया। संयुक्तप्रांत की सरकार से भी प्रार्थना की गई कि वह अपनी वार्षिक सहायता १०००) से बढ़ाकर २०००) कर दे, जिससे उक्त उपसमिति के प्रस्तावानुसार इस प्रांत के दोनों विभागों में अलग अलग खोज का कार्य चलाया जा सके।

प्रांतीय सरकार ने अपने १ मई, १९२२ के पत्र द्वारा सभा की प्रार्थना स्वीकार करके सन् १९२२–२३ से तीन वर्ष के लिये अपनी सहायता १०००) से २०००) वार्षिक कर दी और लिखा कि इसके बाद इस सहायता का बना रहना कार्य की सफलता पर अवलंबित होगा। प्रसन्नता की बात है कि यह सहायता अब तक सभा को बराबर मिल रही है।

संवत् १९७८ में १०५ ग्रंथों की खोज हुई, जिनमें सबसे प्राचीन ग्रंथ तेरहवीं शती का था। इस वर्ष मिले ग्रंथों में अधिकतर उन्नीसवीं शती के थे और उनके रचयिता भी प्रायः एक ही प्रसिद्ध स्थान अयोध्या के थे। इनमें गोस्वामी तुलसीदास के दो ग्रंथ 'जानकीमंगल' और 'बालकांड रामायण' थे, जिनका लिपिकाल क्रम से सं० १६३२ और १६६७ है।

इस वर्ष आषाढ़ मास में श्री श्यामविहारी मिश्र ने निरीक्षक के पद से त्यागपत्र दे दिया, जिसे सभा ने १० आषाढ़ सं० १९७८ (२४ जून, १९२१) की बैठक में स्वीकार कर लिया और उनके छोटे भाई श्री शुकदेवविहारी मिश्र को यह कार्य सौंपा गया।

पंजाब में खोज का कार्य करने के लिये श्री जगद्धर शर्म्मा गुलेरी को सभा ने ८ आश्विन, १९७८ की बैठक में निरीक्षक नियुक्त कर वहाँ कार्य आरंभ करने का सब प्रबंध कर दिया था। सं० १९७९ में पंजाब के काँगड़ा, धर्मशाला, गुलेर, हरिपुर, ज्वालामुखी, नगरोटा, नाहन आदि स्थानों में खोज का कार्य हुआ। कुछ पुस्तकें इन स्थानों में अवश्य मिलीं पर

जैसी सफलता की आशा थी वैसी न हुई। इसके अनंतर पटियाला और नारनौल में कार्य आरंभ किया गया। सब मिलाकर ८० पुस्तकों के विवरण लिए गए। इनमें से कुछ ग्रंथ तो ऐसे थे, जिनका संयुक्त प्रांत में आदर था, पर कुछ सर्वथा अज्ञात थे। यह कार्य १९८० तक चलता रहा, पर अंतिम वर्ष में अन्वेषक के लगातार बीमार रहने के कारण पंजाब में खोज का अधिक कार्य न हो सका। श्री जगद्धर शर्म्मा गुलेरी वहाँ के खोज-कार्य की त्रैवार्षिक रिपोर्ट तैयार करने में लगे रहे, जो सं० १९८७ में सभा द्वारा प्रकाशित की गई। पंजाब-सरकार ने केवल ३ वर्षों के लिये आर्थिक सहायता प्रदान की थी। सं० १९८० में यह अवधि समाप्त हो गई। इसलिये सरकार से भविष्य के लिये आर्थिक सहायता की स्वीकृति मिलने तक पंजाब में खोज का कार्य बंद कर दिया गया और तब से अब तक वह बंद ही है।

संवत् १९७९ में संयुक्त-प्रांत के फैजाबाद और फ़तहपुर जिलों में कार्य हुआ। श्री शुकदेवविहारी मिश्र ने भी अवकाश की कमी के कारण निरीक्षक-पद से त्यागपत्र दे दिया, जिसे सभा ने १० आषाढ़, सं० १९७९ ( २४ जून, १९२२ ) की बैठक में स्वीकार कर लिया और १४ श्रावण, १९७९ ( ३० जुलाई, १९२२ ) की बैठक में श्री श्यामसुंदरदास को फिर खोज-कार्य का निरीक्षक नियत किया। इस वर्ष २३५ ग्रंथों के विवरण लिए गए।

सं० १९८० में खोज का कार्य फैजाबाद के अतिरिक्त सुलतानपुर, बहराइच, बाराबंकी और रायबरेली जिलों में भी आरंभ कर दिया गया। कार्य में शीघ्रता के लिये इस वर्ष एक और अन्वेषक की नियुक्ति की गई और इस प्रकार इस वर्ष तीन अन्वेषक संयुक्त प्रदेश में कार्य करते रहे। सब मिलाकर २५५ ग्रंथों के विवरण लिए गए, जिनमें से सबसे प्राचीन ग्रंथ पंद्रहवीं शती का था। इस वर्ष फैजाबाद और सुलतानपुर के जिलों का कार्य समाप्त हो गया।

हिंदी पुस्तकों की खोज के पहले १२ वर्षों में जिन ग्रंथों का पता लगा था, उनकी सूची इस वर्ष प्रकाशित की गई। इसमें १४५० कवियों और उनके आश्रयदाताओं तथा २७५६ ग्रंथों का उल्लेख किया गया था। इन सब के विषय में खोज से जो बातें मालूम हुई थीं उनका इसमें वर्णन किया गया था और विशेष विवरण जानने की इच्छा रखनेवाले के लिये चिह्नों द्वारा पूर्ण विवरण का संकेत कर दिया गया था। इसके आरंभ में छोटी सी प्रस्तावना द्वारा यह बतलाने का प्रयत्न किया गया था कि खोज का कार्य किस प्रकार आरंभ हुआ, किन सिद्धांतों पर होता रहा और इससे हिंदी-साहित्य के इतिहास के तथ्यों का कैसे ठीक ठीक पता लगाया जाता है। इस विवरण सहित सूची के प्रस्तुत करने का श्रेय श्री श्यामसुंदरदास को है।

इस वर्ष आषाढ़ मास में श्री श्यामसुंदरदास ने निरीक्षक-पद से त्यागपत्र दे दिया, जिसे सभा ने अपनी ३१ आषाढ़, १९८० ( १५ जुलाई, १९२३ ) की बैठक में स्वीकार करके राय बहादुर हीरालाल को यह कार्य सौंपा। सन् १९१२–१६, १९१७–१९ और १९२०–२२ की रिपोर्टें सरकार के पास स्वीकृति और प्रकाशन के लिये भेज दी गईं। इनमें अंतिम दो त्रैवार्षिक रिपोर्टें राय बहादुर हीरालाल ने लिखी थीं। पहली सन् १९१२–१६ की रिपोर्ट सरकार ने छपवानी आरंभ कर दी।

सं० १६८१ में भी तीन अन्वेषक कार्य करते रहे। उन्होंने बाराबंकी, बहराइच तथा रायबरेली जिलों में खोज जारी रखी। इन जिलों में यह कार्य सं० १६८२ तक होता रहा। सं० १६८१ में ४८६ पुस्तकों के विवरण लिए गए। इनमें जैन धर्म के ग्रंथ भी थे, जिनकी खोज अब तक नहीं की गई थी। इनमें सब से प्राचीन पुस्तक बारहवीं शती की थी।

सं० १६६२ में बहराइच, बाराबंकी और रायबरेली के जिलों में खोज का कार्य समाप्त हो गया, सुलतानपुर में जारी रहा और लखनऊ, सीतापुर तथा प्रतापगढ़ जिलों में आरंभ किया गया, जहाँ १६८४ तक होता रहा। इनके अतिरिक्त सं० १६८२ में उन्नाव जिले के काँथा नामक ग्राम में 'शिवसिंह-सरोज' के रचयिता ठाकुर शिवसिंह सेंगर के संग्रह के ही विवरण लिए गए। इस वर्ष भी तीन अन्वेषकों ने कार्य किया, पर किसी न किसी कारण से तीनों ६ मास से अधिक कार्य नहीं कर सके। इस वर्ष सब मिलाकर ३८६ हस्तलिखित पुस्तकों के विवरण लिए गए, जिनमें कई महत्त्वपूर्ण ग्रंथ थे। इनमें एक अंजीरराप्त अथवा कुलजमसरूप नामक ग्रंथ था। यह धामी संप्रदाय का अद्वितीय ग्रंथ है और सोलह खंडों में समाप्त हुआ है। इसमें कुरान और वेदांत के सिद्धांतों का मिलान कर हिंदू-मुसलमानों को एक करने का उद्योग किया गया है। इसकी भाषा में जहाँ तहाँ संस्कृत, अरबी, फारसी, गुजराती और सिंधी के शब्द भी आए हैं। यह ग्रंथ लखनऊ की अमीनुद्दौला पब्लिक लायब्रेरी में सुरक्षित है। इसका विस्तृत विवरण लेने में सभा के अन्वेषक को एक महीना लगा था।

संवत् १६८३ में भी तीन अन्वेषकों ने कार्य किया, पर एक अन्वेषक तो बराबर कार्य करते रहे और दो का कार्य बीच बीच में बहुत दिनों तक रुका रहा। इस वर्ष ४२५ पुस्तकों के विवरण लिए गए।

सं० १६८४ में खोज का कार्य प्रतापगढ़, सीतापुर, लखनऊ, और सुलतानपुर जिलों में समाप्त हो गया। खीरी तथा उन्नाव जिलों में भी कुछ कार्य हुआ। इस वर्ष ४५० हस्तलिखित ग्रंथों के विवरण लिए गए। इनमें कोई भी ग्रंथ सोलहवीं शती से पहले का न था। इस वर्ष जिन स्थानों में खोज-कार्य हुआ वहाँ महत्त्व के ग्रंथ मिलने की आशा नहीं की जाती थी, परंतु श्वेतांबर जैन संप्रदाय के जितने ग्रंथ वहाँ मिले उतने और कहीं नहीं देखे गए थे। इनके अतिरिक्त जो अन्य ग्रंथ प्राप्त हुए उनमें कुछ सिद्धों की वाणियाँ भी थीं, जिनके आधार पर प्रसिद्ध पुरातत्त्ववेत्ता डाक्टर काशीप्रसाद जायसवाल ने हिंदी का समय चौथी शताब्दी से आरंभ होने का अनुमान किया है।

सं० १६८५-८६ में अवध प्रांत के बाकी जिलों में खोज का कार्य समाप्त कर दिया गया। अन्यत्र कार्य आरंभ करने के पूर्व सर जार्ज ग्रियर्सन के कथनानुसार ग्रामवार यह जाँच भी की गई कि कोई ग्राम ऐसा तो नहीं छूट गया, जहाँ हस्तलिखित ग्रंथों के मिलने की संभावना हो। छूटे हुए प्रत्येक ग्राम में, जिनमें पुस्तकों के न होने का अनुमान किया गया था और जहाँ अन्वेषक नहीं गए थे, भेजे गए। यह प्रयत्न निष्फल नहीं गया। अनेक ऐसे ग्रंथों के विवरण लिए जा सके, जिनका पता खोज में पहले नहीं लगा था। इन ग्रामों में संवत् १६८५ में केवल दो अन्वेषकों—श्री बाबूराम बित्थरिया और श्री लक्ष्मीप्रसाद त्रिवेदी—ने पूरे साल भर काम किया और ३८५

ग्रंथों के विवरण लिए। इस वर्ष कोई ऐसा ग्रंथ नहीं मिला जो पंद्रहवीं शती से पहले का हो। तीसरे अन्वेषक वर्ष के आरंभ में ही अलग हो गए थे और उनका स्थान प्राय: वर्ष भर खाली रहा। इसके लिये कोई उपयुक्त पुरुष नहीं मिला।

सं० १६८६ में ३६६ ग्रंथों के विवरण लिए गए। इस वर्ष दो अन्वेषकों ने ही कार्य किया। इनमें प्रत्येक को ६०) मासिक वेतन तथा ≈) प्रतिमील यात्रा-व्यय दिया जाता था। गाँव-गाँव घूमने का कार्य सहज नहीं है। इसी कारण नए मनुष्य इस कार्य में दो-तीन मास से अधिक नहीं टिकते थे। तीसरे अन्वेषक के स्थान पर जो सज्जन नियुक्त किए गए वे एक दो मास से अधिक नहीं ठहरे। इस वर्ष प्राप्त हुए ३६६ ग्रंथों में से ५५ का ही विवरण उन्होंने लिया था।

इस वर्ष पुस्तकों की खोज के संबंध में सन् १६१७ से १६१६ और सन् १६२० से १६२२ की दो त्रैवार्षिक रिपोर्टें सरकार द्वारा प्रकाशित कर दी गईं। इस वर्ष भी खोज का कार्य राय बहादुर हीरालाल के निरीक्षण में ही हुआ।

सं० १६८५ के जाड़े में आगरे की नागरी-प्रचारिणी सभा ने व्रज-मंडल में खोज का कार्य आरंभ करने का विचार प्रकट किया और सभा से एक अन्वेषक की सहायता माँगी। सभा ने स्वीकृति दे दी। पर आगरा नागरी-प्रचारिणी सभा ने इस ओर यथोचित ध्यान न दिया, इससे काशी नागरी-प्रचारिणी सभा को अपनी स्वीकृति रद्द करनी पड़ी।

सं० १६८६ में व्रजमंडल के अंतर्गत मथुरा और आगरा जिलों में खोज करने का कार्य श्री हरिहरनाथ टंडन को सौंपा गया।

इस वर्ष सभा ने यह सोचा कि प्रांत के स्कूलों के अध्यापकों से भी इस कार्य में सहायता ली जाय और प्रत्येक पुस्तक के विवरण के लिये उन्हें आठ आने के हिसाब से पुरस्कार दिया जाय। अतः इस संबंध की एक सूचना संयुक्त प्रांत के सब-डिप्टी-इंस्पेक्टरों के पास अध्यापकों में वितरणार्थ भेजी गई।

सं० १६८७ में ६०० हस्तलिखित ग्रंथों के विवरण लिए गए। इनमें से ५५० तो सभा के वैतनिक अन्वेषक को प्राप्त हुए थे और ५० ग्रंथों के विवरण रायबरेली जिले की तिलोई की पाठशाला के एक अध्यापक ने भेजे थे। इस वर्ष खोज का कार्य आगरा और एटा जिलों में हुआ। उक्त ग्रंथों में सब से महत्त्व के वैद्यक के थे और पंद्रहवीं शती के पूर्व का कोई ग्रंथ न था। सतनामी संप्रदाय का एक अच्छा ग्रंथ मिला, जिसमें इस संप्रदाय के प्रवर्त्तक जगजीवन-दास तथा उनकी गद्दी के उत्तराधिकारियों की रचनाएँ थीं। इसके अतिरिक्त 'विजयदर्शन' नाम का एक नया ग्रंथ भी इस वर्ष प्राप्त हुआ जिसमें पंच मकारों की प्रशंसा की गई है और वाममार्गियों की तांत्रिक पूजा का वर्णन है। एक नई पुस्तक पाकशास्त्र की भी मिली जिसमें मुरब्बे, अचार आदि बनाने की रीति बताई गई है।

इस वर्ष दिल्ली के चीफ कमिश्नर ने दिल्ली प्रांत में खोज कराने के लिये ५००) की सहायता सभा को दी। तदनुसार सभा ने वहाँ भी खोज का कार्य आरंभ कर दिया, जो संवत् १६८८ में ८ महीने तक होता रहा। कुल २०७ पुस्तकों के विवरण लिए गए। सबसे पुराना ग्रंथ पंद्रहवीं शती का था। इन ८ महीनों में यहाँ केवल दिल्ली नगर में ही कार्य हुआ। श्री बाबूराम बित्थरिया अन्वेषक के कार्य पर नियत

किए गए और निरीक्षक का कार्य श्री हरिहरनाथ टंडन को सौंपा गया, किंतु टंडनजी समयाभाव के कारण यह कार्य न कर सके और अन्वेषण समाप्त हो जाने के बाद डाक्टर पीतांबरदत्त बड़थ्वाल को वहाँ के कार्य की रिपोर्ट तैयार करनी पड़ी जो संवत् १९८९ में पूरी हुई। संवत् १९९६ में सभा ने इसे छपवाकर प्रकाशित किया।

सं० १९८८ में खोज का कार्य आगरा कमिश्नरी में हुआ। मथुरा और मैनपुरी जिलों को छोड़कर शेष सब जिलों का कार्य इस वर्ष समाप्त हो गया। सब मिलाकर ५२२ ग्रंथों के विवरण लिए गए। इनमें चौदहवीं शती से पहले का कोई ग्रंथ न था। इन ग्रंथों में कुछ ऐसे भी थे, जिनके रचयिता महाराष्ट्र थे और संयुक्त प्रदेश में आकर बस गए थे। अब तक जितने ग्रंथ खोज में मिले उनमें धर्म, इतिहास, कविता, कथा-कहानी, दर्शन-शास्त्र, ज्योतिष्, वैद्यक, शालिहोत्र, संगीत, नीति, रमल, शकुन-विचार, गणित आदि अनेक विषयों के ग्रंथ थे, पर आखेट या शिकार संबंधी कोई पुस्तक नहीं मिली थी। इस वर्ष इस विषय के भी ग्रंथ मिले; जिनमें मृगया-विहार, चीतानामा और बाजनामा आदि पुस्तकें विशेष उल्लेखनीय हैं। वासुदेव और भगवान्दास इन दो भाइयों के अनेक टीका-ग्रंथ भी इस वर्ष प्राप्त हुए। ये दोनों टीकाकार उद्भट विद्वान् थे। साहित्य, ज्योतिष्, व्याकरण, रमल, वैद्यक आदि विषयों पर इनका अद्भुत अधिकार था। आगरा-निवासी पंडित रूपराम का भी एक ग्रंथ इस वर्ष मिला जो उनके रचित कवित्तों का संग्रह था। रूपरामजी की इतनी ही रचना उन्हें अच्छे कवियों की पंक्ति में बैठाने के लिये पर्याप्त है। सभा ने इस वर्ष निरीक्षक महोदय की सहायता के लिये डाक्टर पीतांबरदत्त बड़थ्वाल को सहायक निरीक्षक नियत किया।

सं० १९८९ में खोज कार्य को जितनी सफलता मिली उतनी इससे पूर्व कभी नहीं मिली थी। इस वर्ष आगरा कमिश्नरी और मैनपुरी जिले में कार्य हुआ और ८६५ ग्रंथों के विवरण लिए गए। इनमें पंद्रहवीं शती से पहले का कोई ग्रंथ नहीं था।

सं० १९९० में मथुरा तथा मैनपुरी जिलों में कार्य हुआ और ५२३ पुस्तकों के विवरण लिए गए। इनमें परशुराम नामक कवि के ४००० पदों का संग्रह प्राप्त हुआ, जिसमें केवल राधाकृष्ण के यशोगान के अतिरिक्त राम-सीता और शिव-पार्वती का भी गुण-गान किया गया था। इस प्रकार के कुल ३३ कवियों का पता इस वर्ष की खोज में पहली बार लगा और सेवादास के नए ४-५ रीति ग्रंथ भी प्राप्त हुए। इस वर्ष रायबहादुर डाक्टर हीरालाल के तीन मास के लिये यूरोप चले जाने पर उनकी अनुपस्थिति में सहायक निरीक्षक डाक्टर बड़थ्वाल ने ही सब कार्य किया।

सं० १९९१ में खोज का कार्य मैनपुरी और मथुरा जिलों में ही होता रहा और वर्ष में सब मिलाकर ५७५ ग्रंथों के विवरण लिए गए। मथुरा जिले की खोज में विशुद्ध व्रजभाषा के २२ ग्रंथ मिले। रामद्विज कायस्थ का अकलनामा भी यहाँ से मिला। यह ऐतिहासिक ग्रंथ है जिसमें चकत्ताशाही की परंपरा भी उल्लिखित है; वस्तुतः यह ग्रंथ एक प्रकार का ज्ञान-कोश (बुक आफ नॉलेज) है। इसमें अनेक विषयों का वर्णन है। उत्तरी भारत के विक्रम संवत् १५५७ के भीषण भूकंप का हृदयविदारक वर्णन भी इसमें हुआ है, जिसे पढ़कर बिहार के प्रलयंकर भूकंप का दृश्य सामने आ जाता है। मैनपुरी में जिन ग्रंथों के

विवरण लिए गए थे, उनमें धर्म, अध्यात्म, छंदशास्त्र, अलंकार, संगीत, जीवनचरित, उपदेश, शिक्षा, ज्योतिष्-सामुद्रिक, कोकशास्त्र, वैद्यक, शालिहोत्र, इतिहास, कथा-कहानी, स्फुट-संग्रह, काव्य, कर्मकांड, योग, कृषि, शब्दकोश और जादू-टोना तक के थे। इस वर्ष प्राप्त हुई पुस्तकों में सबसे प्राचीन ग्यारहवीं शती की थी।

इस वर्ष भी खोज का अधिकांश कार्य राय बहादुर डाक्टर हीरालाल की देख-रेख में ही हुआ। उनकी मृत्यु के कारण २१ श्रावण, १९९१ (६ अगस्त, १९३४) को डाक्टर पीतांबरदत्त बड़थ्वाल को निरीक्षण-कार्य का भार सौंपा गया, जिसे वे १९९७ तक निरंतर करते रहे।

संवत् १९९२ में मैनपुरी जिले में खोज का कार्य समाप्त हो गया और वहाँ के अन्वेषक श्री बाबूराम बित्थरिया इटावा जिले में काम करने के लिये भेज दिए गए। मथुरा में कार्य यथापूर्व जारी रहा। मथुरा, मैनपुरी और इटावा तीनों स्थानों में कुल मिलाकर ४०२ ग्रंथों के विवरण इसवर्ष लिए गए। इनमें अनेक विषयों के ग्रंथ थे। भूगोल और भ्रमण विषयक ग्रंथ भी इस वर्ष प्राप्त हुए। मैनपुरी की खोज में इस वर्ष एक ऐसी काव्यधारा का पता चला जिसमें जनसाधारण की रुचि के लिये तो विशेष आकर्षण रहा है पर जिसे लोग उच्च साहित्य के अंदर लेने में हिचकते हैं। वह धारा है 'भजनों' अथवा 'जथड़ियों' की। ये भजन अखाड़ों में डफलों के साथ गाए जाते हैं। इन अखाड़ों में पहुँचकर प्रायः सारा धार्मिक वाङ्मय जनता के समझने और ग्रहण करने योग्य रूप धारण कर लेता है। अभिमन्यु की लड़ाई के भजन, भजन-महाभारत आदि इसके उदाहरण हैं। इस वर्ष मथुरा में ब्रजभाषा-गद्य के ४४ ग्रंथों के विवरण लिए गए। साहित्यिक दृष्टि से अक्षर-क्रम से संगृहीत रसखान के प्रायः ४०० सवैयों तथा आनंद घन के पदों के विशाल संग्रह की उपलब्धि इस वर्ष की महत्त्वपूर्ण खोज हैं।

सं० १९९७ तक खोज का कार्य मथुरा और इटावा जिलों में ही होता रहा। संवत् १९९३ में कुल मिलाकर यहाँ ३११ हस्तलिखित ग्रंथों के विवरण लिए गए। इनमें सबसे प्राचीन चौदहवीं शती का था। इस वर्ष के ग्रंथों में चतुरदास की चतुरचंद्रिका पिंगल का तथा रामभट्ट का अद्भुत रामायण कथा काव्य का मुख्य ग्रंथ है। कबीर, गरीबदास और चरणदास के भी कुछ महत्त्वपूर्ण ग्रंथ मिले जिनसे प्रकट होता है कि निर्गुणपंथी संत वस्तुतः सगुण पंथ के विरोधी नहीं थे।

इस वर्ष १ जुलाई, सन् १९३६ को सभा के अन्वेषक श्री लक्ष्मीप्रसाद त्रिवेदी की मृत्यु हो जाने के कारण खोज के कार्य में बाधा पड़ी। इनके स्थान पर श्री दौलतराम जुयाल की नियुक्ति की गई। इन्होंने एक मास तक खोज के निरीक्षक की देख-रेख में अवैतनिक रूप से शिक्षा ग्रहण की। इसके पश्चात् दो मास तक पुराने अन्वेषक के साथ काम सीखने के अनंतर ये स्वतंत्र रूप से कार्य करने के लिये मथुरा भेजे गए।

सं० १९९४ में ३४१ ग्रंथों के विवरण लिए गए, जिनमें सबसे प्राचीन पंद्रहवीं शती का था। इस वर्ष गंगाराम पुरोहित कृत 'हरिभक्ति-प्रकाश' नामक ८०० पृष्ठों का एक बृहत् ग्रंथ प्राप्त हुआ। इसे एक प्रकार से भारतीय धर्मों और दर्शनों का विश्वकोश समझना चाहिए। वैद्यक के ग्रंथों में ग्रंथ-संजीवन अधिक

महत्त्व का है जो आलम नाम के किसी मुसलमान ग्रंथकार की रचना है।

सं० १६६५ में कुल मिलाकर २५१ ग्रंथों के विवरण लिए गए जिनमें सबसे पुराना पंद्रहवीं शती का था। इस वर्ष साहित्य शास्त्र के कई महत्त्व-पूर्ण ग्रंथ सामने आए। तीरंदाजी आदि विषयों की भी कुछ पुस्तकें प्राप्त हुईं। रिसाला तीरंदाजी में खड़ी बोली का बड़ा परिष्कृत रूप मिलता है। इस वर्ष इटावे के अन्वेषक द्वारा जी० ए० वी० स्कूल सिरसागंज, मैनपुरी के श्री बलदेव पुस्तकालय से सभा को १११ हस्तलिखित ग्रंथ प्राप्त हुए और मथुरा के अन्वेषक द्वारा ५२ ग्रंथों की प्राप्ति हुई। इस वर्ष डाक्टर बड़थ्वाल के सहायक श्री विद्याभूषण मिश्र नियत हुए।

सं० १६६६ में १६२ ग्रंथों के विवरण लिए गए। इनमें सबसे प्राचीन पंद्रहवीं शती का था। इस वर्ष मूल स्तंभ नामक अत्यंत महत्त्वपूर्ण ग्रंथ प्राप्त हुआ जिसमें विश्व की उत्पत्ति, मनुष्य-शरीर, भैरवी चक्र और योग की अन्य बातों का विवेचन किया गया है। इस वर्ष ११२ हस्तलिखित ग्रंथ अन्वेषकों द्वारा सभा को मिले।

सं० १६६७ में कुल मिलाकर ३५३ ग्रंथों के विवरण लिए गए, जिनमें सबसे पुराना सोलहवीं शताब्दी का था। इस वर्ष एक हस्तलेख जिसमें भगवद्गीता, विष्णुसहस्रनाम, भीष्मस्तवराज, अनुस्मृति और गजेंद्रमोक्ष ये पाँच संस्कृत ग्रंथ संगृहीत थे, पंद्रह चित्रों सहित मिला। ये चित्र भाव की दृष्टि से अच्छे थे। इनके अतिरिक्त सीता, राम और हनुमान के चित्र, ऋद्धि-सिद्धि सहित गणेशजी का चित्र, गुसाईं जी और दाऊजी का चित्र, ये चार सुंदर चित्र और प्राप्त हुए। संस्कृत का एक ऐसा हस्तलेख भी मिला जिसके किनारों पर सुनहरे बेल-बूटे बने थे। इस वर्ष मिले ग्रंथों में कोक सामुद्रिक भी है जो जहाँगीर के राज्यकाल के एक मुसलमान की रचना है। वह इस बात का प्रमाण है कि मुसलमानों ने हिंदी को काव्य के लिये ही नहीं, ज्योतिष, सामुद्रिक आदि विषयों के निरूपण के लिये भी अपनाया था।

इस वर्ष मथुरा से ६६ और इटावे से ३४ हस्तलेख सभा को अपने अन्वेषकों द्वारा प्राप्त हुए। खोज विभाग के निरीक्षक इस वर्ष भी डाक्टर पीतांबरदत्त बड़थ्वाल और सहायक निरीक्षक श्री विद्याभूषण मिश्र ही चुने गए थे, परंतु अस्वस्थता के कारण डाक्टर बड़थ्वाल के पदत्याग कर देने पर श्री विद्याभूषण मिश्र ने वर्ष के अंत तक निरीक्षक का कार्य किया।

संवत् १६६८ में खोज का कार्य मथुरा और बलिया जिलों तथा प्रयाग और काशी नगरों में हुआ। मथुरा और बलिया में सभा के अन्वेषक श्री दौलतराम जुयाल ने, तथा प्रयाग और काशी में श्री महेशचंद्र गर्ग ने कार्य किया। प्रयाग का कार्य श्री देवीदत्त शुक्ल और बलिया का कार्य श्री परशुराम चतुर्वेदी की देखरेख में हुआ। मथुरा और बलिया में ११३ और काशी तथा प्रयाग में १३० कुल २४३ ग्रंथों के विवरण इस वर्ष लिए गए। इनमें पंद्रहवीं शताब्दी से पूर्व का कोई ग्रंथ नहीं था। इस वर्ष काव्यों के अतिरिक्त गद्य के भी कई महत्त्वपूर्ण ग्रंथ मिले।

सभा ने कुछ ग्रंथों की प्रतिलिपि प्राप्त कर मूल ग्रंथों की अलभ्यता की कमी अंशतः पूरी करने का प्रयत्न भी इस वर्ष किया। बंबई के प्रिंस-आव-वेल्स संग्रहालय के कला-विभाग के अध्यक्ष डाक्टर मोतीचंद के सौजन्य से सूरदास ( अष्टछाप वाले सूरदास से भिन्न ) कृत 'नल-दमन' की प्रतिलिपि इस वर्ष कराई

गई और बलिया के चिटबड़ा गाँव के महंत श्री राजाराम ने अपने हस्तलिखित ग्रंथों की चार जिल्दें, जिनमें कुल मिलाकर ३४ पुस्तकें थीं, सभा को प्रतिलिपि कराने के लिये भेजीं। प्रयाग में भी कुछ ग्रंथों की प्रतिलिपि कराई गई।

इस वर्ष श्री विद्याभूषण खोज विभाग के निरीक्षक तथा श्री रामबहोरी शुक्ल संयुक्त निरीक्षक रहे।

संवत् १९९९ में खोज का कार्य बलिया, आजमगढ़ और इलाहाबाद जिलों एवं सभा के अपने आर्यभाषा पुस्तकालय में हुआ। पहले दो जिलों में क्रमशः श्री परशुराम चतुर्वेदी और श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' की देख-रेख में श्री दौलतराम जुयाल ने तथा इलाहाबाद जिले में श्री देवीदत्त शुक्ल की देख-रेख में श्री महेशचंद्र गर्ग ने कार्य किया। आषाढ़ मास में श्री महेशचंद्र गर्ग ने त्यागपत्र दे दिया। अगस्त में देशव्यापी आंदोलन उठ खड़ा होने से श्री दौलतराम जुयाल सभा-कार्यालय में चले आए। श्री महेशचंद्र गर्ग के स्थान पर श्री उदयशंकर त्रिवेदी की नियुक्ति हुई। सभा के आर्यभाषा पुस्तकालय में दोनों अन्वेषकों ने मिलकर कार्य किया।

इस वर्ष बलिया और आजमगढ़ जिलों में ८५, इलाहाबाद जिले में १२२ और आर्यभाषा पुस्तकालय में २२८ ग्रंथों के विवरण लिए गए। इनके अतिरिक्त जोधपुर के श्री महावीरसिंह गहलौत के परिश्रम से भी १०४ विवरण प्राप्त हुए। इस प्रकार सब मिलाकर विभिन्न विषयों के ५३९ ग्रंथों के विवरण लिए गए। इन ग्रंथों में विक्रम की बारहवीं शती तक के ग्रंथ हैं। इनके अतिरिक्त एक ऐसा विशाल हस्तलेख भी इस वर्ष प्राप्त हुआ जिसमें ३४ निर्गुणपंथी संतों, नाथों तथा सिद्धों की रचनाएँ लिपिबद्ध हैं। यह सं० १८५५—५६ में लिखा गया था। यह हस्तलेख सभा में सुरक्षित है।

इस वर्ष श्री दौलतराम जुयाल ने सभा के लिये ३८ हस्तलेख, जिनमें ६७ ग्रंथ हैं, प्राप्त किए। श्री महेशचंद्र गर्ग ने प्रयाग से चार ग्रंथ और उदयशंकर त्रिवेदी ने काशी से आठ ग्रंथ प्राप्त कर सभा में भेजे। श्री जानकीनाथ त्रिपाठी की कृपा से श्री शिवनारायण स्वामी के कुछ ग्रंथों की प्रतिलिपि भी इस वर्ष कराई गई।

आर्यभाषा-पुस्तकालय के पुस्तकाध्यक्ष मानसमराल श्री शंभुनारायण चौबे की हार्दिक लगन और अथक परिश्रम द्वारा रामचरितमानस की सं० १७२१ वि० की हस्तलिखित प्रति इस वर्ष सभा को प्राप्त हुई। रामचरितमानस की ज्ञात हस्तलिखित प्रतियों में पाठ की शुद्धता की दृष्टि से यह प्रति सर्वोत्कृष्ट है। अब से लगभग ५० वर्ष पहले यह प्रति श्री भागवतदास खत्री के संग्रह में थी।

कई वर्षों से हिंदी की प्राचीन हस्तलिखित पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण तैयार कराने का भी विचार चल रहा था। सं० १९८० में श्री श्यामसुंदरदास द्वारा संपादित संक्षिप्त विवरण का पहला भाग सभा द्वारा प्रकाशित किया गया था। इसमें सन् १९०० से १९११ तक की खोज का संक्षेप, हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों की तब तक प्रस्तुत ८ रिपोर्टों के आधार पर प्रस्तुत किया गया था। इसके बाद अब तक (सन् १९४३ तक) खोज की १२ रिपोर्टें और तैयार हो चुकी हैं। इनके आधार पर संक्षिप्त विवरण का दूसरा भाग तैयार करने की बहुत आवश्यकता थी। किंतु पूर्वप्रकाशित संक्षिप्त विवरण में अवलंबित पद्धति के संशोधन की अपेक्षा थी। इसलिये यह ठीक समझा

गया कि १९०० से १९४३ तक की सभी रिपोर्टों के आधार पर अब तक की प्राप्त समस्त हस्तलिखित पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया जाय। तत्कालीन संयुक्त निरीक्षक श्री रामबहोरी शुक्ल की देखरेख में यह कार्य आरंभ हुआ और नामों की सूची प्रस्तुत हो गई। १० माघ, १९९९ ( २३ जनवरी, १९४३ ) को प्रबंध-समिति की बैठक में श्री रामचंद्र वर्म्मा को इसके संपादन का भार सौंपा गया। सर्वश्री विद्याधर त्रिवेदी, श्रीकृष्ण हसरत और केदारनाथ खत्री स्लिपें तैयार करने के लिये नियुक्त किए गए। इस कार्य में सभा के अन्वेषकों से भी समय समय पर सहायता मिलती रही।

संवत् २००० के ज्येष्ठ मास में श्री उदयशंकर कला-भवन में विभागांतरित कर दिए गए और उनके स्थान पर श्री विद्याधर त्रिवेदी की नियुक्ति की गई। श्री दौलतराम जुयाल और श्री विद्याधर त्रिवेदी ये दोनों अन्वेषक सं० २००० के प्रारंभिक नौ मास तक आर्यभाषा पुस्तकालय में संगृहीत हस्तलिखित पुस्तकों की सूची और १९४१-४३ की त्रैवार्षिक रिपोर्ट तैयार करने में लगे रहे।

सं० १९९९ से खोज के निरीक्षक का कार्य डाक्टर वासुदेवशरण अग्रवाल और श्री विश्वनाथ प्रसाद मिश्र कर रहे हैं।

सं० १९५७ से २००० (सन् १९०० से १९४३) तक ४४ वर्षों में सब मिलाकर १३७३७ प्राचीन हस्तलिखित हिंदी ग्रंथों के विवरण लिए गए। सभा को लगभग १५०० ग्रंथ मिले। इनके अतिरिक्त डाक्टर हीरानंद संग्रह में २५५, 'रत्नाकर' संग्रह के ३३८ और याज्ञिक संग्रह के ११७९ प्राचीन हस्तलिखित हिंदी ग्रंथ भी सभा को प्राप्त हुए। ये सब आर्यभाषापुस्तकालय में सुरक्षित हैं। इन चौवालीस वर्षों में जिन पुस्तकों की खोज की गई और विवरण लिए गए उनका पूरा पूरा पता उस संक्षिप्त सूची से लगेगा जिसकी चर्चा ऊपर की गई है और जो अलग पुस्तकाकार प्रकाशित की जा रही है।

इन वर्षों में खोज क कार्य पर ६३८६४॥≡)॥।२३ धन व्यय किया गया जिसकी आय का ब्यौरा इस प्रकार है—

| | |
|---|---|
| (१) सभा | २८६४॥≡)॥।२३ |
| (२) संयुक्त प्रांत की सरकार | ५७४००) |
| (३) पंजाब-सरकार | १५००) |
| (४) दिल्ली के चीफ कमिश्नर | ५००) |
| (५) जनता | १६००) |
| योग | ६३८६४॥≡)॥।२३ |

आरंभ से अब तक उक्त खोज-कार्य की प्रकाशित और अप्रकाशित सब रिपोर्टों का लेखा इस प्रकार है—

| | | | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| (क) | १ सन् १९०० | की | वार्षिक | रिपोर्ट, | संपादक— | श्री श्यामसुंदरदास, | सरकार | द्वारा, | १९०३ | में प्रकाशित |
| (ख) | २ ,, १९०१ | ,, | ,, | ,, | ,, | ,, | ,, | ,, | १९०४ | ,, |
| (ग) | ३ ,, १९०२ | ,, | ,, | ,, | ,, | ,, | ,, | ,, | १९०६ | ,, |
| (घ) | ४ ,, १९०३ | ,, | ,, | ,, | ,, | ,, | ,, | ,, | १९०५ | ,, |
| (ङ) | ५ ,, १९०४ | ,, | ,, | ,, | ,, | ,, | ,, | ,, | १९०७ | ,, |

(च) ९ सन् १९०५ की वार्षिक रिपोर्ट, संपादक—श्री श्यामसुंदरदास, सरकार द्वारा १९०८ में प्रकाशित

(छ) ७ ,, १९०६–०८ ,, त्रैवार्षिक ,, ,, ,, ना० प्र० स० ,, १९१२ ,,

(ज) ८ ,, १९०९–११ ,, ,, ,, ,, श्री श्यामविहारी मिश्र ,, ,, १९१४ ,,

(झ) ९ ,, १९१२–१६ ,, पंचवार्षिक ,, ,, ,, ,, ,, १९२४ ,,

(ञ) १० ,, १९१७–१९ ,, त्रैवार्षिक ,, ,, डाक्टर हीरालाल ,, ,, १९२९ ,,

(ट) ११ ,, १९२०–२२ ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, १९२९ ,,

(ठ) १२ ,, १९२३–२५ ,, ,, ,, ,, ,, ,, ,, १९३० ,,

(ड) १३ ,, १९२६–२८ ,, ,, ,, ,, ,, अभी अप्रकाशित

(ढ) १४ ,, १९२२–२४ ,, पंजाब रिपोर्ट ,, ,, श्री जगद्धर शर्मा गुलेरी, ना०प्र०स० द्वारा १९३१ ,,

(ण) १५ ,, १९३१ ,, दिल्ली रिपोर्ट ,, ,, डा० पीतांबरदत्त बड़थ्वाल ,, ,, १९३९ ,,

(त) १६ ,, १९२९–३१ ,, त्रैवार्षिक रि० ,, ,, ,, अभी अप्रकाशित

(थ) १७ ,, १९३२–३४ ,, ,, ,, ,, ,, ,,

(द) १८ ,, १९३५–३७ ,, ,, ,, ,, ,, ,,

(ध) १९ ,, १९३८–४० ,, ,, ,, ,, श्री विद्याभूषण मिश्र ,,

(न) २० ,, १९४१–४३ ,, ,, ,, ,, { डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ,,<br>श्री विश्वनाथप्रसाद मिश्र ,,

खोज के इस कार्य में सभा ने जो कुछ सफलता प्राप्त की है उसका श्रेय भारत-सरकार, देश के उदार धनिक-समुदाय, इस विभाग के विद्वान् निरीक्षकों और अन्वेषकों को तो है ही, बहुत कुछ श्रेय विभिन्न स्थानों के उन विद्वानों और हिंदीप्रेमियों को भी है जिन्होंने अन्वेषकों को अनेक प्रकार की सुविधाएँ दीं और अनेक प्रकार से सहायता करके उनकी कठिनाइयाँ दूर की हैं। उनके सहयोग के बिना इतनी सफलता न मिलती। ऐसे उल्लेखनीय महानुभावों के नाम सभा के वार्षिक विवरण में प्रतिवर्ष सधन्यवाद प्रकाशित किए जाते हैं। इन्हें देखने से पता चलता है कि इनमें प्रतिष्ठित विद्वान्, बड़े बड़े रईस और जमींदार, विद्यालयों के अध्यापक, व्यापारी, राजकर्मचारी आदि सभा श्रेणियों के व्यक्ति हैं।

यहाँ पर यह कह देना भी आवश्यक प्रतीत होता कि यह जो कुछ कार्य हुआ है, बहुत थोड़ा है। हस्तलिखित पुस्तकों के बड़े-बड़े भांडार राजपूताने में हैं जहाँ खोज का काम नहीं के बराबर हुआ है। पंजाब और मध्यभारत में भी उसके लिये अभी बहुत बड़ा क्षेत्र है। इस ओर ध्यान देने की बहुत शीघ्र आवश्यकता है।

## अन्वेषण-कार्य संबंधी कागज-पत्र और नियम

हस्तलिखित ग्रंथों के अन्वेषक को निम्नलिखित फार्म आदि काशी नागरीप्रचारिणी सभा से मिलते हैं जो प्रति सौर मास की तीसरी तारीख तक भरकर उसे यथानिर्दश भेज देने पड़ते हैं—

( १ ) ग्रंथ-विवरण ( नोटिस ) लेने के फार्म
( २ ) डायरी ( दैनिक कार्य ) के फार्म
( ३ ) मासिक ग्रंथ-सूची के फार्म
( ४ ) अगले मास का कार्य-क्रम
( ५ ) बिल ( मासिक वेतन ) के फार्म
( ६ ) रसीद फार्म

संख्या १, ३ और ४ निरीक्षक जी के पास, जहाँ वे रहते हों भेजने चाहिएँ और सं० २, ५ और ६ मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी, के पास।

## विवरण फार्म भरने के नियम

विवरण फार्म सं० १ को भरना अन्वेषक का मुख्य काम है। उसके भरने में नीचे लिखी बातों का ध्यान रखना चाहिए—

शीर्षक—प्रत्येक फार्म के सिरे पर ग्रंथ-संख्या और सन् लिखना पड़ता है। संख्या वर्ष के आदि से आरंभ होती है और वर्ष की समाप्ति पर खतम हो जाती है, अर्थात् क्रमसंख्या साल भर चलती है जो सूची सं० २ में लिखी जाती है। यही संख्या नोटिस फार्म के सिरे पर भरनी चाहिए।

पुस्तक का नाम—प्रत्येक ग्रंथ का नाम प्रायः उसके आदि और अंत में अंकित होता है, उसी को पढ़कर इस कोष्ठ की पूर्ति कर देनी चाहिए। कदाचित् उस ग्रंथ के आद्यंत पृष्ठ लुप्त हो गए हों तो उन पृष्ठों पर पड़े हुए सांकेतिक अक्षरों से नाम निकालकर लिख देना चाहिए। यह नाम पुस्तक के विषय की सहायता से सरलता से निकल सकता है; यथा—'ज्यो० सा०' से 'ज्योतिष् सार' और 'व्या० चं०' से 'व्याकरण चंद्रोदय' नाम निकलते हैं, उन्हीं को इस कोष्ठ में लिखना चाहिए। सांकेतिक अक्षर किन्हीं किन्हीं हस्तलिखित ग्रंथों की बाईं ओर छूटे हुए मार्जिन पर और कहीं कहीं बाएँ पृष्ठ पर ऊपर की ओर और दाईं ओर नीचे की तरफ अंकित होते हैं। कुछ ग्रंथ ऐसे भी पाए जाते हैं जिनमें प्रतिलिपिकर्त्ताओं के दृष्टि-दोष अथवा ग्रंथकर्त्ताओं के न लिखने के कारण, समस्त ग्रंथ को उलट जाने पर भी आपको ग्रंथ का नाम न मिलेगा। ऐसी दशा में ग्रंथ का नाम विषय के अनुसार रखकर उसके सामने कोष्ठ में 'अनुमानिक' लिख देना चाहिए अथवा इस कोष्ठ को बिलकुल खाली छोड़ देना चाहिए।

रचयिता का नाम—हिंदी के पुराने लेखकों में से कुछ तो ऐसे हैं जिन्होंने अपना नाम लिखकर यश कमाने की तनिक भी परवाह नहीं की। ऐसे लेखकों का नाम जानना प्रायः असंभव है। दूसरे लेखक ऐसे हैं जो ग्रंथ के आदि अथवा अंत में पद्यों द्वारा अपना तथा अपने वंशादि का पूर्ण विवरण देते हैं। कभी कभी ग्रंथकार ग्रंथ के मध्य में भी अपना साधारण सा परिचय दे देता है। अन्वेषक का कर्तव्य है कि वह ग्रंथ का अध्ययन करके पद्यों से उसका नाम लेकर इस कोष्ठ में लिख दे। कभी कभी लेखक पद्यों में पेचीदा ढंग पर अपना नाम लिखता है; किंतु वह अपने ऐसा करने की चेतावनी पाठकों को दे देता है। ऐसी दशा में अन्वेषक को ध्यान देकर नाम-संबंधी पद्यों का अध्ययन करने से ही नामादि का पता चलेगा। तीसरे ऐसे भी ग्रंथकार हैं, जिन्होंने ग्रंथ के अध्यायों के अंत में 'इति श्री राधामोहन कृत सत्यनारायणव्रत-कथान्तर्गत साधुचरित्रवर्णनो नाम चतुर्थ अध्यायः समाप्तः' इस प्रकार अपना नाम दिया है। ऐसे नाम

पुस्तक के पन्ने लौटकर देखने से प्रत्येक अध्याय की समाप्ति पर मिलेंगे, वहाँ से लेकर उन्हें लिख देना चाहिए। यदि ग्रंथ से उसके रचयिता के नाम का पता न चले और ग्रंथ के स्वामी अथवा अन्य अनुभवी व्यक्ति द्वारा आपको यह पता चले कि यह ग्रंथ अमुक ग्रंथकार की रचना है तो इस कोष्ठ में उसी नाम को लिख देना चाहिए, किंतु अपनी इस जानकारी की सूचना विवरण फार्म के अंतिम कोष्ठ में अवश्य दे देनी चाहिए।

**उसका निवासस्थान**—जिन प्रसिद्ध ग्रंथकारों ने प्रस्तुत विवरण लिए जानेवाले ग्रंथ में अपने निवासस्थान का परिचय नहीं दिया और साहित्य के इतिहासग्रंथों और जनश्रुतियों द्वारा जिनका कोई निवासस्थान निश्चित न हो गया हो उनको ही इस कोष्ठ में लिखना चाहिए। उक्त कोष्ठ की भाँति आदि वा अंत में दिए पद्यों में भी बहुधा रचयिताओं ने अपने निवासस्थानों के नाम दिए हैं, वहाँ से लेकर निवास-स्थान लिख देना चाहिए और यदि किसी प्रकार निवास-स्थान का पता न चले तो कोष्ठ खाली छोड़ देना चाहिए।

**पुस्तक किस पर लिखी है**—प्रायः हिंदी की समस्त पुस्तकें कागजों पर लिखी हुई ही उपलब्ध होती हैं। ये कागज कई प्रकार के होते हैं, एक तो पुराने कागज जो बहुधा बाँस से बनाए जाते थे और 'बाँसी' के नाम से प्रसिद्ध थे। दूसरे अन्य प्रकार के देशी बने कागज भी पाए जाते हैं जिनका पता वयोवृद्ध अनुभवी सज्जनों से चल सकता है। इस प्रकार पता चल जाने पर इस कोष्ठ में 'देशी कागज' अथवा 'बाँसी कागज' आदि शब्द लिख देना चाहिए। इसके अतिरिक्त कुछ प्राप्त ग्रंथ 'भोजपत्र' एवं 'ताड़पत्र' पर लिखे हुए भी मिल सकते हैं। ऐसी दशा में इस कोष्ठ में 'भोजपत्र पर' आदि शब्द लिख देना ही पर्याप्त होगा।

**पृष्ठ**—हिंदी के हस्तलिखित ग्रंथों में भी संस्कृत भाषा का अनुकरण करके लेखक बहुधा 'पृष्ठों' की गणना के स्थान पर 'पत्रों' का गिनती ही लिखा करते हैं। वही गिनती इस कोष्ठ म लिख देनी चाहिए। पृष्ठ का दूना 'पत्र' होता है, किसी कागज के एक ओर का एक पृष्ठ और उसकी दूसरी ओर का दूसरा पृष्ठ मिलाकर एक 'पत्रा' कहलाता है और उसी की गणना ग्रंथों में लिखी जाती है। यदि किसी ग्रंथ में 'पत्रों (लीव्स)' की गणना न लिखकर लेखक ने 'पृष्ठों (पेजेज)' की गणना ही लिख दी हो तो उस संख्या का आधा करके उसको 'पत्रों' में परिवर्तित करके इस कोष्ठ की पूर्ति कर देनी चाहिए।

**आकार**—बाजार से 'फुटा' अथवा 'अर्द्धफुटा' खरीदकर अपने पास रख लेना चाहिए। इसमें इंचों के चिह्न अथवा गणना दी होती है। इससे पुस्तक की लम्बाई-चौड़ाई नापकर इस कोष्ठ में लिख देनी चाहिए।

**प्रति पृष्ठ में कितनी पंक्तियाँ हैं**—हस्तलिखित ग्रंथों में प्रायः पंक्तियों की गणना एक ही (७, ६ तथा ११ आदि) होती है, उसी को इस कोष्ठ में लिखना चाहिए। कुछ ग्रंथ खोज में ऐसे भी मिल जाते हैं जिनमें प्रति पृष्ठ की पंक्तियों की संख्या भिन्न होती है। ऐसी दशा में 'अनुपात' अथवा 'औसत' के नियम से पंक्तियों की गणना निकालकर इस कोष्ठ की पूर्ति करनी चाहिए। यथा—चार-पाँच पृष्ठों की पंक्तियाँ गिनने से १०, ११, ८, ७ तथा १२ ज्ञात हुई हों तो इन सबका योग निकाल लेना चाहिए। जितने पृष्ठों की पंक्तियाँ गिनी हों

उनकी संख्या का भाग देने से औसत निकल आएगा, $\left(\frac{१०+११+८+७+१२}{५}\right) = \left(\frac{४८}{५}\right) = ९+१ = १०$ यह औसत हुआ। इसी संख्या को इस कोष्ठ में लिख देना चाहिए। भाग देने में यदि शेष भाजक का आधा अथवा उससे अधिक निकले तो उसके बदले १ ही मान लेना चाहिए। पिछले उदाहरण में भाज्य ४८ और भाजक ५ है, भजनफल ९ निकला तथा ३ शेष रहा जो भाजक ५ के आधे से अधिक है। इसलिये भजनफल ९ + १ = १० हुआ और पंक्तियों का औसत १० निकल आया।

**ग्रंथ कहीं प्रकाशित हो चुका है या नहीं**—यदि इस बात का ठीक पता लग जाय कि वह ग्रंथ कहीं छप गया है, तो यहाँ 'हाँ' शब्द लिख देना चाहिए और इस बात का सच्चा प्रमाण मिल जाय कि वह ग्रंथ अद्यावधि अप्रकाशित है तो यहाँ 'नहीं' शब्द लिख देना चाहिए। यदि कुछ पता न चले तो इस कोष्ठ को खाली छोड़ देना चाहिए।

**यदि 'हाँ' तो कहाँ**—इस कोष्ठ में, जहाँ से ग्रंथ प्रकाशित हुआ हो, वहाँ का पूरा पता लिखना चाहिए। यदि किसी प्रकार पता ज्ञात न हो सके अथवा ग्रंथ अप्रकाशित हो तो इस कोष्ठ को खाली छोड़ देना चाहिए।

**परिमाण अनुष्टुप छंदों में**—पत्रों की संख्या का दूना या पृष्ठ-संख्या, पंक्तियों का औसत और तीन-चार पंक्तियों के अक्षरों से निकला हुआ अक्षरों का औसत, इन तीनों संख्याओं से गुणा करके गुणनफल में ३२ का भाग देने से अनुष्टुप छंद की संख्या निकल आती है। यथा—किसी ग्रंथ में ४९ पन्ने हैं तो उसका दूना करके ९८ पृष्ठ बन गए। फिर पंक्तियों का औसत देखा, वह १६ है और प्रत्येक पंक्ति के अक्षरों का औसत ४८ है, तो अनुष्टुप छंद—$\frac{९८ \times \cancel{१६} \times \cancel{४८}\ २४}{\cancel{३२}\ \cancel{२}} = २३५२$ हुए। यही संख्या इस कोष्ठ में लिख देनी चाहिए। भाग देने पर यदि १६ अथवा इससे अधिक बचे तो श्लोक की संख्या में एक की वृद्धि कर देनी चाहिए।

**सूचना**—अक्षरों का औसत भी, पंक्तियों के औसत के अनुसार ही निकालना चाहिए। किसी भी पृष्ठ की चार-पाँच पंक्तियों के अक्षर गिनकर औसत निकाल लेना चाहिए।

**पूर्ण अथवा अपूर्ण**—इस कोष्ठ की पूर्ति ग्रंथ को देखकर की जा सकती है। यदि ग्रंथ आद्यंत में पूरा है, उसका कोई भाग लुप्त या खंडित नहीं हुआ है तो यहाँ 'पूर्ण' और यदि खंडित है तो 'अपूर्ण' लिख देना चाहिए।

**रूप कैसा है**—पुस्तक देखने में कैसी ज्ञात हुई (जर्जर, नवीन, पुरानी अथवा फटी आदि)। यही बात इस कोष्ठ में लिखनी चाहिए, अर्थात् इस कोष्ठ की पूर्ति पढ़कर ही पाठक को पुस्तक की बाह्य अवस्था का वास्तविक ज्ञान हो जाना चाहिए।

**गद्य अथवा पद्य**—जो ग्रंथ आदि से अंत तक गद्य में हो उसके विवरण फार्म के इस कोष्ठ में 'गद्य' और जो पद्य में हो उसके लिये 'पद्य' शब्द लिखना चाहिए। जिन ग्रंथों में गद्य पद्य दोनों ही का मिश्रण हो वहाँ 'गद्य-पद्य मिश्रित' अथवा 'गद्य-पद्य दोनों' ये शब्द लिखकर इस कोष्ठ की पूर्ति करनी चाहिए।

**किन अक्षरों में है**—खोज में कुछ ऐसे भी ग्रंथ उपलब्ध होते हैं जिनकी भाषा हिंदी है किंतु लिपि 'अरबी', 'गुजराती', 'महाराष्ट्री' अथवा 'गुरु-मुखी'

## सभा के विशिष्ट सभासद
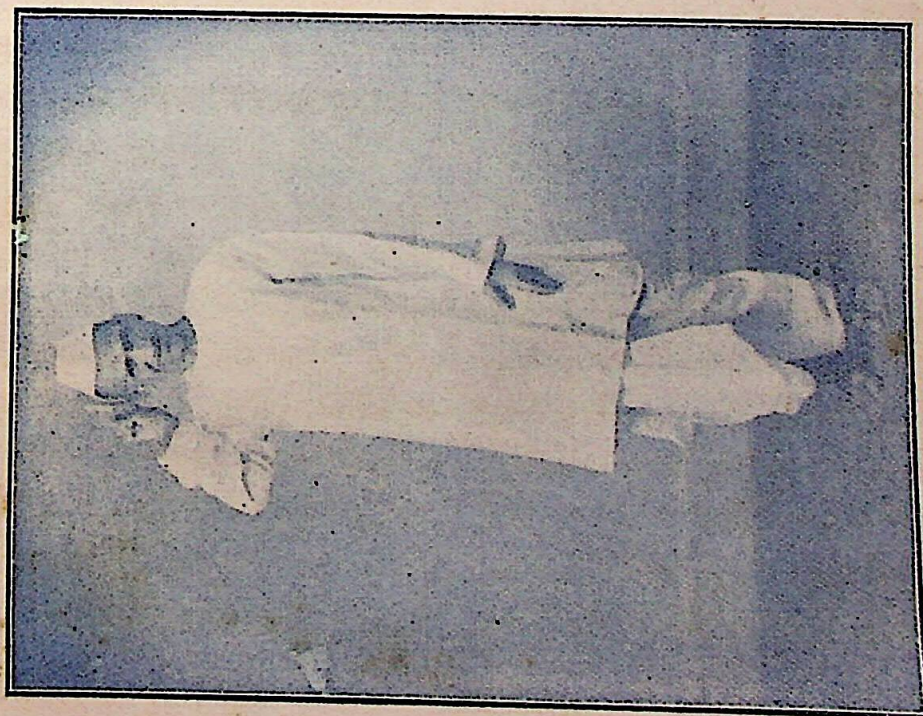
सेठ श्री रामकृष्ण डालमिया ।

## सभा के विशिष्ट सभासद

श्री १०८ गोस्वामी व्रजभूषण शर्मा लालजी महाराज, काँकरोली-नरेश ।

डाक्टर हीरालाल
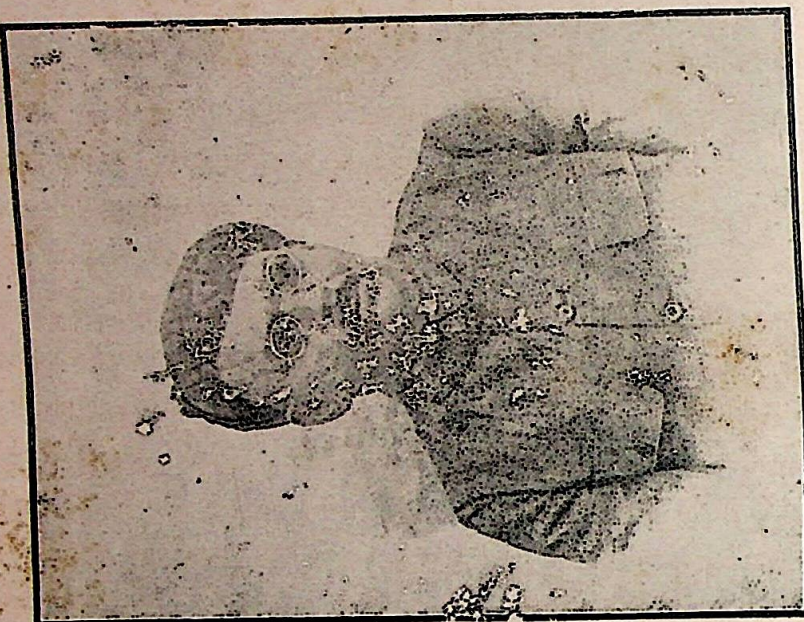
महामहोपाध्याय गौरीशंकर हीराचंद ओझा

आदि है। किसी भी लिपि में लिखा हुआ ग्रंथ क्यों न हो यदि उसकी भाषा हिंदी हो तो उसे शोध के अंतर्गत ले लेना चाहिए और उसका विवरण अवश्य प्रस्तुत करना चाहिए।

निर्माण का संवत्—कुछ ग्रंथ तो ऐसे मिलते हैं जिनमें निर्माण के संवत् का कुछ पता ही नहीं चलता। ऐसी दशा में उनके विवरण फार्मों के ये खानें खाली छोड़ देने होंगे और कुछ ऐसे होंगे जो सीधी-सादी भाषा में—"संवत् सोरह सौ असी, असी गंग के तीर। श्रावण शुक्ला सप्तमी, तुलसी तज्यो शरीर॥" इस प्रकार कह दिए गए होंगे। इनकी कोष्ठपूर्ति अन्वेषक सरलता से कर सकेंगे। इन दोनों नियमों के अतिरिक्त एक तीसरा और जटिल नियम संवतों के कथन का है और प्राय: वही कवि-संसार में प्रचलित है। उसमें गिनती के अंक शब्दों द्वारा कहे जाते हैं। ये शब्द अब अधिक प्रचलित हैं—० शून्य के लिये आकाश, गगन, १ के लिये शशि, इंदु, चंद्रमा आदि, २ के लिये पक्ष, नेत्र, नयनादि, ३ के लिये राम, ४ के लिये वेद, दिशा, ५ के लिये प्राण, ६ के लिये शास्त्र, ७ के लिये मुनि, ८ के लिये वसु और ९ के लिये ग्रह आदि। इन शब्दों की वामगति मानी जाती है अर्थात् ये संख्याएँ दाहिनी ओर से बाईं ओर को गिनी जाती हैं। उदाहरण के लिये "संवत् मुनि वसु ग्रह शशी, चैत्र कृष्ण दस-चार। दुख दै सबको चलि बसीं, बुधिमंती बुधवार॥" संवत् के शब्दों की दाहिनी ओर सबसे पिछला शब्द शशि है जिसका अर्थ १ है, इसके पश्चात् क्रमशः ग्रह, वसु और मुनि शब्द हैं जो ९, ८ तथा ७ के लिये प्रयुक्त होते हैं। अब इन अंकों को मिलाने से १९८७ निकला और मिती चैत्र वदी दस+चार=चौदस तथा वार बुधवार निकला। इसी प्रकार और भी समझ लेना चाहिए। कुछ उदाहरण इतस्ततः ऐसे भी उपलब्ध हो जाते हैं जिनमें इस सर्वमान्य नियम का उल्लंघन करके संवत् के अंकों की वामगति न लेकर सीधी ही गति मान ली जाती है। इसके लिये अपनी बुद्धि से पहचानना चाहिए। यथा—इसी ऊपर के दोहे को हम यों कह दें "संवत् शशि ग्रह वसु मुनी" तो इससे वामगति के नियम से ७८९१ संवत् निकलता है जो अनुमान से स्पष्ट ही अशुद्ध है और सीधा सादा हिसाब १९८७ ही ठीक है।

सूचना—संख्यावाची शब्दों की जानकारी के लिये एक पृथक् नकशा आगे दिया गया है। इससे कार्य चल सकता है। योग्यता के बढ़ाने के लिये ऐसे शब्दों को दूसरे स्थलों से भी एकत्र कर लेना चाहिए। कभी कभी फारसी के 'अब्जद हुत्ती' के तरीके से भी काम लिया जाता है, वहाँ 'ओनम' के अक्षरों की संख्याएँ मान ली गई हैं। ऐसी संख्याओं का संग्रह उर्दू की किसी बड़ा कवायद या व्याकरण में से किया जा सकता है।

विक्रम संवत् और सन् ईस्वी में ५७ वर्ष का अंतर है। संवत् की संख्या में से ५७ निकाल देने और सन् ईस्वी की संख्या में ५७ जोड़ देने से एक का दूसरे सन् में परिवर्तन हो जाता है। यथा—संवत् १९८८ वि०−५७=सन् १९३१ ई० और सन् १९३१ ई०+५७=१९८८ वि० संवत् हुआ। शक संवत् विक्रम संवत् से १३५ वर्ष बाद चला है इसलिये संवत् १९८८−१३५=१८५३ शाके ( शालिवाहन का संवत् ) हुआ।

हिजरी सन् मई के अंत अथवा जून के आदि से आरंभ होता है। उसके महीने क्रम से मुहर्रम, सफ्फर,

## संख्यासूचक शब्दों का नकशा

| ० | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १३ | १४ | १५ | १६ | १७ | १८ | १९ | २० |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| नभ | धरा | नेत्र | गुण | वेद | शर | ऋतु | मुनि | वसु | भूखंड | दोष | शिव | भानु | नदी | भुवन | तिथि | कला | १ व ७ के दो संकेत मिलकर | पुराण | १ व ९ के दो संकेत मिलकर | नख |
| | चंद्र | पक्ष | शिवनेत्र | आश्रम | पांडव | रस | समुद्र* | सिद्धि | अंक | दिशा | | राशि | परम भागवत | मनु | | संस्कार | | | | |
| | | भुज | राम | विधि मुख | इंद्रिय | राग | स्वर | योग | निधि | दशा | | भूषण | | रत्न | | शृंगार | | | | |
| | | अहिजिह्वा | ताप | युग | शिवमुख | अलिपद | गिरि | याम | ग्रह | अवतार | | मास | | विद्या | | | | | | |
| | | नदी तट | काल | वर्ण | रति | वेदांग | ताल | दिग्गज | भक्ति | | | | | | | | | | | |
| | | | | पाद | कन्या* | ईति | लोक | नाग | रंध्र | | | | | | | | | | | |
| | | | | अर्थ | भूत | शास्त्र | अश्व | | नाड़ी | | | | | | | | | | | |
| | | | | धाम | यज्ञ | गुहमुख | वार | | द्रव्य | | | | | | | | | | | |
| | | | | | गव्य | कार्तिकेय | पुरी | | | | | | | | | | | | | |
| | | | | | प्राण | | गोत्र | | | | | | | | | | | | | |
| | | | | | वर्ग | | | | | | | | | | | | | | | |

इन संख्या संकेतों के बदले इनके पर्यायवाची शब्द लिखने में भी दोष नहीं है। जैसे, चंद्र के बदले इंदु, भानु के बदले रवि, इंद्रिय के बदले गो इत्यादि। लोक सात हैं, लौकिक व्यवहार में तीन माने जाते हैं, पर काव्य में बहुधा ७ ही लेते हैं।

* संस्कृत साहित्य में समुद्र की ४ संख्या मानी जाती है।

* पुराण के अनुसार वे पाँच स्त्रियाँ जो बहुत पवित्र मानी गई हैं—अहिल्या, द्रौपदी, कुंती, तारा, मंदोदरी।

रबीउलअव्वल, रबीउलआखिर, जमादिउलअव्वल, जमादिउलआखिर, रजब, शाबान, रमजान, शव्वाल, जिलकाद और जिलहिज हैं। साधारणतया सन् ईस्वी में से ५८१ या ५८२ निकाल देने से हिजरी सन् ज्ञात हो जाता है। यदि जून से आगे के महीने हों तो सन् ईस्वी में से ५८२ और यदि उससे पिछले महीने हों तो ५८१ निकालना चाहिए।

इसी प्रकार सन् ईस्वी में से ५९३ या ५९४ निकाल देने से सन् फसली निकल आता है। सन् फसली सितंबर की किसी तारीख से बदलता है।

उपर्युक्त रीति से साधारण कार्य चल सकता है। तिथि-वार का ठीक निर्णय नहीं हो सकता। अधिक शुद्ध ज्ञान के लिये सन्-संवतों के रूपांतर का विवरण किसी प्रामाणिक ग्रंथ में देखकर समझ लेना चाहिए।

प्रत्येक प्रकार के संवत् का रूपांतर उसके आगे अँगरेजी सनों में लिख देना उचित है।

निर्माण के संबंध का दोहा या तो ग्रंथारंभ में होता है या ग्रंथ के अंत में होता है। कभी कभी ग्रंथ का रचयिता और लिपिकर्त्ता एक ही व्यक्ति होता है। ऐसी अवस्था में उसका दिया हुआ एक ही सन् लिपि-काल और रचनाकाल दोनों का काम दे जाता है।

**ग्रंथ का लिपि-काल**—यह ग्रंथ के अंत में बहुधा अंकों या संख्याओं में ही लिखा जाता है, वहाँ से उद्धृत करके इस कोष्ठ की पूर्ति कर देनी चाहिए। यदि कहीं दोहे आदि में लिपिकाल दिया गया हो तो निर्माण-काल के कोष्ठ की पूर्ति के लिये बनाए नियमों से काम लेना चाहिए। यदि अंत में लिपिकाल न दिया हो तो खाना खाली छोड़ देना चाहिए।

**कहाँ वर्तमान है**—इस कोष्ठ में ग्रंथ के स्वामी का पूरा पता स्थान पोस्ट आफिस तथा जिले आदि सहित लिखना चाहिए जिसमें आवश्यकतानुसार प्रत्येक व्यक्ति उससे पत्र व्यवहार कर सके।

**प्रारंभ**—इस कोष्ठ में ग्रंथ के आदि का कुछ भाग 'श्रीगणेशाय नमः' आदि से लेकर जितना आ सके उद्धृत करके नमूने के लिये यहाँ रखना चाहिए। प्रतिलिपि अविकल रूप से, ज्यों की त्यों होनी चाहिए। यदि आदि का भाग लुप्त हो गया हो तो जहाँ से प्राप्त ग्रंथ का आदि है वहीं से कुछ अंश नकल करके यहाँ लिखना चाहिए। आदि के अंश सब यथावत् उद्धृत करने के पश्चात् अन्यावश्यक अंग छोड़कर और उनके स्थानों पर × × × ऐसे चिह्न देकर आगे के आवश्यक अंग निर्माणकाल का दोहा, कवि-वंश-परिचय अथवा कवि के अभिभावक का परिचय आदि अवश्य उद्धृत करना चाहिए।

**मध्य भाग**—खाली छोड़ देना चाहिए।

**अंत**—अंत के भाग का उतना अंश जितना इस कोष्ठ में आ सके उद्धृत कर देना चाहिए। किंतु ऐसा न करना चाहिए जिससे अभिप्राय ही उलट जाय। यदि अर्थ स्पष्टता के निमित्त कुछ अधिक अंश उद्धृत करना आवश्यक हो तो अवश्य कर देना चाहिए इसके लिये और कागज जोड़ देने में भी कुछ हानि न होगी। इस कोष्ठ की पूर्ति के लिये 'प्रारंभ' के कोष्ठ में कथित सभी बातों पर ध्यान देना आवश्यक है।

**विषय ( पूर्ण विवरण सहित प्रारंभ से अंत तक )**—यदि एक ग्रंथ खोज में कई बार मिल चुका हो तो उसका मोटा भेद जैसे नायिका-भेद, पिङ्गल और व्याकरण आदि शब्द लिखना ही पर्याप्त होगा। यदि ग्रंथ नवीन हो तो पृष्ठों की गणना के अनुसार 'अमुक पृष्ठ से अमुक पृष्ठ तक-अमुक विषय' इस प्रकार प्रत्येक विषय की एक छोटी सूची अंकित कर

देनी चाहिए। एक ही विषय पर लिखे अनेक ग्रंथों की विषय-सूची में जहाँ अंतर हो वहाँ वह अवश्य दिखला देना चाहिए। अन्यथा विषय को अधिक विस्तृत बनाने की आवश्यकता नहीं है। विषय के खाने में इतिहास संबंधी बातें यथावत् उद्धृत करनी आवश्यक हैं। यदि किसी विषय पर लिखे ग्रंथ में कोई बात बिलकुल नवीन ढंग पर लिखी हो तो उसको विषय के खाने में सूची के अंतर्गत अवश्य लाना चाहिए और अंतिम नोट में भी उसका दिग्दर्शन करा देना उचित है।

नोट—यह फॉर्म का अंतिम और आवश्यक कोष्ठ है। इस कोष्ठ की पूर्ति से भी रिपोर्ट का गहरा और घनिष्ठ संबंध है। इसमें ग्रंथकार और उसके आश्रय-दाता के संबंध में ग्रंथ से अथवा तहकीकात से जो नवीन बातें ज्ञात हों उन्हें संक्षिप्त रीति से नोट कर देना चाहिए, किंतु अपनी इस जानकारी का कारण (आधार) अवश्य बताना चाहिए, जिससे रिपोर्ट-लेखकों को किसी भी प्रकार का संदेह न रह जाय। इसी नोट में ग्रंथ की रचना और उसकी शैली पर अन्वेषक के विचार भी लिखे जाते हैं। ग्रंथ की विशेषताएँ विशेष कर इसी कोष्ठ में स्पष्ट रूप से प्रकट करनी चाहिएँ। एक ही विषय के अन्य लेखकों और प्रस्तुत लेखक के उसी विषय के इस ग्रंथ में क्या अंतर है इस बात को भी नोट में अवश्य लाना चाहिए।

सूचना—यदि ऊपर बताई हुई बातों में से कुछ का पता न चले और कुछ ऐसी साधारण हों, जिनके लिखने से रिपोर्ट पर कोई प्रकाश न पड़े, केवल कोष्ठ-पूर्ति का नियम-निर्वाह या पिष्ट-पेषण मात्र ही होता हो तो इस कोष्ठ को भरने की कोई आवश्यकता नहीं है, उसे खाली छोड़कर अन्वेषक को अपने हस्ताक्षर कर देना चाहिए। हस्ताक्षरों की बाईं ओर, जहाँ बैठ कर नोट किया है उस स्थान का नाम और उसके नीचे नोटिस लेने की तारीख भी डाल देनी चाहिए।

इस अंतिम कोष्ठ के भरने के लिये ग्रंथ का आद्यो-पांत अध्ययन करना आवश्यक है। पर यह साधारण अध्ययन होता है। आवश्यक अंगों को सरसरी दृष्टि से देखते हुए उल्लेख्य विषयों को नोट करते जाना चाहिए।

प्राचीन लिपियों का अध्ययन भी अन्वेषकों को पहले ही कर लेना परमावश्यक है, क्योंकि हस्तलिखित ग्रंथों में प्रायः बहुत से अक्षरों के प्राचीन रूपों का व्यवहार हुआ है। कैथी लिपि नवीन और प्राचीन लिपियों के मध्य की एक मिश्रित लिपि है, जिसमें मात्राओं का यथावत् उपयोग आवश्यक नहीं समझा जाता है। अन्वेषकों को इसका ज्ञान भी पहले ही प्राप्त कर लेना चाहिए। यह लिपि भी बहुधा प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों में व्यवहृत हुई है।

## अन्वेषण संबंधी अन्य कागज-पत्र

अन्वेषक को सभा के कार्यालय से छपे हुए (१) नोटिस फार्म, (२) डायरी, (३) मासिक सूची और (४) बिल फार्म दिए जाते हैं। उनमें से नोटिस फार्म भरने के सभी नियम ऊपर लिखे जा चुके हैं, शेष के नियम इस प्रकार हैं—

डायरी—इसमें तारीख और कार्य-विवरण आदि के खाने बने रहते हैं, उनकी पूर्ति नियमानुसार होनी चाहिए। पहले खाने में तारीख व दिन और दूसरे में कहाँ हो, अथवा कहाँ से कहाँ को जाते हो, इसका विवरण दूरी सहित लिखना चाहिए। दूसरे

खाने के 'स्थान' शब्द के आगे खाली जगह में खड़ी लकीर से दो खाने बनाकर पहले खाने में नोटिस लिए हुए ग्रंथ की पृष्ठसंख्या तथा दूसरे में श्लोक-संख्या लिखनी चाहिए। अगले खाने में दैनिक कार्य प्रतिदिन भरना चाहिए। पृष्ठ के नीचे लकीर खींचकर योग और अगले पृष्ठ को प्रारंभ करने से पूर्व एक लकीर खींचकर पिछले पृष्ठ का योग लिख देना चाहिए फिर पृष्ठ को पूरा करके, उसके नीचे पृष्ठयोग और सबसे नीचे संपूर्ण योग लिखना चाहिए।

सूची—इसमें जो खाने बने रहते हैं उनमें खोज में प्राप्त ग्रंथों की नामावली अंकित की जाती है। 'विशेष' के खाने में पृष्ठों की संख्या और श्लोकों का परिमाण लिखा जाता है और महीना पूरा हो जाने पर नीचे सब कार्य का योग लिख दिया जाता है। इसी की क्रमसंख्या 'नोटिस' के शीर्षक में लिखी जाती है।

बिल फार्म—यह महीने की समाप्ति पर भरा जाता है। इसमें पहले मासिक वेतन, फिर खुश्की का मार्गव्यय, तथा रेल का मार्गव्यय विवरण सहित लिखकर डाकव्यय लिखना चाहिए और उसके पीछे अन्य व्यय, स्टेशनरी इत्यादि अंकित करके नीचे योग रखकर हस्ताक्षर कर देना चाहिए। नीचे 'रुपया पानेवाले का हस्ताक्षर' वाले खाने में -) एक आने का रसीदी टिकट लगाकर उस पर हस्ताक्षर कर देना चाहिए।

इसके अतिरिक्त अगले मास का प्रोग्राम भी, जो आनुमानिक होता है, बनाया जाता है। इसमें तारीख-वार यह दिखाया जाता है कि अन्वेषक किस दिन व किस तारीख को कहाँ होंगे। गमनागमन के स्थानों का फासला भी इस प्रोग्राम में लिखना चाहिए।

जिस प्रांत में खोज का कार्य हो, उसका एक प्रचलित भूगोल तथा छपा नकशा बाजार से खरीद कर अन्वेषक को प्रोग्राम की जाँच के लिये सभा के कार्यालय में भेज देना चाहिए।

---

## ६—अदालतों में नागरी

भारतेंदु हरिश्चंद्र और स्वामी दयानंद सरस्वती ने हिंदी को राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन कराने के उद्योग का जो सूत्रपात किया था उनकी मृत्यु के ८-१० वर्ष बाद उसी सूत्र को पकड़कर काशी नागरीप्रचारिणी सभा ने अपना कार्य आरंभ किया। जैसा कि ऊपर बतलाया जा चुका है, नागरी-प्रचार के उद्देश्य से ही इस सभा की स्थापना की गई थी और प्रथम वर्ष से ही इसके प्रत्येक पहलू पर सभा ने ध्यान देना आरंभ कर दिया था। उन दिनों भारत में लार्ड मेकाले की योजना के अनुसार भारतीयों को अँगरेजी की शिक्षा देने के लिये स्कूल और कालेज खुल चुके थे। प्राइमरी शिक्षा के लिये भी प्रयत्न आरंभ हो गए थे। सर सैयद अहमद खाँ का आरंभ किया हुआ हिंदी-उर्दू संघर्ष जारी था। मुसलमानी राज्य के बाद अँगरेजों के समय में सन् १८३७ तक अदालतों का भाषा फारसी थी। सन् १८३७ में अँगरेजी सरकार ने फारसी को सर्वसाधारण के लिये दुरूह मानकर देशी-भाषा जारी करने की आज्ञा दी जिसके फलस्वरूप बंगाल में बंगाली, उड़ीसा में उड़िया, गुजरात में गुजराती और महाराष्ट्र में मराठी में काम होने लगा। संयुक्तप्रांत, बिहार और मध्य प्रदेश में 'हिंदुस्तानी' जारी की गई। परंतु उस समय अँगरेज हाकिमों को अदालती अमलों ने अपनी सुविधा और स्वार्थ-सिद्धि के लिये यह समझा दिया कि उर्दू ही हिंदुस्तानी है और इस प्रकार इन प्रांतों में उर्दू अदालती भाषा हो गई। प्रयत्न करने पर बिहार और मध्य प्रदेश की सरकारों ने सन् १८८१ में इस भ्रम को समझा और अपने यहाँ उर्दू के स्थान पर हिंदी प्रचलित की। पर संयुक्त प्रांत की सरकार ने इस ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। नागरी-प्रचार के अन्य कार्यों के साथ सभा का ध्यान इस ओर भी गया और उसने इसके लिये उद्योग आरंभ कर दिया। जिस वर्ष सभा की स्थापना हुई, उसी वर्ष काशी में कायस्थ कान्फ्रेंस का वार्षिक अधिवेशन हुआ था। यह सोचकर कि कायस्थ जाति के लोग ही अधिकतर दफ्तरों में लिखने पढ़ने का काम करते हैं और इनमें हिंदी का प्रचार होने से हिंदी को बहुत शक्ति मिलेगी, सभा ने नियमानुसार अनुमति लेकर उक्त कान्फ्रेंस में अपना प्रतिनिधि-मंडल भेजा और यह प्रस्ताव किया कि कान्फ्रेंस यदि सभा का यह प्रस्ताव स्वीकार करे कि कायस्थ बालक की प्रारंभिक शिक्षा हिंदी में हो तो सभा परीक्षा में सर्वप्रथम आनेवाले बालक को एक 'भारतजीवन घड़ी' प्रतिवर्ष उपहार देगी। कान्फ्रेंस ने सभा का प्रस्ताव सहर्ष स्वीकार कर लिया। इस विषय में सभा का यह प्रथम उद्योग था। इसके बाद अगले वर्ष उसने 'प्रांतीय बोर्ड आव् रेवेन्यू' का ध्यान इस बात की ओर आकृष्ट किया कि सन् १८७५ और १८८१ के क्रमशः १६वें और १२वें विधानों के अनुसार 'समन' आदि हिंदी और उर्दू दोनों में भरे जाने चाहिएँ। परंतु इस नियम का पालन नहीं होता और केवल उर्दू का ही प्रयोग किया जाता है। सभा ने बोर्ड से अनुरोध किया कि वह इन

नियमों का पालन कराने की पूरी चेष्टा करे। दो वर्ष तक इसका कोई उत्तर नहीं मिला। अतः प्रांतीय सरकार के पास निवेदनपत्र भेजा गया। उसी वर्ष सन् १८६४ के नवंबर मास ( सं० १६५१ ) में प्रांतीय गवर्नर के काशी आने की सूचना पाकर सभा ने उनको अभिनंदनपत्र देने का निश्चय किया। किंतु सरकारी अधिकारियों की असावधानी से अभिनंदनपत्र उपस्थित करने का अवसर सभा को न मिला और डाक द्वारा वह गवर्नर महोदय की सेवा में भेजना पड़ा। इसमें हिंदी-भाषा के साथ न्याय करने और सभा की उद्देश्य-पूर्त्ति में सहायता करने की प्रार्थना की गई थी। गवर्नर की ओर से उनके प्राइवेट सेक्रेटरी ने इसका जो उत्तर भेजा था उसका आशय था कि

"गवर्नर महोदय ने अभिनंदनपत्र रुचिपूर्वक पढ़ा। इसमें जिस मुख्य प्रश्न की चर्चा की गई है अर्थात् अदालती भाषा उर्दू की जगह हिंदी कर दी जाय, उस पर गवर्नर महोदय अपनी कोई सम्मति अभी प्रकट नहीं कर सकते। फिर भी वे यह अवश्य स्वीकार करते हैं कि सभा की प्रार्थना ध्यानपूर्वक विचार करने योग्य है और वे भविष्य में समुचित अवसर पर उस पर अवश्य विचार करेंगे।"

इन्हीं दिनों रोमन-लिपि को दफ्तर की लिपि बनाने का भी कुछ प्रयत्न आरंभ हुआ था। इस पर सभा ने अपने ६ भाद्रपद, सं० १६५२ ( २५ अगस्त, १८६५ ) के निश्चयानुसार नागरी लिपि और रोमन अक्षरों के विषय में एक पुस्तिका तैयार करके अँगरेजी में प्रकाशित की और सरकारी पदाधिकारियों तथा जनता में इसकी कई सौ प्रतियाँ वितरित कराईं। यह पुस्तिका श्री श्यामसुंदरदास ने तैयार की थी और मुजफ्फरपुर के जमींदार श्री परमेश्वरनारायण मेहता और श्री विश्वनाथप्रसाद मेहता की आर्थिक सहायता से छापी गई थी। इसमें अनेक उदाहरणों और प्रमाणों से सिद्ध किया गया था कि शुद्धता, सरलता और उपयोगिता की दृष्टि से यहाँ की अदालतों के लिये नागरी-लिपि ही सर्वोत्तम है। इस पुस्तिका की एक प्रति आज भी सभा-कार्यालय में सुरक्षित है। इस उद्योग का फल यह हुआ कि 'बोर्ड आव् रेवेन्यू' विषयक सभा की प्रार्थना सरकार ने स्वीकार कर ली और अपने २० अगस्त, १८६६ के पत्र में प्रांतीय सरकार ने सभा को बताया कि सब जिलों के अधिकारियों को सूचना* दे दी गई है कि 'बोर्ड आव् रेवेन्यू' के 'समन' आदि सब कागज हिंदी में भी जारी किए जायँ। इस सफलता से उत्साहित होकर इस कार्य को और अधिक आगे बढ़ाने के उद्देश्य से श्री जगन्नाथप्रसाद मेहता के प्रस्ताव पर सभा ने अपने १८ श्रावण, १६५३ वि० (३ अगस्त, १८६६) के अधिवेशन में निश्चय किया कि प्रांतीय गवर्नर की सेवा में प्रतिनिधि-मंडल भेजकर निवेदन-पत्र ( मेमोरियल ) उपस्थित किया जाय जिसमें प्रार्थना की जाय कि संयुक्त प्रांत के राजकीय कार्यालयों में देवनागरी लिपि को स्थान दिया जाय। इस उद्देश्य की सिद्धि के लिये उपसमिति भी संघटित की गई जिसके सदस्य सर्वश्री रायबहादुर लक्ष्मीशंकर मिश्र, जगदेवप्रसाद गौड़, जगन्नाथप्रसाद मेहता, राधाकृष्णदास, देवकीनंदन खत्री, श्यामसुंदरदास, डाक्टर छन्नूलाल और कार्त्तिकप्रसाद खत्री चुने गए। श्री जगन्नाथप्रसाद मेहता को इस उपसमिति का मंत्री बनाया गया।

---

* सर्कुलर लेटर नं० $\frac{४}{II-३६३}$ आव् १८६६ डेटेड १५ सितंबर १८६६।

इस कार्य के लिये सभा ने अपने कोश से ५०) देना भी स्वीकार किया और वहाँ उपस्थित सदस्यों ने जो कुछ आर्थिक सहायता देने का वचन दिया वह इस प्रकार थी—सर्वश्री जगन्नाथप्रसाद मेहता १०), राधाकृष्णदास १०), डाक्टर छन्नूलाल २०), जगदेवप्रसाद गौड़ १०), रामशंकर व्यास १०), लक्ष्मीशंकर मिश्र २०), श्यामसुंदरदास ५), देवकीनंदन खत्री १०), सुदर्शनदास ४), बिहारीलाल ५) और गिरिजाप्रसाद २)।

इस निश्चय के अनुसार उपसमिति ने अपना कार्य आरंभ कर दिया। उसने अपने प्रतिनिधि मिर्जापुर, गाजीपुर, बलिया, गोरखपुर, गोंडा, बहराइच, बस्ती, फैजाबाद, लखनऊ, कानपुर, बिजनौर, इटावा, मेरठ, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, झाँसी, ललितपुर, जालौन आदि नगरों में मेमोरियल पर जनता के हस्ताक्षर कराने और उसमें नागरी-प्रेम उत्पन्न करने के लिये भेजे, जिन्होंने साठ हजार के लगभग हस्ताक्षर कराए। स्वयं श्री राधाकृष्णदास मेरठ और मुजफ्फरनगर गए जहाँ मेरठ की देवनागरीप्रचारिणी सभा ने उनकी बहुत सहायता की। श्री श्यामसुंदरदास भी इलाहाबाद और लखनऊ तक गए। सभा के इस उद्योग में महामना श्री मदनमोहन मालवीय ने, जो उस समय इलाहाबाद हाईकोर्ट में वकालत करते थे, बहुत परिश्रम किया था। सबसे बड़ा काम जो उन्होंने इस विषय में किया वह उनका 'कोर्ट करैक्टर एंड प्राइमरी एजुकेशन' नामक एक बड़ा निबंध है जिसे उन्होंने दो वर्ष के परिश्रम से तैयार किया था। इसकी तैयारी में उनको सबसे अधिक सहायता रेवेन्यू आफिस के श्री श्रीकृष्ण जोशी से मिली थी। यह निबंध फुलिस्केप आकार के एक सौ पृष्ठों में इंडियन प्रेस ने सन् १८९७ में छापा था। हिंदी में इसका सारांश श्री श्यामसुंदरदास ने प्रस्तुत किया था जो सन् १८९८ में नागरीप्रचारिणी पत्रिका के दूसरे भाग में प्रकाशित हुआ था। श्री राधाकृष्णदास ने भी "मुसलमानी दफ्तरों में हिंदी" शीर्षक एक महत्त्वपूर्ण लेख लिखा था जो पत्रिका के उक्त भाग में ही छपा था। उक्त सारांश और यह लेख दोनों परिशिष्ट में दिए गए हैं।

प्रतिनिधि-मंडल में जिन महानुभावों ने संमिलित होना स्वीकार किया था उनके नाम इस प्रकार हैं—

( १ ) सर्वश्री महाराज सर प्रतापनारायण सिंह बहादुर के० सी० आई० ई० ( अयोध्या ),
( २ ) राजा रामप्रताप सिंह बहादुर, माँडा, (इलाहाबाद),
( ३ ) राजा बलवंत सिंह, बहादुर, सी० आई० ई०, आवागढ़ ( एटा ),
( ४ ) राजा घनश्याम सिंह—मुरसान ( अलीगढ़ ),
( ५ ) आनरेबल राजा रामपाल सिंह, मेम्बर लेजिसलेटिव कौंसिल, रामपुर ( प्रतापगढ़ ),
( ६ ) राजा सेठ लक्ष्मणदास सी० आई० ई० (मथुरा),
( ७ ) राय सिद्धेश्वरीप्रसाद नारायण सिंह बहादुर, सलेमगढ़, ( गोरखपुर ),
( ८ ) राय कुँवर हरचरन मिश्र बहादुर ( बरेली ),
( ९ ) राय कृष्णसहाय बहादुर, सभापति देवनागरीप्रचारिणी सभा, ( मेरठ ),
( १० ) राय निहालचंद बहादुर, ( मुजफ्फरनगर ),
( ११ ) आनरेबल राय श्रीराम बहादुर एम० ए०, बी० एल०, एडवोकेट अवध, मेंबर प्रांतिक लेजिसलेटिव कौंसिल तथा फेलो इलाहाबाद युनिवर्सिटी, ( लखनऊ ),
( १२ ) राय प्रमदादास मित्र बहादुर, फेलो इलाहाबाद युनिवर्सिटी, ( काशी ),

( १३ ) माननीय सेठ रघुबरदयाल, सदस्य प्रांतिक लेजिसलेटिव कौंसिल, सीतापुर।

( १४ ) मुंशी माधोलाल, रईस, काशी।

( १५ ) मुंशी रामप्रसाद एडवोकेट हाईकोर्ट तथा सभापति कायस्थ पाठशाला कमेटी, इलाहाबाद।

( १६ ) पंडित सुंदरलाल, बी० ए०, एडवोकेट हाईकोर्ट तथा फेलो इलाहाबाद युनिवर्सिटी, इलाहाबाद।

( १७ ) पंडित मदनमोहन मालवीय, बी० ए०, एल्-एल० बी०, वकील हाईकोर्ट तथा प्रतिनिधि काशी-नागरीप्रचारिणी सभा, इलाहाबाद।

किंतु इनमें से संख्या १,५,६,८ के चार सज्जन समय पर नहीं आ सके। इन्होंने पत्र और तार द्वारा अपनी सहानुभूति प्रकट की थी।

इस प्रकार सब तैयारी करके इस प्रतिनिधि-मंडल ने १८ फाल्गुन सं० १९५४ (२ मार्च, १८९८) बृहस्पतिवार को १२ बजे इलाहाबाद के गवर्नमेंट हाउस में संयुक्त प्रांत की प्रजा की ओर से प्रांत के गवर्नर सर ऐंटानो मेकडानेल से मिलकर उनके संमुख साठ हजार हस्ताक्षरों की सोलह जिल्दों तथा मालवीयजी के 'कोर्ट करैक्टर ऐंड प्राइमरी एजुकेशन' की एक प्रति के साथ निवेदनपत्र उपस्थित किया। गवर्नर महोदय ने विशेष ध्यान देकर निवेदन-पत्र सुना और उसके विषय में कुछ आवश्यक प्रश्नोत्तर के पश्चात् उसका उत्तर दिया। इस निवेदनपत्र और गवर्नर के उत्तर का हिंदी-अनुवाद सभा ने उसी वर्ष पुस्तिका के रूप में छपवाकर प्रकाशित किया था। वही अनुवाद ज्यों का त्यों यहाँ उद्धृत किया जाता है—



## निवेदन-पत्र

"ऑनरेबल सर ऐंटोनी पैट्रिक म्यांकडोनेल, जी० सी० एस० आई०, सी० आई० ई०, लेफ्टिनेंट गवर्नर पश्चिमोत्तर प्रदेश और चीफ कमिश्नर अवध की सेवा में हम सब पश्चिमोत्तर प्रदेश और अवध के रहनेवाले जिनके हस्ताक्षर नीचे हैं बहुत ही नम्रता के साथ एक ऐसे काम के लिये बिनती करते हैं कि जिससे इन प्रांतों की प्रजा के न्याय, प्रबंध और उनकी प्रायमरी शिक्षा की उन्नति के साथ घना संबंध है अर्थात् सर्कारी दफ्तरों और अदालतों में सब कागजों और बहसों के लिखने के लिये नागरी अक्षरों का जारी किया जाना। इस बात को साठ वर्ष से अधिक हुआ जब अँगरेजी गवर्नमेंट ने यह मानकर कि दिवानी और कलेक्टरी कचहरियों की कार्रवाइयों का उसी भाषा में लिखा जाना ठीक और उचित है जिसे मुकदमे के दोनों पक्षवाले और साधारण प्रजा अच्छी तरह से जानती हो, यह आज्ञा दी कि अलग अलग प्रांतों में फारसी के बदले जिसमें मुसलमानों के राज्य के समय से सब काररवाइयाँ होती थीं, वहीं की देशभाषा बरती जाय। उस आज्ञा के अनुसार सन् १८३९ ई० में बंगाल में बँगला और उड़ीसा में उड़िया भाषाएँ जारी की गईं पर हिंदुस्तान में जहाँ की भाषा हिंदी थी और जो नागरी अक्षरों या उसके दूसरे रूपों में लिखी जाती थी और जो अब तक है, फारसी के बदले उर्दू भाषा जो फारसी अक्षरों में लिखी जाती थी यह समझकर कि वह हिंदुस्तान की देशभाषा है जारी की गई। श्रीमान् को यह बात अच्छी तरह स्मरण होगी कि बिहार में इस भूल का सुधार सन् १८८१ ई० में किया गया। तब से वहाँ अदालतों की कार्रवाइयों के केवल

नागरी वा कैथी अक्षरों में लिखे जाने की आज्ञा दी गई और मध्यप्रदेश में भी उसी वर्ष अदालतों में हिंदी भाषा और नागरी अक्षरों के बरते जाने की ताकीदी आज्ञा दी गई। हम लोग नम्रता के साथ बिनती करते हैं कि जिन कारणों से उन प्रांतों में यह सुधार आवश्यक हुआ वही कारण यहाँ भी वर्तमान हैं।

"पश्चिमोत्तर प्रदेश की सदर दिवानी अदालत ने फारसी के बदले देशभाषा के जारी होने की आज्ञा देते समय लिखा था कि 'बहस और कार्रवाइएँ बहुत ही सीधी और समझ में आने योग्य उर्दू में वा हिंदी में जहाँ वह बोली जारी हो लिखी जायँ।' हिंदी के व्यवहार के विषय पर जो आज्ञा दी गई उसकी ओर बिलकुल ध्यान नहीं दिया गया और बार बार फारसी और अर्बी के कठिन शब्दों और वाक्यों को अदालती कागजों में व्यर्थ मिलावट को रोकने और ऐसी भाषा के काम में लाई जाने के लिये जो साधारण बोलचाल से मिलती हुई हो आज्ञाएँ जारी की गईं। पर उन आज्ञाओं के वर्तमान रहते हुए भी ऐसे शब्दों और वाक्यों का बर्ताव अब तक अदालती कार्रवाइयों में इतना अधिक जारी है कि वे लोग जिनका सब कुछ उनपर निर्भर है उनका एक अक्षर भी नहीं समझ सकते। इसका कारण हम लोगों के विचार में देशभाषा का फारसी अक्षरों में लिखा जाना है। इस देश के अक्षर नागरी के बरते जाने से ऐसी कार्रवाई को रोकने में पूरी पूरी सफलता होगी और अंत में वे सब फारसी और अरबी के शब्द छूट जायँगे जो कि लोगों की बोलचाल में नहीं मिल गए हैं।

"नागरी अक्षरों का जारी करना और भी आवश्यक इसलिये है कि वे आशाएँ पूरी तरह से प्राप्त हों जिनके लिये फारसी के बदले देशभाषा जारी की गई अर्थात् कचहरियों की कार्रवाई ऐसी भाषा में लिखी जाय कि जिसे सर्वसाधारण पढ़ और समझ सकें। यह उद्देश्य तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक देशी भाषा ऐसे विदेशी अक्षरों में लिखी जायगी जिन्हें साधारण लोगों से सीखने की न आशा की जा सकती है और न वे सीखने के लिये बाध्य किए जा सकते हैं। फारसी अक्षरों के इन प्रांतों की कचहरियों में कई सौ वर्षों तक जारी रहने पर भी उनकी जानकारी अब तक बहुत थोड़े लोगों में ही रही। जो लोग फारसी में लिखे अर्जीदावों, दर्खास्तों और दूसरे अदालती कागजों पर दस्तखत और उन्हें तसदीक करते हैं उनमें से अधिकांश लोग उनमें क्या लिखा है कुछ नहीं पढ़ सकते और जब उन ( फारसी ) अक्षरों में समन आदि जारी किए जाते हैं तब उनमें से प्रायः लोगों को जिनके लिये वे निकाले जाते हैं, उनका आशय समझने के लिये बहुत कष्ट और व्यय उठाना पड़ता है।

"फारसी अक्षरों के विदेशी होने और लोगों में बहुत मिल जुल न जाने के अतिरिक्त उनमें स्वाभाविक दोष ऐसे हैं कि जिनके कारण उन अक्षरों में साधारण लोगों का काम नहीं चल सकता। जिस रूप में वे अदालतों में बरते जाते हैं सर मोनियर विलियम्स के कथनानुसार वे 'इतने संक्षेप से लिखे जाते हैं कि उनका पढ़ना बड़ा ही कठिन है'। उनका पढ़ना केवल कठिन ही नहीं है वरन् शिकस्ता में लिखे हुए शब्दों और वाक्यों के ठीक ठीक पढ़ने में अदालतों में प्रायः संदेह और झगड़े पैदा होते हैं। यह कहना ठीक नहीं है कि ऐसे मुकद्दमों का फैसला ठीक ठीक होता है, पर यदि

उन्हें ठीक मान भी लिया जाय तो न उस कष्ट और व्यय का कोई बदला हो सकता है जो सच्चे लोगों को अपना स्वत्व प्रमाणित करने अथवा अपनी जवाबदेही पूरी करने में उठाना पड़ता है और न कोई उचित कारण साधारण लोगों के समय और रुपये की बर्बादी का ही है जो कचहरियों की कार्रवाइयों के ऐसे दोषपूरित अक्षरों में लिखे जाने से होती है। 'नुकतों और जेर जबर पेश आदि के निशानों के न रहने के कारण जो साधारणत: लिखावट में बहुत करके छोड़ दिए जाते हैं, दो शब्द जिनका एक अक्षर भी एक दूसरे में नहीं है और जिनका उच्चारण नाम लेने को भी नहीं मिलता, कागज पर ठीक एक दूसरे से आकार में मिल जाँयगे। आवश्यक कागजों के लिखने के लिये इससे बुरे दूसरे अक्षरों की कल्पना नहीं की जा सकती।' ( १० जुलाई सन् १८७३ ई० का पायनियर )। नागरी अक्षरों की बनावट उच्चारण के अनुसार है इसलिये इनमें वे सब दोष नहीं हैं जिनका वर्णन ऊपर किया गया है और बड़े बड़े भाषा तत्त्ववेत्ताओं ने इनको 'सब अक्षरों से पूर्ण और सुडौल' कहा है। 'एक बेर जहाँ ये लिखे गए कि छपे हुए के बराबर हो जाते हैं यहाँ तक कि इनमें लिखे हुए एक वाक्य को एक ऐसा मनुष्य जिसे उसके अर्थ का जरा सा भी बोध नहीं है ठीक ठीक पढ़ लेगा।' ( १० जुलाई सन् १८७३ ई० का पायनियर )। सबसे बढ़कर यह बात है कि इन अक्षरों को इस देश के रहनेवाले अच्छी तरह जानते हैं।

"नागरी अक्षरों के विरुद्ध जो कभी कभी कहा जाता है वह केवल यह है कि ये शिकस्ता के बराबर शीघ्र नहीं लिखे जा सकते। जो यह मान भी लिया जाय कि ऐसा होता है तो जो समय शिकस्ता के लिखने में बचता है उससे अधिक समय उसके पढ़ने में लग जाता है और नागरी अक्षरों के लिखने में जो समय अधिक लगेगा वह उसके सहज में और बिना किसी संदेह से पढ़ने के बराबर हो जायगा। नागरी अक्षर कमाऊँ आदि स्थानों की और मध्य प्रदेश की अदालतों में बहुत दिनों से जारी हैं और इसमें कोई संदेह नहीं है कि इन अक्षरों में उतनी शीघ्रता और उतने सहज में काम चल जाता है जितने की आवश्यकता है।

"हम लोग यह विनती इसलिये और करते हैं क्योंकि प्रायमरी शिक्षा की भलाई के लिये कचहरियों और दफ़्तरों में फारसी के बदले में नागरी अक्षरों का जारी किया जाना बहुत आवश्यक है। बहुत दिनों से यह बात स्थिर हो चुकी है कि साधारण प्रजा अपनी मातृभाषा के द्वारा ही पढ़ाई जा सकती है और इसमें कोई संदेह नहीं है कि इन प्रांतों में वह भाषा हिंदी है जो नागरी अक्षरों में लिखी जाती है। देशी भाषा और अक्षरों की जानकारी की चाह होने के लिये यह आवश्यक है कि वह लाभकारी और प्रतिष्ठित हो। केवल विद्या की चाह जैसा कि एजुकेशन कमिशन ने कहा है किसी देश में उसकी उन्नति के लिये उचित उत्साह का कारण नहीं हुई है। पबलिक कामों में अपने अक्षरों में लिखी हुई मातृभाषा के जारी होने से उसका पढ़ना लाभकारी हो जाता है और इसी लिये लोगों को उसके सीखने में उत्साह होता है। उन स्थानों में जहाँ ऐसा किया गया है, अर्थात् बंबई, मद्रास, बंगाल, बिहार और मध्य-प्रदेश में प्रायमरी शिक्षा की बहुत अधिक उन्नति हुई है, पर उन स्थानों में जहाँ की कचहरियों में विदेशी भाषा या देशी भाषा और विदेशी अक्षरों से काम चलता है जैसा कि पश्चिमोत्तर

प्रदेश और पंजाब में होता है साधारण प्रजा में प्रायमरी शिक्षा की बहुत कम उन्नति हुई है। इस प्रकार से पश्चिमोत्तर प्रदेश और अवध जहाँ सबसे पहिले प्रजा में प्रायमरी शिक्षा का प्रचार किया गया और जहाँ लोकल रेट्स से आवश्यक व्यय का प्रबंध किया गया अब हिंदुस्तान में सबसे अशिक्षित प्रदेश गिना जाता है। सन् १८७०—७१ और सन् १८९५—९६ के बीच में जब कि प्रायमरी स्कूलों में पढ़नेवालों की संख्या १५६६२८ से ५००१२२ अर्थात् २१३ प्रति सैकड़ा बंबई में, ६८२३७ से ५१००६३ अर्थात् ६४७ प्रति सैकड़ा मद्रास में, और ६८५४३ से १२०६६१९ अर्थात् १६६० प्रति सैकड़ा बंगाल में बढ़ गई पश्चिमोत्तर प्रदेश में वह केवल १५३२५२ से १५५५५२ अर्थात् १·५ ही प्रति सैकड़ा बढ़ी। सन् १८७२ ई० से जब बिहार में गवर्नमेंट ने देशी भाषा और अक्षरों के पक्ष में अपना मत दिया प्रायमरी स्कूलों में पढ़नेवालों की संख्या ३३४३० से २६०४७१ अर्थात् ६७९ प्रति सैकड़ा बढ़ गई। मध्य प्रदेश में सन् १८८१ ई० से जब कि वहाँ अदालतों में नागरी अक्षरों का वास्तविक प्रचार किया गया वह संख्या ७५५२९ से ११७८९६ अर्थात् ५८ प्रति सैकड़ा हो गई और इसी बीच में ९३६६० से १०९८५२ अर्थात् सिर्फ १७ प्रति सैकड़ा पंजाब में बढ़ी जहाँ की बस्ती मध्य-प्रदेश से लगभग दूने के है और जहाँ की गवर्नमेंट मध्य-प्रदेश की गवर्नमेंट से बस्ती के अनुसार प्रति मनुष्य पर पढ़ाई के लिये दूना व्यय करती है। पश्चिमोत्तर प्रदेश में जहाँ उर्दू की उन्नति और इसी लिये हिंदी की अवनति में सहायता की जाती है पढ़नेवालों की संख्या ४९००० घट गई। इस बात का जान लेना अत्यंत आवश्यक है कि इसी प्रदेश में और एक ही शिक्षा विभाग के प्रबंध में कमाऊँ में जहाँ की कचहरियों में नागरी अक्षरों का प्रचार है, प्रायमरी शिक्षा की उन्नति पश्चिमोत्तर प्रदेश भर से जहाँ केवल फारसी अक्षरों से ही अदालतों का काम चलता है, तिगुनी हुई है। इसका भेद यही है कि उर्दू में फारसी और अर्बी के शब्द भरे रहने से और उसके फारसी अक्षरों में लिखे जाने से वह इतनी कठिन हो जाती है और उसके सीखने में इतना अधिक समय, परिश्रम और व्यय आवश्यक है कि केवल उन लोगों को छोड़कर जो वकील, मुख्तार अथवा सरकारी नौकर हुआ चाहते हैं साधारण प्रजा में कोई भी उसे नहीं पढ़ सकता।

"यह बात स्पष्ट है कि सर्व साधारण की शिक्षा के लिये फारसी अक्षर नितांत अनुपयुक्त हैं। भूतपूर्व प्रोफेसर ब्लाक म्यान का कथन है कि 'उर्दू, फारसी, अर्बी या तुर्की भाषा के लेख में मात्राओं के न रहने से किसी पद को शुद्धता से पढ़ने के पहिले यह आवश्यक होता है कि वह पहिले समझ लिया जाय। प्रायमरी शिक्षा के लिये यह कठिनता अवरोधक है जो केवल शुद्ध और स्वच्छ लिथो छापेखानों के प्रचार से दूर वा कम हो सकती है। फारसी अक्षरों में लिखी पुस्तक का पढ़ना सदा परिश्रमयुत रहता है उससे आनंद कदाचित् मिलता हो।' इस बात को सब लोग स्वीकार करते हैं कि प्रायमरी शिक्षा के लिये नागरी अक्षर सबसे उत्तम हैं। सर एर्सकिन पेरी का कथन है कि 'वही लिपि सर्वांग पूर्ण कही जा सकती है जिसमें दृष्टि द्वारा ही उसके उच्चारण का ठीक ठीक बोध हो जाय और यह गुण नागरी अक्षरों में जिनमें संस्कृत लिखी जाती है तथा दूसरे भारतवर्षीय अक्षरों में पाया जाता है।···इस गुण की उत्कृष्टता इस बात से स्पष्ट है कि प्रत्येक हिंदू

बालक ने जहाँ अक्षर पहचान लिए कि वह सुगमता से और बिना रुकावट के पढ़ने लग जाता है। इससे जिस विद्या ( अर्थात् पढ़ने ) के सीखने में योरप में बहुधा कई वर्ष लग जाते हैं वह भारतवर्ष में केवल तीन मास में आ जाती है।' सरकारी न्यायालयों की भाषा केवल उर्दू होने से नागरी अक्षरों में लिखित हिंदी भाषा प्रत्येक पबलिक कार्यों के लिये अनुपयोगी हो जाती है जिससे सर्वसाधारण की रुचि उस भाषा के सीखने से जिसके लिये उनसे आशा की जा सकती है पूर्ण रीति से हट जाती है। हम लोगों का यह दृढ़ विश्वास है कि यदि दिवानी फौजदारी कलेक्टरी म्युनिसिपल तथा डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की कारवाइयाँ नागरी अक्षरों में लिखी जाने लगें तथा सम्मन, डिग्री, नोटिस, आदि सब उन्हीं अक्षरों में जारी हों तो इसके पढ़-लिख सकने के लाभ सब पर तुरंत विदित हो जावेंगे और विद्या की न केवल विशेष उन्नति होगी तथा प्रजा न केवल सरकारी विद्यालयों से लाभ उठावेगी वरंच अपने निज के स्कूल खोलकर गवर्नमेंट की सहायता व्यय की न्यूनता और शिक्षा की वृद्धि में करेगी।

"हम लोग यह प्रार्थना नहीं करते कि अदालतों की भाषा के संबंध में कोई आज्ञा दी जाय क्योंकि जो आज्ञाएँ वर्तमान हैं उनके रहते अब ऐसी प्रार्थना की आवश्यकता नहीं है। हम लोगों की प्रार्थना भूत-पूर्व मिस्टर बडन के कथनानुसार केवल यह है कि, 'सर्वसाधारण में प्रचलित अक्षरों का प्रचार अदालतों में हो; सम्मन, फैसले तथा डिग्री आदि सब उन्हीं अक्षरों में दिए जायँ। इससे यह आवश्यक नहीं है कि फारसी, उर्दू वा अँगरेजी का आवश्यकता पड़ने पर व्यवहार न किया जाय और न इससे यही आवश्यक है कि अदालतों में प्रचलित कानूनी शब्दों का जिनमें आजकल सरकारी काम होता है, परिवर्तन किया जाय। इसका अभिप्राय केवल यह है कि अदालतों की कार्रवाइयें साधारणतः उन्हीं अक्षरों में हों जिनका सर्व साधारण में प्रचार है न कि विदेशी अक्षरों में और उन अक्षरों में लिखित भाषा किसी विशेष जाति वा समुदाय की न हो अर्थात् उसमें शब्दों का प्रयोग और निषेध इसी बात पर निर्भर न रहे कि वह शब्द मुसलमान वा हिंदू जाति के रुच्यनुकूल हो वा उसकी उत्पत्ति उनकी भाषाओं से हुई हो वरंच उन्हीं शब्दों का प्रयोग हो जिन्हें प्रजा का अधिकांश समझ सके तथा उन्हीं अक्षरों का प्रचार हो जिन्हें साधारण प्रजा जानती हो।

"इस बात को देखकर हम लोगों को बड़ा संतोष होता है कि श्रीमान् प्रायमरी शिक्षा का प्रचार करना, जो देशभाषा द्वारा होनी चाहिए और जिसमें साधारण विषयों की शिक्षा दी जाय, गवर्नमेंट का धर्म मानते हैं और श्रीमान् ने इसकी उन्नति के लिये जो उद्योग किए हैं उनके लिये हम लोग अत्यंत अनुगृहीत हैं। यह बात अब सर्वसम्मत जान पड़ती है कि प्रायमरी शिक्षा पर ही साधारण प्रजा की सामाजिक, नैतिक और व्यावहारिक उन्नति निर्भर है। गवर्नमेंट और प्रजा दोनों की ओर यह अपना धर्म जान हम लोग श्रीमान् से निवेदन करते हैं कि हम लोगों का यह दृढ़ विश्वास है कि इन प्रांतों में प्रायमरी शिक्षा की उन्नति होने के लिये यह आवश्यक है कि अदालतों का काम तथा प्रायमरी शिक्षा का प्रचार नागरी अक्षरों द्वारा हो। हम लोग श्रीमान् का समय उस परिवर्तन के लाभों के कहने में नहीं लिया चाहते जिसके लिये हम लोग प्रार्थी हैं क्योंकि प्रथम तो बिहार में सरकारी न्याय-प्रबंध को सर्वप्रिय बनाने पर और शिक्षा की उन्नति में

लोगों को उत्साहित करने पर जो लाभकारी प्रभाव फारसी अक्षरों के बदले नागरी अक्षरों के प्रचार से पड़ा है उसे श्रीमान् स्वयं जानते हैं और दूसरे इस विषय का पूरा पूरा वर्णन "नागरी क्यारेक्टर ऐंड प्राइमरी एजुकेशन" नाम की पुस्तक में, जो इस आवेदनपत्र के साथ में लगी है, किया गया है।

"हम लोगों को पूर्ण आशा है कि श्रीमान् इस आवेदनपत्र पर उतना ध्यान देंगे जितना इसमें लिखित प्रार्थना की गुरुता के कारण देना आवश्यक हो और पूर्ण विचार के उपरांत श्रीमान् अत्यंत कृपा कर यह आज्ञा देंगे कि इन प्रांतों की अदालतों और सरकारी दफ्तरों में वकीलों की बहसों और आम कार्रवाइयों के लिखने में नागरी अक्षरों का प्रचार किया जाय।

"हम लोग श्रीमान् के सुखार्थ ईश्वर से प्रार्थना करना अपना धर्म मान सदा उसके लिये प्रार्थी रहेंगे।"

## गवर्नर का उत्तर

"महाशयो,

मैं उस विषय की गुरुता स्वीकार करता हूँ जो आप लोग मेरे संमुख इस मेमोरियल में विचारार्थ उपस्थित करते हैं, परंतु उसकी गुरुता की यदि अत्युक्ति न की जाय तो अच्छा है। आप लोग जिस परिवर्तन के लिये प्रार्थना करते हैं वह वास्तव में उस भाषा का परिवर्तन नहीं है जो हमारी अदालतों और सर्कारी कागजों में बरती जाती है। आप लोग उन अक्षरों के परिवर्तन के लिये प्रार्थना करते हैं जिनमें वह भाषा लिखी जाती है। वह भाषा जो हमारी अदालतों और सरकारी कागजों में लिखी जाती है कठिन और फारसी शब्दों से पूर्ण हो सकती है और उसके सरल करने का उद्योग हो सकता है पर वास्तव में वह भाषा अब तक हिंदी है जिसे इन प्रांतों की प्रजा का बहुत बड़ा अंश बोलता है परंतु यदि हमारी अदालतों की भाषा हिंदी है तो जिन अक्षरों में वह लिखी जाती है वे फारसी हैं और आप लोगों का यह प्रस्ताव है कि फारसी के बदले नागरी अक्षरों का ( आप लोग कैथी अक्षरों को पसंद नहीं करते ), जिनमें हिंदी साधारणतः लिखी जानी चाहिए, प्रचार किया जाय। इसमें कोई संदेह नहीं है कि इस प्रस्ताव के पक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता है। इन प्रांतों में चार करोड़ सत्तर लाख मनुष्य बसते हैं और जो अनुसंधान प्रसिद्ध भाषातत्त्ववेत्ता डाक्टर ग्रियर्सन प्रत्येक जिले में भाषाओं की जाँच के संबंध में कर रहे हैं उससे यह प्रकट होता है कि इन चार करोड़ सत्तर लाख मनुष्यों में से चार करोड़ पचास लाख मनुष्य हिंदी वा उसकी कोई बोली बोलते हैं। अब यदि चार करोड़ पचास लाख मनुष्य उस भाषा को लिख भी सकते जिसे वे बोलते हैं तो निस्संदेह फारसी के बदले नागरी अक्षरों का जारी किया जाना अत्यंत ही आवश्यक होता; परंतु इन चार करोड़ पचास लाख मनुष्यों में से तीस लाख से कुछ कम लोग लिख और पढ़ सकते हैं और इन शिक्षित लोगों में से, यदि मैं उन्हें ऐसा कह सकूँ तो, एक अच्छा अंश मुसलमानों का है जो उर्दू बोलते हैं और फारसी अक्षरों का बरतना पसंद करते हैं। मेरा अनुमान है कि आप लोग यह स्वीकार करेंगे कि इन प्रमाणों से यह स्पष्ट है कि वह प्रस्ताव जो आप लोग मेरे सामने उपस्थित करते हैं अत्यंत आवश्यक नहीं है। मेरे कहने का यह अर्थ नहीं है कि वह आवश्यक है ही नहीं, या आप लोगों ने इसे इस समय छेड़कर उचित कार्य नहीं किया। निस्संदेह इस विषय

की आवश्यकता दिनोंदिन बढ़ती जाती है क्योंकि प्रायमरी शिक्षा इस कारण से कि वह जनसाधारण के लिये ही है देवनागरी अक्षरों द्वारा विशेष करके दी जानी चाहिए और पुनः हमारे प्रायमरी शिक्षा के प्रबंध के प्रभाव से हिंदी पढ़ और लिख सकने योग्य मनुष्यों की संख्या प्रतिदिन बढ़ रही है। हिंदी पढ़ सकने योग्य तथा नागरी वा कैथी अक्षरों से परिचित लोगों की संख्या-वृद्धि के साथ सरकारी कामों में केवल फ़ारसी अक्षरों ही के प्रचलित रखने से राजा और प्रजा के परस्पर स्वच्छ व्यवहार में बाधा पड़ेगी। ऐसी प्रत्येक बाधा हानि उत्पन्न करती है। इसका अनुभव पहले नहीं हुआ था जब गवर्नमेंट के पास प्रजा के आवेदन अब की अपेक्षा बहुत ही कम जाते थे। परंतु अब उस अवस्था में परिवर्तन हो गया है तथा दिनोंदिन होता जाता है और प्रजा के आवेदनपत्रों की संख्या बढ़ गई है तथा बढ़ती जा रही है। इस परिवर्तन से जो सरकारी प्रबंध के परिवर्तन के साथ ही साथ होता है अब यह अत्यंत आवश्यक हो गया है कि प्रत्येक प्रकार की बाधा जो राजा और प्रजा के परस्पर शुद्ध और स्वच्छ व्यवहार के मार्ग में हो और जो दूर की जा सकती हो दूर की जाय और यदि साधारण प्रजा में हिंदी की शिक्षा फैल रही है तो सरकारी नौकरों का उस भाषा और उन अक्षरों को जिसमें वह भाषा लिखी जाती है अच्छी तरह से जानना अत्यंत आवश्यक है।

"मेरे इस कहने से आप लोग समझ सकते हैं कि यद्यपि मैं स्थापना में नागरी अक्षरों के विशेष प्रचार के पक्ष में हूँ पर मैं इस बात का कह देना उचित समझता हूँ कि जितनी आप लोग समझते हैं उससे अधिक आपत्तियाँ इसके पूर्ण प्रचार की अवरोधक हैं। आप लोग मुझे स्मरण दिलाते हैं कि जब मैं बिहार के एक जिले का कलेक्टर था मैं उन लोगों में से था जो उस प्रांत में सरकारी कामों के लियं फ़ारसी के बदले कैथी अक्षरों के प्रचार के पक्षपाती और सहायक थे। यह ठीक है और मेरा विश्वास है कि बिहार में यह परिवर्तन अब पूर्ण रीति से हो गया है; परंतु इस परिवर्तन के करने में सरकारी नौकरी का पूरा समय लग गया और मैं निज अनुभव से आप लोगों को कह सकता हूँ कि परिवर्तन काल उन सब लोगों के लिये जिनका सरकारी कार्य से संबंध था अत्यंत कष्ट और व्याकुलता का था। यदि ये सब आपत्तियाँ देश के एक ऐसे भाग में पाई गईं जहाँ मुसलमानों का प्रभाव हिंदुस्तान की अपेक्षा बहुत कम पड़ा है और जहाँ सरकारी नौकरी में मुसलमानों की संख्या हिंदुओं की अपेक्षा इन प्रांतों से बहुत कम थी तो आप लोग सुगमता से समझ सकते हैं कि इन प्रांतों में आप लोगों के प्रस्ताव के अनुसार कार्य करने में आपत्तियाँ कितनी भारी और अधिक हैं।

"मेरा सिद्धांत यह है कि यद्यपि मैं यह समझता हूँ कि हमारे सरकारी कागजों में नागरी अक्षरों के विशेष प्रचार से लाभ होगा और समय भी इस परिवर्तन के पक्ष में है पर मैं ऐसा कोई आवश्यक वा उचित कारण नहीं देखता कि क्यों हम लोग शीघ्रता करें अथवा क्यों न हम लोग विचारपूर्वक और उन लोगों के हित और भावों पर जो इस परिवर्तन के विरोधी हैं उचित ध्यान देकर इस कार्य को करें। मुसलमान लोग जैसा कि आप लोग अनुमान करते हैं इस परिवर्तन का विरोध करेंगे और अभी तक आप लोगों ने उन लोगों का विरोध दूर करने और उन्हें अपने पक्ष में लाने के लिये कोई कार्य ऐसा नहीं किया

है जिससे यदि आपके विचारों से सहमत नहीं तो कम से कम वे परस्पर में निपटारा तो कर लें। इसमें और उन सब बातों में, जिनमें परस्पर विरोध है, हम लोगों को दूरदर्शिता पर ध्यान देकर यह देखना चाहिए कि कोई ऐसा मध्यस्थ उपाय हो सकता है या नहीं जिससे दोनों ओर का विरोध दूर हो जाय।

"इस अवसर पर इस विषय में बिना अपनी नीति की परिपाटी को प्रकाशित किए अथवा किसी विशेष शैली के अनुसार कार्य करने की प्रतिज्ञा किए मैं यह कहा चाहता हूँ कि हम लोगों का संबंध तीन प्रकार के कागजों से है। एक तो वे जो प्रजा गवर्नमेंट की सेवा में उपस्थित करती है, दूसरे वे जो गवर्नमेंट प्रजा के लिये निकालती है और तीसरे वे जिनमें सरकारी कार्रवाइयाँ लिखी जाती हैं और जो सरकारी दफ़्तरों में रक्षित रहते हैं।

"तीसरे प्रकार के काग़ज अर्थात् वे कार्रवाइयाँ जो सरकारी दफ़्तरों में रक्षित रहती हैं अन्य दो प्रकार के कागजों से कुछ भिन्न हैं। निःसंदेह प्रजा का संबंध उन अक्षरों से है जिनमें ये कार्रवाइयाँ लिखी जाती हैं क्योंकि उनको ऐसी कार्रवाइयों की नकल लेनी पड़ती है जो बहुधा स्वत्व और दावों के प्रमाण होते हैं परंतु इनका काम वकीलों की सम्मति के साथ विशेष अवसरों पर पड़ता है। प्रतिदिन के कार्यों के अंतर्गत वे नहीं आते। इसलिये इन कागजों के विषय में निश्चय करना उतना आवश्यक नहीं है जितना और दो प्रकार के कागजों के विषय में है। इस अवसर पर मैं अपनी सम्मति इस बात पर नहीं प्रकाशित करूँगा कि किन अक्षरों में इन कागजों को लिखा जाना चाहिए, परंतु यह मैं कह देता हूँ कि मुझे इन कागजों के लिखने के लिये रोमन अक्षरों के व्यवहार की विरुद्धता को कम करने के लिये कोई उचित कारण नहीं देख पड़ता।

"दूसरे दो प्रकार के कागजों के विषय में मेरा यह विचार है कि यह उचित नहीं है कि एक ऐसा पुरुष जो नागरी लिख सकता हो गवर्नमेंट के पास भेजने के लिये अपने आवेदनपत्र वा मेमोरियल को फारसी अक्षरों में लिखवाने का कष्ट सहन करे। यह भी अनुचित जान पड़ता है कि एक ऐसी सरकारी आज्ञा जो ऐसे गाँव के लिये निकाली जाय जहाँ के रहनेवाले हिंदी बोलते हों, फारसी अक्षरों में लिखी हो जिसे गाँव में कोई न पढ़ सके। ऐसे प्रबंध का करना असंभव न होना चाहिए जिससे हिंदी तथा उर्दू बोलनेवालों में से सबको अपने आवेदनपत्रों को गवर्नमेंट तक पहुँचाने में तथा गवर्नमेंट की इच्छाओं को जानने में सुभीता हो और किसी प्रकार का कष्ट वा व्यय न सहन करना पड़े। इस प्रकार के प्रबंध से (यदि हो सके तो) यद्यपि वे सब बातें प्राप्त न होंगी जिन पर आप लोगों का तथा इस मेमोरियल के दूसरे सहायकों का लक्ष्य है, परंतु उनसे कुछ बातें प्राप्त होंगी और गवर्नमेंट को उस बात को पूर्णतया निश्चय करने का उपाय सोचने के लिये समय मिलेगा। इस बात को समझ लेना चाहिए कि ३०० वर्षों से जो कार्य्य होता आ रहा है वह एक दिन में हट नहीं सकता। मैं समझता हूँ कि बादशाह अकबर के पहले भारतवर्ष के इस भाग में राजकीय और घरेलू सब कामों में हिंदी भाषा और नागरी अक्षरों का व्यवहार था। बादशाह अकबर के मंत्री राजा टोडरमल ने और परिवर्तनों के साथ बादशाही कागजों और कार्रवाइयों में हिंदी के पहले फारसी अक्षरों का प्रचार किया। आप लोगों के इस वर्तमान कार्य्य से

यह प्रकट होता है कि आप लोगों की संमति में यह कार्य अधिकांश लोगों के सुबीते पर ध्यान देकर नहीं किया गया था और मैं समझता हूँ कि बहुत लोग इस विचार में आपसे सहमत होंगे। पर तो भी हम लोगों को कोई ऐसा कार्य्य अत्यंत शीघ्रता से न करना चाहिए जो स्थिर बातों के विरुद्ध और ३०० वर्ष से प्रचलित कार्रवाई के दूर करने के लिये हो। जो कुछ करना हो वह पूरी जाँच और विचार करके तब करना चाहिए।"

इस आवेदनपत्र के दे देने के बाद पंडित मदन-मोहन मालवीय की प्रेरणा पर बाबू श्यामसुंदरदास और बाबू कृष्ण बलदेव वर्मा ने लखनऊ, शाहजहाँपुर, बरेली, मुरादाबाद, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ, आगरा और मथुरा नगरों की यात्रा की और सब जगहों में देवनागरी के सहायकों का संघटन करके उन्हें इस कार्य में सहायता करने के लिये उद्यत किया। इसके कुछ ही दिन बाद सर ऐंटानी मैकडानेल महोदय ने इन नगरों का दौरा किया। उस समय इस संघटन ने बड़ी मुस्तैदी और सफलता से इस आंदोलन में सह-योग प्रदान किया और अदालतों में देवनागरी के प्रचार में सहायता दी।

इसके कुछ दिनों बाद ही सर मैकडानेल छुट्टी पर विलायत चले गए और उनके स्थान पर सर जेम्स लाटूश संयुक्त प्रांत के स्थानापन्न गवर्नर नियुक्त हुए। वे जब काशी आए तो नदेसर-कोठी में २७ आषाढ़, १९५५ वि०, (११ जुलाई १८९८) को सभा के ६ सदस्यों—सर्वश्री प्रमदादास मित्र, रामकाली चौधरी, सुधाकर द्विवेदी, माधवलाल, इंद्रनारायण सिंह और राधाकृष्णदास—ने उनसे भेंट की और हिंदी-उर्दू के विषय में बहुत सी बातचीत हुई। हिंदी शीघ्र नहीं लिखी जा सकती—इस भ्रम को दूर करने के लिये श्री सुधाकर द्विवेदी ने उनके सामने लिखकर दिखाया जिससे सर लाटूश को हिंदी अक्षरों की सुंदरता और स्पष्टता स्वीकार करनी पड़ी। हिंदी-ग्रंथों के अभाव पर भी बातचीत हुई और उन्होंने सभा के उद्योग की प्रशंसा की। इस अवसर पर सभा के कुछ प्रकाशन भी उनको भेंट किए गए थे। यह मुलाकात डेढ़ घंटे तक रही और प्रकृत विषय पर खुलकर विचार-विनिमय हुआ।

इन दिनों सभा ने हिंदी को अदालतों में स्थान दिलाने के लिये बहुत भारी आंदोलन खड़ा कर दिया था। चारों ओर नागरी-प्रचार की धूम मच गई थी। अवश्य ही कतिपय विरोधियों ने इस उद्योग की सफ-लता में विघ्न डालने का प्रयत्न किया, हिंदी भाषा और नागरी लिपि तथा उसके समर्थकों पर अनेक प्रकार के प्रहार किए गए, अनेक विज्ञापन निकले, हिंदू-मुसलिम वैमनस्य बढ़ने का भी भय दिखाया। किंतु कितने ही सुयोग्य मुसलमान सज्जनों ने इस कार्य में सभा का पूर्ण समर्थन किया। इनमें हैदराबाद के तत्कालीन मंत्री प्रसिद्ध विद्वान् शमसुलउल्मा मौलवी सैयद अली बिलग्रामी का नाम विशेष रूप से उल्ले-खनीय है। इन्होंने स्पष्ट शब्दों में स्वीकार किया था कि मुसलमानों में शिक्षा का कम प्रचार होने का मुख्य कारण बेढंगी फारसी लिपि ही है। इसे ठीक तरह से सीखने के लिये जहाँ कम से कम दो वर्ष चाहिएँ वहाँ नागरी के लिये महीने-दो महीने ही पर्याप्त होते हैं।

छुट्टी से सर मैकडानेल के लौटते ही सभा ने पुनः प्रार्थनापत्र भेजा। इसके अतिरिक्त संयुक्त प्रांत के प्रायः सब नगरों से सहस्रों हस्ताक्षरों के साथ पत्र पर पत्र गवर्नर महोदय के पास पहुँचने लगे। सभा ने अँगरेजी में 'शुड नागरी बी इंट्रोड्यूस्ड इन कोर्स'

नाम की एक पुस्तिका छपवाकर उसकी हजारों प्रतियाँ चारों ओर वितरित कराईं। समाचारपत्रों में भी खूब आंदोलन हुआ। श्रीवेंकटेश्वर समाचार, भारत-जीवन, हिंदी-प्रदीप और हिंदोस्थान ने अपना कर्त्तव्य बहुत अच्छी तरह पालन किया। उधर वैश्य कान्फ्रेंस और कायस्थ कान्फ्रेंस दोनों ने मुक्त कंठ से नागरी के पक्ष में प्रस्ताव पास किए और सर मैकडानेल के पास इस परिवर्त्तन के विषय में अपने सबल समर्थन भेजे।

इस प्रकार तीन वर्षों तक निरंतर प्रयत्न करते करते सभा को अपने उद्योग में आंशिक सफलता सं० १९५७ (सन् १९००) में प्राप्त हुई। १८ अप्रैल, सन् १९०० को संयुक्त प्रांत की सरकार ने इस विषय की जो आज्ञा निकाली उसका आशय था—

(१) सब मनुष्य अपनी इच्छा के अनुसार नागरी वा फारसी लिपि में लिखकर प्रार्थनापत्र दे सकते हैं।

(२) सरकारी न्यायालयों के प्रधान अधिकारियों की ओर से जो समन, सूचनापत्र तथा अन्य प्रकार के कागज-पत्रादि प्रकाशित किए जायँगे वे सब नागरी और फारसी दोनों लिपियों में छापे जायँगे और नागरी अक्षरों में भी भरे जा सकेंगे।

(३) ऐसे दफ्तरों को छोड़कर जहाँ केवल अँगरेजी में काम होता है हिंदी न जाननेवाला कोई व्यक्ति सरकारी दफ्तरों में नियुक्त न हो सकेगा और जो इस एक वर्ष के बीच में नियत किया जायगा और दोनों में से केवल एक भाषा जानता होगा उसे नियुक्ति की तारीख से एक वर्ष के भीतर दूसरी भाषा सीख लेना आवश्यक होगा।

इस विषय की सरकारी आज्ञाओं और वायसराय की सभा में प्रश्नोत्तरों के हिंदी अनुवाद सभा ने 'पश्चिमोत्तर प्रदेश में नागरी-प्रचार-विषयक लेख-समुच्चय' नामक पुस्तिका में प्रकाशित कर दिए थे। वे अविकल रूप में यहाँ उद्धृत किए जाते हैं—

"गवर्नमेंट पश्चिमोत्तर प्रदेश और अवध

नंबर $\frac{५८१}{३-३४३ \text{ सी}-६८}$ १९००

निश्चय

जेनरल प्रबंध विभाग

नैनीताल, ता० १८ अप्रैल १९००

पढ़े गए,—

(१) भिन्न भिन्न तिथियों के आवेदनपत्र जिनमें प्रार्थना थी कि पश्चिमोत्तर प्रदेश तथा अवध के न्यायालयों और सरकारी दफ्तरों में नागरी अक्षरों का प्रचार हो।

(२) भिन्न भिन्न तिथियों के आवेदनपत्र जिनमें हिंदी को राज्यभाषा बनाने का विरोध था।

(३) इन प्रांतों के न्यायालयों और सर्कारी दफ्तरों में नागरी अक्षरों के प्रचार के विषय पर बोर्ड आफ रेवेन्यू की ता० १६ अगस्त, सन् १८९६ की रिपोर्ट।

(४) उसी विषय पर पश्चिमोत्तर प्रदेश के हाईकोर्ट के रजिस्ट्रार का ता० २ मार्च, सन् १९०० का पत्र नं० ५५७ और अवध के जुडिशियल कमिश्नर का ता० ३१ मार्च, सन् १९०० का पत्र नं० ८१६।

१—"पश्चिमोत्तर प्रांत और अवध के लेफ्टिनेंट गवर्नर की शासन की अवधि के समय सर ऐन्टाजी मैकडानेल महोदय के निकट इन प्रांतों के न्याया-

लयों और सरकारी दफ्तरों में नागरी अक्षरों के प्रचार के लिये बहुत से प्रार्थनापत्र दिए गए हैं। सन् १८६८ में इन अक्षरों के पक्ष लेनेवालों के प्रतिनिधियों के डेपुटेशन के उत्तर में श्रीमान् लेफ्टिनेंट गवर्नर महोदय ने यद्यपि न्यायालयों की कार्रवाइयों में शीघ्र परिवर्तन करने के विचार को उचित नहीं बतलाया था, तथापि उन्होंने इस बात को स्वीकार किया था कि सरकारी लिखा-पढ़ी के पत्रों में नागरी अक्षरों के प्रचार से कुछ लाभ अवश्य होंगे। उसी समय से श्रीमान् सर ऐन्टानी मैकडानेल महोदय इस बात पर विचार कर रहे थे कि इस समय की अपेक्षा सरकारी काम-काज में नागरी अक्षरों का प्रचार बिना कष्ट के अधिक किस प्रकार से हो सकता है।

"सबसे पहले सरकारी न्यायालयों में फारसी भाषा और फारसी के अक्षरों का प्रचार था। यहाँ के न्यायालयों में फारसी के स्थान में यहाँ की देशभाषाओं का प्रचार करने का प्रबंध पहले पहल सन् १८३७ ई० में किया गया था। उसी समय गवर्नर जेनरल महोदय ने कौंसिल में बंगाल और पश्चिमोत्तर प्रांत के न्यायालयों की भाषा में परिवर्तन करने की आज्ञा दी थी। इसी अभिप्राय से सन् १८३७ के नवंबर मास में एक कानून भी स्वीकार किया गया था। उसके दो वर्ष के पश्चात् सदर दीवानी अदालत ने अपने अधीन के सब न्यायालयों में हिंदुस्तानी अर्थात् उर्दू के प्रचार के लिये आज्ञा दी थी। यह आज्ञा केवल उर्दू भाषा के विषय में थी, अक्षरों के विषय में नहीं थी। सन् १८६८ ई० में न्यायालयों में फारसी अक्षरों के स्थान में नागरी अक्षरों का प्रचार करने के लिये गवर्नमेंट से प्रार्थना की गई थी और उस समय से आज तक समय समय पर गवर्नमेंट का ध्यान इस विषय की ओर आकर्षित किया गया है। पश्चिमोत्तर प्रांत के पड़ोसी बिहार और मध्य प्रदेश के न्यायालयों में फारसी अक्षरों के स्थान में नागरी अक्षरों का प्रचार पूर्ण रूप से हो गया है।

"बिहार और मध्य प्रदेश में नागरी अक्षरों के प्रचार में जैसी सरलता हुई वैसी पश्चिमोत्तर प्रांत और अवध में नहीं हो सकती है। कई एक प्रधान कारणों से श्रीमान् लेफ्टिनेंट गवर्नर और चीफ कमिश्नर इन प्रांतों में भाषा संबंधी परिवर्तन के प्रश्न को हाथ में नहीं लिया चाहते हैं और इसलिये लेफ्टिनेंट गवर्नर महोदय इन प्रांतों की भाषा को बदलना अथवा फारसी के अक्षरों के प्रयोग को बंद करना नहीं चाहते हैं। यहाँ पर प्रश्न यह उपस्थित हुआ है कि नागरी अक्षरों के जाननेवाले बहुत से मनुष्यों के सुभीते के लिये नागरी अक्षरों के प्रयोग का कुछ ठीक प्रबंध किया जा सकता है वा नहीं। इस बात का लेखा इस समय प्राप्त नहीं है कि कितने मनुष्य केवल हिंदी ( नागरी वा कैथी ) के अक्षरों को जानते हैं और उनका प्रयोग करते हैं और कितने मनुष्य फारसी के अक्षरों को जानते हैं। परंतु सन् १८९१ की मनुष्य-गणना की रिपोर्ट से इन प्रांतों के मध्यम श्रेणी के पढ़े-लिखे मनुष्यों की संख्या का ज्ञान इस प्रकार हो सकता है—

| | | | |
|---|---|---|---|
| अँगरेजी में गिनती करनेवालों की संख्या | | | ८१३ |
| उर्दू | ,, | ,, | ५४२४४ |
| नागरी | ,, | ,, | ८०११८ |
| कैथी | ,, | ,, | ४०१६७ |

"श्रीमान् लेफ्टिनेंट गवर्नर महोदय समझते हैं कि गोरखपुर, बनारस, इलाहाबाद और आगरे की

कमिश्नरियों में हिंदी अक्षरों का बहुत ही अधिक प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार मेरठ और रुहेलखंड के विभागों में भी इन अक्षरों का अधिक प्रयोग होता है।

"अतएव वर्त्तमान समय की अपेक्षा भविष्यत् में हिंदी अक्षरों का अधिक प्रचार करने से इन प्रांतों की एक बड़ी संख्या के मनुष्यों को सुभीता होगा। इन प्रांतों के बोर्ड आफ रेवेन्यू और हाईकोर्ट तथा अवध के जुडिशियल कमिश्नर (जो निम्नलिखित प्रस्तावों के साथ सहमत हैं) की संमति से इन प्रांतों के लेफ्टिनेंट गवर्नर महोदय ने निम्नलिखित नियमों को बनाया है और उनका प्रयोग यहाँ के दीवानी, फौजदारी, रेंट तथा रेवेन्यू के न्यायालयों में किया जावेगा—

(१) "संपूर्ण मनुष्य प्रार्थनापत्रों और अर्जीदावों को अपनी इच्छा के अनुसार नागरी वा फारसी के अक्षरों में दे सकते हैं।

(२) "संपूर्ण समन, सूचनापत्र और दूसरे प्रकार के पत्र जो सरकारी न्यायालयों व प्रधान कर्मचारियों की ओर से देशभाषा में प्रकाशित किए जाते हैं, फारसी और नागरी अक्षरों में जारी होंगे और इन पत्रों के उस भाग की खानापुरी भी हिंदी में इतनी ही होगी जितनी फारसी अक्षरों में की जाय।"

(३) "अँगरेजी आफिसों को छोड़कर आज से किसी न्यायालय में कोई मनुष्य उस समय तक नहीं नियत किया जायगा जब तक वह नागरी और फारसी के अक्षरों को अच्छी तरह से लिख और पढ़ न सकेगा।"

"इस आज्ञा की एक एक प्रति समस्त विभागों के प्रधान कर्मचारियों, समस्त विभागों के कमिश्नरों, मजिस्ट्रेटों और कलक्टरों तथा डिस्ट्रिक्ट जजों के पास सूचना और उसके अनुसार कार्य करने के लिये भेज दी जाय और यह आज्ञा गवर्नमेंट गजट में सर्वसाधारण के सूचनार्थ प्रकाशित की जाय।"

जे० ओ० मिलर,
चीफ सेक्रेटरी—गवर्नमेंट पश्चिमोत्तर प्रदेश और अवध।"

## अदालतों में नागरी-प्रचार-विषयक आज्ञाएँ

१—"नंबर ८५६, शिमला, १४ जून १९००

"गवर्नमेंट आफ इंडिया के होम डिपार्टमेंट (जुडिशल) के सेक्रेटरी का पत्र पश्चिमोत्तर प्रदेश और अवध की गवर्नमेंट के चीफ सेक्रेटरी के नाम।

"महाशय,

आपका ४ तारीख का लिखा हुआ पत्र नं० ६८० आया जिसके साथ गवर्नमेंट पश्चिमोत्तर प्रदेश और अवध के उस रिजाल्यूशन की नकल थी जिसके द्वारा कचहरियों और सर्कारी दफ्तरों में लोगों के इच्छानुकूल नागरी के प्रचार की आज्ञा थी। रिजोल्यूशन के चौथे पैरेग्राफ में निम्नलिखित नियम हैं जो कि सब दीवानी, फौजदारी तथा माल विभाग के लिये हैं—

"(१) संपूर्ण मनुष्य प्रार्थनापत्रों और अर्जीदावों को अपनी इच्छा के अनुसार नागरी अथवा फारसी अक्षरों में दे सकते हैं।

"(२) संपूर्ण समन, सूचनापत्र और दूसरे प्रकार के पत्र जो सरकारी न्यायालयों वा प्रधान कर्मचारियों की ओर से देशभाषा में प्रकाशित किए जाते हैं, फारसी और

नागरी अक्षरों में जारी होंगे और इन पत्रों के उस भाग की खानापूरी भी हिंदी में इतनी ही होगी जितनी फारसी अक्षरों में की जाय।

"( ३ ) अँगरेजी आफिसों को छोड़कर आज से किसी न्यायालय में कोई मनुष्य उस समय तक नहीं नियत किया जायगा जब तक वह नागरी और फारसी के अक्षरों को अच्छी तरह से लिख और पढ़ न सकेगा।

"उत्तर में मुझे यह कहना है कि गवर्नर-जेनरल महाशय, श्रीमान् लेफ्टिनेंट गवर्नर और चीफ कमिश्नर के विचार से जो कि नियम ( १ ) और ( २ ) में प्रकाशित हैं, पूर्णतया सहमत हैं। नियम ( ३ ) अर्थात् वर्नाक्यूलर आफिसों में जो लोग नियत किए जायँ उनको हिंदी और उर्दू दोनों ही को जानना चाहिए, इस नियम का होना प्रथम दोनों नियमों के लिये यद्यपि पूर्णतया आवश्यक न भी हो तो भी वांछनीय है। परंतु श्रीमान् वाइसराय को यह भय है कि यह नियम इस वर्तमान रूप में अत्यंत कड़ा है और संभव है कि वह कुछ लोगों पर जो सरकारी नौकरी किया चाहते हैं अनावश्यक कड़ाई करे, अतएव गवर्नर-जेनरल महोदय को यह संमति है कि लेफ्टिनेंट गवर्नर और चीफ कमिश्नर का उद्देश्य निम्नलिखित नियम से भी पूरा हो सकता है—

"इस रिजोल्यूशन की तारीख के एक वर्ष के उपरांत कोई मनुष्य अँगरेजी आफिसों को छोड़कर और किसी दफ्तर के काम पर न नियत किया जायगा जब तक कि वह हिंदी और उर्दू दोनों ही न जानता हो।"

"नियम को इस प्रकार बदल देने से गवर्नर-जेनरल का यह विश्वास नहीं है कि यह नियम समय समय पर किसी के लिये कड़ा होगा ही नहीं, परंतु संभवतः ऐसी दशाएँ बहुत कम होंगी। अतएव यह प्रार्थना है कि यदि लेफ्टिनेंट गवर्नर और चीफ कमिश्नर को कोई विरोध न हो तो नियम में आवश्यक परिवर्तन कर दिया जाय।

"मैं उन तारों को भेजता हूँ जो पश्चिमोत्तर प्रदेश के किसी किसी मुसलमान ने, इस रिजोल्यूशन में जो आज्ञाएँ निकली हैं उनके विरोध में भेजे हैं। श्रीमान् लेफ्टिनेंट गवर्नर महाशय इन पर जैसी आज्ञा उचित समझें दें।"

२—"नंबर $\frac{१०२६}{३\text{–}३४३ \text{ सी}}$ नैनीताल, २७ जून, १९००

पश्चिमोत्तर प्रदेश और अवध की गवर्नमेंट के चीफ सेक्रेटरी का पत्र गवर्नमेंट आफ इंडिया के होम डिपार्टमेंट के सेक्रेटरी के नाम।

"महाशय,

लेफ्टिनेंट गवर्नर और चीफ कमिश्नर ने मुझे आपके १४ तारीख के पत्र नंबर ८५६ की प्राप्ति स्वीकार करने को कहा है, जिसमें आपने लिखा था कि श्रीमान् ने कुछ सरकारी कागजों और अदालती कामों में जो नागरी के इच्छापूर्वक प्रयोग के लिये आज्ञा दी है इससे गवर्नर-जेनरल महोदय भी सहमत हैं परंतु आज्ञा के उस भाग में परिवर्तन की संमति देते हैं जो सरकारी नौकरी करनेवालों से संबंध रखता है।

"उत्तर में मुझे यह कहना है कि लेफ्टिनेंट गवर्नर ने इस प्रस्ताव को स्वीकार किया है और शीघ्र ही उसे प्रचलित करेंगे। मुझे यह भी सूचित करना है कि जब लेफ्टिनेंट गवर्नर ने कुछ माननीय मुसलमानों की

सभा से, जो अलीगढ़ में २३ मई को हुई थी, तार पाया तो उसका उत्तर यों भेजा कि यद्यपि श्रीमान् १८ अप्रैल की आज्ञा पर फिर से विचार नहीं कर सकते तथापि वे मुसलमानों के कुछ चुने हुए प्रतिनिधियों से इस विषय में वार्तालाप करने को प्रस्तुत हैं कि यह आज्ञा कब से प्रचलित की जाय। परंतु श्रीमान् का प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया गया। अतएव वे तब से इस बात का पता लगा रहे हैं कि यदि नियम ( ३ ) जिस दिन प्रकाशित हुआ है उसी दिन से प्रचलित कर दिया जाय तो मुसलमानों पर इससे वास्तव में कोई कड़ाई तो न होगी। परंतु अब श्रीमान् का यह विचार है कि गवर्नमेंट आफ इंडिया की संमति से जिसका ऊपर कथन है यदि मुसलमानों पर किसी प्रकार की कड़ाई का होना संभव है तो वह दूर हो जायगी।"

३—"नंबर $\frac{१०२७}{३–३४३}$ सी

जेनरल विभाग

नैनीताल, २६ जून १९००

तारीख १८ अप्रैल १९०० के रिजोल्यूशन नं० $\frac{५८५}{३–३४३ \text{ सी } ६८}$ के चौथे पैराग्राफ के तीसरे नियम को काट कर, उसके स्थान पर यह नियम किया जाता है—

"इस रिजोल्यूशन की तारीख के एक वर्ष के उपरांत कोई मनुष्य अँगरेजी आफिसों को छोड़कर और किसी दफ्तर के काम पर न नियत किया जायगा जब तक कि वह हिंदी और उर्दू दोनों ही न जानता हो। और इस बीच में जो कोई ऐसा मनुष्य नियत किया जायगा जो केवल एक भाषा जानता हो और दूसरी नहीं, उसे जब से वह नियत किया जायगा उसके एक वष के भीतर उस दूसरी भाषा में भी योग्यता प्राप्त कर लेनी होगी जिसे वह न जानता हो।

"ऊपर के नियम की नकल पश्चिमोत्तर प्रदेश और अवध में सब विभागों के सब कमिश्नरों, सब मैजिस्ट्रेटों, कलेक्टरों और डिस्ट्रिक्ट जजों के पास सूचना और इसके अनुकूल कार्य करने के लिये भेजी जाय।

४—"शुक्रवार तारीख ५ अक्टूबर १९०० को वाइसराय की सभा में नवाब मुहम्मद अयात खाँ ने निम्नलिखित प्रश्न किए—

(१) १८ अप्रैल १९०० को लोकल गवर्नमेंट ने एक रिजोल्यूशन किया है जिससे न्यायालयों में नागरी का प्रचार किया गया है और अँगरेजी आफिसों को छोड़कर किसी दफ्तर में किसी मनुष्य के नियत किए जाने के लिये हिंदी का जानना आवश्यक किया गया है। क्या गवर्नमेंट आफ इंडिया इस बात को जानती है कि पश्चिमोत्तर प्रदेश तथा अवध के मुसलमानों को इस रिजोल्यूशन से कितना असंतोष हुआ है? (२) रिजोल्यूशन के क्लाज़ १ सेक्शन ४ में जो पिटीशन ऐंड कंप्लेंट शब्द हैं उनका इलाहाबाद की हाईकोर्ट और अवध के जुडीशल कमिश्नर ने भिन्न रीति से अर्थ समझा है। क्या गवर्नमेंट आफ इंडिया, नागरी अक्षरों के प्रयोग की सीमा केवल उन्हीं अवस्थाओं में कर देगी जब कि मनुष्य नागरी के अतिरिक्त और कुछ न जानता हो और अपना आवेदनपत्र किसी वकील या मुख्तार के बिना स्वयं देता हो?

"मिस्टर रिवेज ने उसके उत्तर कहा—

"गवर्नमेंट आफ इंडिया जानती है कि इस आज्ञा

से कुछ असंतोष प्रकट किया गया है परंतु लेफ्टिनेंट गवर्नर ने उसे यह सूचना दी है कि यह असंतोष विशेषत: उन्हीं मुसलमानों ने प्रकट किया है जो वकालत या मुख्तारी करते हैं। किसी बड़े रईस, जमींदार अथवा पश्चिमोत्तर प्रदेश और अवध भर के व्यापारियों और कृषिकारों ने नाम मात्र को भी विरोध नहीं किया है। यह आज्ञा केवल इसी बात को स्वीकार करती है कि सरकारी कागजों में नागरी अक्षरों का प्रयोग हो सकता है क्योंकि पश्चिमोत्तर प्रदेश और अवध के निवासियों का बहुत बड़ा भाग इन अक्षरों को जानता है।

"गवर्नमेंट आफ इंडिया लेफ्टिनेंट गवर्नर महाशय से पूर्णतया सहमत है। लेफ्टिनेंट गवर्नर ने यह आज्ञा पश्चिमोत्तर प्रदेश के हाईकोर्ट, अवध के जुडीशल कमिश्नर और बोर्ड आफ रेवेन्यू की अनुमति से प्रचलित की है, जिन सब की यह संमति थी कि सरकारी कार्यों से नागरी अक्षरों को अलग रखना अब उचित नहीं है। प्रांतिक गवर्नमेंट की आज्ञा न्यायालय की प्रचलित भाषा से कोई संबंध नहीं रखती, जिसमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ और न वह उन लोगों को किसी प्रकार से रोकती है जो फारसी अक्षरों का प्रयोग किया चाहते हैं। प्रचलित नियमों के अनुसार नायब तहसीलदार से लेकर प्रत्येक कर्मचारी को उर्दू और हिंदी दोनों में योग्यता प्राप्त कर लेने की आवश्यकता है क्योंकि ये दोनों पश्चिमोत्तर प्रदेश और अवध की साधारण भाषाएँ हैं। प्रथम प्रश्न के अंतिम भाग का नियम इस नियम को केवल दफ्तर के उन सब कर्मचारियों के लिये भी बाध्य करता है जो अँगरेजी दफ्तर में नहीं हैं। पश्चिमोत्तर प्रदेश और अवध के न्यायालयों और दफ्तरों में सदा से कुछ प्रकार के कागज हिंदी में लिखे हुए लिए जाते हैं। अतएव वर्नाक्यूलर आफिस का कर्मचारी जो हिंदी नहीं जानता साधारण कामों को उचित रीति से करने के लिये वास्तव में योग्य नहीं है।

(२) "गवर्नमेंट आफ इंडिया इस बात को जानती है कि दूसरे प्रश्न में जो बात पूछी गई है उसके सम रूप से स्थिर करने के लिये पश्चिमोत्तर प्रदेश और अवध की गवर्नमेंट हाईकोर्ट और जुडीशल कमिश्नर से लिखा-पढ़ी कर रही है। (१) यह बात प्रत्यक्ष है कि दोनों प्रदेशों के लिये एक ही नियम का होना आवश्यक है, परंतु गवर्नमेंट आफ इंडिया प्रांतिक गवर्नमेंट को जो प्रधान न्यायालयों की संमति से कार्य कर रही है, इस प्रस्ताव के अनुकरण की संमति देकर उसके विचार में बाधा नहीं डालना चाहती।"

सभा ने यह कार्य यहीं नहीं छोड़ दिया। उसे आशंका थी कि सन् १८३७ की छोटी सी भूल के कारण जो आंशिक सुविधा ६० वर्षों के परिश्रम से प्राप्त हुई है उसका यदि ठीक तरह से उपयोग न किया गया तो कहीं सारा परिश्रम फिर निष्फल न चला जाय। इसलिये उसने अदालतों में नागरी-प्रचार-विषयक अपनी योजना जारी रखी। हिंदी-विरोधियों का इतना भय नहीं था जितना वकीलों, मुंशियों और अदालतों के अहलकारों की स्वार्थांधता का था। ये लोग नागरी को अपनी आय में बाधक समझते थे। उनका विचार था कि नागरी लिपि का प्रयोग प्रचलित हो जाने पर मुवक्किल उनके चंगुल से बहुत कुछ निकल जायँगे। दूसरा भय था दफ्तर के कार्यकर्ताओं में नागरी जाननेवालों की अत्यधिक न्यूनता के कारण उद्देश्य की पूर्ति में पड़नेवाली बाधा का। सभा यह भी जानती थी कि सरकार ने जितनी सुविधा उचित समझी

प्रदान कर दी; उस सुविधा से अपने उद्देश्य की पूर्ति में अधिकाधिक काम लेने, अदालतों में नागरी का व्यवहार बढ़ाने, उसे सर्वप्रिय बनाने आदि का बहुत कुछ काम अभी उसे करना है। इसलिये २१ ज्येष्ठ, १९५७ ( ४ जून, १९०० ) की बैठक में सभा ने अदालतों में नागरी-प्रचार की व्यवस्था करने के लिये निम्नलिखित सात सदस्यों की उपसमिति बना दी—सर्वश्री सुधाकर द्विवेदी, माधोलाल, राधाकृष्णदास (मंत्री), राय शिवप्रसाद ( सहायक मंत्री ), कालीप्रसाद सिंह, श्यामसुंदरदास, गोविंददास।

इस प्रकार अब सभा ने जनता और अदालती कार्यकर्त्ताओं में उद्योग करना आरंभ किया। सभा की ओर से प्रचारक नियुक्त किया गया जिसने इस कार्य के लिये संयुक्त प्रांत के प्रायः सभी जिलों का दौरा करके वकीलों और मुहर्रिरों को नागरी-लिपि का प्रयोग करने की प्रेरणा की। इन लोगों को नागरी सिखाने के लिये कई स्थानों पर रात्रि-पाठशालाओं का भी आयोजन किया गया। किंतु जनता की उदासीनता के कारण इस कार्य में विशेष सफलता नहीं मिली। तब सभा ने कचहरियों में अपनी ओर से ऐसे लेखक ( मुहर्रिर ) नियुक्त करने का निश्चय किया जो लोगों के प्रार्थनापत्र आदि नागरी में लिख दिया करें। सभा ने धनाभाव होते हुए भी काशी और फैजाबाद की अदालतों में संवत् १९५७ में ही लेखक नियुक्त कर दिए। पीछे इसके लिये भिनगा के राजा साहब से ७००) की सहायता भी सभा को प्राप्त हुई और १००) रीवाँ-नरेश से प्राप्त हुए। इसके बाद २२ मार्गशीर्ष, सं० १९६१ (८ दिसंबर, १९०४) को बहराइच और १८ चैत्र, सं० १९६१ (१ अप्रैल, १९०५) को रसड़ा (बलिया) में भी एक एक लेखक नियुक्त किया गया। कई वर्षों तक इसी प्रकार कार्य चलता रहा। वकीलों, उनके लेखकों, सरकारी अमलों और हाकिमों की ओर से सहयोग की अपेक्षा विरोध ही अधिक होता था। सभा इस विरोध का भी यथासाध्य प्रतिकार करती रहती थी। उसने हाकिमों से इस विषय में पर्याप्त पत्र-व्यवहार किया और उच्च पदाधिकारियों तक भी यह बात पहुँचाने का प्रयत्न किया। सं० १९६३ में उसने राय निहालसिंह के द्वारा प्रांतीय कौंसिल में प्रश्न कराए जिनका उत्तर सर जान ह्युवेट की सरकार ने बहुत संतोषजनक दिया था। प्रश्नोत्तर इस प्रकार थे—

प्रश्न—( १ ) "क्या सरकार को विदित है कि देवनागरी अक्षरों में लिखे हुए अर्जीदावे कभी कभी दीवानी अदालतों में इस कारण नहीं लिए जाते कि वे उर्दू में लिखे नहीं होते? उदाहरणार्थ—बनारस के मुंसिफ की अदालत में सन् १९०५ के अर्जीदावे संख्या ६३५ और ६३६।

( २ ) क्या सरकार कृपा कर यह आज्ञा देगी कि भविष्य में कोई अर्जीदावा केवल नागरी अक्षरों में होने के कारण अस्वीकृत न किया जाय?

उत्तर—"मुंसिफ साहब ने अर्जीदावे को इसलिये लौटा दिया कि वह उर्दू अक्षरों में लिखा जाय। यह इस विषय की स्पष्ट आज्ञा को उनके न समझने के कारण हुआ है। हाईकोर्ट के द्वारा उनको यह आज्ञा दी गई है कि भविष्य में वे नागरी अक्षरों में लिखे अर्जीदावों को अवश्य स्वीकार करें।"

इस प्रकार सभा समय समय पर अनेक कठिनाइयों का यथासाध्य प्रतिकार करती रही और अपने कार्य में आगे बढ़ती गई। अदालतों में नियुक्त वैतनिक लेखक प्रति वर्ष सहस्रों प्रार्थनापत्र नागरी में लिखते थे। किंतु आर्थिक सहायता के अभाव में बनारस को छोड़ अन्य जिलों में लेखकों की वैतनिक नियुक्ति सभा के लिये अधिक समय तक संभव न हुई। केवल बनारस की कलक्टरी और जजी में सभा के दो वैतनिक लेखक संवत् १९७० तक कार्य करते रहे। सं० १९७१ में वहाँ भी एक लेखक कम करना पड़ा। सं० १९७४ में सभा ने वकालतनामे, इजरायडिगरी और रेहन करने के फार्म हिंदी में छपवाकर बिक्री के लिये बनारस की दीवानी कचहरी में रखे। इनसे भी बहुत सहायता मिली। अभी तक सभा ये फार्म आदि छापती है और सभा-कार्यालय से अब भी लोग इन्हें खरीद ले जाते हैं।

सभा के इतने वर्षों के इस उद्योग से बनारस की अदालत में हिंदी का विरोध बहुत कुछ कम हो गया। इसका आभास सं० १९६८ से मिलने लगा था। इस वर्ष की एक घटना से यह विरोध बिलकुल ही समाप्त हो गया। उन दिनों सब जजी में इजरायडिग्री के मुहर्रिर मुफ्ती अहमद रजा ने हिंदी का बहुत विरोध किया और हिंदी के समर्थकों को बहुत हानि भी पहुँचाई। अंत में यह मामला इतना बढ़ा कि जिला जज के यहाँ तक पहुँचा। उन्होंने इस पर पूरा विचार करके मुफ्ती महाशय को कार्यालय से बदल दिया और उनके वेतन में भी ५) मासिक की कमी कर दी।

अब अनेक वकील अपना बहुत सा काम नागरी में करने लगे जिससे सभा को अपनी उद्देश्य-पूर्ति में बहुत सहायता मिली। हाकिम लोग भी हिंदी में लिखे प्रार्थनापत्रों पर पूरा ध्यान देने लगे। दो-एक स्थानों पर तो यहाँ तक देखने में आया कि हिंदी न जाननेवाले कई हाकिमों ने हिंदी में लिखा प्रार्थनापत्र सामने आने पर स्वयं उन्हें न पढ़ सकने के कारण दुःख प्रकट किया और अपनी इस त्रुटि को सखेद स्वीकार किया।

सं० १९६२ में बुलंदशहर के श्री वंशीधर वैश्य ने इस उद्देश्य से २५) सभा को भेजे थे कि संयुक्त प्रांत की जिला अदालतों के जिस मुहर्रिर ने सबसे अधिक प्रार्थनापत्र नागरी में लिखे हों उसे १५) और उससे कम लिखनेवाले को १०) पुरस्कार दिया जाय। सं० १९६४ तक कोई आवेदनपत्र न आने के कारण यह पुरस्कार किसी को नहीं दिया जा सका। सं० १९६५ में वैश्य महोदय ने १५) और भेजे जिससे प्रथम पुरस्कार २५) का और दूसरा १५) का कर दिया गया जिसमें से इस वर्ष हरदोई के श्री शिवलाल गुप्त को प्रथम और मेरठ के श्री बाबूलाल शर्मा को द्वितीय पुरस्कार मिला। १९६६ में अर्थाभाव के कारण कोई पुरस्कार नहीं दिया गया। द्रव्य के लिये अपील करने पर भी कोई फल नहीं हुआ।

सभा का विचार था कि हिंदी जाननेवाले मुहर्रिर तैयार किए जायँ और अरबी-फारसी के जिन कठिन शब्दों का प्रयोग अदालतों में होता है और जिनके कारण सर्वसाधारण को उर्दू जाननेवालों की शरण लेनी पड़ती है उनका हिंदी कोश तैयार किया जाय। बनारस के प्रसिद्ध वकील श्री गौरीशंकरप्रसाद और उनके मुहर्रिर ब्रह्मचारी विवेकानंद ने पहली योजना को सफल बनाने में बहुत सहायता की। इन्होंने हिंदी के मुहर्रिर तैयार करने के लिये अपने यहाँ उनकी कक्षा खोल दी और अपने पास से १००) उसके प्रारंभिक खर्च के लिये प्रदान

करने की भी कृपा की। उनके प्रयत्न से कई सुयोग्य हिंदी मुहर्रिर तैयार हुए जिन्होंने कई अदालतों में वर्षों तक हिंदी का बहुत कार्य किया।

सरल भाषा में कचहरी-हिंदी-कोश की तैयारी भी आरंभ कर दी गई। यह कार्य सभा के प्रचार-मंत्री श्री माधवप्रसाद के अधीन था। इस कोश को तैयार कराने का प्रस्ताव भी उन्होंने ही किया था। यह कोश सं० १९८६ में छपकर तैयार हुआ। इसकी विस्तृत चर्चा 'कोश' शीर्षक प्रकरण में की गई है।

सं० १९८४ में सभा ने अदालतों में नागरी लिपि के प्रार्थनापत्रादि देने के संबंध में सवा लाख सूचनापत्र छपवाकर संयुक्त प्रांत के प्रत्येक जिले में वितरित कराए थे। उसने सं० १९८५ में अपनी यह योजना कार्य-रूप में परिणत कर दी कि नागरी में दावे आदि लिखनेवाले मुहर्रिरों को प्रत्येक अर्जीदावे के लिये।) तथा प्रत्येक इजरायडिगरी की दरखास्त के लिये =) पुरस्कार दिया जाय। इस योजना से पर्याप्त सफलता मिली। दिन दिन नागरी में लिखी दरखास्तों और अर्जीदावों की संख्या बढ़ने लगी। सं० १९८६ में काशी के चौवालीस वकीलों ने सभा की योजना में सहयोग दिया और १४६८ दरखास्तें नागरी अक्षरों में लिख कर दीं। अगले ही वर्ष सं० १९८७ में वकीलों की संख्या ४६ और उनके द्वारा दी गई नागरी की दरखास्तों की संख्या २०३५ हो गई। इस वर्ष सभा ने इस कार्य पर ७००) व्यय किए जिनमें चंदे से केवल १८) ही प्राप्त हुए थे।

मुहर्रिरों को।) और =) प्रति दावे और दरखास्त के हिसाब से दिए जानेवाले पुरस्कारों की योजना के फलस्वरूप सं० १९८८ में पुरस्कृत दावों और दरख़ास्तों की संख्या २३१८ तक पहुँच गई। इस प्रकार यह संख्या उत्तरोत्तर बढ़ती गई और सभा की योजना के अनुसार कार्य करनेवाले वकीलों की संख्या में भी प्रतिवर्ष वृद्धि होने लगी। सभा के वैतनिक मुहर्रिर द्वारा जो डेढ़ दो हजार के लगभग दरखास्तें नागरी में लिखी जाती थीं वे इस संख्या से अलग होती थीं। सं० १९९२ से अर्थाभाव के कारण सभा को यह पुरस्कार-योजना बंद कर देनी पड़ी। किंतु काशी की कचहरी में सभा का वैतनिक लेखक यथापूर्व अपना कार्य करता रहा। संवत् १९९२ से आर्थिक कठिनाई के कारण इसको भी हटाना पड़ा।

सं० १९९४ में अदालतों में प्रांतीय-भाषा-प्रवेश को सौ वर्ष समाप्त होते थे। अतः इस वर्ष के अपने वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर सभा ने नागरी-प्रचार-सप्ताह मनाने का आयोजन किया जो २१ माघ ( ३ फर्वरी ) से २७ माघ ( ९ फर्वरी ) तक बड़े समारोह के साथ मनाया गया। इसमें पहले दिन श्री राजबहादुर लमगोड़ा ऐडवोकेट के सभापतित्व में अदालतों में प्रांतीय-भाषा-प्रवेश शताब्दी मनाई गई। उस दिन सर्वश्री गोविंदराव जोगलेकर, ठाकुरदास, मुहम्मद मूसा आदि वकीलों और सभापति के बड़े प्रभावशाली व्याख्यान हुए। इस अवसर पर अदालतों में नागरी लिपि तथा सुबोध भाषा के प्रयोग के पक्ष में कई महत्त्व-पूर्ण प्रस्ताव भी स्वीकृत हुए। इसके अतिरिक्त इस अवसर पर श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय ने 'तुलसी दिवस' का, श्री ठाकुर गोपालशरणसिंह ने 'कविसमाज' का और श्री संपूर्णानंद ने सभा के वार्षिकोत्सव का सभापतित्व किया था। चौथे दिन श्री फूलदेवसहाय वर्मा और पाँचवें दिन राय कृष्णदास का व्याख्यान तथा छठें दिन थियोसाफिकल स्कूल के छात्रों का अभिनय और श्री नोनीगोपाल का संगीत विशेष

उल्लेखनीय थे। यह नागरी-प्रचार सप्ताह मनाने के लिये अन्य हिंदीसेवो संस्थाओं तथा समस्त संबद्ध सभाओं को भी लिखा गया था। अनेक स्थानों पर यह सप्ताह बड़े समारोह के साथ मनाया गया।

यद्यपि अर्थाभाव के कारण मुहर्रिरों को पुरस्कार आदि देना और कचहरियों में वैतनिक लेखक नियुक्त करना वंद कर दिया गया किंतु सभा इस ओर से उदासीन न थी। दूसरे रूपों में उसका एतद्विषयक उद्योग बराबर चल रहा था। सं० १९९५ में (२९-१२-३८ को) सभा को तत्कालीन सभापति श्री रामनारायण मिश्र ने संयुक्त प्रांत के प्रधान मंत्री माननीय श्री गोविंदवल्लभ पंत को पत्र लिखकर उनका ध्यान इस कार्य की ओर आकृष्ट किया। उस पत्र के साथ गत १०० वर्षों में दी गई इस विषय की सरकारी आज्ञाओं में से कुछ की प्रतिलिपि और कचहरी-हिंदी-कोश की एक प्रति भी भेजी थी। वह पत्र यहाँ उद्धृत किया जाता है—

"माननीय महोदय,

आपकी सेवा में कचहरी-हिंदी-कोश तथा हिंदुस्तानी शिष्टाचार की एक एक प्रति भेजी जा रही है।

भारतीय न्यायालयों में अरबी और फारसी के शब्दों का अनिवार्य रूप से कुछ ऐसा प्रयोग होता है कि साधारण जनता के लिये उस भाषा का समझना प्रायः असंभव हो जाता है। इस कठिनाई को समझकर सरकार ने एक शताब्दी पूर्व से समय समय पर इस संबंध में अपनी आज्ञाएँ प्रकाशित की हैं जिनमें प्रांत की प्रचलित भाषा के प्रयोग का समथन है। उन आज्ञाओं में से कुछ की प्रतिलिपि भी आपकी सेवा में इस पत्र के साथ प्रेषित है। खेद है, सरकारी आज्ञाएँ अब तक व्यावहारिक रूप में न आ सकीं। पर अब समय आ गया है कि इस कठिनाई को यथाशीघ्र दूर किया जाय। इस संबंध में पिछले साल भी आपकी सेवा में निवेदन किया गया था और आपने कृपापूर्वक आश्वासन दिया था कि सरकार इस पर विचार करेगी। यदि सरकार ने कचहरियों की वर्तमान भाषा को सुधारने का कार्य हाथ में लिया तो आशा है सभा के कचहरी-हिंदी-कोश से उसमें कुछ सहायता मिल सकेगी।"

संवत् १९९७ में श्री चंद्रबली पांडे ने सभा की ओर से लखनऊ, मेरठ, देहरादून, सहारनपुर, हरद्वार और बरेली आदि स्थानों में हिंदी-प्रचार के लिये यात्रा की। उनके प्रयत्न से बरेली की कचहरी में वहाँ के कुछ उत्साही हिंदी-प्रमियों ने एक हिंदी-लेखक की नियुक्ति की। उसके खर्च के लिये सभा ने भी एक वर्ष के लिये ५) मासिक सहायता देना स्वीकार किया था।

अदालतों में नागरी-प्रचार का जो उद्योग सभा ने इतने वर्ष तक किया उसके फल-स्वरूप अदालतों में नागरी लिपि के लिये अब कोई बाधा नहीं है। उर्दू या अँगरेजी न जाननेवाले लोग नागरी लिपि में अपनी दरखास्तें दे सकते हैं। सभा को संतोष है कि अनेक विरोध और विघ्न-बाधाओं के रहते हुए भी कुछ ऐसे जज, मैजिस्ट्रेट और वकील विद्यमान हैं जो बराबर अपना काम हिंदी में करते हैं। सभा ने हिंदी का मार्ग बहुत कुछ परिष्कृत कर दिया है। यदि अब भी किसी अदालत में नागरी लिपि की उपेक्षा होती है तो इसका कारण हिंदी जाननेवाले वकील, मुखतार और कर्मचारियों में इच्छा और साहस का अभाव है। यदि कतिपय हाकिमों या कर्मचारियों के व्यक्तिगत विरोध के भय से लोग हिंदी में काम करने से

देखते हैं तो यह उनका अपना दोष है जो अत्यंत अनुचित है। इससे गरीब जनता को व्यर्थ कष्ट उठाना पड़ता है। अदालतों से संबंध रखनेवाले प्रत्येक हिंदी-प्रेमी का कर्त्तव्य है कि वह ऐसे विरोधों की परवाह न करके साहसपूर्वक अपना काम हिंदी में करे। सभा इस बात का विचार कर रही है कि अपनी अर्द्ध-शताब्दी के अवसर पर इसके लिये प्रांतव्यापी आंदोलन आरंभ किया जाय। किंतु हर हालत में इस कार्य की पूर्ण सफलता के लिये अदालती लोगों का साहस-पूर्ण सहयोग अपेक्षित है। उसके बिना सफलता नहीं मिल सकती। वकीलों और विशेषकर नवयुवक वकीलों को इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिए।

अदालतों में ही नहीं, जिला बोर्डों, म्युनिसिपल बोर्डों, पुलिस और नहर के महकमों में भी सभा ने नागरी लिपि के प्रचार का बहुत उद्योग किया है। उसमें सफलता भी अवश्य मिली है, किंतु बहुत कम। नोटों और सिक्कों पर नागरी लिपि के अभाव की ओर भी सभा कई बार भारत सरकार का ध्यान आकृष्ट कर चुकी है, जिसके फल-स्वरूप दस रुपये के नोटों पर नागरी लिपि के भी दर्शन हुए। नागरी में लिखे पतोंवाले पत्र पंजाब के डाकघरवाले 'डेड लेटर आफिस' भेज दिया करते थे, जैसा कि वहाँ आज कल फिर होने लगा है। सभा ने वहाँ के पोस्टमास्टर-जेनरल से लिखा-पढ़ी की और उन्होंने अपनी भूल स्वीकार की और सभा को लिखा कि पंजाब प्रांत में नागरी लिपि और हिंदी भाषा अज्ञात नहीं मानी जायगी। किंतु आज पंजाब के डाकघरों में नागरी का जो अनादर और उपेक्षा हो रही है उसका प्रतिकार साहस और दृढ़ता के साथ अति शीघ्र होना आवश्यक है। सभा ने पंजाब में नागरी-प्रचार के लिये एक सुदृढ़ केंद्र हरिद्वार के पास ज्वालापुर में स्थापित करने का निश्चय किया है। श्री स्वामी सत्यदेवजी ने २५०००) की मालियत का अपना 'सत्यज्ञान-निकेतन' और उसकी भूमि इसी कार्य के लिये सभा को अर्पित कर दी है। सब लिखा-पढ़ी हो चुकी है। ३ फाल्गुन, सं० २००० ( १५ फरवरी, १९४४ ) से कार्य आरंभ हो जायगा।

---

# १०—व्याख्यानमाला

## ( १ ) सुबोध-व्याख्यानमाला

बनारस में 'यूनिवर्सिटीज कमीशन' के संमुख सभा की ओर से साक्षी देते हुए श्री गोविंददास ने यह सुझाव रखा था कि जिस प्रकार योरोप के इँगलैंड आदि देशों में वहाँ के अच्छे अच्छे विद्वान् जनता ( जिसमें मजदूर आदि साधारण बुद्धि के लोगों की संख्या अधिक होती है ) के लिये निर्धारित स्थानों पर बहुत गहन विषयों पर व्याख्यान देते हैं उसी प्रकार का प्रबंध सरकार यहाँ भी करे और उच्च कक्षा के छात्रों तथा अध्यापकों के लिये ऐसे व्याख्यान नियत संख्या में देना आवश्यक कर दे। इन व्याख्यानों का समय ऐसा नियत हो कि जनता उन्हें सुनने का अवकाश पा सके। दूसरे, व्याख्यान इस ढंग से दिए जायँ कि सूक्ष्म से सूक्ष्म बात साधारण बुद्धिवाले व्यक्ति भी सरलता से समझ सकें। योरोप में इन दोनों बातों का ध्यान रखा जाता है। वहाँ तो वे व्याख्यान पुस्तकाकार छाप भी दिए जाते हैं। वर्ष में एक बार परीक्षा भी होती है। जिसकी इच्छा हो उसमें संमिलित हो सकता है और उत्तीर्ण होनेवाले व्यक्तियों को सरकार की ओर से प्रमाणपत्र भी दिए जाते हैं। इस विधि से सर्वसाधारण में विद्या का प्रसार बड़ी सुगमता से हो जाता है। वहाँ इन व्याख्यानों को 'यूनिवर्सिटी एक्सटेंशन लेक्चर्स' कहते हैं। कमीशन के संमुख यह सुझाव उपस्थित कराने का सभा का अभिप्राय यही था कि इस प्रकार देश की अशिक्षा दूर करने और सर्वसाधारण को विज्ञान और स्वास्थ्य आदि विषयों के सिद्धांतों से परिचित करने में बहुत सहायता मिलेगी। कमीशन ने इस सुझाव को सुन तो लिया पर इसे कार्यान्वित करने के विषय पर कोई ध्यान नहीं दिया। सभा इस पर विचार करती रही और जब उसका अपना भवन बनकर तैयार हो गया तो उसने व्याख्यान संबंधी अपनी योजना का परीक्षण स्वयं आरंभ करने का निश्चय किया। सभाभवन के हाल का निर्माण भी इसी दृष्टि से कराया गया था। व्याख्यानोपयोगी सब सामग्री भी प्रस्तुत करा ली गई थी। उन दिनों काशी में कदाचित् ही कोई सभा ऐसी होती थी जो सभा-भवन में न होती हो। इसका कारण यही था कि सभा करनेवालों को यहाँ सब प्रकार की सुविधा थी। उनको केवल अपनी सभा का विज्ञापन दे देना और समय पर भवन में आ बैठना, बस इतना ही करना पड़ता था। ऐसी स्थिति में सभा ने सं० १९६१ में यह निश्चय किया कि यदि कुछ महाशय व्याख्यान देने के लिये उद्यत हो जायँ तो इस प्रकार के सुबोध व्याख्यानों का प्रबंध किया जाय। इसके लिये सभा ने सर्वश्री रेवरेंड ई० ग्रीव्स, राधाकृष्णदास, डाक्टर छन्नूलाल, श्यामसुंदरदास और रामनारायण मिश्र ( मंत्री ) को एक उपसमिति भी बना दी। इस समिति के उद्योग से पहले ही वर्ष सात व्याख्यान हुए। आरंभ में यह आशंका थी कि श्रोताओं की उपस्थिति संतोषजनक न होगी। किंतु पहले व्याख्यान से ही उनकी संख्या बढ़ने लगी और उत्तरोत्तर बढ़ती ही गई। यहाँ तक कि कभी कभी तो सभा के बरामदों में भी स्थान नहीं बचता था। इस सफलता से सभा को निश्चय हो गया कि यदि उपयोगी विषय और योग्य वक्ता हों

तो सभा इन व्याख्यानों के द्वारा देश में नए प्रकार का विद्यानुराग उत्पन्न कर सकती है। परंतु सर्व साधारण तक वैज्ञानिक और ऐतिहासिक बातें पहुँचाने के लिये गूढ़ और रूखे विषयों को भी रोचक और साधारण बुद्धिगम्य बनाने की बड़ी आवश्यकता थी। ऐसे विषयों के व्याख्यानों में बहुत सी ऐसी चीजों का वर्णन आ जाता है जिनका ज्ञान चित्रों द्वारा शीघ्रता और सरलता से हो सकता है। इस कारण सभा ने एक 'मैजिक लालटेन' का प्रबंध करना भी आवश्यक समझा। पहले वर्ष के पाँचवें व्याख्यान में, जो २६ जनवरी १६०५ को हुआ था, बनारस के कलेक्टर श्री ई० एच० रेडिचे सभापति थे। व्याख्यान समाप्त होने पर श्री रामनारायण मिश्र ने उनका ध्यान इस आवश्यकता की ओर आकर्षित किया। रेडिचे महोदय ने आवश्यकता का औचित्य स्वीकार किया और इस विषय में सभा की सहायता करने का आश्वासन दिया। पीछे इनकी प्रेरणा से सभा को इस कार्य के लिये बनारस के जिला बोर्ड स २५०), म्युनिसिपल बोर्ड से २५०) और प्रसिद्ध रईस श्री मोतीचंद से ५००), इस प्रकार १०००) प्राप्त हुए। 'मैजिक लालटेन' और उसकी स्लाइडों को पसंद करके छाँटने के लिये सभा ने सर्वश्री अभयचरण सान्याल, गोविंददास, श्यामसुंदरदास, रामनारायण मिश्र और दुर्गाप्रसाद की एक समिति बना दी। उन्हीं दिनों श्रीमती एनी बेसेंट इँगलैंड गई हुई थीं। सभा की प्रार्थना पर उन्होंने तुरंत मैजिक लालटेन इँगलैंड से खरीदकर भिजवा दी। लालटेन और उसका सब सामान संवत् १६६२ में काशी आ गया। इसमें सब मिलाकर १०७८॥-)॥ खर्च हुए। इसके अतिरिक्त सभा का यह भी विचार था कि ये व्याख्यान एक मास के भीतर ही छपवा भी दिए जाया करें। इसके लिये व्याख्यानों के समय उनको लिखने का प्रबंध होना आवश्यक था जिसके लिये सभा ने हिंदी में अँगरेजी के 'शार्टहैंड' के समान ही संकेत-लिपि तैयार कराने का निश्चय किया। इसमें भी आगे चलकर सभा को पूरी सफलता प्राप्त हुई।

दूसरे वर्ष से व्याख्यानोपसमिति के स्थान पर प्रबंध समिति का एक सभासद् इस कार्य के लिये चुनने का निश्चय हुआ और श्री रामनारायण मिश्र को व्याख्यानों के प्रबंध करने का काम सौंप गया। इस प्रकार ये व्याख्यान सोलह वर्ष (सं० १६७६) तक बराबर होते रहे। संवत् १६७७ और ७८ में श्री शिवकुमारसिंह को यह कार्य सौंपा गया था किंतु सभाभवन में पुस्तकालय आदि का कार्य बहुत बढ़ जाने के कारण स्थान और सुविधा के अभाव में कोई व्याख्यान न हो सका और तब से 'सुबोध-व्याख्यान-माला' एक प्रकार से बंद ही हो गई।

## (२) 'प्रसाद'-व्याख्यानमाला

इसके बाद संवत् १६८८ में स्वर्गीय श्री जयशंकर प्रसाद ने ६००) की निधि 'साहित्य-परिषद्' के लिये सभा को दान दी। उसके उद्देश्य की पूर्ति के लिये 'साहित्यगोष्ठी' स्थापित की गई जिसके द्वारा साहित्य-प्रेमियों को समय समय पर स्थानीय तथा बाहर के अनेक विद्वानों और कवियों के व्याख्यान और रचनाएँ सुनने के अवसर मिलते रहते हैं। किंतु सर्व-साधारण को इससे विशेष लाभ होता न देख गोष्ठी को अधिक उपयोगी और आकर्षक बनाने के लिये सं० १६६४ से इसके अंतर्गत 'प्रसाद'-व्याख्यान-माला की आयोजना की गई है जिसमें समय समय पर विद्वानों के सुबोध व्याख्यान हुआ करते हैं।

सुबोध व्याख्यानमाला और 'प्रसाद'-व्याख्यान-माला के व्याख्यानों की सूची, उनके विषय और व्याख्याताओं की सूची सहित, संवत्-क्रम से यहाँ दी जाती है—

## सुबोध-व्याख्यानमाला के व्याख्यानों की सूची

| संवत् | व्याख्यान | व्याख्याता |
|---|---|---|
| १९६१ | १—सूर्य | श्री दुर्गाप्रसाद बी० ए० |
| | २—हिंदी भाषा और साहित्य | श्री श्यामसुंदरदास बी० ए० |
| | ३—हिंदी भाषा और साहित्य | „ |
| | ४—भाषातत्त्व के मूल सिद्धांत | श्री रामावतार पांडे एम० ए० |
| | ५—सौर जगत् | श्री दुर्गाप्रसाद बी० ए० |
| | ६—मौखिक शिक्षा | श्री सुशीला टहलराम |
| | ७—भारतवर्ष के सामाजिक सुधार का इतिहास | श्री माधोप्रसाद |
| | ८—प्रणव अर्थात् ओंकार की एक पुरानी कहानी | श्री भगवानदास एम० ए० |
| १९६२ | ९—मानवशरीर | श्री दुर्गाप्रसाद बी० ए० |
| | १०—व्यावहारिक कृषि-विद्या | श्री भैरवप्रसाद सिंह |
| | ११—उत्तरी ध्रुव | श्री दुर्गाप्रसाद बी० ए० |
| १९६३ | १२—चंद्रमा | „ |
| | १३—रसायन शास्त्र के मूल तत्त्व ( प्रयोग सहित ) | श्री लक्ष्मीचंद्र एम० ए० |
| | १४—नशा न पीना | श्री ए० सी० मुकर्जी |
| १९६४ | १५—आँख ( अवयवों के नमूनों सहित ) | श्री बद्रीनाथ वर्मा |
| | १६—सूक्ष्म जंतु विद्या | डाक्टर शरत् कुमार चौधरी |
| | १७—ज्योतिष् | जिला इंजीनियर श्री छोटेलाल |
| १९६५ | १८—रक्त और शरीर में उसका प्रभाव | श्री केशवदेव शास्त्री |
| | १९—मनुष्य में ईश्वरीय शक्ति | „ |
| | २०—एक से अनेक | „ |
| | २१—विकास सिद्धांत | „ |
| | २२—गर्भविधान | „ |
| | २३—जीवन का विकास | „ |
| | २४—सृष्टि की उत्पत्ति अथवा विकासवाद | „ |
| १९६६ | २५—ध्रुव देश | , |
| १९६७ | कोई व्याख्यान नहीं हुआ | |

| | | |
|---|---|---|
| १९६८ | २६—एक लिपि तथा एक भाषा | श्री शारदाचरण मित्र एम० ए०, बी० एल (भूतपूर्व हाईकोर्ट जज) |
| | २७—एक लिपि तथा एक भाषा | श्री राय शरच्चंद्र दास |
| | २८—अमेरिका के नगरों के सामाजिक जीवन | महाशय सत्यदेव जी* |
| | २९—अमेरिका में निर्धन विद्यार्थियों का परिश्रम | ,, |
| | ३०—अमेरिका कैसे धनवान हुआ | ,, |
| | ३१—इस पृथ्वी पर जीव कब उत्पन्न हुए | श्री लक्ष्मीचंद एम० ए०, एम० एस-सी० |
| | ३२—ईथर की भँवर | ,, |
| १९६९ | ३३—बच्चों की जीवनरक्षा | श्री कालीचरण दुबे हेल्थ आफीसर |
| | ३४—दूध और उससे रोगों की उत्पत्ति | श्री कालीचरण दुबे हेल्थ आफीसर |
| | ३५—बर्मा और बर्मानिवासी | श्री केशवदेव शास्त्री |
| | ३६—नल और उससे लाभ | डाक्टर अमरनाथ बनर्जी |
| १९७० | ३७—भोजपुरी बोली | श्री मन्नन द्विवेदी गजपुरी |
| | ३८—पाचनशक्ति | डाक्टर कौशलानंद सहाय |
| | ३९—मनुष्य के शरीर की बनावट | डाक्टर शरत् कुमार चौधरी |
| १९७१ | ४०—छूतवाले रोग | डाक्टर कालीचरण दुबे हेल्थ आफीसर |
| | ४१—स्कूलों की स्वास्थ्यरक्षा | ,, |
| | ४२—यूरोपीय युद्ध | श्री जी० जे० ओ० बर्न, आई० सी० एस० |
| | ४३—जलसेना | ,, |
| | ४४—कैंब्रिज विश्वविद्यालय | श्री श्रीप्रकाश बी० ए० बैरिस्टर |
| | ४५—विज्ञान और शिल्प की शिक्षा | श्री लक्ष्मीचंद्र एम० ए० |
| १९७२ | ४६—दूध | श्री डाक्टर कालीचरण एम० ए० |
| | ४७—सहकारी बंक | रायसाहब श्री ए० सी० मुकर्जी |
| | ४८—यूरोप में पोप का अभ्युदय | श्री श्रीप्रकाश |
| | ४९—सृष्टिनिर्माण | श्री रामदास गौड़ एम० ए० |
| | ५०—साबुन | श्री लक्ष्मीचंद्र एम० ए० |
| | ५१—क्षयरोग | डाक्टर बनारसीदास |

* ये अब स्वामी सत्यदेव परिव्राजक के नाम से प्रसिद्ध हैं। इन्होंने पचीस हजार की मालियत का अपना 'सत्यज्ञान-निकेतन' काशी नागरीप्रचारिणी सभा को हिंदी-प्रचार का केंद्र बनाने के लिये इसी वर्ष अर्पण किया है।

| | | |
|---|---|---|
| १६७३ | ५२—क्षयरोग | डाक्टर कालीचरण दुबे |
| | ५३—राष्ट्रलिपि | श्री श्यामसुंदरदास |
| | ५४—आँग्ल देश की शासनप्रणाली | श्री श्रीप्रकाश |
| १६७४ | ५५—माँ-बाप के द्वारा बच्चों में रोग फैलना | डाक्टर नौनिहाल सिंह भार्गव |
| | ५६—शतावधान | श्री राधाकुमार व्यास |
| | ५७—हिंदुओं की नित्य-क्रिया में वैज्ञानिक सिद्धांत | डाक्टर नौनिहाल सिंह भार्गव |
| १६७५ | ५८—शिवाजी का उत्तरी भारत में भ्रमण | श्री यदुनाथ सरकार, एम० ए० |
| | ५६—जापान | श्री एन० एन० गोडबोले |
| | ६०—भोजन | श्री श्रीप्रकाश |

इन पंद्रह वर्षों में आठ वर्ष ( सं० १६६१–६२ और १६६६–७४ ) श्री रामनारायण मिश्र इन व्याख्यानों के प्रबंधकर्त्ता रहे। शेष वर्षों में सर्वश्री माधोप्रसाद, सरयूनारायण त्रिपाठी और श्रीप्रकाश ने इस कार्य का संपादन किया।

इन व्याख्यानों के विषयों से यह स्पष्ट है कि सभा किस प्रकार जनता में सुरुचि और जागृति उत्पन्न करने का भी प्रयत्न करती रही है।

## 'प्रसाद'-व्याख्यानमाला के व्याख्यानों की सूची

| | | |
|---|---|---|
| सं० १६६४ | १—मध्ययुग की वास्तु कला के सिद्धांत और उसमें व्यक्तित्व | श्री डा० परमात्माशरण, एम० ए०, पी-एच० डी० |
| | २—हेमंतचर्या | श्री कविराज प्रतापसिंह, रसायनाचार्य |
| | ३—बुद्धिमाप | श्री वंशगोपाल झिंगरन, एम० एस-सी, बी० एड० |
| | ४—समाजवाद का दार्शनिक आधार | श्री संपूर्णानंद |
| | ५—वैदिक काल में राज्य-शासन की व्यवस्था | श्री श्रीपाद दामोदर सातवलेकर |
| | ६—सन् १६३५ का भारतीय शासन-विधान | श्री श्रीप्रकाश, एम० एल० ए० |
| | ७—स्वीडिश जीवन | श्रीमती एल० एम० रूसन ब्लाद ( स्वीडन ) |
| | ८—विद्या-व्यसन ( हरि-कीर्तन ) | श्री लक्ष्मण केशव खाँडेकर |
| | ६—आधुनिक जापान | श्री रामानुग्रह झा |
| सं० १६६५ | १०—यूरोप-यात्रा | श्री डाक्टर एस० के० चौधरी |
| | ११—महाभारत-युद्धकाल | श्री देवसहाय त्रिवेदी |
| | १२—रामायण पर प्रवचन | श्री प्यारेलाल मिश्र व्यास |

| | | |
|---|---|---|
| | १३—प्राचीन मुद्राविज्ञान तथा उससे ज्ञात होनेवाली ऐतिहासिक बातें ( सचित्र ) | श्री दुर्गाप्रसाद खत्री |
| | १४—जापान की आधुनिक उन्नतावस्था (सचित्र) | श्री डाक्टर एन० एन० गोडबोले |
| | १५—विदेशों के उत्सव और मनोरंजन | श्री अनंतगोपाल भिंगरन, एम० एस-सी० |
| | १६—समाजवाद क्या है ? | श्री मुकुटविहारीलाल, एम० ए० |
| | १७—खगोल विज्ञान ( सचित्र ) | श्री दीनानाथ शास्त्री चुलैट |
| सं० १९९६ | १८—जर्मनी में आर्य-संस्कृति का प्रचार | श्री स्वामी सत्यदेव परिव्राजक |
| | १९—तुलसी के दार्शनिक विचार | श्री केशवप्रसाद मिश्र |
| | २०—मनोविश्लेषण | श्री डाक्टर भीखनलाल आत्रेय, एम०ए०,डी० लिट्० |
| | २१—साहित्य | श्री माखनलाल चतुर्वेदी |
| | २२—(१) ऋषि-संदेश, (२) वैदिक साहित्य की उपयोगिता | श्री वेदवाचस्पति मोतीलाल शास्त्री |
| | २३—रेडियो ( सचित्र ) | श्री यू० ए० असरानी |
| | २४—आँखों की रक्षा ( सचित्र ) | श्री डाक्टर अमूल्यकुमार बनर्जी |
| | २५—हिंदी की वर्तमान अवस्था | श्री घनश्यामसिंह गुप्त |
| सं० १९९७ | २६—आर्यों का मूल निवास-स्थान भारत ही था | श्री संपूर्णानंद |
| | २७—आर्य-संस्कृति | श्री शिवनाथ झारखंडी |
| | २८—(१) बच्चों के रोग, (२) युवकों के रोग | श्री प्राणाचार्य कविराज प्रतापसिंह |
| | २९—ग्राम-गीत | श्री रामनरेश त्रिपाठी |
| | ३०—मानस-चिकित्सा | श्री डाक्टर उदयभानु |
| सं० १९९८ | ३१—हठयोग के आसन और बंध | श्री कृष्णानंद आचार्य |
| | ३२—रामायण की कथा | श्री बिंदुजी |
| | ३३—मनुष्य का आदर्श आहार | श्री प्राणाचार्य कविराज प्रतापसिंह |
| | ३४—रासो की प्रामाणिकता | म० म० श्री मथुराप्रसाद दीक्षित |
| | ३५—प्राचीन भारतीय गणित का इतिहास | श्रीमती कुमारी सुप्रि सिनहा |
| | ३६—हिंदू और मुसलिम वास्तु-कला में अलंकरण | श्री डाक्टर परमात्माशरण |
| | ३७—तक्षशिला | श्री श्रीकृष्ण व्यंकटेश पुणतांबेकर |
| | ३८—योग | श्री शिवकुमार शास्त्री |
| | ३९—लिपि-सुधार | श्री भगवानदास सिडनी |
| | ४०—मानमंदिर और अनुभूत प्रयोग | श्री चंडीप्रसाद |

| | | |
|---|---|---|
| सं० १९९९ | ४१—हिंदुओं के उत्सव और स्वास्थ्य | श्री कविराज प्रतापसिंह |
| | ४२—श्री० अरविंद का योग और उनका आश्रम | श्री केशवदेव ज्ञानी |
| | ४३—अभिनवगुप्ताचार्य का रसवाद | श्री वीरमणि उपाध्याय, एम० ए० |
| | ४४—रस-मीमांसा | श्री पद्मनारायण आचार्य |
| | ४५—गीता पर नवीन दृष्टि | श्री रामावतार शर्मा विद्याभास्कर |
| | ४६—हिंदी-काव्य में रहस्यवाद | श्री पद्मनारायण आचार्य, एम० ए० |
| | ४७—हिंदी-काव्य में छायावाद | श्री पद्मनारायण आचार्य, एम० ए० |
| | ४८—प्रगतिवाद | श्री नरेंद्र शर्मा |

———

## ११—पुरस्कार और पदक

हिंदी-साहित्य की अभिवृद्धि के निमित्त हिंदी-लेखकों को उत्साहित करने के उद्देश्य से सभा ने सुयोग्य लेखकों को समय समय पर पुरस्कार और पदक प्रदान करने के आयोजन का विचार बहुत पहले ही किया था। जनता में विशेषतया देश के नवयुवकों और बालकों में हिंदी भाषा और नागरी लिपि के प्रति रुचि और प्रेम उत्पन्न करना भी आवश्यक था। जिस प्रकार अच्छे साहित्य-निर्माताओं के अभाव में साहित्य की उन्नति नहीं होती उसी प्रकार निर्मित साहित्य को अभिरुचि के साथ पढ़नेवाले पाठकों की न्यूनता में भी साहित्य की वृद्धि मंद पड़ जाती है। इसलिये उन्नतिशील साहित्य का निर्माण करने के लिये विद्वान् और सर्वसाधारण दोनों में ही अभिरुचि उत्पन्न करना आवश्यक होता है। पदक और पुरस्कार इसके बहुत अच्छे साधन समझे जाते हैं। सभा ने भी इस मार्ग का अवलंबन किया और आरंभ से ही समय समय पर पदक और पुरस्कार देकर हिंदी-लेखकों को उत्साहित करने लगी। यह क्रम अब तक चल रहा है। इस संबंध में आरंभ से अब तक सभा ने जो जो उद्योग किए हैं यहाँ उनका दिग्दर्शन कराने के लिये उन्हें तीन भागों में विभक्त कर दिया गया है।

### ( १ ) हिंदी हस्तलिपि-परीक्षा

हिंदी भाषा और नागरी लिपि को सर्वप्रिय बनाने और उनकी ओर जनता को अधिक से अधिक आकृष्ट करने के लिये सभा अपने जन्मकाल से ही विविध रूपों में यत्न करती रही है। भाषा के साथ साथ लिपि का प्रश्न भी विशेष महत्त्व का है। अच्छी से अच्छी भाषा भी तब तक अधिक लोकप्रिय नहीं हो सकती जब तक उसकी लिपि में भी आवश्यक गुण विद्यमान न हों और वह निर्दोष एवं उपयोगी सिद्ध न हो सके। आज जिस प्रकार नागरी लिपि की विशेषताएँ संसारप्रसिद्ध हैं, ५० वर्ष पहले उनकी ओर वैसी लोकदृष्टि नहीं थी। फारसी और रोमी लिपियाँ प्रधानता प्राप्त करने के लिये आगे आना चाहती थीं और हिंदी को लोकदृष्टि और राजदृष्टि दोनों से ही ओझल रखकर पीछे हटा देने का प्रयत्न कर रही थीं। जो लिपि सुंदर, स्पष्ट, शुद्ध और शीघ्र लिखी जा सके उसी का विशेष आदर होना स्वाभाविक है। उन दिनों फारसी और रोमी लिपियों की परीक्षाएँ पारितोषिक की घोषणा के साथ स्कूलों और कालेजों में आरंभ की गई थीं। पर नागरी लिपि जिसमें उस समय भी देश की अधिकांश जनता अपना कार्य करती थी इसके लिये सर्वथा विस्मृत थी। सभा ने नागरी लिपि के प्रति इस उपेक्षा का अनुभव किया और इसके फलस्वरूप संवत् १९५० में ( ४ जून, १८९४ ) की अपनी बैठक में तत्कालीन मंत्री श्री श्यामसुंदरदास के प्रस्ताव पर 'वर्नाक्यूलर स्कूलों' में उत्तम नागरी लिपि लिखनेवाले छात्रों को उत्साहित करने के लिये पारितोषिक देने का निश्चय किया। इस निश्चय के अनुसार शिक्षा विभाग के डाइरेक्टर साहब से पत्रव्यवहार किया गया। उन्होंने सभा का प्रस्ताव स्वीकृत कर लिया। सभा ने 'वर्नाक्यूलर स्कूलों' के विद्यार्थियों में सर्वोत्तम नागरी अक्षर लिखने-

## सभा के संरक्षक

स्वर्गीय अलवर-नरेश श्रीमान् तत्रभवान् लेफ्टिनएट-कर्नल महाराज सवाई सर जयसिंह बहादुर, जी॰ सी॰ एस॰ आई॰, सी॰ आई॰ ई॰, जी॰ बी॰ ई॰।
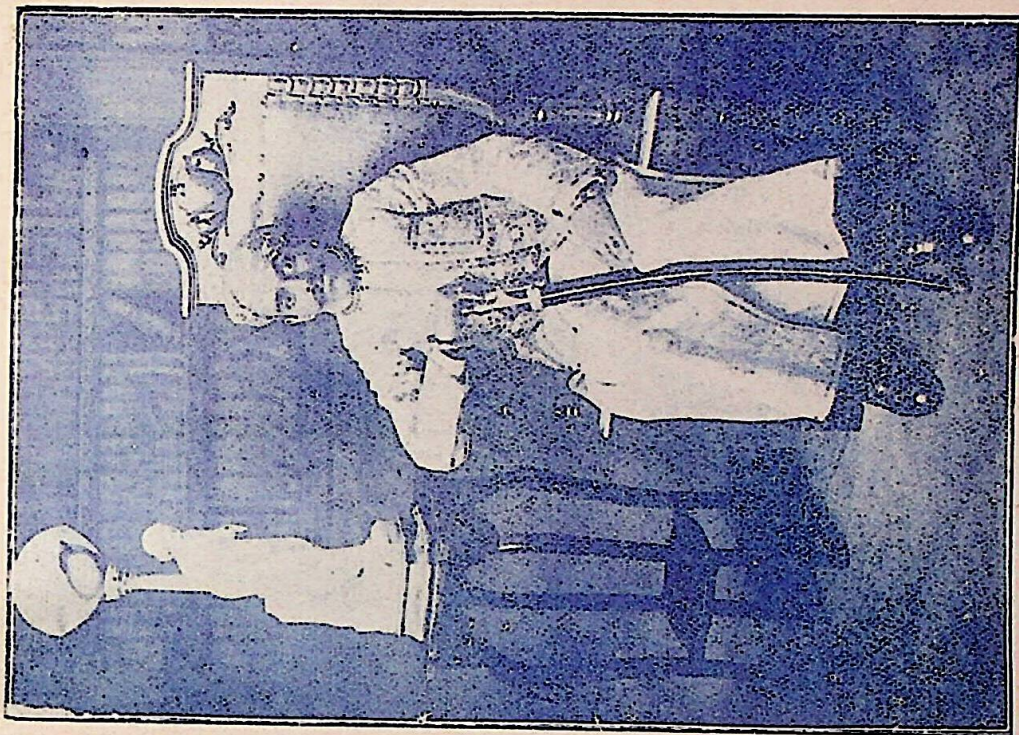
उदयपुर-नरेश श्रीमान् तत्रभवान् हिज हाइनेस महाराज साहब सर भूपालसिंह बहादुर के॰ सी॰ आई॰ ई॰, जी॰ सी॰ एस॰ आई॰।

श्री राधाकृष्णदास
( सभा के सर्वप्रथम सभापति )

रायबहादुर श्री लक्ष्मीशंकर मिश्र

श्री गदाधर सिंह
( आर्यभाषा-पुस्तकालय के संस्थापक )
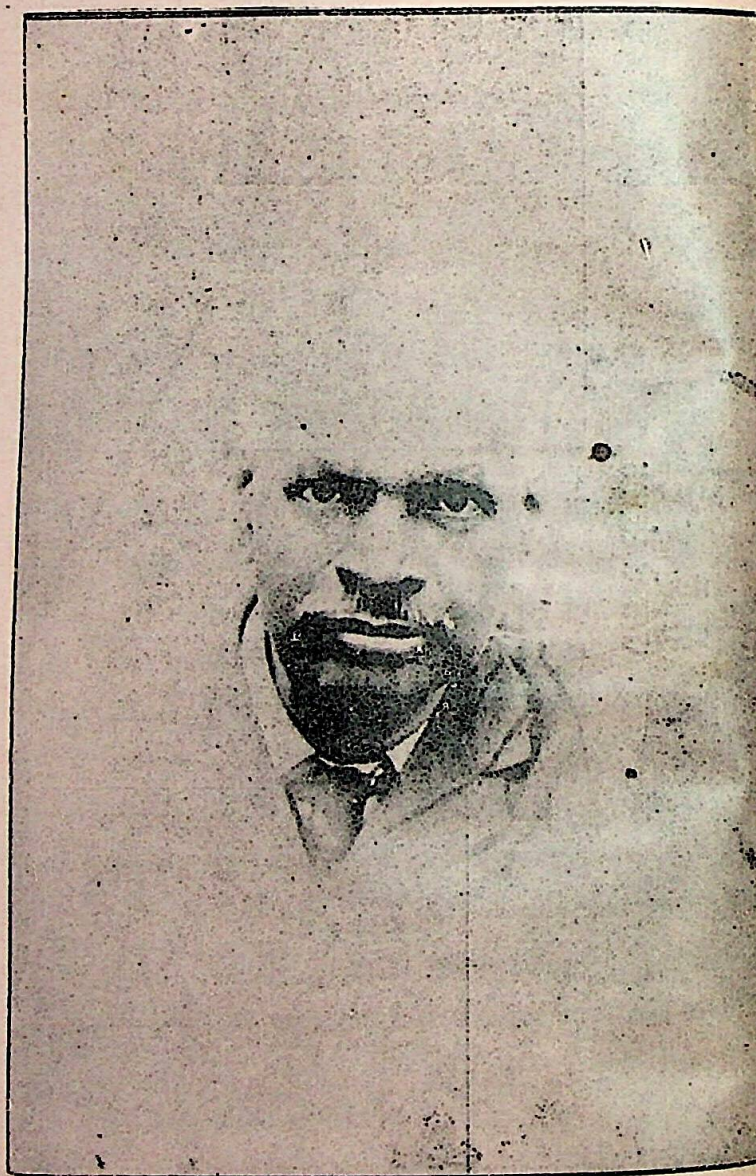
वाले छात्रों को क्रमशः १०), ८) और ५) कुल २३) के तीन पारितोषिक देना स्वीकार किया। शिक्षा विभाग के डाइरेक्टर ने सभा द्वारा निर्धारित इस परीक्षा का बहुत अच्छा प्रबंध कर दिया। स्कूलों के डिप्टी और सब-डिप्टी इंस्पेक्टरों की व्यवस्था से प्रथम वर्ष ही इस परीक्षा में बनारस डिविजन के इंसपेक्टर के अधीन प्रायः सभी वर्नाक्यूलर स्कूलों ने योग दिया। परीक्षा हो जाने पर सभा के संवत् १६५१ के निश्चयों के अनुसार निम्नलिखित सज्जनों की उपसमिति परीक्षाफल पर विचार करने के लिये बनाई गई—

( १ ) राय बहादुर पं० लक्ष्मीशंकर मिश्र एम० ए०
( २ ) बा० राधाकृष्णदास
( ३ ) बा० कार्तिकप्रसाद
( ४ ) बा० अमीर सिंह
( ५ ) बा० श्यामसुंदरदास

इस उपसमिति के निश्चयानुसार जिन छात्रों को सभा की ओर से संवत् १६५१ में पारितोषिक प्रदान किया गया उनके नाम इस प्रकार हैं—

१—बजरंगी लाल, बैरिया स्कूल, जि० बलिया १०)
२—रामअवधलाल, खलीलाबाद स्कूल, बस्ती ८)
३—कुबेरसिंह, निजामाबाद स्कूल, आजमगढ़ ५)

इनके अतिरिक्त निम्नलिखित विद्यार्थियों ने भी सुंदर अक्षर लिखे थे। उन्हें केवल प्रशंसापत्र दिए गए और फकीरा नामक एक बालक को २) का एक विशेष पारितोषिक दिया गया—

१—बेनीमाधवराम, टाउन स्कूल, बाँसडीह, बलिया।
२—रजपति सिंह, मिडिल स्कूल, बलिया
३—कालीचरणप्रसाद, घरवारा स्कूल, आजमगढ़
४—कुबेर कुनबी, गूमाडीह स्कूल, आजमगढ़

ये पारितोषिक और प्रशंसापत्र उसी वर्ष साधारण सभा करके सरकार द्वारा उक्त बालकों के पास भेज दिए गए थे। इस सभा में राय बहादुर श्री लक्ष्मीशंकर मिश्र, एम० ए० ने सभापति का आसन ग्रहण किया था और साहित्याचार्य श्री अंबिकादत्त व्यास ने 'हिंदी भाषा और साहित्य' पर व्याख्यान दिया था। उक्त विद्यार्थियों को 'हरिप्रकाश प्रेस' के प्रबंधकर्त्ता बाबू जगन्नाथप्रसाद वर्मा ने 'काश्मीर-कुसुम' नामक पुस्तक की ५ प्रतियाँ और साहित्याचार्य श्री अंबिकादत्त व्यास ने 'साहित्यनवनीत' नामक पुस्तक की ७ प्रतियाँ उपहार दी थीं।

संवत् १६५३ तक यह परीक्षा बनारस डिविजन के 'वर्नाक्यूलर स्कूलों' में ही होती रही। किंतु संवत् १६५४ में सरकार ने यह परीक्षा पूरे पश्चिमोत्तर प्रदेश और अवध प्रांत ( आधुनिक संयुक्त प्रांत ) भर के लिये जारी कर दी। इस पर सभा ने पारितोषिक की संख्या ५ के बदले १० कर दी। अब पारितोषिकों का क्रम इस प्रकार हो गया—

प्रथम १०), द्वितीय ८), तृतीय ५), चतुर्थ ४), पंचम ३), योग ३०) वार्षिक।

इस परीक्षा के लिये निम्नलिखित ८ नियम शिक्षा-विभाग के डाइरेक्टर की स्वीकृति से सभा ने संवत् १६५५ में निर्धारित किए—

"( १ ) हस्तलिपि सफेद फुलिस्केप कागज के आधे ताव पर लिखी जाय और उसमें कम से कम १० और अधिक से अधिक २५ पंक्तियाँ हों।

(२) हस्तलिपि कागज के एक ही ओर हो, बेल बूटे आदि न बने हों और काली व ब्लूब्लैक स्याही को छोड़कर दूसरी स्याही काम में न लाई जाय।

(३) प्रत्येक बालक को (१) नाम (२) क्लास (३) स्कूल (४) तहसील और (५) जिला लिखना चाहिए। इनमें से यदि एक बात भी छूट जायगी तो उस हस्तलिपि पर विचार न किया जायगा।

(४) इस बात पर पूरा ध्यान रहे कि हस्तलिपियाँ बालकों की ही लिखी हों।

(५) प्रत्येक डिवीजन के असिस्टेंट इन्सपेक्टर अपने अधीनस्थ स्कूलों की लिपियों में से १५ लिपियाँ चुन और उन्हें नंबरवार लगा कर प्रतिवर्ष के फरवरी मास के अंत तक असिस्टेंट इन्सपेक्टर बनारस के पास भेज देंगे।

(६) असिस्टेंट इन्सपेक्टर बनारस इन सब लिपियों को मंत्री नागरीप्रचारिणी सभा, काशी के पास भेज देंगे।

(७) सभा एक सब-कमेटी नियत करेगी जिसके सभासद् तीन वा पाँच होंगे। इसमें असिस्टेंट इन्सपेक्टर बनारस और मंत्री नागरीप्रचारिणी सभा अवश्य सभासद् रहेंगे। कमेटी समस्त लिपियों को देख कर उन १५ बालकों के नाम नंबरवार सभा के पास लिख भेजेगी जिन्होंने सबसे उत्तम लिखा होगा।

(८) प्रतिवर्ष सभा की ओर से ५ पारितोषिक १०), ८), ५), ४), और ३) के तथा १० प्रशंसापत्र दिए जायँगे।"

संवत् १९५६ में इन्हीं नियमों के अनुसार परीक्षा हुई और पारितोषिक तथा प्रशंसापत्र प्रदान किए गए। किंतु इस वर्ष परीक्षा के नियमों पर पुनः विचार हुआ और उनमें परिवर्तन करने की आवश्यकता प्रतीत हुई। पर्याप्त विचार-विमर्श के उपरांत निम्नलिखित नियम बनाए गए और प्रांतीय शिक्षा-विभाग ने भी उन्हें स्वीकार कर लिया—

"(१) पारितोषिक और प्रशंसापत्र वितरित करने के लिये हिंदी हस्तलिपि की परीक्षा प्रतिवर्ष पश्चिमोत्तर प्रदेश और अवध के समस्त स्कूलों में काशी-नागरीप्रचारिणी सभा की ओर से शिक्षा विभाग द्वारा हुआ करेगी। लड़कियाँ भी इस परीक्षा में सम्मिलित हो सकती हैं।

(२) क—मिडिल विभाग के लड़कों को अपनी हस्तलिपियों को छोटे अक्षरों में लिखना होगा, अर्थात् उनके अक्षर इंच के १/६ भाग से बड़े न हों (नमूना दिया जाय)।

ख—अपर प्राइमरी विभाग के लड़कों को अपनी हस्तलिपियों को मध्यम आकार के अक्षरों में लिखना होगा, अर्थात् अक्षर इंच के १/४ और १/६वें भाग के बीच में हों (नमूना दिया जाय)।

ग—लोअर प्राइमरी और प्रिपेयरेटरी विभाग के लड़कों को अपनी हस्तलिपियों को बड़े अक्षरों में लिखना चाहिए। अक्षर

इंच के ⅛ भाग से छोटे न हों ( नमूना दिया जाय )।

( ३ ) निम्नलिखित पारितोषिक और प्रशंसापत्र प्रति वर्ष तीनों विभागों के बालकों में वितरित हों—

क—मिडिल विभाग ५), ४) और ३) के तीन पारितोषिक और ६ प्रशंसापत्र।

ख—अपर प्राइमरी विभाग ५), ३) और २) के तीन पारितोषिक और ५ प्रशंसापत्र।

ग—लोअर प्राइमरी और प्रिपेयरेटरी विभाग ४), २) और २) के तीन पारितोषिक और चार प्रशंसापत्र।

( ४ ) हस्तलिपि सफेद फुलस्केप कागज के आधे ताव पर लिखी हो और नाम आदि को छोड़कर, जो उसी आधे ताव के ऊपरी भाग में हो, बड़े अक्षरों में ६ पंक्ति, मध्यम अक्षरों में १० पंक्ति और छोटे अक्षरों में १५ पंक्ति से अधिक लिखा न होना चाहिए।

( ५ ) हस्तलिपि कागज के एक ही ओर लिखी हो और न किसी प्रकार के बेल बूटे बने हों और न काले अथवा ब्लू ब्लैक रंग की स्याही को छोड़कर और किसी रंग की स्याही से लिपि लिखी हो।

( ६ ) प्रत्येक बालक को पूरा पूरा ( १ ) नाम, ( २ ) क्लास, ( ३ ) स्कूल का नाम, ( ४ ) तहसील और (५) जिला लिखना चाहिए।

( ७ ) किसी हस्तलिपि पर, जो ठीक इन नियमों के अनुसार न लिखी होगी, विचार न किया जायगा।

( ८ ) इस बात पर पूरा ध्यान रहना चाहिए कि हस्तलिपियाँ बालकों द्वारा स्वयं लिखी हों।

( ९ ) प्रत्येक विभाग के असिस्टेंट इन्सपेक्टरों को लोअर प्राइमरी, अपर प्राइमरी और मिडिल विभाग के बालकों को लिखी हस्तलिपियों में से प्रत्येक विभाग की ५ सबसे अच्छी लिपियों को चुन और उन्हें अलग अलग योग्यतानुक्रम से लगाकर प्रतिवर्ष फरवरी मास की समाप्ति के पूर्व बनारस विभाग के असिस्टेंट इंस्पेक्टर के पास भेजना चाहिए।

( १० ) बनारस विभाग के असिस्टेंट इंस्पेक्टर इन सब लिपियों के पारितोषिक और प्रशंसापत्र वितरण करने के लिये काशी नागरीप्रचारिणी सभा के मंत्री के पास भेज देंगे।

( ११ ) सभा एक कमेटी नियत करेगी जिसके सभासद ३ से कम और ५ से अधिक न होंगे। इनमें बनारस विभाग के असिस्टेंट इंस्पेक्टर और सभा के मंत्री अवश्य सभासद होंगे।

( १२ ) इस कमेटी का यह कर्त्तव्य होगा कि सब हस्तलिपियों पर ध्यानपूर्वक विचार करे और एक संक्षिप्त विवरण के साथ सभा को मिडिल विभाग से ६, अपर प्राइमरी विभाग से ८ और लोअर प्राइमरी विभाग से ७ सबसे श्रेष्ठ लेखकों के नाम की सूचना दे।"

इन नियमों के अनुसार प्रतिवर्ष परीक्षा का कार्य होता रहा और छात्रों को पारितोषिक और प्रशंसा-पत्र मिलते रहे।

संवत् १९६० में पहले पहल एक बालिका ने भी इस परीक्षा में सुलेख के लिये प्रशंसापत्र प्राप्त किया। इस बालिका को श्री रामनारायण मिश्र ने २) रु० का एक विशेष पारितोषिक भी प्रदान किया था। यह बालिका हाथरस की कन्या पाठशाला में तीसरी श्रेणी में पढ़ती थी और इसका नाम श्यामो था।

इस वर्ष ग्वालियर में नागरी का विशेष प्रचार हुआ। उसी प्रसंग में सभा ने यह निश्चय किया कि ग्वालियर राज्य के विद्यार्थियों के लिये भी हिंदी हस्तलिपि-परीक्षा का प्रबंध किया जाय और प्रतिवर्ष ५), ३), और २) के तीन पारितोषिक तथा ६ प्रशंसा-पत्र वहाँ के लिये भी नियत किए जायँ। ग्वालियर के शिक्षा विभाग ने यह निश्चय स्वीकृत कर लिया और इस परीक्षा के लिये कतिपय आवश्यक नियमों का निर्माण कर दिया गया। संवत् १९६१ से ग्वालियर के स्कूलों में यह परीक्षा आरंभ हो गई और सभा की ओर से प्रतिवर्ष नियमानुसार पारितोषिक और प्रशंसापत्र दिए जाने लगे। यह क्रम संवत् १९७७ तक निरंतर चलता रहा। संवत् १९७८, ७९ और ८० में लगातार तीन वर्षों तक ग्वालियर का कोई छात्र पारितोषिक के योग्य नहीं समझा गया। अतः वहाँ के किसी छात्र को भी पारितोषिक नहीं दिया जा सका। निदान संवत् १९८१ से यह परीक्षा स्वतः बंद हो गई। १७ वर्षों में १०) वार्षिक के हिसाब से १७०) सभा ने 'ग्वालियर हिंदी हस्तलिपि परीक्षा' पर व्यय किए।

संवत् १९६१ से काश्मीर में भी सभा ने तीन वर्ष तक सुंदर नागरी हस्तलिपि के लिये वहाँ के बालकों को ५), ३) और २) के तीन पारितोषिक देने का निश्चय किया था। किंतु वहाँ के स्कूलों की शिथिलता के कारण यह कार्य आगे न बढ़ सका।

बालक-बालिकाओं को उत्साहित करने के लिये अनेक सज्जन सभा की सहायता समय समय पर करते रहते थे। संवत् १९६२ में वृंदावन के श्री राधाचरण गोस्वामी ने 'ललिता पारितोषिक' के नाम से ५) का एक पारितोषिक मथुरा जिले के स्कूलों की उस कन्या को देना निश्चय किया था जिसकी नागरी हस्तलिपि सबसे अच्छी समझी जाय। संवत् १९६२ में यह पारितोषिक कन्या पाठशाला की मूलो नाम की बालिका को दिया गया था। यह पारितोषिक संवत् १९७२ तक दिया जाता रहा। उसके पश्चात् मथुरा के बालिका-विद्यालयों की शिथिलता के कारण बंद हो गया।

संवत् १९७५ तक हिंदी हस्तलिपि परीक्षा में केवल वर्नाक्यूलर स्कूलों के विद्यार्थी संमिलित हो सकते थे, किंतु संवत् १९७६ से सब प्रकार के स्कूल-कालिजों के छात्र-छात्राओं को उक्त परीक्षा में सम्मिलित करने का निश्चय किया गया और सभा ने पारितोषिक की रकम ३०) से बढ़ाकर ५४) वार्षिक कर दी। यद्यपि इस विषय का पत्र-व्यवहार शिक्षा विभाग के साथ संवत् १९५४ में ही सभा ने आरंभ कर दिया था पर उक्त विभाग की स्वीकृति संवत् १९७५ में प्राप्त हो सकी। संवत् १९७६ से इस परीक्षा में सब प्रकार के स्कूलों और कालिजों के छात्र सम्मिलित होने लगे। पारितोषिक के वितरण का क्रम इस प्रकार रखा गया—

(१) हाई और मिडिल विभाग के लिये तीन पारितोषिक—

१०), ८), और ६)

( २ ) प्राइमरी विभाग के लिये तीन पारितोषिक—
१म ८), २य ६), ३य ४)
( ३ ) प्रिपेयरेटरी विभाग के लिये भी तीन पारितोषिक—
१म ६), २य ४), ३य २)

प्रशंसापत्र भी उक्त तीनों विभागों के छात्रों को नियमानुसार दिए जाते थे।

संयुक्तप्रांत में परीक्षाओं का यह क्रम संवत् १९९३ तक निरंतर चलता रहा और नागरी लिपि का प्रचार करने तथा नागरी अक्षरों में सुंदर लेख लिखने की ओर लोगों की रुचि बढ़ाने के उद्देश्य से सभा को इन परीक्षाओं के द्वारा पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई। शिक्षा विभाग ने भी सभा को इस कार्य में पूरा सहयोग प्रदान किया।

संवत् १९९३—९४ में सभा में बहुत भारी आर्थिक संकट आ गया। उस पर २४०००) का ऋण था। इस संकट को दूर करने के प्रयत्न होने लगे। कार्यालय ने ३ पौष, १९९४ ( १८ दिसंबर, १९३७ ) की प्रबंध-समिति के संमुख एक आर्थिक विवरण ( चिट्ठा ) उपस्थित किया, जिसपर विचार करने के लिये एक उपसमिति बनाई गई। इसके पश्चात् अर्थोपसमिति ने उस पर विचार किया और तब वह अर्थोपसमिति की संमति सहित २७ पौष, १९९४ ( ११ जनवरी, १९३८ ) की प्रबंध समिति की बैठक में उपस्थित किया गया। हिंदी-हस्तलिपि-परीक्षा पर सभा का ५४) वार्षिक व्यय होता था। इसी लिये उस पर भी विचार किया गया और समिति ने निश्चय किया कि

"५४) का लिपि-पुरस्कार इस वर्ष से बंद कर दिया जाय। केवल प्रमाणपत्र दिए जायँ। शिक्षा विभाग के डाइरेक्टर को इसकी सूचना दे दी जाय और नियमों में परिवर्तन करके उनके पास भेज दिया जाय।"

इस निश्चय के अनुसार पारितोषिक देना बंद कर दिया गया और इसकी सूचना शिक्षा विभाग को दे दी गई। यद्यपि सभा ने परीक्षा बंद नहीं की और प्रमाणपत्र देने का निश्चय यथापूर्व ही रहने दिया पर बालकों के लिये पारितोषिक में जो आकर्षण था वह प्रमाणपत्रों में कब हो सकता था। इसलिये परीक्षाओं में छात्रों का संमिलित होना बंद हो गया और १९९४ से कोई बालिका या बालक इनमें नहीं बैठा। तब से ये परीक्षाएँ बिलकुल बंद हैं। सभा की आर्थिक स्थिति ठीक हो जाने पर इनके और भी अच्छे एवं विस्तृत रूप में पुनः आरंभ होने की आशा है।

इन परीक्षाओं के पारितोषिकों पर आरंभ से लेकर इनके बंद होने तक सभा ने जितना धन व्यय किया उसका विवरण इस प्रकार है—

| संवत् | वार्षिक | वर्षों की संख्या | व्यय |
|---|---|---|---|
| १९५१ से १९५३ तक | २३) | ३ | ६९) |
| १९५४ से १९६० तक | ३०) | ७ | २१०) |
| १९६१ से १९७५ तक | ४०) | १५ | ६००) |
| १९७६ से १९७७ तक | ६४) | २ | १२८) |
| १९७८ से १९९३ तक | ५४) | १६ | ८६४) |
| १९५१ से १९९३ तक | × | ४३ | १८७१) |

## (२) अन्य पदक और पुरस्कार

सुंदर नागरी लिपि के लिये दिए जानेवाले पारितोषिकों के अतिरिक्त सभा समय समय पर अन्य अनेक पदकों और पुरस्कारों की घोषणा विभिन्न लेख और पुस्तकें लिखाने के लिये करती रही है। इनमें कई घोषणाएँ ऐसी भी थीं जिनका आरंभ में कोई फल नहीं निकला। पर इन असफलताओं से सभा हतोत्साह नहीं हुई। उद्योग निरंतर चलता ही रहा। सभा के अथक अध्यवसाय का ही फल है कि आज यह निःसंकोच कहा जाने लगा है कि सभा का इतिहास हिंदी की वर्तमान प्रगति का इतिहास है।

हिंदी भाषा के इतिहास और व्याकरण का सर्वथा अभाव देखकर संवत् १९५१ में सभा ने सर्वप्रथम दो पदक देने की घोषणा की थी। एक सोने का पदक व्याकरण के लिये और दूसरा चाँदी का पदक इतिहास के लिये। पुस्तकें भेजने की अंतिम तिथि पहले ३१ जुलाई १८९५ रखी गई थी, किंतु तब तक कोई पुस्तक न आई, अतः अवधि बढ़ाकर ३१ जनवरी १८९६ कर दी गई। यह अवधि कई बार बढ़ाई गई, पर कोई संतोषजनक फल न हुआ। इतिहास तो कोई आया ही नहीं, व्याकरण की कुछ पुस्तकें आईं किंतु वे पदक के योग्य न समझी गईं। इसके अनंतर सभा ने किस प्रकार हिंदी व्याकरण तैयार कराया, इसकी चर्चा 'व्याकरण' शीर्षक प्रकरण में अन्यत्र की गई है।

सभा ने इसके बाद श्री अंबिकादत्त व्यास द्वारा प्रस्तुत हिंदी की 'त्वरित लेखन-प्रणाली' सीखकर परीक्षा में उत्तीर्ण होनेवाले व्यक्ति के लिये सं० १९५५ में २५) पारितोषिक देने की घोषणा की। पर व्यासजी के रुग्ण हो जाने के कारण इसका भी कोई फल नहीं हुआ।

सं० १९५७ में हिंदी-लेखकों का उत्साह-वर्द्धन करने के लिये और हिंदी में अच्छे अच्छे लेखों के लिखवाने के उद्देश्य से सभा ने प्रतिवर्ष दो रौप्य पदक देने का निश्चय किया और निम्नलिखित नियम बनाए—

"१—हिंदी-लेखकों के उत्साह-वर्धनार्थ सभा की ओर से चाँदी के दो पदक प्रति वर्ष दिए जायँगे, एक विज्ञान विषयक लेख के लिये और दूसरा अन्य साधारण ( विद्या ) विषय के लिये।

२—विषय प्रतिवर्ष जनवरी मास में नियत किए जायँगे। अनुवाद अथवा छपे हुए लेख स्वीकार न किए जायँगे।

३—सब लेख प्रतिवर्ष ३१ दिसंबर तक नागरीप्रचारिणी सभा के मंत्री के नाम से आने चाहिएँ और उनमें यदि कुछ उद्धृत किया गया हो तो उसका पूरा ब्यौरा दिया रहना चाहिए।

४—लेख का विस्तार ५०० श्लोकों की संख्या से कम न होना चाहिए। प्रति श्लोक ३२ अक्षर का माना जायगा।

५—प्रति लेख पर ये बातें लिखी रहनी चाहिएँ—
( १ ) लेखक का पूरा नाम, ( २ ) वयस, ( ३ ) अंतिम परीक्षा जो पास की हो, ( ४ ) अंतिम परीक्षा के पास करने का सन्, ( ५ ) आधुनिक कार्य और ( ६ ) पूरा पता।

६—कोई पुरुष लेख लिखकर सभा के पास भेज सकता है।

७—प्रति लेख पर इस बात के सार्टिफिकेट सहित कि वह लेख वास्तव में उस लेखक का लिखा हुआ है ( १ ) उस कालेज के प्रिंसिपल का जहाँ से

उसने परीक्षा पास की हो, ( २ ) उस दफ़र के अधिकारी का जहाँ लेखक काम करता हो, ( ३ ) अथवा उस नगर के जहाँ वह रहता हो किसी प्रतिष्ठित पुरुष का हस्ताक्षर कराके तब उसे भेजना चाहिए।

८—उन लेखकों को जो पदक न पाएँगे, प्रशंसापत्र दिए जायँगे, यदि उनके लेख इसके योग्य समझे जायँगे।

९—ये सब लेख जो सभा द्वारा स्वीकृत होंगे सभा की पत्रिका में अथवा अन्य किसी पत्र में जिसमें सभा छपवाना उचित समझेगी, छापे जायँगे।

यदि किसी वर्ष कोई लेख पदक अथवा प्रशंसा-पत्र के योग्य न समझा जायगा तो वे पदक और प्रशंसा-पत्र दूसरे वर्ष दिए जायँगे।

१०—एक कमेटी प्रतिवर्ष ५ पुरुषों की नियत की जायगी जो सब लेखों पर विचार कर उन लेखकों के नामों की सूचना सभा को देगी जो पदक अथवा प्रशंसा-पत्र पाने के योग्य होंगे।

इन नियमों के अनुसार सन् १९०१ के लिये निम्न-लिखित चार विषय चुने गए थे—

१—( क ) अकबर और औरंगजेब, उसकी नीति और उसका परिणाम

( ख ) ब्रिटिश राज्य में हिंदी

२—( क ) देशी भाषाओं में विज्ञान का अध्ययन, उसका उपाय और उससे लाभ।

( ख ) मनोविज्ञान

कई वर्ष तक लेखकों ने इनकी ओर ध्यान नहीं दिया। फिर बार बार घोषणा करने पर लेखकों ने इसके लिये उद्योग आरंभ किया और प्रति वर्ष ये पदक किसी न किसी को दिए जाने लगे। यह क्रम संवत् १९६४ तक चलता रहा। सं० १९६५ से विज्ञान विषय के लेख पर दिए जानेवाले पदक का नाम 'रेडिचे पदक' और साधारण विद्या विषयक लेख के लिये नियत पदक का नाम 'राधाकृष्णदास पदक' रख दिया गया। सर्वश्री रेडिचे और राधाकृष्णदास ने सभा के लिये बहुत कुछ किया था, उनकी स्मृति-रक्षा के लिये कृतज्ञता स्वरूप सभा ने उक्त दोनों पदकों को उनका नाम देना उचित समझा। इन पदकों का विशेष विवरण आगे यथास्थान दिया गया है।

सं० १९७१ तक उक्त पदक प्राप्त करनेवाले लेखकों के नाम इस प्रकार हैं—

सं० १९५९ १—श्री गणपत जानकीराम दुबे, बी० ए०
विषय—'मनोविज्ञान'

सं० १९६० २—श्री अच्युतप्रसाद द्विवेदी, बी० ए०
विषय—'मंगल ग्रह'

सं० १९६१ ३—श्री ठाकुरप्रसाद
विषय—'भूगर्भ विद्या'

सं० १९६२ ४—श्री सूर्यनारायण दीक्षित, बी० ए०
विषय—'अकबर के राज्य-काल में हिंदी-साहित्य'

५—श्री ठाकुरप्रसाद
विषय—'ज्योतिष् शास्त्र'

सं० १९६४ ६—श्री गौरीशंकर हीराचंद ओझा
विषय—'भारतवर्ष के प्राचीन इतिहास की सामग्री'

७—श्री ठाकुरप्रसाद
विषय—'ध्रुवीय देश'

सं० १९६९ ८—श्री संतराम गोहल
विषय—'हिंदी भाषा और नागरी लिपि की विशेष उन्नति के मुख्य उपाय'

सं० १९७१ ६—श्री उमराव सिंह शर्मा
विषय—'हवाई जहाज'

इसके बाद संवत् १९७६ तक ये पदक किसी को नहीं दिए गए। इन वर्षों में या तो इनके लिये लेख आए ही नहीं और यदि कभी आए भी तो वे पदक देने योग्य नहीं समझे गए।

सं० १९७६ में श्री श्यामसुंदरदास के प्रस्ताव पर प्रबंध-समिति ने निश्चय किया कि राधाकृष्णदास पदक जोधसिंह पुरस्कार पानेवाले और रेडिचे पदक डाक्टर छन्नूलाल पुरस्कार पानेवाले व्यक्ति को दिया जाय। तबसे ये दोनों पदक उक्त दो पुरस्कारों के साथ दिए जाने लगे।

संवत् १९५८ में जोधपुर के मुंशी देवीप्रसाद ने सभा के द्वारा सोने की एक मोहर इलाहाबाद यूनिवर्सिटी के एंट्रेंस कक्षा के उस छात्र को प्रदान करने की घोषणा की थी जिसका अपने नगर के इतिहास और भूगोल संबंधी लेख सभा उत्कृष्ट समझेगी। संवत् १९५८ में लखनऊ के श्री रुक्मिणीनंदन शर्मा को मोहर प्रदान की गई। इस मोहर को पानेवाला यही प्रथम और अंतिम छात्र था।

संवत् १९६१ में सभा की ओर से 'हिंदी ग्रंथोत्तेजक पारितोषिक' की घोषणा हुई थी। मध्य प्रदेश के कतिपय उत्साही सज्जनों ने पचास रुपए एकत्र करके श्री माधवराव सप्रे द्वारा सभा के पास इस उद्देश्य से भेजे थे कि यह रुपया उस व्यक्ति को पारितोषिक दिया जाय जो 'औद्योगिक और कला संबंधी शिक्षा का प्रचार भारतवर्ष में किस रीति से सफलतापूर्वक किया जा सकता है' विषय पर हिंदी में उत्तम लेख लिखकर सभा में भेजे। संवत् १९६२ में एक लेख आया किंतु वह पारितोषिक के योग्य न समझा गया। संवत् १९६४ में प्रयाग के कुँवर प्रतिपालसिंह के लेख पर यह पारितोषिक देना निश्चित हुआ और कुँवर साहब की प्रार्थना पर यह पदक के रूप में अगले वर्ष ( सं० १९६५ में ) उन्हें प्रदान किया गया।

संवत् १९६३ में श्री रामनारायण मिश्र ने अपने स्वर्गीय मामा डाक्टर छन्नूलाल की पुण्य स्मृति में अपने धन से एक स्वर्णपदक देने का निश्चय किया था जिसके लिये विषय प्रतिवर्ष निर्धारित किया जाता था। लेख आने पर तीन विद्वानों की उपसमिति, जो प्रतिवर्ष नियत की जाती थी, उन पर विचार करती थी। पहले वर्ष शारीरिक आघातों की प्रारंभिक चिकित्सा विषय पर तीन लेख आए। सर्वश्री डाक्टर ईशानचंद्र राय, डाक्टर बसंतकुमार मुकर्जी और डाक्टर मुन्नालाल इन तीन सज्जनों की उपसमिति के निश्चयानुसार उनमें से लाहौर मेडिकल कालेज के विद्यार्थी श्री प्रसादीलाल को यह पदक दिया गया। संवत् १९७६ तक यही क्रम चलता रहा। इन वर्षों में निम्नलिखित लेखकों को उनके उत्तम लेखों पर यह पदक प्रदान किया गया—

१—संवत् १९६३ श्री प्रसादीलाल झा, लाहौर
विषय—शारीरिक आघातों की प्रारंभिक चिकित्सा

२—संवत् १९६४ श्री मुरलीधर वर्मा, जबलपुर
विषय—सौरीसुधार

३—संवत् १९६५ श्री जगरानी देवी, मिर्जापुर
विषय—छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय

४—संवत् १९६६ श्री श्रीलाल उपाध्याय
विषय—'स्त्रीरोग'

५—संवत् १९६६ श्री श्रीलाल उपाध्याय
विषय—गृहस्वास्थ्य-रक्षा

६—संवत् १९७२ श्री संतराम बी० ए०
विषय—स्कूलों की स्वास्थ्यरक्षा

इसके बाद संवत् १९७६ तक कोई लेख पदक के योग्य नहीं समझा गया और इसी वर्ष से श्री रामनारायण मिश्र की कृपा से इस पदक ने पुरस्कार का रूप धारण कर लिया जिसकी चर्चा आगे 'पुरस्कार और पदक' शीर्षक के अंतर्गत की गई है।

संवत् १९६३ में ही 'कालिदास रजत पदक' झालरापाटन के राजगुरु श्री गिरिधर शर्मा नवरत्न ने सभा द्वारा उस कवि को प्रतिवर्ष देने का निश्चय किया था जो खड़ी बोली में नियत विषय पर उत्तम कविता लिखकर भेजें। पहले वर्ष कविता का विषय 'हल्दी-घाट की लड़ाई' रखा गया था और चार कविताएँ आ भी गई थीं किंतु १९६७ तक इन पर कोई निर्णय नहीं हो सका। इसी वर्ष महामहोपाध्याय श्री सुधाकर द्विवेदी का, जो निर्णायकों में से थे और जिनके पास उन दिनों ये सारी कविताएँ थीं, देहावसान हो गया। फिर इन कविताओं का कोई पता न चला और यह पदक किसी को न दिया जा सका।

इसी वर्ष गोरखपुर-निवासी महाराज-कुमार श्री कृष्ण बलदेव सिंह ने एक रजत पदक उस लेखक को सभा द्वारा प्रदान करने की घोषणा की थी जो श्री राधाकृष्णदास का उत्तम जीवनचरित्र हिंदी में लिखकर भेजे। किंतु यह पदक भी किसी को नहीं दिया जा सका।

इस वर्ष श्री गौरीशंकर हीराचंद ओझा को हिंदी में सर्वोत्तम ऐतिहासिक ग्रंथ लिखने के लिये सभा ने 'कालीशंकर व्यास रजत पदक' देने का भी निश्चय किया था।

संवत् १९६७ में सभा ने श्री पूनमचंद तनसुख वैद्य का पचास रुपयों का पारितोषिक 'वर्त्तमान शिक्षा-प्रणाली' पर सर्वोत्तम निबंध लिखकर सभा में भेजनेवाले लेखक को देने की घोषणा की थी। अगले वर्ष दो लेख आए किंतु पूरा पारितोषिक पाने के योग्य एक भी न था। दोनों लेखकों में से काशी के श्री चंद्रशेखर वाजपेयी का लेख अच्छा समझा गया और उन्हें ३०) का पारितोषिक दिया गया। शेष २०) के लिये 'राजपूताने में साहित्य की अवस्था और उसकी उन्नति के उपाय' विषय पर पारितोषिक देने की घोषणा की गई, किंतु कोई लेख नहीं आया।

संवत् १९७३ में सभा ने हिंदी में शीघ्र लिपि प्रचार के उद्देश्य से २००) के पुरस्कार की घोषणा की थी। इसके लिये श्री शिवप्रसाद गुप्त ने १५०), श्री गौरीशंकर प्रसाद ने २५) और श्री वेणीप्रसाद ने २५) सभा को देने का वचन दिया था और निश्चय हुआ था कि यह पुरस्कार आगामी हिंदी-साहित्य-संमेलन के तीनों दिनों के अधिवेशनों का पूरा विवरण अक्षरशः पूरे व्याख्यानों सहित लिखकर भेजनेवाले सज्जन को दिया जाय। किंतु विवरण न आने के कारण यह पुरस्कार किसी को न दिया जा सका।

## ( ३ ) स्थायी पुरस्कार और पदक

ऊपर जिन पारितोषिकों, पदकों और पुरस्कारों की चर्चा की गई है वे प्रायः अस्थायी थे, एककालिक थे अथवा कुछ वर्ष चलकर बंद हो गए। जब जितने

समय के लिये किसी से धन मिल गया या मिलता रहा सभा उतने समय तक वह पदक या पुरस्कार प्रदान करती रही। उनके लिये कोई स्थायी निधि सभा के पास जमा नहीं थी। किंतु उद्योग करने से सभा को कई स्थायी निधियाँ भी उदार हिंदी-प्रेमियों से प्राप्त हुई हैं जिनके ब्याज से दो-दो सौ रुपए के पाँच पुरस्कार, दो स्वर्णपदक और छः रजतपदक सभा की ओर से दिए जाते हैं।

## १—जोधसिंह-पुरस्कार

उदयपुर के श्री जोधसिंह मेहता ने संवत् १६७३ में १०००) सभा को दिए थे। इस निधि तथा इसके बचे धन को मिलाकर कुल १६००) अंकित मूल्य के ३½ टकिया गवर्नमेंट स्टाक सर्टिफिकेट क्रय करके 'ट्रेज़रर चैरिटेबुल एंडाउमेंट्स' के पास जमा कर दिए गए हैं। इस निधि से अब ५६) प्रति वर्ष आय होती है।

इस पुरस्कार के दाता मेहता जोधसिंह का इस निधि के स्थापित करने का यह उद्देश्य था कि इस निधि की आय से एक पुरस्कार सर्वोत्तम ऐतिहासिक हिंदी ग्रंथ पर दिया जाय जिससे हिंदी भाषा में उत्तमोत्तम इतिहास-ग्रंथों की रचना को प्रोत्साहन मिले।

उक्त निधि की आय से दो सौ रुपए का एक पुरस्कार दाता के उद्देश्य के अनुसार प्रति चौथे वर्ष दिया जाता है और यह पुरस्कार 'जोधसिंह पुरस्कार' कहा जाता है।

सर्वप्रथम यह पुरस्कार सं० १६७३ से १६७६ तक की सर्वश्रेष्ठ रचना 'प्राचीन भारत में लिपिकला' पर महामहोपाध्याय रायबहादुर गौरीशंकर हीराचंद ओझा को दिया गया था।

## २—रत्नाकर-पुरस्कार

श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' का जन्म भाद्रपद शुक्ल ५, सं० १६२३ को काशी में हुआ था। इनके पूर्वज पंजाब प्रांत के कर्नाल ज़िले के निवासी थे। दो शताब्दि-पूर्व लाला तुलारामजी मुगल बादशाह जहाँदार शाह के दरबार में एक संमानित पद पर थे जहाँ से वे लखनऊ चले आए और उसके अनंतर काशी में आ बसे। इनके सुपुत्र श्री संगमलाल ने काशी में व्यापार आरंभ किया। इनके पुत्र पुरुषोत्तमदास थे। यह फारसी भाषा के विद्वान् तथा हिंदी कविता के प्रेमी थे। इनसे भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र से बड़ी मित्रता थी। इन्हीं के पुत्र 'रत्नाकर' जी थे।

'रत्नाकर' जी को फारसी की उच्च शिक्षा मिली थी और सन् १८६२ ईसवी में उन्होंने बी० ए० की डिग्री प्राप्त की। इनके पिता के यहाँ प्रायः काव्य-चर्चा होती रहती थी तथा तत्कालीन सुकवियों का सत्संग भी रहता था। इससे 'रत्नाकर' जी को हिंदी कविता से अनुराग हो गया और ये भी कविता करने लगे। इनकी कविता सुनकर भारतेंदुजी ने कहा था कि यह बालक एक दिन हिंदी का गौरव बढ़ाएगा। यह बात बाद को अक्षरशः सत्य हुई।

इसके अनंतर ये दो वर्ष आवागढ़ राज्य में मोहतमिम खजाना के पद पर रहे। अस्वस्थ हो जाने पर वह पद त्याग कर ये काशी चले आए। यहाँ कुछ दिन तक हिंदी-साहित्य-सेवा में रहने के बाद सन् १६०२ ई० में ये अयोध्या-नरेश का प्राइवेट सेक्रेटरी नियुक्त हुए और अयोध्या-नरेश का शरीरांत हो जाने पर सन् १६०६ ई० से महारानी अयोध्या ने इन्हें

अपना प्राइवेट सेक्रेटरी बना लिया। इस पद पर ये सन् १६३१ ई० तक रहे।

'रत्नाकर' जी हिंदी काव्यशास्त्र के पूर्ण ज्ञाता तथा व्रजभाषा के श्रेष्ठ कवि थे। यह अपूर्व साहित्य-मर्मज्ञ थे और कविता का विलक्षण अर्थ करने में भी बड़े कुशल थे। ये प्रकृत्या सरल, मिलनसार तथा विनोदप्रिय थे। इनके काव्य ग्रंथों में हरिश्चंद्र, गंगावतरण, उद्धवशतक आदि प्रसिद्ध हैं। छोटे छोटे अष्टक तथा स्फुट कवित्त भी अत्यंत सरस, ओज-पूर्ण तथा प्रसादमय हैं। बिहारी सतसई की टीका, बिहारी-रत्नाकर तथा सूरसागर के संपादन से इनके अध्यवसाय तथा साहित्य-मर्मज्ञता का अच्छा परिचय मिलता है।

'रत्नाकर' जी का मंगलवार आषाढ़ ३, संवत् १६८६ विक्रमी ( २१ जून, सन् १६३२ ) को हरिद्वार में देहांत हो गया। 'रत्नाकर' जी ने जो रत्नाकर-पुरस्कार स्थापित किए हैं उनमें से एक पुरस्कार स्वयं इन्हें, 'गंगावतरण' पर प्रदान किया गया था। आपकी समग्र कविताओं का संग्रह सभा ने 'रत्नाकर' के नाम से प्रकाशित किया है। इनकी पुस्तकों का संग्रह इनके सुपुत्र श्री राधाकृष्णदास ने सभा को प्रदान कर दिया है। सभा से आपको अत्यंत प्रेम था। सभा के आरंभ के दिनों में उसके कार्यों में आप सक्रिय भाग लेते रहे। सभा के सबसे पहले अवैतनिक सहायक मंत्री सं० १६५१ में 'रत्नाकर' जी ही थे। सभा के साप्ताहिक अधिवेशनों में आप कई बार सभापति के आसन को सुशोभित कर चुके थे। संवत् १६८५ में आप सभा के उपसभापति थे।

रत्नाकर जी ने ३१ अक्तूबर, सन् १६२१ ई० को १०००) सभा को दिए। इसके अनंतर संवत् १६८५ में ७००) तथा संवत् १६८६ में १३५) दिए। इस प्रकार उनसे कुल १८३५) सभा को मिले। रत्नाकर जी के सुपुत्र श्री राधाकृष्णदास ने १००) सभा को और दिए। इन १००) तथा इस निधि के बचे धन से कुल ३२००) अंकित मूल्य के ३½ टकिया प्रामिसरी नोट क्रय करके ट्रेजरर, चैरिटेबुल एंडाउमेंट्स के पास जमा कर दिए गए हैं। इससे अब ११२) प्रति वर्ष की आय होती है।

इस पुरस्कार के दाता श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' का इस निधि के स्थापित करने का यह उद्देश्य था कि इस निधि की आय से एक पुरस्कार व्रजभाषा की तथा दूसरा पुरस्कार उसी के सदृश हिंदी की अन्य उप-भाषाओं यथा—डिंगल, राजस्थानी, अवधी, बुंदेलखंडी, भोजपुरी, छत्तीसगढ़ी आदि की रचना अथवा उसके अभाव में सुसंपादित ग्रंथों पर दिया जाय जिससे उक्त भाषाओं की उन्नति में प्रोत्साहन मिले।

उक्त निधि की आय से दो दो सौ रुपयों के दो पुरस्कार दाता के उद्देश्यानुसार प्रति चौथे वर्ष दिए जाते हैं। दोनों पुरस्कार 'रत्नाकर पुरस्कार' कहे जाते हैं।

सर्वप्रथम यह पुरस्कार १ माघ, १६७८ से ३१ पौष, १६८१ तक की रचनाओं में सर्वश्रेष्ठ 'बुद्धचरित' पर पं० रामचंद्र शुक्ल को, १६८४ तक की श्रेष्ठ रचना 'गंगावतरण' पर श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' को, सं० १६६२ में 'प्रतापचरित' के लेखक श्री केशरीसिंह तथा 'नूरजहाँ' के लेखक श्री गुरुभक्त सिंह को बाँटकर और सं० १६६४ में 'व्रजरज' के लेखक राय कृष्णदास को दिया जा चुका है।

### ३—बटुकप्रसाद पुरस्कार

धर्मरंजन, साहित्य-विनोद श्री बटुकप्रसाद खत्री का जन्म माघ, सं० १६३३ में काशी के प्रसिद्ध रईस

लाला गोकुलचंद सहगल के यहाँ हुआ था। आपके पूर्वपुरुष पंजाब से यहाँ आए थे। घर पर ही आपने संस्कृत, हिंदी, उर्दू, अँगरेजी और बँगला की शिक्षा प्राप्त की थी। बाल्यावस्था से ही हिंदी के प्रति आपका विशेष प्रेम था। सन् १६०४ में आपने 'कुसुमांजलि' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन आरंभ किया था। आपने एक कवि-समाज भी स्थापित किया था और अपने यहाँ आनेवाले गुणियों और कवियों का आदर-सत्कार और सेवा-सहायता बड़े प्रेम से करते थे। साहित्यप्रेमी होने के अतिरिक्त आप बड़े अध्यवसायो और व्यापार-कुशल व्यक्ति थे एवं आपने परिश्रम से व्यापार में अच्छी संपत्ति अर्जित की थी। जनहित के कार्यों में आप सदैव बड़े उत्साह से भाग लेते थे। सन् १६१० में आपने अपने पिता की स्मृति में मत्स्योदरी बाग का जीर्णोद्धार कराया। सन् १६२३ में काशी के यात्रियों की सुख-सुविधा के उद्देश्य से ५०००) देकर 'डारविन यात्री-सेवासंघ' की स्थापना की। सन् १६२५ में एक लाख रुपये के दान से कला-कौशल की शिक्षा के लिये एक विद्यालय स्थापित किया। इनके अतिरिक्त गुप्त और प्रकाश्य रूप से समय समय पर विभिन्न सार्वजनिक कार्यों में आप बराबर आर्थिक योग देते रहे। सन् १६०६ में सरकार ने आपको म्यूनिसिपल बोर्ड का सदस्य मनोनीत किया जहाँ आपने बारह वर्ष तक रहकर बड़ी लगन से जनसेवा की। इसी बीच में आप आनरेरी मैजिस्ट्रेट भी नियुक्त हुए और नौ वर्ष तक इस पद पर रहकर बड़ी योग्यता से कार्य किया। आपके कार्यों से प्रसन्न होकर सन् १६२४ में सरकार ने आपको 'रायबहादुर' की तथा स्थानीय भारत-धम-महामंडल ने 'धर्मरंजन' और 'साहित्यविनोद' की उपाधि से संमानित किया। ज्येष्ठ शुक्ल १३, संवत् १६८७ को आपका परलोकवास हुआ।

राय बहादुर महोदय ने संवत् १६७६ में १०००) सभा को दिए थे। इस निधि तथा इसकी बचत से कुल १७००) अंकित मूल्य के ३½ टकिया गवर्नमेंट स्टाक सर्टिफिकेट क्रय करके 'ट्रेजरर, चैरिटेबुल एंडाउमेंट्स' के पास जमा कर दिए गए हैं। इससे अब ५६।।) प्रति वर्ष की आय होती है।

इस पुरस्कार के दाता राय बहादुर श्री बटुकप्रसाद खत्री का इस निधि के स्थापित करने का उद्देश्य यह था कि इस निधि की आय से एक पुरस्कार दिया जाय जिससे सर्वोत्तम शिक्षाप्रद मौलिक नाटक तथा उपन्यास की रचना को प्रोत्साहन मिले।

उक्त निधि की आय से २००) का पुरस्कार प्रति चौथे वर्ष दाता के उद्देश्यानुसार दिया जाता है। यह पुरस्कार बटुकप्रसाद पुरस्कार कहा जाता है।

सर्वप्रथम यह पुरस्कार सं० १६८१ से १६८३ तक के सर्वोत्तम नाटक 'अजातशत्रु' पर श्री जयशंकर प्रसाद को दिया गया था।

## ४—डाक्टर छन्नूलाल पुरस्कार

स्वर्गीय डाक्टर छन्नूलाल का जन्म दिल्ली में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री वंशीधर सारस्वत था। सन् १८५७ की राज्य-क्रांति के अनंतर लाहौर में स्थापित मेडिकल कालेज के सर्वप्रथम छात्रों में श्री छन्नूलाल भी थे। निर्धनता के कारण छात्रवृत्ति ही इनका आधार था। डाक्टरी पास करके ये पेशावर और मियावाली में असिस्टेंट सर्जन रहे। फिर मुरादाबाद भेजे गए और वहाँ से काशी। यहाँ ये इतने सर्वप्रिय हुए कि सरकारी नौकरी छोड़कर निजी रूप से

अपना कार्य करने लगे और बहुत रुपया कमाया। निःसंतान होने के कारण सार्वजनिक कार्यों पर बहुत धन व्यय करते थे। इन्होंने अपने छोटे भाई श्री अलोपीप्रसाद को पढ़ाया, जो पीछे गोरखपुर के सब-जज हुए। डाक्टर साहब हिमालय को शिक्षा का केंद्र बनाना चाहते थे, इसलिये उन्होंने शिमला में लाहौर के दयानंद कालेज के अंतर्गत एक स्कूल अपने ही खर्च से खोला था। १ मार्च १९०५ को इन्होंने जो वसीयतनामा लिखा उसमें भी लाहौर के डी० ए० वी० कालेज को बहुत सा धन दिया था। सन् १८९३ में अमेरिका के शिकागो नगर में हुए विश्वधर्म-संमेलन में ये काशी आर्यसमाज के प्रतिनिधि होकर गए थे। काशी-नागरीप्रचारिणी सभा से भी इनको बहुत प्रेम था। सन् १८९५ से १८९७ तक उसके उपसभापति और १८९५ से १८९८ तक उसके कोशाध्यक्ष रहे। सभा के एक अधिवेशन में 'हिंदुस्तानी स्वास्थ्य-रक्षा' विषय पर इनका एक भाषण महामना श्री मदनमोहन मालवीय की उपस्थिति में हुआ था जो १८९६ में काशी के चंद्रप्रभा प्रेस से पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुका है।

श्री पं० रामनारायण मिश्र ने संवत् १९८१ में ३५०) और संवत् १९८३ में ६५०) दिए। इस निधि तथा इसकी बचत से कुल १६००) अंकित मूल्य के ३½ टकिया स्टाक सार्टिफिकेट क्रय करके 'ट्रेजरर, चैरिटेबुल एंडाउमेंट्स' के पास जमा कर दिए गए हैं जिससे अब ५६) वार्षिक आय होती है।

इस पुरस्कार के दाता श्री रामनारायण मिश्र का इस निधि के स्थापित करने का यह उद्देश्य था कि इसकी आय से एक पुरस्कार वैज्ञानिक विषय की सर्वोत्तम रचना पर दिया जाय जिससे उक्त विषय के ग्रंथ-प्रणयन को प्रोत्साहन मिले।

उक्त निधि की आय से २००) का पुरस्कार प्रति चौथे वर्ष दाता के उद्देश्यानुसार दिया जाता है। यह पुरस्कार 'डाक्टर छन्नूलाल पुरस्कार' कहलाता है।

पहला पुरस्कार संवत् १९७८ से सं० १९८० तक की प्रकाशित सर्वोत्तम पुस्तक 'हमारी शरीर-रचना' पर डाक्टर त्रिलोकीनाथ वर्मा को दिया गया था।

## ५—राजा बिडला-पुरस्कार

श्रीमान् राजा डाक्टर बलदेवदास बिडला जयपुर राज्यांतर्गत पिलानी स्थान के निवासी हैं। आपका जन्म भाद्रपद शुक्ल १, संवत् १९२० को हुआ था। बिडला जी उन इने-गिने भाग्यशाली पुरुषों में हैं जिन पर लक्ष्मी की कृपा तो विशेष रूप से है ही, सुपुत्रों के कारण जिनका पारिवारिक सुख भी अनुपम है। राजा साहब और उनका परिवार अपने विद्या-प्रेम, देशभक्ति व्यापार-कुशलता और दानवीरता के लिये संसार भर में विख्यात है। आपके इन गुणों से प्रसन्न होकर सरकार ने आपको 'राजा' की उपाधि से विभूषित किया है और काशी-हिंदू-विश्वविद्यालय ने 'डाक्टर' की उपाधि देकर आपका संमान किया है। राजा साहब आजकल काशी में निवास कर रहे हैं।

उक्त राजा साहब ने संवत् १९८८ में १०००) सभा को दिए थे। इस निधि तथा इसकी बचत से कुल १६००) अंकित मूल्य के ३½ टकिया गवर्नमेंट स्टाक सर्टिफिकेट क्रय करके 'ट्रेजरर, चैरिटेबुल एंडाउमेंट्स' के पास जमा कर दिए गए हैं जिससे अब ५६) वार्षिक की आय होती है।

इस पुरस्कार के दाता श्रीमान् राजा डाक्टर बलदेवदास बिड़ला का इस निधि के स्थापित करने का

उद्देश्य यह था कि इसकी आय से एक पुरस्कार अध्यात्म-तत्त्व, योगशास्त्र, सदाचार, नीति, मनोविज्ञान आदि विषयों की सर्वोत्तम रचना पर दिया जाय जिससे उक्त विषयों पर अच्छी पुस्तकों की रचना को प्रोत्साहन प्राप्त हो।

उक्त निधि की आय से २००) का पुरस्कार प्रति चौथे वर्ष दाता के उद्देश्यानुसार दिया जाता है। यह पुरस्कार 'बिडला पुरस्कार' कहलाता है।

प्रथम पुरस्कार सं० १६८८ से १६६१ तक की उक्त विषयों की सर्वोत्तम रचना 'शिक्षा-मनोविज्ञान' पर श्रीमती चंद्रावती लखनपाल, एम० ए० को दिया गया था।

## (४) पदक

### १—राधाकृष्णदास-पदक

पहले यह पदक जोधसिंह-पुरस्कार के साथ दिया जाता था। सं० १६६४ में श्री शिवप्रसाद गुप्त ने १००) सभा को दिया जिससे १००) अंकित मूल्य का स्टाक सर्टिफिकेट क्रय करके 'ट्रेजरर, चैरिटेबुल एंडाउमेंट्स' के पास जमा कर दिया गया है। इसकी आय ३।।) प्रति वर्ष है जिससे प्रति चौथे वर्ष यह रजत-पदक प्रथम रत्नाकर-पुरस्कार के साथ दिया जाता है।

श्री राधाकृष्णदास का जन्म श्रावण शुक्ल १५ संवत् १६२२ को हुआ था। ये भारतेंदुजी के फुफेरे भाई थे और उन्हीं के यहाँ इनका लालन पालन हुआ। इन्होंने एंट्रेंस तक शिक्षा पाई थी और साथ साथ हिंदी, उर्दू, फारसी तथा बँगला भाषाओं में योग्यता प्राप्त कर ली थी। गुजराती का भी अभ्यास किया था। इन्होंने कई नाटक लिखे जिनमें 'महाराणा प्रताप' प्रसिद्ध है। इनके अतिरिक्त इन्होंने और भी २०-२२ पुस्तकें लिखी थीं। यह कविता भी करते थे, पर कोई स्वतंत्र काव्य ग्रंथ इन्होंने नहीं लिखा। सभा के आरंभिक जीवन में बहुत दिनों तक यह उसके कर्णधार रहे। सभा-भवन के निर्माण में इन्होंने बहुत उद्योग किया था। स्थायी कोश के लिये, रुग्ण होते हुए भी, यह कई जगह गए तथा नागरी लिपि जारी करने के लिये जो शिष्ट-मंडल प्रांतीय लाट के पास गया था उसमें भी संमिलित हुए। सभा पर अंत तक इनका प्रेम बना रहा। यह सभा के सर्वप्रथम सभापति (संवत् १६५१ में) थे। सं० १६५२–५३ में उपसभापति तथा १६५४ और १६५६ में प्रधान मंत्री भी रहे। २ अप्रैल, सन् १६०७ को ४२ वर्ष की अवस्था में इनका परलोकवास हुआ।

श्री शिवप्रसाद गुप्त सभा के कार्यों में सदैव बड़ी अभिरुचि के साथ सक्रिय भाग लेते रहे हैं। जब आप अमेरिका गए थे उस समय ऐसा प्रबंध कर आए कि 'स्मिथ सोनियन इंस्टिट्यूशन' के सभी प्रकाशन आज तक सभा को मिल रहे हैं। १५ माघ, सं० १६६१ को ये सभा के साधारण सदस्य बने। इन्हीं के दान से काशी में दैनिक 'आज', ज्ञानमंडल यंत्रालय, प्रेस तथा विद्यापीठ आदि स्थापित हुए।

### २—रेडिचे-पदक

सभा ने अपनी ओर से तथा विशेष चंदा एकत्र करके १००) अंकित मूल्य का एक ३½ टकिया गवर्नमेंट स्टाक सर्टिफिकेट 'ट्रेजरर चैरिटेबुल एंडाउमेंट्स' के पास जमा कर दिया है जिसकी वार्षिक आय ३।।) है। इस द्रव्य से बिडला पुरस्कार के साथ प्रति चौथे वर्ष यह रजत-पदक दिया जाता है। पहले यह डाक्टर छन्नूलाल-पुरस्कार के साथ दिया जाता था।

रेडिचे महोदय सन् १६०२ से १६०८ तक बनारस के कलक्टर थे। सभा के प्रति इनकी बड़ी सहानुभूति थी और उसके कार्यों में ये विशेष अभिरुचि रखते थे। इन्हीं की कृपा से सभा को भूमि प्राप्त हुई थी एवं बनारस जिला बोर्ड से आर्थिक सहायता तथा सुबोध व्याख्यानों के लिये मैजिक लालटेन का मूल्य मिला था। सुबोध-व्याख्यानों के एक अधिवेशन में ये सभापति भी हुए थे। इनके नाम से पदक देने का निश्चय सं० १६६५ में हुआ था।

## ३--सुधाकर-पदक

स्वर्गीय श्री गौरीशंकरप्रसाद एडवोकेट ने अपने गुरु महामहोपाध्याय श्री सुधाकर द्विवेदी की स्मृति में इस पदक के लिये सं० १६८३ में ८१॥।≡) दिए जिससे १००) अंकित मूल्य का स्टाक सर्टिफिकेट क्रय करके 'ट्रेजरर चैरिटेबुल एंडाउमेंट्स' के पास जमा कर दिया गया। इसकी आय ३॥) प्रति वर्ष की है जिससे उक्त रजत-पदक प्रति चौथे वर्ष बटुकप्रसाद-पुरस्कार के साथ दिया जाता है।

महामहोपाध्याय श्री सुधाकर द्विवेदी का जन्म चैत्र शुक्ल ४, संवत् १६१२ को काशी में हुआ था। इनके पिता का नाम श्रीकृपालुदत्त था। आठ वर्ष की अवस्था में यह पढ़ने बैठाए गए और शीघ्र उन्नति करने लगे। संस्कृत की शिक्षा प्राप्त करने पर यह ज्योतिष् शास्त्र की ओर झुके और गणित में तो इन्होंने पूर्ण पांडित्य प्राप्त किया। प्रसिद्ध विद्वान् श्री बापूदेव शास्त्री की इन पर बड़ी कृपा रहती थी।

यह मातृभाषा हिंदी के अनन्य प्रेमी तथा विद्वान् थे। इन्होंने हिंदी में १७ ग्रंथों की रचना तथा संपादन किया। यह भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र के मित्रों में से थे। इन्होंने तुलसीदास, सूरदास, कबीर आदि के काव्यों का अच्छा मनन किया था।

ये सभा के बराबर सदस्य रहे और उससे बहुत सहानुभूति रखते थे। इन्होंने कई वर्ष तक सभापति रहकर सभा की बहुत सेवा की थी। सं० १६६७ में आपका निधन हुआ।

श्री गौरीशंकर प्रसाद का जन्म ज्येष्ठ संवत् १६३२ में हुआ था। आप काशी के एक नामी वकील थे। हिंदी से आपको बहुत प्रेम था। नागरीप्रचारिणी सभा के कार्य में आपने बड़ी अभिरुचि के साथ सक्रिय भाग लिया है। आप संवत् १६६४ में सभा के आय-व्यय-निरीक्षक, संवत् १६६५, ६६, ६७, ६६, ७० और ७१ में प्रधान मंत्री, संवत् १६७२, ७३, ७४, ७५, ७७, ७८, ७६ और ८० में उपसभापति और संवत् १६७५ में कुछ समय के लिये सभापति भी रहे। ये काशी के डी० ए० वी० स्कूल के संस्थापकों में से थे और कई वर्ष तक उसके मंत्री भी रहे।

उक्त स्कूल की सेवा उन्होंने मृत्यु पर्यंत बड़ी लगन के साथ की। स्कूल का वर्तमान भवन और उससे संबद्ध विस्तृत भूमि बहुत कुछ उन्हीं के उद्योग का फल है।

ये बलिया जिले के रसड़ा ग्राम के निवासी थे, किंतु इनका कार्यक्षेत्र काशी ही रहा। अपनी स्वोपार्जित विपुल संपत्ति का बहुत बड़ा भाग ये काशी की आर्य विद्या-सभा को विद्या-दान के निमित्त दे गए हैं। ज्येष्ठ शुक्ल १५, संवत् १६६४ को इनका देहांत हुआ।

## ४--गुलेरी-पदक

श्री जगद्धर शर्मा गुलेरी, एम० ए०, ने सं० १६६५ में १००) अपने भाई की स्मृति में इस पदक के लिये

दिए। इससे १००) अंकित मूल्य का स्टाक सर्टिफिकेट क्रय करके 'ट्रेजरर, चैरिटेबुल एंडाउमेंट्स' के पास जमा कर दिया गया जिसकी आय ३॥) प्रति वर्ष है। इससे उक्त रजत-पदक दाता के स्वर्गीय भाई श्री चंद्रधर शर्मा गुलेरी के नाम पर प्रति चौथे वर्ष जोधसिंह पुरस्कार के साथ दिया जाता है।

श्री चंद्रधर शर्मा गुलेरी का जन्म २५ आषाढ़, सं० १९४० को जयपुर में हुआ था और बाल्यावस्था में इन्होंने अपने पिता से संस्कृत की शिक्षा पाई थी। सं० १९५० में यह जयपुर-महाराज-कालेज में भर्ती हुए और छः वर्ष में एंट्रेंस की परीक्षा प्रयाग तथा कलकत्ता विश्वविद्यालयों से पास की। सन् १९०३ ई० में प्रयाग विश्वविद्यालय की बी० ए० परीक्षा में प्रथम हुए। संस्कृत के यह प्रगाढ़ विद्वान् थे। वैदिक साहित्य, भाषातत्त्व, दर्शन तथा पुरातत्त्व का इन्होंने अच्छा अनुशीलन किया था और संस्कृत, प्राकृत, पाली, बँगला तथा मराठी भाषाओं के भी ज्ञाता थे।

जयपुर के स्वर्गीय जैन वैद्यजी से परिचय होने से इनको हिंदी से प्रेम हुआ और सन् १९०० ई० में इन लोगों ने जयपुर का 'नागरी भवन' स्थापित किया। कई वर्ष तक इन्होंने 'समालोचक' पत्र का संपादन किया था। इनके बहुत से स्फुट लेख अनेक पत्र-पत्रिकाओं में निकला करते थे। सभा ने इनके लेखों का एक संग्रह प्रकाशित किया है। सभा के कार्यों से इन्हें बहुत सहानुभूति रहती थी। उसकी लेखमाला, नागरीप्रचारिणी पत्रिका और सूर्यकुमारी पुस्तकमाला के ये संपादक रह चुके थे। इन्होंने अशोक की धर्म-लिपियों का भी संपादन किया था, जिसका एक ही भाग निकलकर रह गया। ये सभा के २० वर्ष तक सभासद् रहे। सं० १९७९ में सभा के उपसभापति थे और कई वर्ष तक उसके 'बोर्ड आव ट्रस्टीज' के सदस्य रहे।

काशी-हिंदू-विश्वविद्यालय में संस्कृत कालेज के प्रिंसिपल होकर जब यह यहाँ आकर रहने लगे उस समय सभा के कार्यों में अधिक सहयोग देते रहे। इनके तथा ओझा जी के प्रयत्न से सूर्यकुमारी-पुस्तक-माला-निधि सभा को प्राप्त हुई थी।

स्वभावतः यह बड़े सरल, नम्र तथा निष्कपट थे और सनातन हिंदू धर्म के सिद्धांतों के सच्चे अनुयायी थे। मंगलवार २७ भाद्रपद, सं० १९७९ ( १२ सितंबर, सन् १९२२ ) को काशी में ही इनका शरीरांत हुआ।

श्री जगद्धर शर्मा गुलेरी, एम० ए०, सं० १९७८ में सभा की ओर से पंजाब में प्राचीन हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों की खोज के निरीक्षक थे। इस समय लायलपुर में कृषि महाविद्यालय में अध्यापक हैं। आप सभा के सदस्य भी हैं।

**५—ग्रीव्स-पदक**

श्री रामनारायण मिश्र ने सं० १९८५ में ७०) सभा को दिए थे जिससे १००) अंकित मूल्य का स्टाक सर्टिफिकेट क्रय करके 'ट्रेजरर, चैरिटेबुल एंडाउमेंट्स' के पास जमा कर दिया गया। इससे ३॥) वार्षिक आय होती है और प्रति चौथे वर्ष उक्त रजत-पदक डाक्टर छन्नूलाल पुरस्कार के साथ दिया जाता है।

रेवरेंड एडविन ग्रीव्स का जन्म ५ दिसंबर, १८५४ को लंदन में हुआ था। छोटी अवस्था में ही उन्हें स्कूल छोड़कर व्यापार में योग देना पड़ा; किंतु मिशन का कार्य करने की इच्छा से इन्होंने सं० १९३४ वि० में २३ वर्ष की अवस्था में फिर कालेज में प्रवेश किया और लगभग ६ वर्ष तक शिक्षा प्राप्त की। सं० १९३८ में ये एक मिशनरी के रूप में भारत आए और

सं० १६४६ तक मिर्जापुर में रहे। फिर छुट्टी लेकर विलायत चले गए। वहाँ से लौटने पर दो वर्ष तक बनारस जिले में भ्रमण करते रहे और फिर स्थिर रूप से बनारस में ही रहने लगे। इन्होंने हिंदी में कई पुस्तकें लिखी हैं। सभा से इन्हें बहुत अधिक प्रेम है। सन् १८९७ के जुलाई मास में आप सभा के सदस्य बने। सभा को भूमि दिलाने में इन्होंने भी बहुत प्रयत्न किया था। हिंदी-शब्दसागर के निर्माण के लिये सभा को उत्साहित करने और उसके लिये एक विस्तृत योजना बनाने का श्रेय रेवरेंड ग्रीव्स को ही है। सभा द्वारा संपादित रामायण के लिये इन्होंने ही चित्र लिए थे। 'माडर्न रिव्यू' में सभा के कार्यों का संक्षिप्त विवरण देकर इन्होंने एक परिचयात्मक लेख भी प्रकाशित कराया था। सभा की अनेक बैठकों में आपने सभापति-पद को सुशोभित किया है। ग्रीव्स महोदय सं० १९६१, ६२, ६५, ७० और ७१ में सभा के उपसभापति रहे। ये आज-कल इँगलैंड में मालबर्न नगर में निवास करते हैं। स्वर्गीय श्री गौरीशंकरप्रसाद और श्री रामनारायण मिश्र अपनी योरोप-यात्रा में सन् १९२९ में इनसे इनके घर पर मिले थे जहाँ इन्होंने बड़े प्रेम से आतिथ्य किया था।

श्री रामनारायण मिश्र का जन्म इनकी ननिहाल दिल्ली में ज्येष्ठ संवत् १९३३ में भद्रकाली एकादशी को हुआ था। इनके पिता का नाम श्री चिरंजीव मिश्र था। ये अमृतसर के रहनेवाले हैं। अपने मामा डा० छन्नूलाल के कारण यह बाल्यकाल में ही अपने माता-पिता के साथ बनारस आ गए थे। यहीं इनका पालन पोषण और शिक्षा हुई। क्वींस कालेज से सं० १९५७ में इन्होंने बी० ए० पास किया और उसी वर्ष शिक्षा-विभाग में डिस्ट्रिक्ट इंस्पेक्टिंग आफिसर के पद पर इनकी नियुक्ति हो गई। सं० १९९४ तक इन्होंने इस क्षेत्र में कार्य किया। इस बीच १० वर्ष तक डिप्टी इंस्पेक्टरी, १० वर्ष तक हरिश्चंद्र हाईस्कूल, ३ वष तक गवर्नमेंट हाई स्कूल और १४ वर्ष तक सेंट्रल हिंदू स्कूल की हेड मास्टरी तथा कुछ समय तक भारत-सरकार के डाइरेक्टर जेनरल के दफ्तर में पंचवर्षीय रिपोर्ट तैयार करने का कार्य किया। सं० १९८६ में ६ मास का अवकाश लेकर जेनेवा में होनेवाले विश्व-शिक्षा-सम्मेलन में भाग लेने के लिये आपने योरोप-यात्रा की और वहाँ अनेक देशों का भ्रमण कर शिक्षा-संस्थाओं का पर्यवेक्षण किया। बनारस म्यूनिसिपल बोर्ड के सरकार द्वारा मनोनीत सदस्य होकर आप ६ वर्ष तक बोर्ड की एजुकेशन-कमेटी के प्रधान रहे। इसके अतिरिक्त आप यू० पी० सेकेंडरी एजूकेशन बोर्ड, टेक्स्ट बुक कमेटी और एजुकेशन कोड रिविजन कमेटी के भी सदस्य रह चुके हैं।

सभा को आपने अपने विद्यार्थिकाल में ही कतिपय अन्य साथियों के साथ मिलकर स्थापित किया था। सं० १९५० में आप सभा के सर्वप्रथम उपमंत्री रहे, पुनः १९५३ और ५४ में भी इस पद को आपने ही सुशोभित किया। आरंभिक वर्षों में जब सभा के साप्ताहिक अधिवेशन हुआ करते थे, आप कई अधिवेशनों के सभापति रह चुके हैं। इसके बाद संवत् १९६८ में प्रधान मंत्री, सं० १९७३, ७६, ७७, ७८, ८४, ८५, ९२ और ९३ में उपसभापति तथा १९९४, ९५ और ९६ में सभापति रहे हैं। आजकल आर्यभाषा-पुस्तकालय के निरीक्षक और अर्द्धशताब्दी विभाग के अध्यक्ष हैं। आपने हिंदी पुस्तकों का अपना संग्रह आर्य भाषा-पुस्तकालय को प्रदान कर दिया है। हिंदी विषयक कई प्रांतीय संमेलनों के सभापति भी आप चुने जा चुके हैं।

### ६—द्विवेदी-स्वर्णपदक

आचार्य श्री महावीरप्रसाद द्विवेदी का इस निधि के स्थापित करने का यह उद्देश्य था कि उसकी आय से एक स्वर्ण-पदक प्रतिवर्ष उस वर्ष की हिंदी की सर्वोत्तम रचना के प्रणेता को दिया जाय, जिससे हिंदी-साहित्य-सेवियों को प्रोत्साहन मिले।

सं० १६८५ में द्विवेदी जी ने १०००) सभा को दिए। इससे तथा इसके ब्याज की बचत से १६००) अंकित मूल्य का स्टाक सर्टिफिकेट क्रय करके 'ट्रेजरर, चैरिटेबुल एंडाउमेंट्स' के यहाँ जमा कर दिया गया, जिसकी आय अब ५६) वार्षिक है।

इस निधि की आय से दाता के उद्देश्य के अनुसार प्रति वर्ष एक स्वर्ण-पदक दिया जाता है जो 'द्विवेदी स्वर्ण-पदक' कहा जाता है।

यह पदक पहली बार सं० १६८६ की सर्वोत्तम रचना 'काव्य में रहस्यवाद' पर श्री रामचंद्र शुक्ल को दिया गया था।

स्वर्गीय द्विवेदीजी का जन्म वैशाख शुक्ल ४, सं० १६२१ को रायबरेली जिले के अंतर्गत दौलतपुर ग्राम में हुआ था। ग्राम ही की पाठशाला में हिंदी तथा उर्दू और गृह पर अपने पितृव्य से संस्कृत पढ़ी। इसके अनंतर रायबरेली के हाई स्कूल में तथा अन्य कई स्कूलों में कुछ शिक्षा प्राप्त कर बंबई गए जहाँ आपके पिता नौकरी करते थे। वहाँ मराठी, गुजराती, संस्कृत तथा अँगरेजी का अध्ययन किया। इस प्रकार शिक्षा समाप्त करने के अनंतर इन्होंने रेलवे में नौकरी कर ली। बहुत दिनों बंबई प्रांत के अनेक स्टेशनों में काम करने के अनंतर यह झांसी आए जहाँ आपने बँगला सीखी और संस्कृत के काव्य तथा अलंकार ग्रंथों का अध्ययन किया। यहीं आपने हिंदी भाषा की सेवा करने का व्रत लिया और उसे यावज्जीवन निबाहा।

किसी उच्च पदाधिकारी से कहा-सुनी हो जाने के कारण आपने नौकरी से त्यागपत्र दे दिया और अपने घर लौट आए। सन् १६०३ में आपने प्रयाग की 'सरस्वती' के संपादन का कार्य-भार ग्रहण किया। तब से इस पत्रिका ने बहुत उन्नति की। इन्होंने खड़ी बोली में कविता की है जिनका संग्रह प्रयाग के इंडियन प्रेस, लिमिटेड ने प्रकाशित किया है। संस्कृत के प्रसिद्ध काव्यों पर आपने आलोचनात्मक ग्रंथ लिखे हैं तथा अँगरेजी के कई ग्रंथों का हिंदी अनुवाद किया है। कुमारसंभवसार में आपने अच्छी कवित्व-शक्ति दिखलाई है।

द्विवेदी जी ने 'सरस्वती' द्वारा भाषा का जो परिष्कार किया तथा उसे व्याकरण-संमत बनाने में जो अध्यवसाय किया है वह अत्यंत स्तुत्य है। द्विवेदी जी काशी-नागरीप्रचारिणी सभा के सम्मानित सदस्य बराबर रहे और सं० १६७६ और ८० में उसके सभापति भी। आपने अपना अमूल्य पुस्तक-संग्रह, अपना पत्र-संग्रह और 'सरस्वती' की संपादित फाइलें सभा को प्रदान कर दी हैं। सं० १६६० में सभा ने आपको एक 'अभिनंदन-ग्रंथ' भेंट किया था जो गवेषणापूर्ण लेखों के संग्रह के कारण बहुमूल्य है। आपका देहावसान सं० १६६५ में ( २१ दिसंबर, सन् १६३८ को ) हुआ।

### ७—बलदेवदास-पदक

सं० १६६१ में श्री व्रजरत्नदास ने १००) अपने पिता की स्मृति में इस पदक के लिये सभा को दिए जिससे १००) अंकित मूल्य का स्टाक सर्टिफिकेट क्रय

महामहोपाध्याय श्री सुधाकर द्विवेदी

आचार्य श्री महावीरप्रसाद द्विवेदी

# अर्धशताब्दी के सहायक
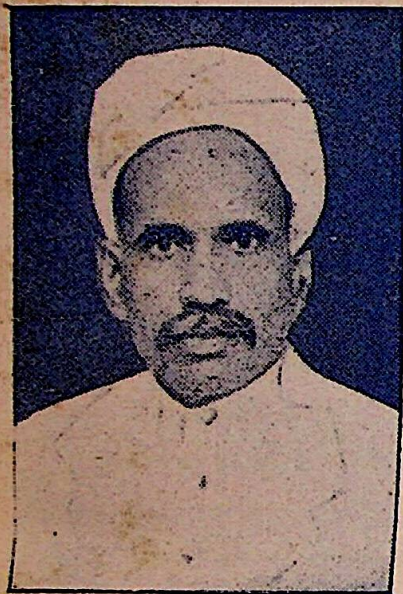
श्री गोविंदरामजी सेखसरिया
सहायता १०००)
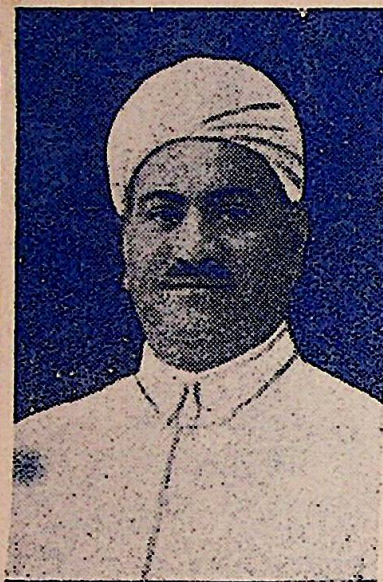
श्री रामदेवजी पोदार
सहायता १०००)

श्री चिरंजीलालजी लोयलका
सहायता ५००)

श्री विश्वंभरलालजी माहेश्वरी
सहायता ५००)
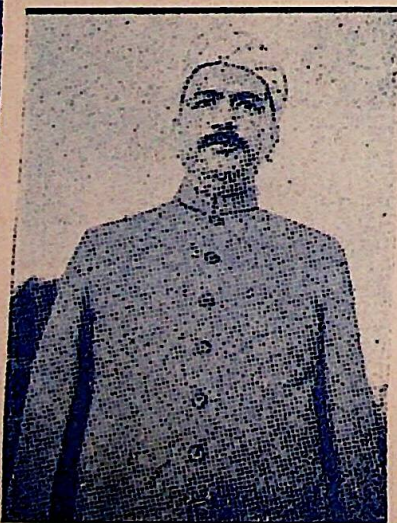
श्री वैजनाथजी माखरिया
सहायता ५००)

श्री रामरिखदासजी परसरामपुरिया
सहायता ५००।

करके 'ट्रेजरर, चैरिटेबुल एंडाउमेंट्स' के पास जमा कर दिया गया है। इसकी आय ३।।) वार्षिक है जिससे प्रति चौथे वर्ष यह रजत-पदक द्वितीय रत्नाकर पुरस्कार के साथ दिया जाता है।

स्व० श्री बलदेवदास का जन्म आश्विन शुक्ल ६, संवत् १९२४ को तथा मृत्यु चैत्र कृष्ण २, सं० १९८६ को हुई थी।

श्री ब्रजरत्नदास सभा के विशिष्ट सभासद्, काशी के प्रतिष्ठित नागरिक, वकील तथा हिंदी में अनेक उत्कृष्ट साहित्यिक और ऐतिहासिक ग्रंथों के प्रणेता हैं। सं० १९८१ में ये सभा के प्रधान मंत्री, सं० १९९४, ९५,९६ में अर्थमंत्री और सं० १९७८,७९,८० में उपमंत्री रह चुके हैं तथा इस समय भी बड़ी लगन से उसकी सेवा कर रहे हैं।

## ८—डाक्टर हीरालाल-स्वर्णपदक

संवत् १९९२ में डाक्टर हीरालाल ने १०००) सभा को दिया जिससे १०००) अंकित मूल्य का स्टाक सर्टिफिकेट क्रय करके 'ट्रेजरर चैरिटेबुल एंडाउमेंट्स' के पास जमा कर दिया गया है। उसकी आय ३५) वार्षिक है।

स्वर्गीय डाक्टर हीरालाल का इस निधि के स्थापित करने का यह उद्देश्य था कि इसकी आय से एक स्वर्ण-पदक प्रतिवर्ष हिंदी में लिखी पुरातत्त्व, मुद्राशास्त्र, इंडॉलॉजी, भाषा-विज्ञान तथा एपिग्राफी संबंधी सर्वोत्तम मौलिक रचना या निबंध पर दिया जाय जिससे उक्त गंभीर विषयों पर हिंदी में ग्रंथ-प्रणयन को प्रोत्साहन मिले।

इस निधि की आय से दाता के उद्देश्यानुसार प्रति दूसरे वर्ष एक स्वर्ण-पदक दिया जाता है, जो 'डा० हीरालाल-स्वर्ण-पदक' कहलाता है।

इसके योग्य पुस्तकों के अभाव में यह पदक अभी किसी को नहीं दिया जा सका।

स्वर्गीय रायबहादुर डाक्टर हीरालाल जबलपुर जिले के मुडवारा स्थान के निवासी थे। इनका जन्म आश्विन शुक्ला ४, संवत् १९२४ को हुआ था। इनके पिता का नाम श्री ईश्वरदास था। सं० १९३८ में इन्होंने प्रथम श्रेणी में मिडिल और सं० १९४५ में बी० ए० भी प्रथम श्रेणी में ही पास किया। कुछ दिन एक हाई स्कूल में मास्टर रहकर ये शिक्षा-विभाग में डिप्टी इंस्पेक्टर, इंस्पेक्टर और फिर छत्तीसगढ़ कमिश्नरी के इंस्पेक्टर बनाए गए। सं० १९५६ में एक्स्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर बनाकर बालाघाट में अकाल-पीड़ितों की सहायता के लिये भेजे गए। सन् १९०१ की मनुष्य-गणना के समय कई भाषाओं के ज्ञाता होने और मध्यप्रदेश की जातियों और विविध धर्मों की अभिज्ञता रहने के कारण आप उसके असिस्टेंट सुपरिंटेंडेंट नियुक्त हुए। इस कार्य की समाप्ति पर कुछ समय तक बिलासपुर के एक्स्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर रहे और क्रमशः उन्नति करते हुए डिप्टी कमिश्नर के पद तक पहुँचे। सं० १९७९ में आपने पेंशन ली।

पुरातत्त्व-विद्या में आपने अपने अध्यवसाय से बड़ी योग्यता प्राप्त कर ली थी। आप कलचुरी वंश के इतिहास के विशेषज्ञ थे। पटना ओरिएंटल कान्फ्रेंस के आप सभापति हुए थे। सन् १९०२ में आप नागरीप्रचारिणी सभा के सदस्य बने। सं० १९८१ में उपसभापति और सं० १९८२, ८३ और ८४ में सभापति रहे। सं० १९८० से १९८८ तक सभा में आपने खोज विभाग के निरीक्षक का कार्य बड़ी योग्यता और परिश्रम से किया और उसकी विद्वत्तापूर्ण रिपोर्ट लिखी। सं० १९९० में आपने योरोप की यात्रा की

थी। गवर्नमेंट के लिये अनेक लेखों, रिपोर्टों और पुस्तकों के अतिरिक्त हिंदी में भी आपने अनेक महत्त्व पूर्ण ग्रंथ लिखे हैं। आपकी बहुमूल्य सेवाओं से प्रसन्न होकर भारत-सरकार ने आपको रायबहादुर की उपाधि से संमानित किया था और पुरातत्त्व-संबंधी विशेष योग्यता के लिये नागपुर-विश्वविद्यालय ने आप को डाक्टर की उपाधि से विभूषित किया था। संवत् १६६१ में ( २० अगस्त, सन् १६३४ को ) बंबई में जीर्ण ज्वर से आपका देहांत हुआ।

## विनायक नंदशंकर मेहता पुरस्कार

हिंदी के परम भक्त और भारतीय संस्कृति के अनन्य उपासक स्वर्गवासी श्री विनायक नंदशंकर मेहता की स्मृति में एक पुरस्कार देने का निश्चय सभा की प्रबंध-समिति ने ८ चैत्र १६६८ के अधिवेशन में निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकार करके किया है—

"श्री रामनारायण मिश्र ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि स्वर्गीय श्री वी० एन० मेहता की स्मृति में सभा से एक पुरस्कार दिया जाया करे।

"निश्चय हुआ कि यह स्वीकार किया जाय और सभा इसके लिये १०००) एकत्र करने का प्रयत्न करे।"

इसकी व्यवस्था के लिये जो धन अपेक्षित है उसके मिलते ही यह पुरस्कार देना भी आरंभ कर दिया जायगा।

पुरस्कार-पदक-संबंधी नियमों पर विचार करने के लिये सभा की प्रबंध-समिति ने एक उपसमिति बनाई थी जिसकी रिपोर्ट पर उसने अपनी १ श्रावण, सं० २००० की बैठक में निम्नलिखित नियम स्वीकार किए हैं—

## पुरस्कार संबंधी नियम

"१—सभा के वार्षिक अधिवेशन में प्रति चौथे वर्ष निश्चित पुरस्कार निश्चित ( रजत ) पदक के साथ निश्चित उद्देश्यों के अनुसार रचयिताओं को उनके संमानार्थ दिए जायँगे, अथवा उनके उपस्थित न होने पर उनके नाम प्रकट कर दिए जायँगे।

२—पूरा पुरस्कार एक ही लेखक या संपादक को दिया जायगा। वह एक से अधिक में बाँटा न जायगा।

३—पुरस्कार के साथ प्रमाणपत्र भी दिया जायगा।

४—पुरस्कार देने की निश्चित तिथि से कम से कम ६ मास पहले सभा की प्रबंध समिति एक उप-समिति संघटित कर देगी जिसके कम से कम पाँच सदस्य होंगे। यह उपसमिति ३ या ५ निर्णायक नियुक्त करेगी। कम से कम तीन सदस्यों की उपस्थिति में उक्त उपसमिति का कार्य हो सकेगा। पत्र द्वारा प्राप्त संमति भी ग्राह्य होगी। निर्णायकों में सभा के सदस्य तथा अन्य विद्वान् भी हो सकेंगे; किंतु जिनकी लिखी या प्रकाशित पुस्तक पुरस्कार के लिये विचारार्थ आई होगी वे निर्णायक न हो सकेंगे। ( रत्नाकर पुरस्कारों में रत्नाकर जी के परिवार का एक प्रतिनिधि निर्णायक होगा। )

५—यदि कोई सज्जन चाहें कि किसी रचना के संबंध में किसी पुरस्कार के लिये विचार किया जाय तो उनका कर्तव्य है कि उसकी ७ प्रतियाँ सभा के कार्यालय में निश्चित समय के भीतर भेज दें, जो सभा की संपत्ति समझी जायँगी। इन पुस्तकों की पहुँच प्रेषक के पास भेजी जायगी।

६—पुरस्कार के लिये केवल जीवित लेखकों की रचना पर विचार किया जायगा। पर निर्णय हो जाने पर यदि लेखक की मृत्यु हो जाय तो वह पुरस्कार उसके उत्तराधिकारी को दिया जायगा।

७—किसी लेखक को कोई पुरस्कार एक बार से अधिक नहीं दिया जायगा।

८—पुरस्कार-उपसमिति को भी अधिकार होगा कि यदि वह चाहे तो पुरस्कार के लिये आई हुई पुस्तकों के अतिरिक्त अन्य उपयुक्त पुस्तकें भी अपनी ओर से निर्णय के लिये निर्णायकों के संमुख उपस्थित करे।

९—पुरस्कार-उपसमिति दाता के निर्दिष्ट उद्देश्य के अनुसार निर्धारित अवधि के अंतर्गत प्रकाशित पुस्तकों की सूचियाँ तैयार कराएगी जिसमें रचना, रचयिता, तथा प्रथम संस्करण के प्रकाशन का समय दिया रहेगा।

१०—उक्त सूची के आधार पर पुरस्कार-उपसमिति एक ऐसी सूची तैयार करेगी जिसकी पुस्तकों पर निर्णायकों को विचार करना होगा।

११—उक्त नियम १० के अनुसार बनी सूची की एक एक प्रति तथा रचनाओं की एक एक प्रति निर्णायकों के पास भेजी जाकर निश्चित समय के भीतर उनके निर्णय मँगाने का प्रबंध किया जायगा। यह समय साधारण: तीन मास से अधिक न होगा।

१२—प्रत्येक पुस्तक के लिये अधिक से अधिक १०० अंक निर्दिष्ट रहेंगे। प्रत्येक निर्णायक प्रत्येक भेजी हुई पुस्तक पर उसकी योग्यता के अनुसार अलग अलग अंक देंगे। समस्त निर्णायकों के अंक मिलाकर जिस पुस्तक पर सर्वाधिक अंक मिलेंगे वह सर्वोत्तम और पुरस्कार की अधिकारिणी मानी जायगी। समस्त निर्णायकों के अंक मिलाकर एक से अधिक पुस्तकों पर सर्वाधिक किंतु बराबर अंक मिलने की अवस्था में पुरस्कार-उपसमिति को अधिकार होगा कि वह ऐसी एकाधिक पुस्तकों पर विचार करके किसी एक पुस्तक को पुरस्कार के योग्य ठहरावे।

१३—समस्त निर्णायकों के अंकों का जोड़ मिलाकर प्रतिशत कम से कम ६० अंकों का औसत आने पर कोई रचना पुरस्कार की अधिकारिणी मानी जायगी।

१४—(क) यदि किसी वर्ष पुरस्कार न दिया जा सका तो पुरस्कार का बचा हुआ द्रव्य उसकी स्थायी निधि में जमा कर दिया जायगा।

(ख) स्थायी निधि के व्याज द्वारा पुरस्कार के लिये अपेक्षित द्रव्य से अधिक जो आय होगी उसमें से पुरस्कार संबंधी अन्य आवश्यक खर्च होंगे और तदुपरांत जो बचत होगी वह स्थायी निधि में जमा कर दी जायगी।

१५—काव्यों में उन्हीं पुस्तकों पर पुरस्कार के लिये विचार किया जायगा जिनमें लगभग २०० चरण होंगे।

## पदक संबंधी नियम

१—सभा के वार्षिक अधिवेशन में प्रतिवर्ष निश्चित पदक निश्चित उद्देश्यों के अनुसार ग्रंथ-रचयिताओं को संमानार्थ दिया जायगा और उनके उपस्थित न रहने पर उनका नाम प्रकट कर दिया जायगा।

२—पदक देने की निश्चित तिथि से कम से कम ६ मास पहले सभा की प्रबंध-समिति एक उप-समिति संघटित कर देगी, जिसके कम से कम पाँच सदस्य होंगे। यह उपसमिति ३ या ५ निर्णायक नियुक्त करेगी। कम से कम तीन सदस्यों की उपस्थिति में उक्त उपसमिति का कार्य हो सकेगा। पत्र द्वारा प्राप्त संमति भी ग्राह्य होगी। निर्णायकों में सभा के सदस्य तथा अन्य विद्वान् भी हो सकेंगे। किंतु जिनकी लिखी या प्रकाशित पुस्तक पुरस्कार के लिये विचारार्थ आई होगी वे निर्णायक न हो सकेंगे।

३—यदि कोई सज्जन चाहें कि किसी रचना के संबंध में किसी स्वर्ण-पदक के लिये विचार किया जाय तो उनका कर्तव्य है कि उसकी ७ प्रतियाँ सभा के कार्यालय में निश्चित समय के भीतर भेज दें, जो सभा की संपत्ति समझी जायँगी। इन पुस्तकों की पहुँच प्रेषक के पास भेजी जायगी।

४—पदक के लिये केवल जीवित लेखकों की रचना पर विचार किया जायगा। पर निर्णय हो जाने पर यदि लेखक की मृत्यु हो तो वह पदक उसके उत्तराधिकारी को दिया जायगा।

५—किसी लेखक को कोई पदक एक बार से अधिक नहीं दिया जायगा।

६—पदक-उपसमिति को अधिकार होगा कि यदि वह चाहे तो पदक के लिये आई हुई पुस्तकों के अतिरिक्त अन्य पुस्तकें भी अपनी ओर से निर्णय के लिये निर्णायकों के संमुख उपस्थित करे।

७—पदक-उपसमिति प्रतिवर्ष सर्वोत्तम प्रकाशित पुस्तकों की सूची तैयार कराएगी, जिसमें रचना, रचयिता तथा प्रथम संस्करण के प्रकाशन का समय दिया रहेगा।

८—उक्त सूची के आधार पर पदक-उपसमिति एक ऐसी सूची तैयार करेगी जिसकी पुस्तकों पर निर्णायकों को विचार करना होगा।

९—उक्त नियम ८ के अनुसार बनी सूची की एक एक प्रति तथा रचनाओं की एक एक प्रति निर्णायकों के पास भेजी जाकर निश्चित समय के भीतर उनके निर्णय मँगाने का प्रबंध किया जायगा। यह समय साधारणतः तीन मास से अधिक न होगा।

१०—प्रत्येक पुस्तक के लिये अधिक से अधिक १०० अंक निर्दिष्ट रहेंगे। प्रत्येक निर्णायक प्रत्येक भेजी हुई पुस्तक पर उसको योग्यता के अनुसार अलग अलग अंक देंगे। समस्त निर्णायकों के अंक मिलाकर जिस पुस्तक पर सर्वाधिक अंक मिलेंगे वह सर्वोत्तम और पदक की अधिकारिणी मानी जायगी। समस्त निर्णायकों के अंक मिला कर एक से अधिक पुस्तकों पर सर्वाधिक किंतु बराबर अंक मिलने की अवस्था में पदक-उप-समिति को अधिकार होगा कि वह ऐसी एकाधिक पुस्तकों पर विचार करके किसी एक पुस्तक को पदक के योग्य ठहरावे।

११—समस्त निर्णायकों के अंकों का जोड़ मिलाकर प्रतिशत कम से कम ६० अंकों का औसत आने पर कोई रचना पदक की अधिकारिणी मानी जायगी।

१२—(क) यदि किसी वर्ष पदक न दिया जा सका तो पदक का बचा हुआ द्रव्य उसकी स्थायी निधि में जमा कर दिया जायगा।

(ख) स्थायी निधि के ब्याज द्वारा पदक के लिये अपेक्षित द्रव्य से अधिक जो आय होगी उसमें से पदक-संबंधी अन्य आवश्यक खर्च होंगे और तदुपरांत जो बचत होगी वह स्थायी निधि में जमा होगी।

## सभा द्वारा पुरस्कृत पुस्तकें

अब तक की सभा द्वारा पुरस्कृत पुस्तकों की सूची लेखक, पुरस्कार और पदकों के नाम सहित संवत्-क्रम से यहाँ दी जाती है।

१९७६—प्राचीन लिपिमाला
(श्री गौरीशंकर हीराचंद ओझा)
जोधसिंह पुरस्कार, गुलेरी-पदक और राधाकृष्णदास-पदक

१९७९—भारतवर्ष के प्राचीन राजवंश
(श्री विश्वेश्वरनाथ रेऊ)
जोधसिंह पुरस्कार, गुलेरी-पदक और राधाकृष्णदास-पदक

१९८०—हमारे शरीर की रचना
(डाक्टर त्रिलोकीनाथ)
डाक्टर छन्नूलाल पुरस्कार, ग्रीव्स-पदक और रेडिचे-पदक

१९८१—बुद्धचरित
(श्री रामचंद्र शुक्ल)
रत्नाकर पुरस्कार, राधाकृष्णदास-पदक, सुधाकर-पदक

१९८३—अजातशत्रु
(श्री जयशंकर प्रसाद)
बटुकप्रसाद पुरस्कार
सुधाकर-पदक

१९८४—गंगावतरण
(श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर')
रत्नाकर (१) पुरस्कार,
राधाकृष्णदास-पदक

१९८५—(१) कायाकल्प
(श्री प्रेमचंद)
बटुकप्रसाद पुरस्कार,
सुधाकर-पदक

(२) मौर्य साम्राज्य का इतिहास
(श्री सत्यकेतु विद्यालंकार)
जोधसिंह पुरस्कार, गुलेरी-पदक और राधाकृष्णदास-पदक

१९८६—(१) मानव-शरीर-रहस्य
(डाक्टर मुकुंदस्वरूप वर्मा)
डाक्टर छन्नूलाल पुरस्कार और ग्रीव्स-पदक

(२) काव्य में रहस्यवाद
(पं० रामचंद्र शुक्ल)
द्विवेदी-स्वर्णपदक

१९८७—हिंदी भाषा और साहित्य
(श्री श्यामसुंदरदास)
द्विवेदी-स्वर्णपदक

१९८८—(१) गढ़ कुंडार
(श्री वृंदावनलाल वर्मा)
बटुकप्रसाद पुरस्कार,
सुधाकर-पदक

( २ ) बुद्धचर्या
( श्री राहुल सांकृत्यायन )
जोधसिंह पुरस्कार, गुलेरी-पदक और
राधाकृष्णदास-पदक

( ३ ) मातृभूमि और उसके निवासी
( श्री जयचंद्र विद्यालंकार )
द्विवेदी-स्वर्णपदक

१९८९—( १ ) सौर परिवार
( डाक्टर गोरखप्रसाद )
डाक्टर छन्नूलाल पुरस्कार, ग्रीव्स-पदक
और रेडिचे-पदक

( २ ) गुंजन
( सुमित्रानंदन पंत )
द्विवेदी-स्वर्णपदक

१९९१—( १ ) शिक्षा-मनोविज्ञान
( श्री चंद्रावती लखनपाल एम० ए० )
बलदेवदास बिडला पुरस्कार,
रेडिचे-पदक

( २ ) तितली
( श्री जयशंकर प्रसाद )
बटुकप्रसाद पुरस्कार
सुधाकर-पदक

( ३ ) आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास
( श्री कृष्णशंकर शुक्ल )
द्विवेदी-स्वर्णपदक

१९९२—( १ ) प्रतापचरित
( श्री बारहट केसरीसिंह )
रत्नाकर ( १ ) पुरस्कार
बलदेवदास-पदक

( २ ) नूरजहाँ
( श्री गुरुभक्तसिंह )
रत्नाकर ( २ ) पुरस्कार,
बलदेवदास-पदक

( ३ ) क्षयरोग,
( डाक्टर शंकरलाल गुप्त )
डाक्टर छन्नूलाल पुरस्कार और
ग्रीव्स-पदक

( ४ ) संक्षिप्त शल्य-विज्ञान
( डाक्टर मुकुंदस्वरूप वर्मा )
डाक्टर छन्नूलाल पुरस्कार,
ग्रीव्स-पदक

( ५ ) भाषा-रहस्य
( श्री पद्मनारायण आचार्य )
द्विवेदी-स्वर्णपदक।

१९९७ -( १ ) बाल-मनोविज्ञान
( श्री लालजीराम शुक्ल )
बलदेवदास बिडला पुरस्कार
रेडिचे-पदक

( २ ) भारत की चित्रकला
( श्री राय कृष्णदास )
द्विवेदी-स्वर्णपदक

१९९८—नारी
( श्री सियारामशरण गुप्त )
बटुकप्रसाद पुरस्कार
सुधाकर-पदक

## १२—प्रकाशन

सभा का नाम यद्यपि नागरीप्रचारिणी सभा है तथापि शुद्ध प्रचार का कार्य करते हुए वह हिंदी-साहित्य का भंडार भी भरती आई है। उसका इतिहास हिंदी-साहित्य और भाषा के विकास का इतिहास है। उसने अपने विगत पचास वर्षों में हिंदी-साहित्य में अनेक अमूल्य रत्नों की सृष्टि की है। उपयोगी ठोस साहित्य का निमाण करके और हिंदी-जगत् में इस प्रकार की प्रवृत्ति जगाकर नागरीप्रचारिणी सभा ने उपयोगी और सामयिक साहित्य का अभाव दूर कर दिया है। सभा द्वारा प्रकाशित ग्रंथ हिंदी-साहित्य की स्थायी संपत्ति हैं।

संवत् १९५१ के आरंभ में जिस प्रकार आगे होनेवाले प्राय: सभी बड़े बड़े कार्यों का बीजारोपण हुआ था उसी प्रकार हिंदी-साहित्य के निर्माण का बीज भी उसी वर्ष बोया गया था। ८ ज्येष्ठ, सं० १९५१ ( २२ मई, १८९४ ) की बैठक में श्री राधाकृष्णदास का एतद्विषयक यह सर्वप्रथम प्रस्ताव स्वीकृत हुआ था कि हिंदी भाषा के प्रसिद्ध पत्र-संपादकों, ग्रंथकारों, लेखकों के जीवनचरित्र लिखवाकर प्रकाशित किए जायँ। इसके बाद उसी मास की २१ ज्येष्ठ की बैठक में निम्नलिखित ग्रंथ लिखवाने का प्रस्ताव भी स्वीकृत हुआ —

(१) हिंदी भाषा का इतिहास ( जिसमें
  (क) हिंदी भाषा की उत्पत्ति का समय,
  (ख) किन भाषाओं से इसकी उत्पत्ति हुई,
  (ग) प्रारंभ-काल से इसके क्या क्या रूप हुए,
  (घ) किस सदी में हिंदी की कैसी अवस्था रही और कौन कौन प्रधान लेखक हुए,
  (ङ) गद्य लिखने की प्रथा कब से चली,
  (च) प्रथम गद्य-लेखक कौन हुआ,
  (छ) भारत भर में कितने प्रकार की हिंदी बोली जाती है,
  (ज) हिंदी की सामयिक अवस्था,
  (झ) सामयिक गद्य में किन बातों का अभाव है,
  (ञ) सामयिक गद्य-शैली की आलोचना आदि विषयों की चर्चा आवश्यक थी )।

(२) हिंदी उपन्यासों का इतिहास
(३) इतिहास
(४) यात्रा-विवरण
(५) हिंदी के प्रसिद्ध लेखकों और भारतवर्ष के प्रख्यात पुरुषों के जीवनचरित्र
(६) हिंदी भाषा के सामयिक पत्रों का इतिहास
(७) मस्तिष्क-विज्ञान आदि के ग्रंथ
(८) हिंदी पद्य के ग्रंथ
(९) विभिन्न विषयों पर निबंध

उसी वर्ष इन ग्रंथों में से संख्या (२) के ग्रंथ की रचना श्री कार्तिकप्रसाद ने आरंभ कर दी और संख्या (६) का ग्रंथ श्री राधाकृष्णदास ने तैयार करके सभा द्वारा प्रकाशित करा दिया जिसका मूल्य ।)॥ रखा गया। इनके अतिरिक्त आरंभ में सभा की साप्ताहिक बैठकों में जो लेख पढ़े जाते थे उनमें से भी कतिपय उत्कृष्ट लेख सभा प्रकाशन के लिये चुन लेती थी। दूसरे वर्ष तो

हिंदी-व्याकरण और हिंदी-कोश की तैयारी का उद्योग भी आरंभ हो गया। तीसरे वर्ष नागरीप्रचारिणी पत्रिका का जन्म हुआ। इस प्रकार सभा प्रतिवर्ष हिंदी-साहित्य के निर्माण और प्रकाशन में उत्तरोत्तर आगे ही बढ़ती गई और आज सभा के प्रकाशनों का हिंदी-साहित्य में अपना विशेष स्थान है।

## ( १ ) नागरीप्रचारिणी पत्रिका

सभा की स्थापना के तीसरे वर्ष नागरीप्रचारिणी पत्रिका का जन्म हुआ। दो-ढाई वर्षों में ही सभा की प्रतिष्ठा इतनी बढ़ गई थी कि कितने ही लेख और पुस्तकें संमति और समालोचना के लिये उसके पास आने लगी थीं। उस समय जो पुस्तकें और लेख आदि हिंदी में प्रकाशित होते थे उनकी ओर भी सभा का ध्यान रहता था। इन प्रकाशनों की भाषा और शैली से सभा संतुष्ट न थी। वह इस बात की आवश्यकता का अनुभव करने लगी थी कि लेखकों की विचार-धारा, शैली और भाषा को ठीक रास्ते पर चलाने का यत्न होना चाहिए। फलतः ३ जनवरी, १८९६ को प्रबंधकारिणी की बैठक में सभा के तत्कालीन मंत्री श्री देवकीनंदन खत्री ने यह प्रस्ताव किया—

"इन दिनों हिंदी में जो कुछ किताबें छपती हैं उनमें प्रायः ऐसी होती हैं जिनके पढ़ने से खेद होता है। लेखक महाशय ग्रंथ लिखकर छपवा देना ही उत्तम समझते हैं और भली बुरी लेख-प्रणाली पर ध्यान नहीं देते। ऐसी अवस्था में समालोचना द्वारा उन्हें सचेत करना उचित है और इस काम के लिये नागरीप्रचारिणी सभा की ओर से 'समालोचक' नामक एक पत्र दो फर्मे का हर तीसरे महीने निकला करे और मौका मिलने पर उस पत्र की तरक्की की जाय।"

सभा ने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया और 'समालोचक' पत्र निकालने की अनुमति दे दी।

किंतु २२ पौष, सं० १९५२ वि० (६ जनवरी, १८९६) को साधारण सभा की बैठक में जब प्रबंधकारिणी की उक्त कार्रवाई पढ़ी गई तो श्री श्यामसुंदरदास ने 'समालोचक' पत्र निकालने का विरोध किया और कहा कि यह पत्र निकालना न चाहिए। उन्होंने विरोध के समर्थन में उसी समय सदस्यों के हस्ताक्षर-सहित एक पत्र लिखकर ३५।१२ नियम के अनुसार सभा में पेश किया। उनका कहना था कि जब तक इस प्रस्ताव पर नियमानुसार विचार न कर लिया जाय तब तक पत्र का प्रकाशन रोक रखा जाय। इस पर अधिक मत से पत्र निकालने की बात नियमानुसार विचार कर लेने तक के लिये स्थगित कर दी गई। इसके बाद ११ मई, १८९६ को साधारण सभा की बैठक में पत्र निकालने का विषय पुनः उपस्थित किया गया। इस बैठक में श्री राधाकृष्णदास ने इसका विरोध किया। काफी बहस हो लेने के बाद ऐसा पत्र निकालने की आवश्यकता है या नहीं, इस प्रश्न पर मत-गणना की गई। १३ सदस्यों ने पक्ष में मत दिया और एक ने विपक्ष में। अतः यह मान लिया गया कि आवश्यकता है। अब प्रश्न उठाया गया कि यह पत्र अभी निकाला जाय या कुछ दिन बाद। मत-गणना होने पर तुरंत निकालने के पक्ष में ११ और विपक्ष में २ मत आए। इस पर श्री राधाकृष्णदास ने यह सलाह दी कि नया पत्र निकालने की अपेक्षा यदि श्री बटुकप्रसाद की 'कुसुमांजलि' नाम की पत्रिका ले ली जाय जिसका आधा खर्च श्री बटुकप्रसाद दें और आधा

सभा तथा पत्रिका पर सभा का ही सब अधिकार रहे तो अच्छा हो। पर श्री बटुकप्रसाद ने इसे स्वीकार न किया। इस प्रकार जब पत्र का तुरंत निकालना निश्चित हो गया तो उसके संबंध की अन्य आवश्यक बातों पर उसी समय विचार किया गया और सर्व संमति से निम्नलिखित निश्चय किए गए—

१—पत्र त्रैमासिक निकाला जाय।

२—पत्र डिमाई साइज के ६ फर्मों का हो।

३—उसका नाम 'नागरीप्रचारिणी पत्रिका' रहे।

४—लेखों की ५०० प्रतियाँ छापी जायँ और ग्रंथों की एक हजार।

५—पत्र की छपाई ४) प्रति फार्म से अधिक न हो और कागज ३।) प्रति फार्म से।

६—पत्र के नियम निम्नलिखित हों—

( १ ) यह पत्र प्रति तीसरे ( अँगरेजी ) महीने में प्रकाशित हुआ करेगा अर्थात् मार्च, जून, सितंबर और दिसंबर में।

( २ ) इसमें नियत ६ फार्म अर्थात् ४८ पृष्ठ रहा करेंगे। कभी कभी आवश्यकतानुसार आकार बढ़ा भी दिया जाया करेगा।

( ३ ) इस पत्र में इतिहास, साहित्य, भाषा-तत्त्व, भू-तत्त्व, पुरातत्त्व आदि विद्या-विषयक तथा सभा-संबंधी आवश्यक लेख रहा करेंगे।

( ४ ) इस पत्र का वार्षिक मूल्य सर्वसाधारण से १) अग्रिम लिया जायगा। नागरी प्रचारिणी सभा के उन सभासदों को जो १॥) या इससे अधिक वार्षिक चंदा देते हैं यह पत्र बिना मूल्य दिया जायगा।

( ५ ) विज्ञापन की छपाई प्रति पंक्ति ≈)॥ आना। अधिक दिनों के लिये पत्र द्वारा पूछना चाहिए। पत्र के साथ विज्ञापन की बँटाई २) है।

( ६ ) पत्र-संबंधी पत्र-व्यवहार मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी से करना चाहिए।

( ७ ) इस पत्र का प्रथम अंक आगामी जून मास में निकाला जाय।

( ८ ) बा० श्यामसुंदरदास इसके संपादन का भार एक वर्ष तक लें और इस विषय के उत्तरदाता समझे जायँ, चाहे वे मंत्री हों वा नहीं।

( ९ ) इस पत्र में जो लेख छापे जायँ वे परीक्षक कमेटी से स्वीकृत होने पर छापे जायँ। परंतु प्रथम संख्या में इस नियम का पालन न किया जाय।

( १० ) प्रथम अंक में निम्नलिखित लेख रहें—दुमदार तारे, समालोचना और पं० लक्ष्मीशंकर मिश्र का एक लेख। सभा के तीसरे वार्षिक विवरण के छठे पृष्ठ पर पत्रिका के विषय में पहला वक्तव्य इस प्रकार दिया गया है—

"सभा की कोई सामयिक पत्रिका के न होने के कारण उसकी निर्णीत अथवा विवादित बातें सर्व साधारण में प्रचारित होने से रह जाती थीं और सभा के बहुतेरे उद्योग सरोवर में खिलकर ही मुरझा जानेवाले कमलों के समान हो जाते थे। दूसरे बहुतेरे भावपूर्ण उपयोगी लेख सभा में आकर पुस्तकालय की अलमारियों को ही अलंकृत करते थे, जिससे उनके सुयोग्य लेखक हतो-

त्साह हो जाते और सुरसिक उत्साही पाठक जन प्यासे चातक की भाँति बाट जोहते ही रह जाते थे। इन्हीं बातों को विचार और हिंदी में भाषा-तत्त्व, भूतत्त्व, विज्ञान, इतिहास आदि विद्या विषयक लेखों और ग्रंथों का पूर्ण अभाव देख सभा ने 'नागरीप्रचारिणी पत्रिका' निकालना आरंभ किया है। अभी यह पत्रिका त्रैमासिक है परंतु यदि हमारे उत्साही सभासदों की दया रही और रसिक पाठक तथा लेखकगण इसकी सहायता करते रहे तो आशा है कि हम इसे शीघ्र ही मासिक कर देंगे।"

पत्रिका के प्रथम अंक की प्रस्तावना में भी उसके उद्देश्य की चर्चा इसी रूप में की गई थी। उसमें यह भी कहा गया था—

"...यद्यपि वर्त्तमान समय में बहुतेरे हिंदी के बड़े बड़े पत्र प्रकाशित होते हैं परंतु उनके उद्देश्य ऐसे महान्, उदार और सर्व विषय पूरित हैं कि अपनी दीन-हीन मातृभाषा पर विशेष ध्यान देने का उन्हें अवसर ही कम मिलता है। इसलिये इस पत्रिका का उद्देश्य केवल हिंदी-साहित्य सेवा ही रखा गया है।"

इस प्रकार हिंदी-साहित्य-सेवा के एक मात्र उद्देश्य को लेकर सं० १९५३ वि० (सन् १८९६ के जून मास) में नागरीप्रचारिणी पत्रिका का जन्म हुआ। प्रथम वर्ष में पत्रिका के चार अंक निकले, जिनमें प्रथम अंक की प्रस्तावना के अतिरिक्त ये आठ लेख प्रकाशित हुए थे—

१—केतु तारों का संक्षिप्त वृत्तांत ( बाबू गोपालप्रसाद खत्री )

२—समालोचना ( पंडित गंगाप्रसाद अग्निहोत्री )

३—योरोप के लोगों में संस्कृत का प्रचार (राय बहादुर पंडित लक्ष्मीशंकर मिश्र, एम० ए०)

४—भारतवर्षीय आर्य देश भाषाओं का प्रादेशिक विभाग और परस्पर संबंध ( बाबू श्यामसुंदरदास खत्री बी० ए० )

५—अद्भुत रश्मि ( पंडित लोकनाथ त्रिपाठी बी० ए०, और बाबू कृष्णबलदेव वर्मा )

६—समालोचनादर्श ( बाबू जगन्नाथदास बी० ए०, 'रत्नाकर' ।

७—पोप कवि का जीवनचरित ( बाबू जगन्नाथदास बी० ए०, 'रत्नाकर' )

८—गद्य काव्य मीमांसा ( पंडित अंबिकादत्त व्यास साहित्याचार्य )

इन लेखों को पढ़ने से ज्ञात होता है कि आरंभ से ही पत्रिका का आदर्श बहुत ऊँचा था और प्रत्येक लेख बड़े परिश्रम और खोज के साथ लिखा जाता था। आठवें लेख में उपन्यास की मीमांसा बड़ी सूक्ष्मता के साथ की गई है और उसके चार अरब छियानवे करोड़ इकतालीस लाख, अट्ठानवे हजार चार सौ ( ४९६४१९८४०० ) भेद गिनाए गए हैं।

प्रथम वर्ष की पत्रिका के उक्त चारों अंक काशी के चंद्रप्रभा प्रेस लिमिटेड में छपे थे। ३० ज्येष्ठ, सं० १९५४ की प्रबंधकारिणी के निश्चयानुसार दूसरे वर्ष से पत्रिका काशी के हरिप्रकाश प्रेस में छपने लगी। प्रथम वर्ष के चारों अंकों का पुनर्मुद्रण भी सं० १९५४ में इसी प्रेस में कराया गया।

प्रथम वर्ष से ही पत्रिका में प्रकाशित होनेवाले लेखों की जाँच बड़े ध्यान से की जाती थी। लेख पहले सभा में पढ़े जाते थे, उसके बाद परीक्षक समिति

जिसमें उन दिनों सर्वश्री लक्ष्मीशंकर मिश्र एम० ए०, राधाकृष्णदास, कार्त्तिकप्रसाद, जगन्नाथदास 'रत्नाकर' और देवकीनंदन खत्री थे, उन पर विचार करती थी और अंत में संपादक की देख-भाल के पश्चात् वे प्रेस में भेजे जाते थे। परीक्षक-समिति की अनुमति के बिना कोई भी लेख पत्रिका में प्रकाशित न हो सकता था। सभा के बाहरी सभासद् भी पत्रिका की भाषा आदि के विषय में समय समय पर अपने सुझाव भेजते रहते थे। पहले वर्ष में ही कानपुर के श्री रामनारायण सिंह ने ८ प्रस्ताव भेजे थे जिनमें अंतिम पाँच पत्रिका के विषय में थे। ये प्रस्ताव ३ अगस्त, १८९६ की साधारण सभा की बैठक में विचारार्थ उपस्थित किए गए। पहले दो और अंतिम दो प्रस्तावों के विषय में सभा ने कोई विशेष निश्चय करने की आवश्यकता नहीं समझी क्योंकि उनमें प्रस्तावित बातों का किसी न किसी रूप में पालन हो रहा था। तीसरा प्रस्ताव था—'लेखों में अरबी फारसी आदि के शब्द न आने पाएँ।' इस पर सभा ने जो निश्चय किया उसमें कुछ विशेषता होने के कारण वह यहाँ उद्धृत किया जाता है—

> "सभा की ओर से लिखे हुए जो लेख वा रिपोर्ट आदि प्रकाशित हों उनमें ठेठ हिंदी के शब्द रहा करें, अर्थात् न बड़े संस्कृत के शब्द हों और न अरबी फारसी भाषाओं के हों। जो लेख सभा द्वारा प्रकाशित होने के लिये कहीं से आएँ उनमें यदि फारसी अरबी के शब्द भरे रहें तो परीक्षक-कमेटी उन्हें स्वीकृत न करे।"

यह निश्चय भाषा के विषय में सभा की तत्कालीन नीति का द्योतक है।

पत्रिका की प्रथम संख्या के जून मास में प्रकाशित होने के कारण उसका वर्ष अप्रैल से मार्च तक का होता था। तीन वर्ष तक यही क्रम रहा। चौथे वर्ष में पत्रिका के चौथे भाग की चतुर्थ संख्या मार्च के स्थान पर जून में निकाली गई जिससे पत्रिका का वर्ष भी सभा के वर्ष के साथ ही समाप्त होने लगा।

इन चार वर्षों में पत्रिका बराबर ठीक समय पर निकलती रही। पाँचवें वर्ष कुछ व्यतिक्रम होने लगा। पत्रिका की संख्या ठीक समय पर नहीं निकल पाती थी। यह व्यतिक्रम पत्रिका के इक्कीसवें वर्ष तक चलता रहा। इन वर्षों में कभी तो कई कई संख्याएँ पिछड़ जाती थीं और कभी कई कई वर्षों की पिछड़ी हुई संख्याएँ इकट्ठी हो जाती थीं। लगातार प्रयत्न करते करते बाईसवें वर्ष में जाकर कहीं यह गड़बड़ी दूर हो पाई। बाईसवें वर्ष में पिछले वर्षों की कोई संख्या पिछड़ी हुई नहीं थी। उस वर्ष तक सब कमी पूरी कर दी गई थी।

पाँचवें वर्ष तक पत्रिका का संपादन श्री श्यामसुंदरदास परीक्षक-समिति के निरीक्षण में करते रहे। छठे वर्ष उन्होंने स्वतंत्र रूप से पत्रिका का संपादन किया। सातवें वर्ष महामहोपाध्याय श्री सुधाकर द्विवेदी उसके संपादक रहे। आठवें वर्ष पुनः श्री श्यामसुंदरदास को ही पत्रिका के संपादन का कार्य सौंपा गया और नवें वर्ष श्री किशोरीलाल गोस्वामी उनके सहायक नियत किए गए। अब तक पत्रिका की एक संख्या में ४८ पृष्ठ रहा करते थे। इस वर्ष सभा ने निश्चय किया कि आगामी वर्ष अर्थात् सितंबर १९०५ की संख्या से पृष्ठों की संख्या ६४ कर दी जाय। किंतु आर्थिक कठिनाई के कारण सभा अपने इस निश्चय को नियत समय पर पूरा न कर सकी।

सभा पत्रिका को त्रैमासिक से मासिक कर देने के हिंदी-प्रेमियों के अनुरोध को भी अर्थाभाव के कारण पूरा न कर सकी। दसवें और ग्यारहवें वर्ष भी न तो पृष्ठसंख्या बढ़ाई जा सकी और न पत्रिका मासिक ही हो सकी। दसवें वर्ष श्री कालिदास ने पत्रिका का संपादन किया और ग्यारहवें वर्ष श्री राधाकृष्णदास ने।

बारहवें वर्ष अनेक सभासदों के विशेष अनुरोध करने पर सभा ने पत्रिका को त्रैमासिक से मासिक कर दिया और मूल्य में कोई वृद्धि नहीं की। इस वर्ष से श्री श्यामसुंदरदास को फिर संपादन का कार्य सौंपा गया। तेरहवें वर्ष में भी उन्होंने ही संपादन किया।

चौदहवें वर्ष में पत्रिका के आकार और विषय दोनों में बहुत कुछ परिवर्तन किया गया। अब तक उसमें केवल लेख ही छपते थे और वह डिमाई अठपेजी आकार में निकलती थी; किंतु १० श्रावण, सं० १९६६ को सभा की प्रबंधकारिणी ने श्री श्यामसुंदरदास के प्रस्ताव पर निश्चय किया कि—

"पत्रिका अधिक रोचक बनाई जाय। उसके १२ पृष्ठ डिमाई चौपेजी आकार में निकाले जायँ। उसमें हिंदी के संबंध के सब समाचारों पर टिप्पणियाँ रहें, सभा के सभासदों में से जो कोई हिंदी की सेवा करे उसका उल्लेख रहे, सभा-संबंधी सब समाचार रहें और साथ ही साहित्य-संबंधी छोटे छोटे लेख रहें।"

इस निश्चय के अनुसार आश्विन, १९६६ वि० से पत्रिका का प्रकाशन नए रंग-रूप में होने लगा। संपादन का भार श्री रामचंद्र शुक्ल को दिया गया। शुक्लजी चौदहवें से लगाकर उन्नीसवें वर्ष तक पत्रिका के संपादक रहे। अठारहवें वर्ष में श्री रामचंद्र वर्मा उनके सहकारी बनाए गए जो उन्नीसवें वर्ष तक उनके साथ कार्य करते रहे।

सोलहवें वर्ष में पत्रिका का आकार पुनः बदला गया। अनेक पाठकों के यह शिकायत करने पर कि पत्रिका में बहुत सा स्थान सभा के कार्य-विवरण से भर जाता है और उसमें पढ़ने योग्य लेख कम रहते हैं, माघ सं० १९६९ से उसका आकार डिमाई चौपेजी से क्राउन चौपेजी किया गया और पृष्ठ-संख्या १२ से २४ कर दी गई। इतनी वृद्धि से भी जब काम न चला तो अगले ही वर्ष ( सत्रहवें वर्ष ) पृष्ठ-संख्या २४ से ३२ करना पड़ी।

पत्रिका को विशेष आकर्षक बनाने और समय पर प्रकाशित करने के विचार से उसके छापने का प्रबंध श्रावण, १९७० वि० से प्रयाग के इंडियन प्रेस में किया गया। वहाँ भी आरंभ में एक अड़चन पड़ी। बहुत प्रयत्न करने पर भी इंडियन प्रेस को प्रयाग के मजिस्ट्रेट से पत्रिका को छापने की अनुमति कई मास तक प्राप्त न हो सकी। इससे लेखकों का उत्साह ठंडा पड़ गया और इस बीच कोई लेख भी नहीं मिला तथा सभासद् भी बहुत असंतुष्ट रहे। जनवरी में कहीं मजिस्ट्रेट की अनुमति प्राप्त हुई।

बीसवें वर्ष ( सं० १९७२ में ) श्री रामचंद्र वर्मा, जो दो वर्षों से सहकारी संपादक का कार्य कर रहे थे, पत्रिका के वैतनिक संपादक नियुक्त हुए। इस वर्ष वर्माजी के उद्योग से पिछड़ी हुई संख्याओं की कमी बहुत कुछ पूरी हो गई। बाईसवें वर्ष ( सं० १९७४ ) में वर्माजी के त्यागपत्र देने पर सभा ने पत्रिका के संपादन के लिये पहले एक उपसमिति बनाई जिसके सदस्य सर्वश्री बाँकेबिहारीलाल बी० एस-सी०, एल० टी०, मुरारिदास और वेणीप्रसाद थे; पर दो

सदस्यों के त्यागपत्र देने पर संपादन का सब भार श्री वेणीप्रसाद को अकेले ही वहन करना पड़ा। यद्यपि इस वर्ष भी कई बाधाएँ उपस्थित हुईं, तो भी संपादक ने कई संख्याएँ एक साथ निकालकर वर्ष के अंत तक पिछली सब कमी पूरी कर दी और बाईसवें वर्ष की भी सब संख्याएँ समय पर निकाल दीं। तेईसवें वर्ष ( सं० १९७५ ) में श्री रामचंद्र शुक्ल पुनः पत्रिका के संपादक बनाए गए। इस वर्ष के भी सब अंक ठीक समय पर प्रकाशित हुए। चौबीसवें वर्ष ( सं० १९७६ ) में शुक्लजी की अस्वस्थता और समयाभाव के कारण पत्रिका के केवल पाँच अंक निकल सके।

इस वर्ष के साथ एक प्रकार से पत्रिका के इतिहास का प्रथम अध्याय समाप्त होता है। इन चौबीस वर्षों में पत्रिका की जो संख्याएँ प्रकाशित हुईं उनको वर्ष-क्रम से चौबीस भागों में विभक्त करके उनका पुनर्मुद्रण भी कराया गया था।

इन वर्षों में बहुत कुछ प्रयत्न और अनेक परिवर्त्तन करने पर भी अभी तक पत्रिका यथेष्ट आकर्षक नहीं बनाई जा सकी थी। सं० १९७६ में बहुत विचार-विमर्श के पश्चात् भविष्य में उसको विशेष रूप में निकालने का निश्चय किया गया। इस निश्चय के अनुसार पचीसवें वर्ष ( सं० १९७७ ) से पत्रिका मासिक से फिर त्रैमासिक कर दी गई। उसमें पुरातत्त्व, इतिहास तथा अन्यान्य शोध संबंधी गंभीर लेख प्रकाशित करने का आयोजन किया गया। प्रत्येक अंक में रायल अठपेजी आकार के १२० पृष्ठ देने का निश्चय हुआ। संपादन का भार सर्वश्री राय बहादुर गौरीशंकर हीराचंद ओझा, श्यामसुंदरदास, चंद्रधर शर्मा गुलेरी और मुंशी देवीप्रसाद को सौंपा गया।

संवत् १९७७ की पत्रिका के प्रथम अंक में संपादकीय प्राक्कथन में पत्रिका के इस नवीन रूप में निकालने का उद्देश्य इस प्रकार बताया गया है—

"ऊपर जिन चार प्रकार की सामग्रियों ( १—हमारे यहाँ की प्राचीन पुस्तकें, २—विदेशियों के यात्रा-विवरण और इस देश के वर्णन-संबंधी ग्रंथ, ३—प्राचीन शिलालेख तथा दानपत्र, ४—प्राचीन सिक्के, मुद्रा या शिल्प ) का संक्षेप में उल्लेख किया गया है, उनसे भारतवर्ष के इतिहास से संबंध रखनेवाली कई प्राचीन बातों का पता लगा है और अनेक नवीन ग्रंथ लिखे गए हैं। साथ ही इस सामग्री की खोज समाप्त नहीं हो गई है। वह निरंतर हो रही है और नित्य नई बातों का पता लग रहा है। परंतु दुःख की बात यह है कि वह सब सामग्री प्रायः अँगरेजी भाषा में ही उपलब्ध है और प्रायः उसी में नए अनुसंधानों का वर्णन छपता है। योरोपीय देशों को छोड़ दीजिए। भारतवर्ष में अनेक पत्रिकाएँ प्रकाशित होती हैं जिनमें इन विषयों के लेखों का समावेश रहता है और सरकारी रिपोर्टें जो छपती हैं वे सब भी अँगरेजी में ही छपती हैं और उनकी सूचनाएँ आदि भी प्रायः अँगरेजी के ही समाचारपत्रों में देखने में आती हैं। हिंदी में तो यदा-कदा उनके दर्शन हो जाते हैं। इस अवस्था में यह बहुत आवश्यक है कि हिंदी में एक ऐसी सामयिक पत्रिका हो जिसमें प्राचीन शिलालेख, दानपत्रादि, सिक्के, ऐतिहासिक ग्रंथों के सारांश, विदेशियों की पुस्तकों में लिखी हुई भारतीय ऐतिहासिक बातों, प्राचीन भूगोल, राजाओं और विद्वानों आदि के समय का

निर्णय आदि भिन्न भिन्न विषयों पर लेख प्रकाशित होते रहें। इससे प्राचीन शोध-संबंधी साहित्य का प्रचार तथा ऐतिहासिक ज्ञान की वृद्धि होगी। इस अभाव की पूर्ति तथा हिंदी का गौरव बढ़ाने के लिये काशी-नागरीप्रचारिणी सभा ने अपनी मुखपत्रिका को यह नया रूप देने का निश्चय किया है और उसी सिद्धांत के अनुसार इस पत्रिका का यह नवीन संस्करण इस अंक से प्रारंभ होता है। यह बड़े सौभाग्य की बात है कि प्राचीन शोध का काम करनेवालों में भारतवासियों की संख्या दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। इस अवस्था में जिस उद्देश्य से इस पत्रिका को नया रूप दिया गया है उसके पूर्ण होने की बहुत कुछ संभावना ही नहीं, वरन् आशा भी देख पड़ती है। हमें विश्वास है कि प्राचीन शोध के अनुरागी विद्वान् अपने लेखों से इस पत्रिका को विभूषित करेंगे और यह पत्रिका मौलिक लेखों के साथ ही साथ हिंदी जाननेवालों को इस बात की सूचना भी निरंतर देती रहेगी कि प्राचीन शोध का कहाँ क्या काम हो रहा है और विद्वत्समाज किस प्रकार ज्ञान-भंडार को पूर्ण कर रहा है।"

इस नए रूप में पत्रिका को निकालने का आवश्यक प्रबंध करने में काफी समय लगा और उधर इंडियन प्रेस में हड़ताल हो गई जो कई मास तक बनी रही। इन कारणों से सं० १९७७ में पत्रिका के केवल दो अंक प्रकाशित हो सके। विद्वानों ने पत्रिका के इस रूप का बहुत आदर किया। प्रसिद्ध विद्वान् डा० ग्रियर्सन ने रायल एशियाटिक सोसायटी के जरनल में इसके विषय में बहुत अच्छी सम्मति प्रकट की थी जिसका कुछ अंश इस प्रकार है—

"...अब सभा ने पत्रिका का नया संदर्भ शुद्ध वैज्ञानिक रीति पर प्रकाशित करने का निश्चय किया है और इसके पहले दो अंक सभा के कार्य की विशेष उन्नति के सूचक हैं। इनसे एक ऐसी पत्रिका का आरंभ होता है जो, हम आशा करते हैं, एक भारतीय विद्वत्परिषद् के सर्वथा उपयुक्त होगी।

"...हम वास्तव में एक गंभीरतापूर्ण पत्रिका को प्रकाशित करने पर सभा का अभिवादन करते हैं। इसका संपादन उस ढंग पर हो रहा है जो पश्चिमी विद्वानों को भी प्रिय होगा। सब लेख हिंदी में लिखे गए हैं। यह सभा भारतीय संस्था है और अपने पाठकों को भारतीय भाषा द्वारा ही संबोधन करती है। इसके लेख योरोपीय विद्वानों की सम्मतियों या अनुसंधानों की जुगाली मात्र नहीं हैं, वरन् स्वतंत्र शोध से लिखे गए हैं।"

छब्बीसवें वर्ष (सं० १९७८) में पत्रिका के ६ अंक प्रकाशित करके सं० १९७७ के दो अंकों की कमी पूरी कर दी गई। इस वर्ष संपादन का भार ओझाजी और गुलेरी जी पर रहा। सत्ताईसवें वर्ष (सं० १९७९) में गुलेरी जी का देहांत हो जाने के कारण अकेले ओझा जी पर ही पत्रिका के संपादन का पूरा भार रहा। अट्ठाईसवें वर्ष (सं० १९८०) में भी वे ही संपादक रहे। उनतीसवें वर्ष (सं० १९८१) से श्रीश्यामसुंदरदास उनके सहायक बनाए गए और इकतीसवें वर्ष (सं० १९८६) तक ये ही दोनों विद्वान् पत्रिका का संपादन करते रहे। इस प्रकार संवत् १९७७ से सं० १९८६ तक पूरे तेरह वर्ष ओझा
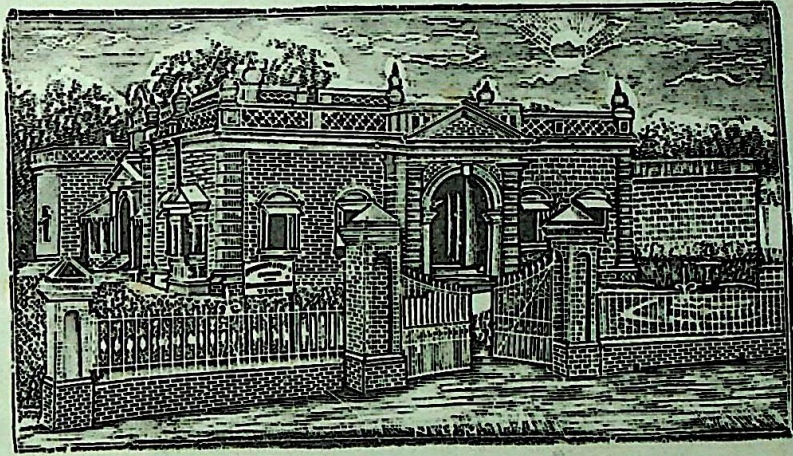
सभा-भवन ( जब एक-मंजिला था )

## सभा के संस्थापक

( अर्द्धशताब्दी उत्सव के समय )

( बाईं ओर से ) सर्वश्री रामनारायण मिश्र, पी० ई० एस० ( अवसर-प्राप्त )। साहित्यवाचस्पति राय बहादुर डाक्टर श्यामसुंदरदास। राय साहब ठाकुर शिवकुमार सिंह, डिप्टी इंस्पेक्टर ऑव् स्कूल्स ( अवसर-प्राप्त )।

जी पत्रिका के प्रधान संपादक रहे। इनके संपादन-काल में पत्रिका ने बहुत उन्नति की और विद्वानों में उसकी प्रतिष्ठा भी बहुत बढ़ गई। हिंदीभाषी विद्वानों में तो इसका विशेष आदर हुआ ही, पाश्चात्य देशों के विद्वानों तथा पुरातत्त्व संबंधी-संस्थाओं में भी इसका आदर दिन दिन बढ़ता गया। इस विषय में इतना ही कह देना पर्याप्त है कि 'कर्न इंस्टिट्यूट' से संसार के समस्त पुरातत्त्व संबंधी लेखों की जो वार्षिक सूची प्रकाशित हुई थी उसमें इस पत्रिका में प्रकाशित सब लेखों की नामावली उनके संक्षिप्त विवरण सहित दी गई थी। पत्रिका की उपयोगिता और प्रतिष्ठा इतनी बढ़ गई थी कि जब चौंतीसवें वर्ष (सं० १९८६) में सदस्येतर व्यक्तियों और संस्थाओं से इसका वार्षिक मूल्य ३) की जगह १०) लिया जाने लगा तो भी अनेक संस्थाएँ ग्राहक बनी रहीं और बनती गईं। सभा के सदस्यों को यह पत्रिका सदा बिना मूल्य मिलती रही है। पहले जब सदस्यता का वार्षिक चंदा १॥) था तब भी सदस्यों को पत्रिका बिना मूल्य ही दी जाती थी और सदस्येतर व्यक्तियों को यह केवल १) वार्षिक मूल्य पर मिलती थी। जब सदस्यता का वार्षिक चंदा ३) हुआ तब भी सदस्यों को तो बिना मूल्य ही और सदस्येतर को ३) वार्षिक मूल्य पर मिलती रही है।

अड़तीसवें वर्ष (सं० १९९० में) आर्थिक कठिनाई के कारण पत्रिका का आकार कुछ छोटा कर दिया गया, पर पृष्ठ-संख्या कुछ बढ़ा दी गई। इस वर्ष से श्री श्यामसुंदरदास प्रधान संपादक हुए और दो वर्ष (सं० १९९१) तक अकेले ही पत्रिका का संपादन करते रहे। चालीसवें वर्ष (सं० १९९२) में श्री कृष्णदेवप्रसाद गौड़ एम० ए०, एल० टी० उनके सहायक बनाए गए और बयालीसवें वर्ष (सं० १९९४) तक ये ही दोनों सज्जन कार्य करते रहे।

तेंतालीसवें वर्ष (सं० १९९५) में पत्रिका के उद्देश्यों का विस्तार किया गया और उसके आकार-प्रकार में भी थोड़ा परिवर्त्तन कर उसे और सुंदर बनाने का निश्चय हुआ। नए उद्देश्यों के अनुसार पत्रिका में ये पाँच स्कंध रखे गए—

(१) नागरी लिपि और हिंदी भाषा का संरक्षण तथा प्रसार
(२) हिंदी साहित्य के विविध अंगों का विवेचन,
(३) भारतीय इतिहास और संस्कृति का अनुसंधान,
(४) प्राचीन तथा अर्वाचीन शास्त्र, विज्ञान और कला का पर्यालोचन
(५) सभा की प्रगति।

इस वर्ष पत्रिका के संपादन के लिये भिन्न भिन्न विषयों के विद्वानों का एक संपादक-मंडल बनाया गया जिससे उक्त उद्देश्यों के अनुसार उसका संपादन सुचारु रूप से हो सके। इस वर्ष के संपादक-मंडल में ये ६ सदस्य थे—सर्वश्री रामचंद्र शुक्ल, मंगलदेव शास्त्री, केशवप्रसाद मिश्र, जयचंद्र नारंग, लल्लीप्रसाद पांडेय और कृष्णानंद (संयोजक)। चवालीसवें वर्ष (सं० १९९६) के लिये भी एक श्री लल्ली-प्रसाद पांडेय को छोड़कर शेष पाँचों सज्जन संपादक-मंडल में यथापूर्व रहे। श्री कृष्णानंद के लिये 'संयोजक' शब्द हटाकर 'संपादक' शब्द रख दिया गया। और संपादन का सब उत्तरदायित्व इन्हीं को दिया गया। पैंतालीसवें वर्ष (सं० १९९७) में भी इसी संपादक-मंडल ने कार्य किया। छियालीसवें वर्ष (सं० १९९८) के लिये सर्वश्री केशवप्रसाद मिश्र, वासुदेवशरण अग्रवाल, पद्मनारायण आचार्य और

कृष्णानंद ( संपादक ) इन चार सदस्यों का संपादक-मंडल बनाया गया। सैंतालीसवें वर्ष (सं० १९९९) में भी इसी मंडल ने संपादन-कार्य किया।

पत्रिका के जीवन का दूसरा अध्याय संवत् १९७७ से आरंभ हुआ था। संवत् १९७७ से सं० १९९९ तक तेईस वर्षों में पत्रिका की जो संख्याएँ प्रकाशित हुईं उनका भी वर्षों के अनुसार भागों में विभाजन किया गया है और भागों का क्रम १ से आरंभ हुआ है। इन २३ वर्षों में पत्रिका के २३ भाग निकले हैं। इस प्रकार आरंभ से अब तक सब मिलाकर सैंतालीस भाग प्रकाशित हुए।

## ( २ ) शब्द-कोश

### १—हिंदी-शब्दसागर

सभा के अब तक के प्रकाशित समस्त ग्रंथों में हिंदी-शब्दसागर का स्थान सर्वोपरि है। भाषा की उन्नति के लिये सर्वांगपूर्ण कोश की आवश्यकता निर्विवाद बात है। वह जिस प्रकार नवीन साहित्य के निर्माण में सहायक होता है उसी प्रकार प्राचीन ज्ञान-भंडार की कुंजी का काम भी देता है। हिंदी का शब्द-भंडार भी उसके प्राचीन साहित्य के समान बहुत ही विस्तृत और विशाल है; पर उसके पास कोई ऐसा कोश न था जो इस खजाने को सबके लिये खोल देता। उसके सर्वांगपूर्ण प्रामाणिक कोश की अनिवार्य आवश्यकता का अनुभव सभा ने अपने जन्म के पहले ही वर्ष में किया था और एक तरह से तभी से उसने इसकी अभाव-पूर्ति का यत्न भी आरंभ कर दिया था।

८ ज्येष्ठ, संवत् १९५१ के अधिवेशन में श्री राधाकृष्णदास के प्रस्ताव पर निश्चय हुआ :

"दरभंगा-नरेश महाराज सर लक्ष्मीश्वर सिंह से निवेदन किया जाय कि वे कृपापूर्वक हिंदी भाषा के एक बड़े कोश के निर्माण में सभा की सहायता करें, क्योंकि इसका बड़ा अभाव है और इस ग्रंथ के तैयार हो जाने से भाषा का बहुत उपकार होगा।"

तदनुसार एक आवेदन-पत्र सभा की ओर से दरभंगा-महाराज की सेवा में भेजा गया जिस पर महाराज ने १२५) सभा को सहायतार्थ भेजा और इस विषय पर भविष्य में और भी विचार करने का आश्वासन दिया। महाराज चाहते थे कि सभा इस कार्य को अवश्य आरंभ करे। सभा ने इस विषय पर काफी विचार किया। सबसे बड़ी समस्या धन की थी। अतः सभा ने ( १ ) सर्वश्री राय बहादुर लक्ष्मीशंकर मिश्र, ( २ ) महामहोपाध्याय सुधाकर द्विवेदी, ( ३ ) इंद्रनारायण सिंह, ( ४ ) राधाकृष्णदास, ( ५ ) श्यामसुंदरदास, ( ६ ) कार्तिकप्रसाद, ( ७ ) जगन्नाथदास 'रत्नाकर', ( ८ ) अमीर सिंह और ( ९ ) संकटाप्रसाद इन ९ सभासदों की एक उपसमिति कोश के आरंभिक व्यवस्था-संबंधी कार्य की रूप-रेखा प्रस्तुत करने के लिये बना दी। उपसमिति ने इस विषय पर विचार कर निश्चय किया कि यह कार्य कतिपय अच्छे विद्वानों की सहायता के बिना न हो सकेगा और इसमें दो वर्ष तक २५०) मासिक व्यय करना होगा। इस निश्चय को सभा ने दरभंगा-महाराज की सेवा म भेज दिया और साथ ही इस विषय की योजना भी बनाना आरंभ कर दिया। सभा ने सोचा था कि जब तक आवश्यक द्रव्य एकत्र न हो तब तक

धीरे धीरे कोश की सामग्री इकट्ठी करते रहना चाहिए। संवत् १९५२ में अनूपशहर के श्री संतूलाल गुप्त ने एक पत्र सभा को भेजा था जिसमें उन्होंने 'भगवान शब्द-सागर' नामक एक हिंदी-कोश का जिक्र किया था जो हस्तलिखित ग्रंथ के रूप में तैयार था। उन्होंने लिखा था कि यदि सभा चाहे तो इस कोश को लेकर छपवा ले। यह पत्र २४ अप्रैल, १८९५ की बैठक में विचारार्थ उपस्थित किया गया और निश्चय हुआ कि 'कोश कमेटी के हवाले यह काम किया जाय और वही इसका प्रबंध करे।' परंतु अर्थाभाव के कारण कई वर्षों तक इस संबंध में कोई उल्लेखनीय कार्य न हो सका। संवत् १९६१ में कलकत्ते की हिंदी साहित्य सभा ने एक 'भाषा-कोश' बनाने का निश्चय किया। सभा ने भी अपने यहाँ इस कार्य के लिये कोई आर्थिक प्रबंध होता न देख उक्त सभा के लिखने पर कोश-संबंधी अपनी सब सामग्री उसी को दे देने का निश्चय किया। पर कई वर्षों तक प्रतीक्षा करने पर भी साहित्य-सभा के उद्योग का कोई फल देखने में न आया। इसलिये अंत में यही आवश्यक समझा गया कि 'नागरीप्रचारिणी सभा' ही इस काम को अपने हाथ में ले। २४ भाद्रपद, सं० १९५७ वि० ( ९ सितंबर, १९०७ ) को श्री रेवरेंड ई० ग्रीव्स ने भी प्रबंध-कारिणी सभा में यह विचार उपस्थित किया कि सभा हिंदी के एक बड़े और पूर्ण कोश बनाने का भार अपने ऊपर ले। उन्होंने साथ ही उसकी कार्य-प्रणाली के विषय में भी अपने विचार प्रकट किए। सभा ने इस पर विचार कर इस विषय में उचित सलाह देने के लिये सर्वश्री रेवरेंड ई० ग्रीव्स, महामहोपाध्याय सुधाकर द्विवेदी, माधवप्रसाद पाठक, श्यामसुंदरदास, रामनारायण मिश्र, गोविंददास, इंद्रनारायणसिंह, छोटेलाल और संकठाप्रसाद की उपसमिति बना दी। इस उपसमिति की कई बैठकें हुईं और कोश-संबंधी अनेक बातों पर विचार करके अंत में प्रबंध-कारिणी में उपस्थित करने के लिये इसने एक रिपोर्ट तैयार की। यह रिपोर्ट सर्वश्री रामनारायण मिश्र, श्यामविहारी मिश्र और माधवराव सप्रे की सम्मतियों के साथ २३ मार्गशीर्ष, सं० १९६४ वि० ( ९ दिसंबर, १९०७ ) की प्रबंध-कारिणी में उपस्थित की गई। इस रिपोर्ट में उपसमिति ने कोश के संबंध में सभा को यह सलाह दी थी—

"( १ ) सभा को दो कोश बनाने चाहिएँ, एक तो ऐसा जिसमें हिंदी शब्दों का अर्थ अँगरेजी में रहे और दूसरा ऐसा जिसमें उनका अर्थ हिंदी भाषा में हो।

( २ ) विशेष अवस्थाओं में शब्दों के प्रयोग के उदाहरण भी देने चाहिएँ।

( ३ ) कोश में वे शब्द रहने चाहिएँ जो हिंदी-साहित्य में पाए जाते हैं। उनमें से केवल उन्हीं शब्दों का छोड़ना संभव है जो बहुत ही प्राचीन एवं कठिन पुस्तकों में पाए जाते हों।

( ४ ) यह कोश शब्दों का व्युत्पत्तिसूचक होना चाहिए।

( ५ ) हिंदी की प्रधान प्रधान बोलियों में एक धातु के सब रूप, संज्ञा और सर्वनाम के रूप उदाहरण के लिये कोश की भूमिका में देने चाहिएँ। हिंदी से संबंध रखनेवाली भिन्न भिन्न बोलियों के सर्वनामादि के तथा अन्य शब्दों के मुख्य रूप कोश में रहने चाहिएँ।

( ६ ) कोश की भूमिका में एक सारिणी इस प्रकार की देनी चाहिए जिससे विदित हो कि किन किन अक्षरों के स्थान में कौन कौन से अक्षर बहुधा व्यवहार

किए गए हैं जिसमें जो लोग इस कोश से काम ले वे जान सकें कि जिस शब्द को वे जिस रूप में ढूँढ रहे हैं वह यदि उस रूप में न मिले तो उसे कहाँ देखना चाहिए, यथा 'ष' के स्थान पर 'ख' ( दोष के स्थान पर दोख ), ण के स्थान पर न, श के स्थान पर स आदि।

( ७ ) इसमें अक्षर-क्रम वैसा ही रखना चाहिए जैसा कि अलग दिया हुआ है और यह अथवा इसी प्रकार का एक नोट कोश की भूमिका में देना चाहिए।

( ८ ) अलग जिन पुस्तकों की सूची दी है उनसे शब्दों का संग्रह तैयार करने के लिये पाठकों से प्रार्थना करनी चाहिए। प्रत्येक पाठक इनमें से एक अथवा अधिक पुस्तकें ले।

( ९ ) पाठकों को अलग दिए हुए नियमों का पालन करना चाहिए।

(१०) प्रबंध-कारिणी सभा को इस कोश की तैयारी का प्रबंध करने के लिये एक स्थायी सब-कमेटी और कार्य का निरीक्षण करने और पुस्तक छपवाने आदि का प्रबंध करने के लिये एक संपादक नियत करना चाहिए।''

इस रिपोर्ट पर अच्छी तरह विचार कर सभा ने निश्चय किया कि—

( क ) "कमेटी के मुख्य मुख्य सिद्धांत स्वीकार किए जायँ।

(ख) कोश के कार्य को कमेटी के सिद्धांतों के अनुसार चलाने और इस संबंध के अन्य आवश्यक कार्यों को करने के लिये निम्न-लिखित महाशयों की एक प्रबंधकर्तृ कमेटी नियत की जाय और उसे अधिकार दिया जाय कि आवश्यकतानुसार वह अन्य महाशयों को भी इसका सभासद् बना सके—महामहोपाध्याय पंडित सुधाकर द्विवेदी, लाला छोटेलाल, रेवरेंड ई० ग्रीव्स, बाबू इंद्रनारायण सिंह एम० ए०, बाबू गोविंददास, पंडित माधवप्रसाद पाठक, पंडित रामनारायण मिश्र बी० ए०, बाबू श्यामसुंदरदास बी० ए०, मंत्री।

(ग) इस कोश के कार्य में संमति और सहा-यता देने के लिये निम्नलिखित महाशयों की एक बड़ी कमेटी नियत की जाय जिसमें कोश प्रबंधकर्तृ कमेटी आवश्यकतानुसार इन महाशयों से सम्मति लेकर कोश के कार्य का प्रबंध करे—

(१) पंडित गौरीशंकर हीराचंद ओझा, उदयपुर, (२) पंडित चंद्रशेखरधर मिश्र, चंपारन, (३) डाक्टर जी० ए० ग्रियर्सन, इँग्लैंड, (४) डाक्टर रुडाल्फ हार्नली, इँग्लैंड, (५) डाक्टर जी० थीबो, कलकत्ता, (६) पंडित दुर्गाप्रसाद मिश्र, कलकत्ता, (७) उपाध्याय पंडित बदरीनारायण चौधरी, मिर्जापुर, (८) पंडित मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या, मथुरा, (९) महामहो-पाध्याय पंडित सुधाकर द्विवेदी, काशी, (१०) बाबू श्यामसुंदरदास बी० ए०, काशी, (११) बाबू इंद्रनारायण सिंह एम० ए०, काशी, (१२) रेवरेंड ई० ग्रीव्स, काशी, (१३) मिस्टर ए० सी० मुकर्जी बी० ए०, काशी (१४) बाबू गोविंददास, काशी, (१५) बाबू दुर्गाप्रसाद बी० ए०, काशी,

(१६) स्वामी नित्यानंद, काशी, (१७) बाबू भगवानदास एम० ए०, काशी, (१८) पंडित माधवप्रसाद पाठक, काशी, (१६) पंडित रामनारायण मिश्र बी० ए०, काशी, (२०) लाला भगवानदीन, काशी, (२१) लाला छोटेलाल, फर्रुखाबाद, (२२) पंडित अयोध्यासिंह उपाध्याय, आजमगढ़, (२३) महामहोपाध्याय पंडित आदित्यराम भट्टाचार्य एम० ए०, प्रयाग, (२४) बाबू काशीप्रसाद जायसवाल, इँगलैंड, (२५) पुरोहित गोपीनाथ एम० ए०, आबू, (२६) पंडित चंद्रधर शर्मा बी० ए०, अजमेर, (२७) बाबू जगन्नाथदास बी० ए०, अयोध्या, (२८) रेवरेंड जे० ट्रेल, जयपुर, (२६) मुंशी देवीप्रसाद, जोधपुर, (३०) पंडित नवरत्न गिरिधर शर्मा, झालरापाटन, (३१) पंडित भवानीदत्त जोशी बी० ए०, अजमेर, (३२) पंडित माधवराव सप्रे बी० ए०, नागपुर, (३३) पंडित रामावतार पांडेय एम० ए०, कलकत्ता, (३४) पंडित रामशंकर व्यास, गोरखपुर, (३५) पंडित श्यामबिहारी मिश्र एम० ए०, हरदोई, (३६) पंडित श्रीधर पाठक, प्रयाग, (३७) पं० शुकदेवबिहारी मिश्र बी० ए०, हरदोई, (३८) पंडित सूर्यनारायण दीक्षित एम० ए०, लखीमपुर, (३६) ठाकुर हनुमंतसिंह, आगरा, (४०) पंडित हरिनारायण शर्मा बी० ए०, जयपुर, (४१) पंडित बालकृष्ण भट्ट, प्रयाग, (४२) पंडित कामताप्रसाद गुरु, रायपुर, (४३) पंडित सूर्यप्रसाद मिश्र, काशी, (४४) मुंशी संकठाप्रसाद सिंह, काशी, (४५) बंगाल, संयुक्तप्रदेश, मध्यप्रदेश और पंजाब की गवर्नमेंटों के एक एक प्रतिनिधि, (४६) आरा नागरीप्रचारिणी सभा का एक प्रतिनिधि, (४७) आनरेबुल पंडित मदनमोहन मालवीय, प्रयाग, (४८) पंडित गणपति जानकीराय दुबे, ग्वालियर, (४६) ठाकुर सूर्यकुमार वर्मा, प्रयाग, (५०) बाबू सन्नूलाल गुप्त, बुलंदशहर, (५१) बाबू युगलकिशोर अखौरी, बाँकीपुर, (५२) पंडित गंगाप्रसाद अग्निहोत्री, हुशंगाबाद, (५३) पंडित जगन्नाथप्रसाद शुक्ल, मुजफ्फरपुर, (५४) पंडित लज्जाराम मेहता, बूँदी, (५५) बाबू ठाकुरप्रसाद, काशी, (५६) पंडित विनायकराव, जबलपुर, (५७) पंडित राधाचरण गोस्वामी, वृंदावन, (५८) राजा कमलानंद सिंह, श्रीनगर, पूर्णिया, (५६) पंडित गंगानाथ झा, प्रयाग, (६०) मिस्टर ड्यूहर्स्ट, (६१) मिस्टर आर बर्न, (६२) पंडित बद्रीनारायण मिश्र, प्रयाग, (६३) पंडित रामशंकर मिश्र, गाजीपुर, (६४) सभा के मंत्री।

(घ) कोश के संपादक नियत करने के विषय में आगे चलकर निश्चय किया जाय।

(ङ) इस कार्य के लिये निम्नलिखित बजेट अभी स्वीकार किया जाय और आवश्यकतानुसार इसे घटाने बढ़ाने का सभा को अधिकार रहे।

प्रारंभिक छपाई........................५००)
पुस्तकें.................................२००)
कोश आदि........................ ७००)
कोश की छपाई दो हजार प्रति की......१५०००)
एक सहायक तीन वर्षों के लिये.........१८७०)
दो क्लार्क तीन वर्षों के लिये...........१८००)
संपादक का पुरस्कार..................५०००)
फुटकर व्यय..........................५०००)
कुल जोड़.............................३००००)

(च) ऊपर के बजेट के अनुसार ३००००) इस कार्य के लिये स्वीकार किया जाय जिसमें इस संबंध का सब कार्य समाप्त हो जाना चाहिए। इस कार्य की प्रबंध-कर्तृ कमेटी को अधिकार दिया जाय कि ज्यों ज्यों सभा इसमें से रुपया उसे दे उसके अनुसार वह अपनी आवश्यकता को समझकर उसका उपयोग करे।

(छ) कोश प्रबंधकर्तृ कमेटी को अधिकार दिया जाय कि अपने कार्य के लिये जिसे उचित समझे वेतन पर नियत करे परंतु ऐसे लोगों को जिनका वेतन ५०) वा उससे अधिक हो नियत करने के पहिले सभा की स्वीकृति ले ले।

(ज) सभा के मंत्री को अधिकार दिया जाय कि वे इस कोश के कार्य के लिये आवश्यक द्रव्य तथा ऋण चुकाने के लिये ६०००) की अपील गवर्नमेंट, सर्वसाधारण तथा राजों-महाराजों आदि से करें और जो रुपया ऐसा आवे जिसके विषय में यह न लिखा हो कि वह किस कार्य के लिये आया है वह ऋण चुकाने और कोश के कार्य के लिये आधा आधा बाँट लिया जाय तथा ऋण चुक जाने पर इस अपील से आया हुआ सब रुपया कोश के लिये दिया जाय।"

इन निश्चयों के अनुसार कार्य तुरंत आरंभ कर दिया गया। धन की सहायता के लिये आवेदनपत्र भेजे गए और शब्द-संग्रह के कार्य में भी हाथ लगा दिया गया। सब मिलाकर १८४ पुस्तकें शब्द-संग्रह के लिये चुनी गईं। अनेक महानुभावों ने इनमें से पुस्तकें ले लेकर शब्द चुनने का कार्य आरंभ कर दिया। इसके बाद यह देखा गया कि शब्द-संग्रह के लिये चुनी गई पुस्तकों से शब्द चुन लेने पर भी रोज की बोल-चाल के अनेक शब्द छूट जायँगे। इसलिये कोशोपसमिति ने १६६ विषयों की सूची बनाई जिनके शब्दों का एकत्र करना निश्चित हुआ। मुंशी रामलगन लाल नामक एक सज्जन को शहर में घूम घूमकर अहीरों, कहारों, लोहारों, सोनारों, चमारों, तमोलियों, तेलियों, जोलाहों, मदारियों, कूचेबंदों, धुनियों, गाड़ीवानों, पहलवानों, कसेरों, राजगीरों, छापेखानेवालों, महाजनों, बजाजों, दलालों, जुआरियों, महावतों, पंसारियों, साईसों आदि के पारिभाषिक शब्द तथा गहनों, कपड़ों, अनाजों, पेड़ों, बर्त्तनों, मिठाइयों, पकवानों, देवताओं, गृहस्थी की चीजों, अनेक प्रकार के रस्म-रिवाजों, तरकारियों, सागों, फलों, घासों, खेलों और उनके साधनों आदि के नाम एकत्र करने के लिये नियुक्त किया। पुस्तकों के शब्द-संग्रह के साथ साथ यह काम भी प्रायः दो वर्ष तक चलता रहा। मुंशी रामलगनलाल का शब्द-संग्रह बहुत अच्छा सिद्ध हुआ। इनके अतिरिक्त सभा ने औ

रामचंद्र वर्मा को समस्त भारत के पशुओं, पक्षियों, मछलियों, फूलों और पेड़ों आदि के नाम एकत्र करने के लिये कलकत्ते भेजा। उन्होंने लगभग ढाई महीने वहाँ रहकर इंपीरियल लायब्रेरी से फ्लोरा एंड फॉना आफ ब्रिटिश इंडिया सिरीज की समस्त पुस्तकों में से नाम और विवरण आदि एकत्र किए। सभा ने अँगरेजी, फारसी, अरबी और तुर्की आदि के शब्दों, पौराणिक तथा ऐतिहासिक व्यक्तियों और स्थानों के नामों आदि की एक बड़ी सूची प्रकाशित कराके घटाने बढ़ाने के लिये हिंदी के बड़े बड़े विद्वानों के पास भेजी थी। इसके अतिरिक्त कोश में आवलियों तथा कहावतों का संग्रह देने का भी प्रबंध किया था। यहाँ यह लिख देना आवश्यक है कि इस बड़े और आवश्यक कार्य को आरंभ कराने का यश राय बहादुर श्री सुंदरलाल को प्राप्त है। यदि वे आरंभ में १०००) देकर सभा को उत्साहित न करते तो कदाचित् इस कार्य को आरंभ करना उस समय कठिन हो जाता।

पहले यह अनुमान किया गया था कि संपूर्ण ग्रंथ के निर्माण, छपवाने आदि में २००००) व्यय होगा। परंतु ग्रंथ का विस्तार, असाधारण परिश्रम, ग्रंथ की समाप्ति के लिये आवश्यक समय, इन सब बातों पर पुनः विचार करने से सभा को पता चला कि कोश का व्यय चालीस-पचास हजार से कम न होगा। आगे चलकर यह अनुमान भी ठीक न उतरा क्योंकि कुल व्यय एक लाख से भी ऊपर पहुँचा।

आरंभ में यह आशा की गई थी कि ग्रंथों से शब्दों के संग्रह का बहुत कुछ कार्य अवैतनिक लोग करेंगे और अनेक सज्जनों ने शब्द चुनने के लिये कुछ ग्रंथ सभा से मँगवाए भी थे। पर इसका कोई फल नहीं हुआ। कुछ लोगों ने तो पुस्तकों को खोलकर देखने तक का कष्ट न किया, वैसी ही लौटा दिया; कुछ ने बार बार माँगने पर भी उन्हें न लौटाया। सभा को दूसरे ग्रंथ खरीदने पड़े। अवश्य ही कुछ सज्जन ऐसे भी थे जिन्होंने बड़ी सावधानी और परिश्रम से कार्य किया। अंत में जब यह जान पड़ा कि बिना पैसा खर्च ग्रंथों से शब्द-संग्रह का काम नहीं हो सकता तो यह निश्चय किया गया कि कुछ व्यक्ति इस कार्य के लिये वेतन पर नियुक्त किए जायँ और प्रबंध-कारिणी सभा के निरीक्षण में अपना काम करें। तदनुसार भाद्रपद, १९६६ में यह कार्य आरंभ हुआ। संवत् १९६६ के अंत में १५ व्यक्ति शब्द-संग्रह के कार्य पर नियुक्त थे और उन पर ३००) मासिक व्यय होता था।

इस कार्य के संबंध में बड़ा भारी प्रश्न यह भी था कि किसे संपादक बनाया जाय और कौन उनकी सहायता के लिये नियत किए जायँ। काफी सोच-विचार के बाद सभा ने निश्चय किया कि श्री श्यामसुंदरदास संपादक बनाए जायँ। क्योंकि हिंदी की सेवा के लिये इनको बड़ी ख्याति थी और अपनी योग्यता, धैर्य और धारणा-शक्ति के कारण ये ही इस कार्य के लिये सर्वथा योग्य थे। सभा ने इनको ५०००) का पुरस्कार देने का भी निश्चय किया था किंतु इन्होंने सभा से किसी प्रकार का भी पुरस्कार लेना स्वीकार न किया और कोश के संपादन का भार अवैतनिक रूप से ही ग्रहण किया। इनकी सहायता के लिये सहायक संपादक के रूप में कार्य करने के लिये सर्वश्री बालकृष्ण भट्ट, अमीरसिंह, भगवानदीन और रामचंद्र शुक्ल ये चार सज्जन चुने गए।

संवत् १९६७ में शब्द-संग्रह का कार्य समाप्त हो गया। निर्धारित स्थानों के अतिरिक्त अन्य अनेक

स्थानों से भी शब्द संगृहीत हुए थे। भिन्न भिन्न व्यापार-व्यवसाय आदि पर जो ग्रंथ गवर्नमेंट की ओर से समय समय पर प्रकाशित हुए थे, उन सब को मँगाकर उनमें से भी आवश्यक शब्दों का संकलन किया गया था। अँगरेजी तथा अन्य भाषाओं में जो कोश तब तक प्रकाशित हो चुके थे उनमें से भी शब्द चुने गए। डिंगल भाषा तथा पुरानी हिंदी के शब्द-संग्रह में श्री देवीप्रसाद तथा श्री भवानीदत्त जोशी से भी सहायता ली गई। जहाँ तक संभव था, शब्दों के संग्रह का पूरा प्रयत्न किया गया और इस प्रकार शब्दों की कोई १० लाख चिटें (स्लिपें) तैयार की गईं।

शब्द-संग्रह का कार्य समाप्त हो जाने पर पहले स्वर और व्यंजन के क्रम से शब्दों के दो विभाग किए गए। फिर स्वरों के प्रत्येक अक्षर की चिटें अलग की गईं और निश्चित क्रम से लगाई गईं। व्यंजनों की चिटें पहले वर्ग-क्रम से अलग की गईं और फिर प्रति वर्ग के प्रत्येक अक्षर की चिटें अलग की गईं। यह सब हो चुकने पर प्रति अक्षर की चिटें कोष-क्रम से ठीक की गईं। इस प्रकार शब्दों का क्रम ठीक हो जाने पर संपादन-कार्य आरंभ हुआ। उसके आरंभ होने से पूर्व ही श्री श्यामसुंदरदास सन् १९०९ के अक्तूबर मास में काश्मीर चले गए थे। एक हजार मील की दूरी से संपादन-कार्य का संचालन ठीक ठीक होना संभव नहीं था, इसलिये उन्होंने सभा से प्रार्थना की कि उनके स्थान पर कोई दूसरा संपादक चुन लिया जाय। परंतु सभा ने इसे स्वीकार न किया। उनकी अनुपस्थिति में श्री केशवदेव शास्त्री कुछ समय तक कोश कार्यालय के निरीक्षक का काम करते रहे थे। इस कार्य को प्रारंभ से करने के कारण जितना अनुभव और जानकारी श्री श्यामसुंदरदास को है उतने अनुभव और जानकारी वाला विद्वान् इस समय मिलना कठिन है—यह सोचकर सभा ने निश्चय किया कि इस अवस्था में दूसरे को संपादक बनाना कार्य के लिये हानिकारक होगा। इसलिये जहाँ कोश के प्रधान संपादक श्री श्यामसुंदरदास रहें वहीं संपादन-कार्य हो। इस निश्चय के अनुसार १ चैत्र, सं० १९६६ को कोश-कार्यालय काशी में बंद कर दिया गया और १ अप्रैल से जम्मू में खोल दिया गया। यह भी निश्चय किया गया था कि चारों सहायक संपादक इस कार्य के लिये जम्मू जायँ। इन चारों सहायक संपादकों में से श्री भगवानदीन जम्मू नहीं जा सके; सर्वश्री बालकृष्ण भट्ट, अमीरसिंह और रामचंद्र शुक्ल जम्मू गए और सब बातों का यथोचित प्रबंध करके संपादन-कार्य आरंभ कर दिया। जब तक यह कार्य काशी में होता रहा तब तक कोश-उपसमिति की आवश्यकता थी, परंतु कार्यालय और कार्यकर्त्ताओं के जम्मू चले जाने पर उसकी कोई आवश्यकता न रही। अतः सभा ने १८ वैशाख, सं० १९६७ से इसको तोड़ दिया। आगे के लिये निश्चय किया कि इस संबंध का जो कार्य होगा वह प्रबंधकारिणी समिति में विचारार्थ उपस्थित किया जायगा।

जम्मू में १८ चैत्र, सं० १९६६ से ७ पौष, सं० १९६७ तक कोश-कार्यालय रहा। इस बीच में १४ आश्विन तक तो तीन सहायक संपादक कार्य करते रहे। इसके बाद श्री बालकृष्ण भट्ट को साढ़ी पर से गिरने से चोट आ गई और वे आश्विन के मध्य में ही छुट्टी लेकर प्रयाग चले आए। कार्त्तिक में श्री अमीर सिंह भी बीमार होकर जम्मू से चले आए और दो मास तक बीमार रहे। इस बीच में अकेले श्री रामचंद्र शुक्ल

ही संपादन का कार्य करते रहे। जब अनेक प्रयत्न करने पर भी जम्मू में सहायक संपादकों की संख्या पूरी न हो सकी तब २९ मार्गशीर्ष, सं० १९६७ को कोश-कार्यालय जम्मू से काशी बुला लिया गया और १८ पौष, सं० १९६७ से पुनः काशी में खोल दिया गया। २ फाल्गुन से सहायक संपादकों में श्री गंगाप्रसाद गुप्त के सम्मिलित हो जाने से सहायक संपादकों की नियत संख्या पूरी हो गई।

कोश कार्यालय के काशी में पुनः खुल जाने पर सभा ने कोश-उपसमिति पुनः बना दी और श्री रामनारायण मिश्र निरीक्षक नियत हुए जिनकी देख-रेख में कोश-कार्यालय का कार्य बहुत अच्छी तरह होने लगा।

कार्त्तिक, सं० १९६८ में श्री गंगाप्रसाद गुप्त के इस्तीफा दे देने पर श्री बालकृष्ण भट्ट पुनः अपने कार्य पर बुला लिए गए और पौष, सं० १९६८ से श्री भगवानदीन भी पुनः कोश के सहायक संपादकों में संमिलित हो गए।

कोश को छपवाने के प्रबंध के लिये कई बड़े प्रेसों से छपाई के नमूने मँगवाए गए थे। अंत में सब बातों पर विचार कर प्रयाग के इंडियन प्रेस में उसे छपवाना निश्चित हुआ। सभा ने इंडियन प्रेस से एक शर्तनामा लिखवा लिया और टाइप आदि के प्रबंध के लिये उसे २०००) अगाऊ दे दिए।

वैशाख, सं० १९६९ से कोश का छपना आरंभ हुआ। वैशाख और ज्येष्ठ मास में प्रधान संपादक श्री श्यामसुंदरदास ने काशी में ठहरकर इस कार्य की देख-भाल की और जहाँ जहाँ जो सुधार करना आवश्यक जान पड़ा उसका प्रबंध कर दिया। संवत् १९६९ में बहुत दिनों तक वे बीमार रहे फिर भी कोश के कार्य की देखभाल के लिये बराबर कार्यालय आते रहे। उन दिनों को छोड़कर जब वे उठने-बैठने तक में असमर्थ थे, उनका कार्यालय आना एक दिन के लिये भी नहीं छूटा। बीच में बाहर जाने के भी प्रस्ताव आए, पर उनको अस्वीकार करके वे कोश के कार्य के लिये काशी में ही बने रहे।

कार्य में शीघ्रता होने की दृष्टि से पहले यह व्यवस्था की गई थी कि सहायक संपादक तीन विभागों में काम बाँटकर अलग-अलग संपादन करें। पर आगे चलकर इस प्रबंध में कुछ त्रुटियाँ दिखाई दीं। संपादन-कार्य में पाँच सज्जन लगे हुए थे। पाँचों की लेख-शैली और व्यंजना-प्रणाली एक सी नहीं हो सकती थी। इससे यदि प्रत्येक का संपादित कार्य ज्यों का त्यों रख दिया जाता तो उसमें एकरूपता न होती। इसके लिये यह प्रबंध किया गया कि एक संपादक अन्य संपादकों के कार्य को दोहराकर एक मेल कर दिया करे। इस कार्य का भार श्री रामचंद्र शुक्ल को सौंपा गया और उनकी सहायता के लिये श्री रामचंद्र वर्मा नियत किए गए। शेष चार सहकारी संपादक सर्वश्री बालकृष्ण भट्ट, अमीर सिंह, जगन्मोहन वर्मा और भगवानदीन अलग अलग संपादन-कार्य करते थे। कार्य का क्रम इस प्रकार रखा गया था कि ११ बजे से ४ बजे तक सब लोग अपना अपना कार्य अलग अलग करते थे। ४ बजे प्रधान और सहायक संपादक एकत्र होते थे और श्री रामचंद्र शुक्ल के दोहराए हुए शब्दों को ध्यानपूर्वक सुनते थे। जहाँ फिर से विचार की आवश्यकता होती थी वहाँ विचार और फिर अंतिम निश्चय होता था। इस प्रकार कार्य भी अधिक होता था और प्रत्येक शब्द के संपादन में सब संपादकों का एक मत भी हो जाता था। संक्षेप में,

पहले पुस्तकों तथा अन्य अनेक स्थानों से शब्दों का संग्रह किया गया और फिर वे अलग अलग चिटों पर लिखे गए और उसके पश्चात् चिटें अक्षर-क्रम से लगाई गईं। इसके बाद संपादन-कार्य आरंभ हुआ। संपादक अपनी जानकारी के अनुसार तथा पुस्तकों और कोशों की सहायता से शब्दों के अर्थ और विवरण लिखते थे, फिर एक संपादक उन सबको दोहराता था। इसके बाद संपूर्ण संपादक-मंडल उनपर विचार कर और आवश्यक हुआ तो कुछ काट-छाँट और फेर-फार करके उन्हें स्वीकार करता था। यह सब हो चुकने पर कापी साफ होकर प्रधान संपादक के पास जाती थी जो उसे एक बार फिर देखकर प्रेस में भेजते और प्रूफ आदि देखते थे। प्रूफ साधारणतः दो देखे जाते थे। उक्त क्रम में कभी कभी आवश्यकतानुसार कुछ दिनों के लिये परिवर्तन भी कर दिया जाता था। शब्दों के अर्थ लिखने में संपादक टीकाकारों और कोशकारों पर ही अवलंबित नहीं रहते थे। जहाँ टीकाओं के अर्थ असंगत प्रतीत होते थे, वहाँ ठीक ठीक अर्थ देकर प्रमाण-पद से वाक्य उद्धृत कर देते थे। संस्कृत नामों के विषय में जहाँ वाचस्पत्याभिधान जैसे संस्कृत कोश और विश्वकोश जैसे बँगला कोश में 'वृक्ष-विशेष', 'देश-विशेष' और 'नृत्य-विशेष' देकर ही संतोष कर लिया गया था वहाँ हिंदी-शब्दसागर में उनका पूरा विवरण देने के लिये पर्याप्त अनुसंधान किया जाता था। प्राचीन कवियों द्वारा व्यवहृत शब्दों का ठीक ठीक अर्थ, और साहित्य, वैद्यक आदि में आए पशु-पक्षियों तथा पेड़-पौधों के आधुनिक नाम आदि का निश्चय करने में बड़ी कठिनाई होती थी।

श्री बालकृष्ण भट्ट वृद्धावस्था होते हुए भी बड़े उत्साह के साथ कोश के संपादन-कार्य में संमिलित हुए और अंगों के शिथिल तथा दृष्टि के क्षीण हो जाने पर भी उन्होंने काफी समय तक उसे निभाया। किंतु सं० १९७० के कार्तिक मास से उन्हें अपनी दिन दिन बढ़ती जानेवाली अशक्तता के कारण कोश के कार्य से अवकाश ग्रहण करना पड़ा। संवत् १९७३ में आगे के कार्य के लिये अधिक संपादकों की आवश्यकता न रहने पर चैत्र के मध्य में सर्वश्री जगन्मोहन वर्मा, भगवानदीन और अमीर सिंह त्यागपत्र देकर इस कार्य से अलग हो गए पर जब आगे चलकर दोहराने योग्य स्लिपें प्रायः समाप्त हो चलीं और आगे नए शब्दों के संपादन की आवश्यकता प्रतीत हुई, तब संपादन-कार्य के लिये श्री कालिकाप्रसाद नियत किए गए जो कई वर्षों तक अच्छा काम करके और अंत में त्याग-पत्र देकर अन्यत्र चले गए।

संवत् १९८१ में कोश के संबंध में एक बड़ी हानिकर दुर्घटना हो गई। कोश-विभाग से बहुत सी चिटें चोरी हो गईं। ये चिटें सभी प्रकार की थीं। पर सबसे अधिक संख्या उन स्लिपों की थी जो शब्द-संग्रह के समय तैयार की गई थीं और जिनका तब तक संपादन भी नहीं हुआ था। ऐसी स्लिपों के लगभग २२ बंडल चोरी चले गए, जिनमें 'बिब्बोक' से 'श' तक और 'शम' से 'सहो' शब्द तक की स्लिपें थीं। इस दुर्घटना के कारण कोश का यह अंश बहुत कुछ अधूरा ही रह गया। उतने ग्रंथों को पढ़कर शब्दों का फिर से चयन करना उस समय असंभव था। तो भी जहाँ तक हो सका, इस क्षति की पूर्ति का पूरा पूरा उद्योग किया गया और उसमें बहुत कुछ सफलता भी मिली। संपादित स्लिपों के भी दो बंडल चोरी चले गए थे जिनमें एक में 'मि'

और 'मी' के शब्द थे और दूसरे में 'मु' के। यद्यपि इन शब्दों का संपादन भी बड़ी सावधानी से कराया गया फिर भी उसमें कुछ न कुछ त्रुटि रह जाना अनिवार्य था। इनके अतिरिक्त प्रायः १२ बंडल ऐसी स्लिपों के भी चोरी गए थे, जो संपादित भी हो चुकी थीं और छप भी चुकी थीं। इन स्लिपों के चोरी जाने से यद्यपि कोश को कोई प्रत्यक्ष हानि नहीं हुई तथापि पुरानी स्लिपों का संग्रह बहुत ही खंडित हो गया। कोश के इतिहास में यह पहली और अंतिम दुर्घटना थी जिससे इस कार्य को क्षति पहुँची।

कार्य को शीघ्र समाप्त कराने के विचार से सभा ने संवत् १६८२ में दो नए सहायकों की नियुक्ति इस विभाग में की। एक तो भूतपूर्व सहायक संपादक स्वर्गीय श्री जगन्मोहन वर्मा के सुपुत्र श्री सत्यजीवन वर्मा थे और दूसरे थे श्री अयोध्यानाथ शर्म्मा। किंतु ये दोनों सज्जन संवत् १६८३ में केवल तीन मास कार्य करके अन्यत्र चले गए। उनके चले जाने पर श्री वासुदेव मिश्र कोश-विभाग में नियुक्त किए गए। ये शब्द-संग्रह के समय भी इस विभाग में कुछ दिन काम कर चुके थे।

संवत् १६८४ में कोश का प्रधान अंश समाप्त हो गया। केवल उन्हीं शब्दों का संग्रह और संपादन शेष रहा जो किसी कारण छूट गए थे, छपने में रह गए थे अथवा नए प्रचलित हुए थे। यह कार्य भी सं० १६८५ में समाप्त हो गया। छूटे हुए शब्दों का संग्रह और संपादन करने में अवश्य ही आशा से अधिक समय लगा, पर वह अनिवार्य था। इसके अतिरिक्त कोश की प्रस्तावना लिखने में भी बहुत अधिक समय लगा, किंतु इतनी अधिक विस्तृत प्रस्तावना जिसमें हिंदी भाषा और साहित्य का पूरा इतिहास हो, लिखने में पर्याप्त समय लगना अनिवार्य था। यह प्रस्तावना संवत् १६८५ में समाप्त हुई थी। कुछ भी हो, यह महदनुष्ठान संवत् १६८५ में पूरा हो गया और पूरा कोश छपकर जनता के हाथों में पहुँच गया।

कोश ६६-६६ पृष्ठों की बयालीस संख्याओं में क्रमशः प्रकाशित हुआ था और प्रत्येक ६ संख्याओं का एक खंड किया गया था। इस प्रकार सात खंडों में इस कोश का मूल भाग समाप्त हुआ। एक संख्या के छपने पर वह स्थायी ग्राहकों के पास भेज दी जाती थी। स्थायी ग्राहकों की संख्या सं० १६७६ में ११४८ तक पहुँच गई थी। बीच में ही कोश की प्रायः सभी संख्याओं का नया संस्करण भी कराना पड़ा। कोश के भूमिका और प्रस्तावना वाले अंश, जिनकी पृष्ठ-संख्या क्रमशः १२ और २६६ है, सब के अंत में तीन (४३,४४,४५) संख्याओं में प्रकाशित किए गए और इन संख्याओं से शब्दसागर का आठवाँ खंड बना। अंत में सब संख्याओं को चार भागों में विभक्त कर कोश के निम्नलिखित चार भाग बना दिए गए—

| | | शब्द-संख्या | | पृष्ठ-संख्या |
|---|---|---|---|---|
| १—प्रथम भाग ('अ' से 'ङ') | | १६४३३ | | ११८४ |
| २—द्वितीय भाग ('च' से 'न') ... | ... ,, | २१७६८ | ... ,, | ... १०१० |
| ३—तृतीय भाग ('प' से 'य') ... | ... ,, | २०४४६ | ... ,, | ... ६२६ |
| ४—चतुर्थ भाग ('य' से 'ह') ... | ... ,, | ३१४३५ | ... ,, | ... ११६१ |
| योग ... | ... ,, | ६३११५ | ... ,, | ... ४२८१ |

इस प्रकार संपूर्ण शब्दसागर में सब मिलाकर ९३११५ शब्द और ४२८१ पृष्ठ हैं। इस बृहत् कोश की तैयारी में सं० १९६४ से १९८५ ( सन् १९०८ से १९२९) तक लगभग २२ वर्ष लगे और १०८७१९॥।=)३ व्यय हुए। इस महान् साहित्यिक यज्ञ में जिन महानुभावों से धन की सहायता मिली उनमें १००) से अधिक देनेवालों के नाम प्रदत्त-धनराशि सहित इस प्रकार हैं—

| | |
|---|---|
| संयुक्त प्रदेश की सरकार | १३०००) |
| भारत-सरकार | ५०००) |
| मध्य प्रदेश की सरकार | १०००) |
| नेपाल-नरेश | २०००) |
| रीवाँ-नरेश | १८००) |
| छत्रपुर-नरेश | १५००) |
| बीकानेर-नरेश | १५००) |
| बर्दवान-नरेश | १५००) |
| अलवर-नरेश | १०००) |
| काश्मीर-नरेश | १०००) |
| काशी-नरेश | १०००) |
| डाक्टर सर सुंदरलाल | १०००) |
| भिनगा के राजा साहब | १०००) |
| कुँवर राजेंद्रसिंह | १०००) |
| भावनगर-नरेश | ५००) |
| इंदौर-नरेश | ५००) |
| गिद्धौर के राजा साहब | ५००) |
| डाक्टर सर जार्ज ग्रियर्सन | १५०) |
| दरभंगा-नरेश | १२५) |

इनके अतिरिक्त अनेक हिंदी-प्रेमी महानुभावों ने १००) या उससे कम यथारुचि प्रदान करके इस कार्य में सभा की सहायता की थी।

## परिशिष्ट

शब्दसागर के अंत में एक बड़ा परिशिष्ट देने का भी निश्चय किया गया था जिसे तैयार कराने के संबंध में विचार करने के लिये सभा ने सर्वश्री श्यामसुंदर-दास, जगन्नाथदास 'रत्नाकर' और केशवप्रसाद मिश्र की उपसमिति बनाई थी। उसमें जो पौराणिक, भौगोलिक और ऐतिहासिक नाम तथा प्रयोग आए हैं उनका परिचय-कोश तैयार करके परिशिष्ट में देने का विचार था। इस उपसमिति की संमति के अनुसार परिशिष्ट के लिये पौराणिक और ऐतिहासिक जीवनियाँ रायबहादुर हीरालाल के तत्त्वावधान में प्रस्तुत कराने का विचार किया गया था और आधुनिक भौगोलिक शब्दावलीवाले अंश तैयार करने के लिये श्री रामचंद्र वर्मा चुने गए थे। इसके साथ ही शब्द-सागर को दोहराने की सलाह भी उक्त उपसमिति ने दी थी जिसके अनुसार शब्दों के दुहराने का काम श्री राम-चंद्र शुक्ल को और उनकी व्युत्पत्ति आदि ठीक करने का काम श्री केशवप्रसाद मिश्र को सौंपा गया। इस कार्य में दो-तीन वर्ष का समय लगने का अनुमान था और आशा की गई थी कि तब शब्दसागर का संशोधित और प्रवर्द्धित संस्करण प्रकाशित किया जायगा। दुहराने का काम तो कुछ दिनों तक चलता रहा और तीसरी संख्या तक दुहराने तथा व्युत्पत्ति आदि ठीक करने का कार्य हुआ; किंतु पौराणिक, ऐतिहासिक और भौगोलिक नामों और प्रयोग आदि का परिशिष्ट तैयार करने का व्यवस्थित प्रबंध अब तक भी न हो सका। इसका मुख्य कारण तो अर्थाभाव है, पर आंशिक कारण सभा का अन्य आवश्यक कार्यों में व्यस्त रहना भी है। सभा इसकी ओर अब शीघ्र ही ध्यान देगी। कोश को दुहराने का कार्य

पुनः आरंभ हो चुका है और आशा है कि निर्माण का प्रबंध भी शीघ्र हो जायगा।

## २—संक्षिप्त हिंदी-शब्दसागर

हिंदी-शब्दसागर एक बृहत् कोश है। उस समय उसका मूल्य ५०) था। जो लोग इतना मूल्य देकर उसे खरीदने में असमर्थ थे उनके और कालेज के विद्यार्थियों के सुभीते के विचार से संवत्-१९८१ में सभा ने उसका संक्षिप्त संस्करण प्रकाशित करने का निश्चय किया और उसका संपादन श्री रामचंद्र शुक्ल को सौंपा। शुक्ल जी शब्दसागर के संपादन का कार्य तो कर ही रहे थे और उसे दोहराने का कार्य भी उन्हीं के हाथ में था, इस कारण वे संक्षिप्त संस्करण का काम अधिक नहीं कर सके। संवत् १९८५ के मध्य तक केवल तृतीयांश का ही संक्षेप प्रस्तुत हो सका। अतः सभा ने संवत् १९८६ में श्री रामचंद्र वर्मा को यह कार्य सौंप इसकी शीघ्र समाप्ति का प्रबंध किया। संवत् १९८७ में इसका छपना आरंभ हो गया। आशा की जाती थी कि १९८८ में पूरा ग्रंथ छपकर तैयार हो जायगा, पर प्रेस की ढिलाई के कारण ऐसा न हो सका; तब तक उसका तीन चौथाई ही छप पाया। हिंदी-प्रेमी और विशेषकर विद्यार्थी इस संस्करण के लिये बहुत उत्सुक थे। अस्तु, संवत् १९८९ में संक्षिप्त हिंदी शब्द-सागर छपकर तैयार हुआ और १२०० पृष्ठों के इस ग्रंथ की सजिल्द प्रति का मूल्य ४) रखा गया। यह संस्करण विद्यार्थियों के लिये बड़े काम का है। प्राचीन काव्यों तथा आधुनिक गद्य-पद्य-साहित्य में जो कठिन शब्द मिलते हैं वे इसमें विशेष रूप से दिए गए हैं।

सं० १९९३ में इस कोश का दूसरा संस्करण छपा और संवत् १९९६ में तीसरा। संवत् १९९७ से इसके चौथे संस्करण की तैयारी आरंभ हुई। संवत् १९९८ तक श्री रामचंद्र वर्मा ने इसका संशोधन कर दिया और इसमें साढ़े तीन हजार नए शब्द बढ़ाए। चौथे संस्करण का छपाना भी १९९८ में ही आरंभ कर दिया गया और १९९९ में आधा छप भी गया। पर इस बीच युद्ध के कारण कागज न मिलने से उसकी छपाई रोक देनी पड़ी और वह अभी तक रुकी ही है।

## कोशों का संशोधन

बहुत दिनों से अनेक हिंदी-प्रेमी और स्वयं सभा भी हिंदी-शब्दसागर और संक्षिप्त हिंदी-शब्द-सागर के संशोधन की आवश्यकता अनुभव कर रही थी। इन कोशों के लिये ३०-३२ वर्ष पहले शब्द-संग्रह हुआ था। इस बीच में हजारों नए शब्द हिंदी में प्रचलित हुए हैं। दिन दिन नए शब्द बनते और बढ़ते चले जा रहे हैं। व्रजभाषा आदि के ऐसे कई हजार शब्दों का भी पता चला है जो संग्रह के समय छूट गए थे। बोल-चाल के भी ऐसे बहुत से शब्द छूट गए हैं जो कोश का संपादन होने के समय व्यवहार में थे। इसलिये सभा ने संवत् १९९७ में संक्षिप्त शब्द-सागर के संशोधन का कार्य श्री रामचंद्र वर्मा को सौंपा। लगभग एक वर्ष के परिश्रम से वर्माजी ने उसमें बहुत से उपयोगी संशोधन और परिवर्तन किए और हजारों नए शब्द संमिलित किए। उसके नए संस्करण के मुद्रण में कुछ पहले ही हाथ लग चुका था इसलिये इस संस्करण में वे सब संशोधन और नए शब्द यथास्थान नहीं दिए जा सके। फिर भी साढ़े तीन हजार के लगभग जो नए शब्द चुने गए थे

वे सब अर्थ सहित परिशिष्ट के रूप में इस संस्करण के साथ जोड़ दिए गए। अगले संस्करण में ये समस्त संशोधन और नए शब्द यथास्थान संमिलित कर दिए जायँगे। सभा का विचार है कि संक्षिप्त शब्दसागर का अब प्रत्येक संस्करण संशोधित और परिवर्द्धित रूप में प्रकाशित हुआ करे और उसमें नए शब्द बराबर बढ़ते रहें।

सभा ने हिंदी-शब्दसागर का भी संशोधन कराना निश्चित किया है। आजकल कागज की दुर्लभता के कारण यह आशा नहीं है कि अभी साल दो साल तक उसके भागों का पुनर्मुद्रण हो सकेगा। अतः उसके संशोधन के लिये यही समय सबसे अधिक उपयुक्त समझा गया। आशा है कि दो तीन वर्षों में संपूर्ण शब्दसागर का संशोधन हो जायगा और उसमें कई हजार नए शब्द बढ़ जायँगे।

संशोधन-परिवर्धन का यह काम भी श्री रामचंद्र वर्मा ने ही अपने ऊपर लिया है। कोश के सहायक संपादकों में अब केवल ये ही जीवित हैं। ये कोश संबंधी अपनी पूरी जानकारी और अनुभव का उपयोग शब्दसागर के संशोधन में कर सकेंगे। कोश के शब्द-निरुक्तिवाले अंश में जो दोष और भूलें रह गई हैं उनके सुधार का काम सर्वश्री केशवप्रसाद मिश्र, वासुदेवशरण अग्रवाल और पद्मनारायण आचार्य को सौंपा गया है।

## कोशोत्सव और कोशोत्सव-स्मारक संग्रह

इतने बड़े कार्य की सफल समाप्ति पर उत्सव मनाने की इच्छा होना स्वाभाविक था। अतः २५ मार्गशीर्ष संवत् १९८४ ( ११ दिसंबर, १९२७ ) को सभा की प्रबंध-समिति ने निश्चय किया कि कोश की समाप्ति पर सभा एक विशेष उत्सव का आयोजन करे और उस उत्सव में कोश के संपादकों का यथासाध्य संमान किया जाय जिन्होंने अपने जीवन का बहुत बड़ा अंश इस कोश को प्रस्तुत करने में व्यतीत किया है। इसके लिये सभा ने एक कोशोत्सव उपसमिति भी बना दी जिसमें निम्नलिखित सदस्य थे—सर्वश्री रामनारायण मिश्र, जगन्नाथदास 'रत्नाकर' और बलराम उपाध्याय ( संयोजक )।

इस समिति ने प्रबंध-समिति की ६ भाद्रपद १९८५ की बैठक में अपनी जो रिपोर्ट उपस्थित की उसमें उसने सिफारिश की थी कि हिंदू-विश्वविद्यालय के उपाधि-वितरणोत्सव के समय यह उत्सव दो दिन तक मनाया जाय, उसमें विद्वानों के भाषण हों और लेख पढ़े जायँ तथा उसके साथ कवि-सम्मेलन एवं काव्य-चर्चा भी हो। कोश के प्रधान संपादक तथा सहायक संपादकों को एक एक दुशाला, एक एक सोने की जेब-घड़ी और एक एक फाउंटेनपेन भेंट किया जाय। किंतु कोश के प्रधान संपादक श्री श्यामसुंदरदास ने सभा से किसी तरह की भेंट लेना स्वीकार नहीं किया। उन्होंने कहा कि मैंने अपने जीवन में सभा से कोई पुरस्कार नहीं लिया है और न भविष्य में भी कोई पुरस्कार स्वीकार कर सकता हूँ। ऐसी स्थिति में सभा ने निश्चय किया कि कोश के सहायक संपादकों का सत्कार तो उक्त रीति से ही किया जाय और प्रधान संपादक का संमान करने और उनके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के लिये कोशोत्सव-स्मारक-संग्रह नाम से एक लेख-संग्रह प्रकाशित किया जाय जिसमें उत्तमोत्तम विषयों पर बड़े बड़े विद्वानों के लिखे हुए गंभीर लेख और निबंध आदि रहें। कोशोत्सव-स्मारक-संग्रह को तैयार करने के लिये सर्वश्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर', केशवप्रसाद मिश्र, रामचंद्र शुक्ल

रामनारायण मिश्र और रामचंद्र वर्मा की उपसमिति बना दी गई। हिंदी के प्राय: सभी बड़े बड़े विद्वानों और मान्य लेखकों से कोशोत्सव-स्मारक-संग्रह के लिये लेख माँगे गए। पहले सभा ने निश्चय किया था कि इस संग्रह के संपादक श्री महावीरप्रसाद द्विवेदी हों। पर जब रुग्णता और शारीरिक असमर्थता के कारण उन्होंने यह भार नहीं लिया तब महामहोपाध्याय गौरीशंकर हीराचंद ओझा को यह कार्य सौंपा गया। जो लेख, कविता आदि इस संग्रह के लिये प्राप्त हुए उनमें से निम्नलिखित तीस इसके ५११ पृष्ठों में दिए गए—

१—ज्योतिष-ग्रंथ गर्गसंहिता में भारतीय इतिहास [लेखक—श्री काशीप्रसाद जायसवाल, एम०ए०, विद्यामहोदधि]।

२—अवधी हिंदी प्रांत में राम-रावण-युद्ध [ लेखक—रायबहादुर श्री हीरालाल, बी० ए० ]।

३—पृथ्वीराज-रासो का निर्माण-काल [लेखक—महामहोपाध्याय रायबहादुर श्री गौरीशंकर हीराचंद ओझा ]।

४—आमेर के कछवाहा और राव पूजन तथा राव कील्हण का समय [ लेखक—श्री हरिचरणसिंह चौहान ]।

५—पुराने सिक्कों की कुछ बातें [ लेखक—श्री लोचनप्रसाद पांडेय ]।

६—हिंदी साहित्य के इतिहास के अप्रकाशित परिच्छेद [ लेखक—श्री भास्कर रामचंद्र भालेराव ]।

७—रवींद्रनाथ ठाकुर [ लेखक—श्री नलिनीमोहन सान्याल, भाषा-तत्त्व-रत्न, एम० ए० ]।

८—कौटिल्य-काल की कुछ प्रथाएँ [ लेखक—श्री गोपाल दामोदर तामस्कर, एम० ए० ]।

९—प्राचीन आर्यावर्त और उसका प्रथम सम्राट् [ लेखक—श्री जयशंकर प्रसाद ]।

१०—वर्तमान हिंदी में संस्कृत शब्दों का ग्रहण [ लेखक—महामहोपाध्याय गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी ]।

११—मरहठी शिविर [ लेखक—श्री शिवदत्त शर्मा ]।

१२—उच्चारण [ लेखक—श्री केशवप्रसाद मिश्र ]।

१३—कविराज धोयी और उनका पवनदूत [लेखक—श्री बलदेव उपाध्याय, एम० ए० ]।

१४—करहिया कौ रायसौ [ लेखक—श्री उपेंद्रशरण शर्म्मा ]।

१५—पुराणों के महत्त्व का विवेचन [ लेखक—रायबहादुर श्री पंड्या वैजनाथ, बी० ए० ]।

१६—बिहारी सतसई की प्रतापचंद्रिका टीका [लेखक—पुरोहित श्री हरिनारायण शर्म्मा, बी० ए०]।

१७—आचार्य कवि केशवदास [ लेखक—श्री पीतांबरदत्त बड़थ्वाल, एम० ए० ]।

१८—साहित्यिक व्रजभाषा तथा उसके व्याकरण की सामग्री [ लेखक—श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर', बी० ए० ]।

१९—सामाजिक उन्नति [ लेखक—श्री इंद्रदेव तिवाड़ी, एम० ए० ]।

२०—बाली द्वीप में हिंदू वैभव [ लेखक—श्री हीरानंद शास्त्री, एम० ए० ]।

२१—वात्सल्यरस [ लेखक—श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय ]।

२२—कौटिलीय अर्थशास्त्र का रचना-काल [लेखक—श्री कृष्णचंद्र विद्यालंकार ]।

२३—ककुत्स्थ [ लेखक—राय कृष्णदास ]।

२४—आन दि प्राब्लेम आव् कंपाउंड वर्ड्स इन दि हिंदी लैंगुएज ( बाइ प्रोफेसर बरानिकोफ )।

२५—दि टर्मिनेशन्स आव् हिंदी कैलो 'यू गो' ( मान्श्योर जूल्स ब्लॉच )।

२६—वासवदत्ता ( श्री ए० जी० शेरिफ )।

२७—महाकवेर्बाणस्य कानिचित् परिचितग्रंथेष्वलब्धानि पद्यानि [ लेखक—श्री बटुकनाथ शर्मा, एम० ए० ]।

२८—काशी की महिमा [ रचयिता—श्री जगन्नाथ-दास 'रत्नाकर' ]।

२९—आवरण [ रचयिता—श्री जयशंकर 'प्रसाद' ]।

३०—निर्झरिणी की स्वतंत्रता [ रचयिता—श्री शांति-प्रिय द्विवेदी ]।

इनके अतिरिक्त संग्रह के आरंभ में संपादक श्री ओझाजी द्वारा लिखित १८ पृष्ठों की भूमिका में हिंदी-साहित्य की प्रगति, नागरीप्रचारिणी सभा और उसके द्वारा हुए कतिपय मुख्य मुख्य कार्यों का इतिहास तथा श्री श्यामसुंदरदास का संक्षिप्त जीवनचरित भी दिया गया। एक पृष्ठ में श्री केशवप्रसाद मिश्र द्वारा रचित संस्कृत के पाँच पद्यों की 'शुभाशंसा' भी रखी गई। सभाभवन का एक सुंदर चित्र और श्री श्यामसुंदर-दास की विभिन्न अवस्थाओं के पाँच चित्र भी दिए गए। ग्रंथ का मूल्य ५) रखा गया।

यद्यपि उस समय यही निश्चय हुआ था कि कोशोत्सव हिंदू-विश्वविद्यालय के उपाधि-वितरणोत्सव के समय किया जाय, परंतु कई कारणों से यह तिथि बदलनी पड़ी और यह निश्चय हुआ कि वसंत पंचमी के अवसर पर १४ और १५ फरवरी को यह उत्सव मनाया जाय। उन कारणों में से एक यह भी था कि उस समय तक कोश की छपाई पूरी न हो सकती थी। कोशोत्सव के लिये सर्वसाधारण से धन की अपील की गई। यद्यपि इसका फल उतना संतोष-जनक न हुआ जितने की आशा की गई थी, फिर भी कुल मिलाकर ५००) मिल गया। दानों में विशेष उल्लेखयोग्य २००) की रीवाँ-दरबार की सहायता थी। कोशोत्सव में संमिलित होने के लिये सभा के समस्त सदस्यों, शुभचिंतकों, हिंदी के मान्य लेखकों, विद्वानों और हिंदी-हितैषियों के पास निमंत्रणपत्र भेजे गए।

सभा ने पहले ही यह भी निश्चय कर लिया था कि नई खरीदी हुई जमीन पर जो नया हाल बननेवाला है उसका शिलान्यास भी इसी वसंतपंचमी के अव-सर पर प्रातःकाल माननीय पंडित मदनमोहन मालवीय द्वारा संपन्न कराया जाय तथा उसी दिन संध्यासमय कोशोत्सव आरंभ हो जिसमें संपादकों का सत्कार किया जाय। दूसरे दिन प्रातःकाल साहित्य-चर्चा हो जिसमें बाहर से आए हुए मान्य-विद्वानों के व्याख्यान आदि हों और संध्या समय काव्य चर्चा हो। इन चारों आयोजनों के लिये अलग अलग चार सभापति भी चुने गए। सभा के पीछे जो नई जमीन खरीदी गई थी उस पर चार बड़े बड़े शामियाने खड़े करके बहुत सुंदर मंडप बनाया गया और कोई २००० आद-मियों के बैठने की व्यवस्था की गई। सभास्थल फूल-मालाओं और बंदनवार आदि से भली भाँति सजाया गया। संध्यासमय समस्त सभाभवन में बिजली की रोशनी से दीपावली करने की भी व्यवस्था थी। इस उत्सव में संमिलित होने के लिये अनेक महिलाओं ने ( जिनमें अधिकांश थियोसाफिकल गर्ल्स कालेज की थीं ) तथा दूर दूर से बहुत से विद्वानों ने काशी आने का

कष्ट उठाया था। इनमें सर्वश्री महामहोपाध्याय गौरीशंकर हीराचंद ओझा, रायबहादुर हीरालाल, डाक्टर रामप्रसाद त्रिपाठी, नलिनीमोहन सान्याल, लक्ष्मीधर वाजपेयी, हीरालाल खन्ना, अयोध्यानाथ शर्मा और हरिहर नाथटंडन के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। कोशोत्सव के समय सभा-भवन में ही नहीं काशी नगरी में भी खासी चहल-पहल देखने में आती थी। कोशोत्सव वास्तव में एक विशाल आयोजन था और कई दिन पहले से उसकी धूम मच गई थी। इसी दिन सवेरे सभा के नवीन भवन का शिलान्यास भी हुआ था जिसकी चर्चा सभाभवन वाले अध्याय में की जा चुकी है।

वसंतपंचमी २ फाल्गुन को साढ़े चार बजे सायंकाल महामहोपाध्याय श्री गौरीशंकर हीराचंद ओझा के सभापतित्व में कोशोत्सव का कार्य आरंभ हुआ। इस समय की उपस्थिति प्रातःकाल की अपेक्षा कहीं अधिक थी। मंगलगान के उपरांत बाहर से आए हुए सहानुभूति तथा बधाई के तार और पत्र पढ़े गए। इनमें संयुक्त प्रांत के गवर्नर, बंगाल एशियाटिक सोसायटी के मंत्री, गुजरात वर्नाक्युलर सोसायटी के मंत्री, सर जी० ए० ग्रियर्सन और पंडित महावीरप्रसाद द्विवेदी के संदेश विशेष उल्लेख योग्य थे।

आचार्य द्विवेदीजी ने लिखा था—"काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा से मेरा संबंध प्रायः उसके जन्मकाल से ही है। जिस तरह एक बहुत ही छोटे से बीज से विशाल वटवृक्ष विकसित होता है उसी तरह यह सभा भी बहुत छोटे आकार से विकसित होती हुई अपने वर्तमान आकार प्रकार को प्राप्त हुई है। इसका विशेष श्रेय इसके काशी-निवासी कुछ सभासदों और कार्यकर्त्ताओं को है। पहले इसकी तरफ बाहरी विद्वानों और हिंदी के हितचिंतकों का ध्यान कम था। परंतु अब यह बात नहीं। अब तो उनमें से भी अनेक कृतविद्य सज्जन इसकी सहायता और उन्नति के कार्य में दत्तचित्त हैं।

"इस सभा को अनेक विघ्न-बाधाओं का सामना करना पड़ा है। इसके कार्य-कलापों की कठोर आलोचनाएँ भी होती रही हैं और अब भी कभी कभी हो जाती हैं। मुझे खेद है, पर सच्चे हृदय से स्वीकार करना ही पड़ता है कि इन विरोधात्मक आलोचनाओं के कर्त्ताओं में मुझ अधम की भी कई बार प्रवृत्ति हो चुकी है। इसका प्रायश्चित्त भी मैं कर चुका हूँ। यह सब होते हुए भी सभा के कार्यकर्त्ता अपने उद्दिष्ट पथ से भ्रष्ट नहीं हुए। उनके इस मातृभाषा-प्रेम और हृदयौदार्य्य की जितनी प्रशंसा की जाय, कम है। उन्होंने सारी विघ्न-बाधाओं का उल्लंघन करके सभा को उस उच्च स्थिति को पहुँचा दिया है जिसमें उसे जनसमुदाय इस समय देख रहा है।

"सभा ने देवनागरी लिपि के प्रचार और हिंदी भाषा के साहित्य की उन्नति के लिये यथाशक्य अनेक काम किए हैं। उन सब में उसका एक लाभ सबसे अधिक उल्लेख योग्य है। वह है 'हिंदी-शब्दसागर' नामक विस्तृत कोश का निर्माण। यह कोश शब्द-कल्पद्रुम, शब्द-स्तोम-महानिधि और सेंट-पीटर्सबर्ग में प्रकाशित प्रचंड कोश की समकक्षता करनेवाला है। अपने देश की किसी अन्य प्रचलित भाषा में निर्मित इस तरह का कोई अन्य कोश मेरे देखने में नहीं आया। यह कई जिल्दों में है और गवर्नमेंट तथा अन्य हिंदी-हितैषियों द्वारा प्रदत्त धन की

सहायता से अनेक वर्षों के कठिन परिश्रम की बदौलत अस्तित्व में आया। यों तो वर्तमान और प्राचीन भाषाओं के कोश हैं और बड़े बड़े हैं, पर जो विशेषता इसमें है वह शायद ही किसी और में हो। यह काम किसी एक ही मनुष्य के बूते का था भी नहीं। यदि सभा इसके निर्माण के लिये दत्तचित्त न होती तो किसी एक ही सज्जन के द्वारा इसकी रचना, कम से कम इस समय तो असंभव ही थी। अतएव इसके संपादक और विशेष करके प्रधान संपादक बाबू श्याम-सुंदरदास बी० ए० समस्त हिंदी-भाषाभाषी जन-समुदाय के धन्यवाद के पात्र हैं। परमात्मा उन्हें दीर्घायुरारोग्य दे और उनका सतत कल्याण करे।"

आरंभ में सभा के उपसभापति श्री रामनारायण मिश्र तथा उत्सव के सभापति श्री ओझाजी ने सभा, शब्दसागर तथा उसके संपादकों की समुचित प्रशंसा करते हुए उसके संपादकों का अभिनंदन किया। सबसे पहले प्रधान संपादक श्री श्यामसुंदरदास को हिंदी शब्द-सागर की एक सजिल्द प्रति और कोशोत्सव-स्मारक-संग्रह की एक प्रति भेंट की गई। जो संग्रह सभा की ओर से श्री श्यामसुंदरदास को समर्पित किया गया उसका समर्पणपत्र इस प्रकार है—

"समर्पण

अपने जन्मदाता और प्राण

श्रीयुक्त बाबू श्यामसुंदरदास जी बी० ए०

को

जिनके परिश्रम, उद्योग और बुद्धिबल से

तथा

जिनके संपादन में हिंदी भाषा का सबसे बड़ा कोश

हिंदी-शब्दसागर

प्रस्तुत हुआ है, उनके संमानार्थ तथा कीर्तिरक्षार्थ

काशी-नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा निवेदित"

इसके उपरांत क्रम से सर्वश्री रामचंद्र शुक्ल, रामचंद्र वर्मा और भगवानदीन को शब्दसागर और स्मारक संग्रह की एक एक प्रति तथा एक एक बढ़िया सोने की जेबी घड़ी और एक एक फाउंटेन पेन भेंट किए गए। इसके साथ रायबहादुर श्री बटुकप्रसाद खत्री की ओर से एक एक दुशाला भी भेंट किया गया। अनंतर हिंदू विश्वविद्यालय के आचार्य ध्रुव, आचार्य हीरालाल खन्ना, राय बहादुर पंड्या बैजनाथ, राय बहादुर श्री लज्जाशंकर झा, श्री शिवप्रसाद गुप्त आदि अनेक विद्वानों के भाषण हुए जिनमें सभा के इस विशाल कार्य की भूरि भूरि प्रशंसा की गई। इसके बाद श्री श्यामसुंदरदास ने अपनी तथा अपने सहायकों की ओर से सभा को धन्यवाद दिया और स्वयं अपनी ओर से अपने सहायकों को धन्यवाद देते हुए कोश-निर्माण का विशेष श्रेय सर्वश्री रामचंद्र शुक्ल और श्री रामचंद्र वर्मा को दिया। अंत में प्रधान मंत्री ने सभापति महोदय को धन्यवाद दिया और उस दिन की कार्रवाई समाप्त हुई।

दूसरे दिन प्रातःकाल ६ बजे राय बहादुर श्री हीरालाल के सभापतित्व में साहित्य-चर्चा प्रारंभ हुई। संयुक्त प्रांत के शिक्षा विभाग के सेक्रेटरी श्री बी० एन० मेहता ने लखनऊ से टेलीफोन द्वारा सभा को अपनी तथा गवर्नमेंट की ओर से बधाई दी। आरंभ में सभापति महोदय ने बघेलखंडी, बुंदेलखंडी, छत्तीसगढ़ी, नीमाड़ी, बरारी, मुंडारी आदि बोलियों के नमूने

ग्रामोफोन के रेकार्ड में सुनाए और तदनंतर महामहोपाध्याय श्री गौरीशंकर हीराचंद ओझा का "हिंदी में प्राचीन शोध' पर, अध्यापक श्री राखालदास बंद्योपाध्याय का 'ताम्रयुग का उत्कर्ष' पर और डाक्टर रामप्रसाद त्रिपाठी एम० ए० का 'अकबर की धार्मिक विचारशैली' पर पांडित्यपूर्ण व्याख्यान हुए। दोपहर हो जाने पर उस समय यह अधिवेशन बंद किया गया और संध्या को साढ़े चार बजे रायबहादुर बटुकप्रसाद खत्री की ओर से जलपान कराए जाने के उपरांत साढ़े पाँच बजे से फिर साहित्य-चर्चा आरंभ हुई। उस समय श्री कृष्णदेवप्रसाद गौड़ एम० ए०, एल० टी० ने 'आधुनिक खड़ी बोली कविता की प्रगति' पर अपना निबंध पढ़ा और श्री काशीप्रसाद जायसवाल का 'श्री खारवेल प्रशस्ति और जैन धर्म की प्राचीनता' पर निबंध पढ़ा गया। श्रीमती अन्नपूर्णादेवी ने भी 'प्राचीन तथा अर्वाचीन शिक्षा-पद्धति' पर अपना निबंध पढ़ा। अनतर साहित्य चर्चा का शेष कार्य दूसरे दिन संध्या के लिये स्थगित करके महामहोपाध्याय श्री देवीप्रसाद शुक्ल के सभापतित्व में काव्य-चर्चा आरंभ हुई। इसमें सर्वश्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर', अयोध्यासिंह उपाध्याय, भगवानदीन, जयशंकर प्रसाद आदि अनेक गण्य-मान्य कवियों ने अपनी अपनी रचनाएँ सुनाईं। इसी दिन संध्या समय संयुक्त प्रांत के गवर्नर के प्रतिनिधि-स्वरूप आचार्य संजीवराव एम० ए० भी सभास्थल में आए और उन्होंने सभा को इस कार्य के लिये अपनी ओर से तथा गवर्नर महोदय की ओर से बधाई दी।

यद्यपि आरंभ में दो दिन का ही कार्य-क्रम रखा गया था, परतु दूसरे दिन न साहित्य-चर्चा ही पूरी हो सकी थी और न काव्य-चर्चा ही, अतः तीसरे दिन अर्थात् ४ फाल्गुन को फिर बचे हुए कार्यों को समाप्त करने के लिये अधिवेशन हुआ। उस दिन श्री मदनमोहन शास्त्री का व्याख्यान हुआ और श्री ललितबिहारी 'नटवर' ने नाट्यशास्त्र पर एक सुंदर निबंध पढ़ा। अनंतर निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकृत हुए—

१—"यह सभा भारत गवर्नमेंट से प्रार्थना करती है कि वह कृपा कर ऐसा विधान करे कि भारतवर्ष के बाहर कोई हस्तलिखित पुस्तक न जाने पावे; और यदि उसका जाना रोका न जा सके तो जबतक उसकी प्रतिलिपि कराकर किसी सुरक्षित स्थान में न रख ली जाय तब तक वह बाहर न जाने पावे।

२—"यह सभा भारत गवर्नमेंट से प्रार्थना करती है कि वह कृपा कर ऐसी सुव्यवस्थित आयोजना करे कि जिसमें भारतवर्ष के भिन्न भिन्न प्रांतों तथा राज्यों में जितनी हस्तलिखित हिंदी पुस्तकें रक्षित हों उनकी जाँच होकर एक नियत समय में सब की विस्तृत सूची बन जाय।"

प्रस्तावकर्त्ता—श्री श्यामसुंदरदास बी० ए०

अनुमोदक—महामहोपाध्याय राय बहादुर श्री गौरीशंकर हीराचंद ओझा।

३—"यह सभा संयुक्त प्रदेश की गवर्नमेंट से प्रार्थना करती है कि गवर्नमेंट के द्वारा संस्कृत की जो परीक्षाएँ होती हैं उनमें हिंदी भाषा और हिंदी साहित्य की पढ़ाई भी अनिवार्य कर दी जाय।"

प्रस्तावकर्त्ता—पंडित मदनमोहन शास्त्री।

अनुमोदनकर्त्ता—पंडित केशवप्रसाद मिश्र।

अंत में सर्वश्री रामचंद्र शुक्ल, जगन्नाथदास 'रत्नाकर' तथा कतिपय अन्य सज्जनों ने अपनी कविताएँ पढ़ीं और पूर्ण सफलता के साथ यह विशाल आयोजन समाप्त हुआ।

## ३—वैज्ञानिक कोश

सभा ने अन्य अनेक उपयोगी ग्रंथों के साथ विज्ञान संबंधी विभिन्न विषयों के ग्रंथ निर्माण कराने का भी विचार सं० १९५१ में किया था। किंतु कई वर्ष तक प्रयत्न करने पर भी उसे इस कार्य में सफलता नहीं मिली। इसका मुख्य कारण था विज्ञान के पारिभाषिक शब्दों का हिंदी में अभाव। अँगरेजी आदि भाषाओं से ऐसे ग्रंथों का हिंदी में अनुवाद इसी कारण संभव नहीं था। इसलिये सभा ने पहले इस अभाव की पूर्ति करने का निश्चय किया और संवत् १९५५ (३१ अक्तूबर, १८९८) में एक उपसमिति इस कार्य के लिये बना दी। इस उपसमिति में निम्नलिखित सदस्य चुने गए थे—सर्वश्री लक्ष्मीशंकर मिश्र, महामहोपाध्याय सुधाकर द्विवेदी, अभयचरण सान्याल, कार्त्तिकप्रसाद, रामनारायण मिश्र और श्यामसुंदरदास। उपसमिति ने अपना कार्य आरंभ कर दिया। पहले ज्योतिष, रसायन, विज्ञान, वेदांत, भूगोल, गणित, अर्थशास्त्र आदि के विषयों के शब्द एकत्र किए गए। फिर उनके हिंदी-पर्याय नियत किए गए, उन्हें सात भागों में विभिन्न विषयों के अनुसार नमूने के रूप में छपवाया गया और संमति के लिये शिक्षा विभागों के विशेषज्ञ विद्वानों और अन्य अनेक मनीषियों के पास भेजा गया। देश के प्रांतीय शिक्षा विभागों से प्रार्थना की गई कि वे इस कोश पर विचार करके अपने यहाँ की पाठ्य पुस्तकों में इस कोश के शब्द ही व्यवहार करने का नियम बना दें। संवत् १९५७ में सभा की प्रार्थना पर पंजाब, बंगाल और मध्यप्रदेश के शिक्षा विभागों ने अपनी ओर से निम्नलिखित विद्वान् कोश पर विचार करने के लिये नियत किए—सर्वश्री मुंशीलाल एम० ए०, (सेंट्रल ट्रेनिंग कालेज, लाहौर), विनायक राव (ट्रेनिंग इंस्टिट्यूशन, नागपुर), बलदेवराम झा, बी० ए० (असिस्टेंट इंस्पेक्टर आव् स्कूल्स, बाँकीपुर)। संमति भेजने के लिये ३० जून, १९०३ तक का समय नियत किया गया था। संमतियाँ आ जाने पर उनपर विचार करने और कोश को दुहराने के लिये विद्वानों की सभा करने का निश्चय किया गया। इस सभा में इस कोश के रचयिताओं, शिक्षा विभाग के प्रतिनिधियों और चुने हुए अन्य वैज्ञानिकों को निमंत्रित करने का विचार था। फलतः कलकत्ते के विद्वानों से मिलने के लिये श्री श्यामसुंदरदास और बंबई के विद्वानों के पास श्री माधवराव सप्रे भेजे गए। कलकत्ते में श्री श्यामसुंदरदास ने सर्वश्री जगदीशचंद्र बोस, डाक्टर प्रफुल्लचंद्र राय और रामेंद्रसुंदर त्रिवेदी से मिलकर परामर्श किया। बंबई में सप्रे जी सर्वश्री टी० के० गज्जर, डाक्टर रामकृष्ण गोपाल भंडारकर, डाक्टर एम० जी० देशमुख आदि महानुभावों से मिले। इन दोनों सज्जनों के लौट आने पर सेंट्रल हिंदू स्कूल में उक्त सभा का आयोजन किया गया। ५ आश्विन से १३ आश्विन तक इसकी बैठकें प्रतिदिन दुपहर को १२ से ४॥ तक होती रहीं। इस सभा में नीचे लिखे विद्वान् संमिलित हुए थे—

सर्वश्री भगवान्‌दास, भगवतीसहाय, दुर्गाप्रसाद, गोविंददास, खुशीराम, माधवराव सप्रे, रामावतार शर्म्मा, श्यामसुंदरदास, सुधाकर द्विवेदी, वनमाली चक्रवर्ती, विनायक राव।

इन नौ दिनों की बैठकों में यह सभा ज्योतिष और भूगोल के संपूर्ण भाग को और गणित के कुछ अंश को दुहराकर ठीक कर सकी। कार्य अधिक होने के कारण दर्शन और अर्थशास्त्र के लिये इस सभा ने दो उपसमितियाँ बना दीं जिनमें से दर्शन-उपसमिति के

सदस्य सर्वश्री भगवान्दास, वनमाली चक्रवर्ती, रामावतार शर्म्मा और इंद्रनारायणसिंह तथा अर्थशास्त्र उपसमिति के सर्वश्री गोविंददास, माधवराव सप्रे और श्यामसुंदरदास चुने गए। इन दोनों उपसमितियों ने अपना कार्य शीघ्र ही समाप्त कर दिया। ५ पौष से उक्त सभा की बैठकें पुनः आरंभ हुई और २४ पौष, सं० १९६० तक नित्य होती रहीं। इसमें संमिलित होनेवाले विद्वानों के नाम इस प्रकार हैं—

सर्वश्री अभयचरण सान्याल, भगवान्दास, भगवतीसहाय, दुर्गाप्रसाद, खुशीराम, एन० बी० रानडे, रामावतार शर्म्मा, सुधाकर द्विवेदी, श्यामसुंदरदास, ठाकुरप्रसाद, टी० के० गज्जर, वनमाली चक्रवर्ती।

इस बार गणित का शेष अंश और रसायन का पूरा भाग दोहराकर ठीक किए गए। विज्ञान के शब्दों को ठीक करने के लिये सर्वश्री ए० सी० सान्याल, दुर्गाप्रसाद, खुशीराम और एन० बी० रानडे की उपसमिति बना दी गई। इस उपसमिति ने भी अपना कार्य शीघ्र ही समाप्त कर दिया।

भिन्न भिन्न शब्दों के दोहराने में उक्त सभा को निम्नलिखित महानुभावों से भी पर्याप्त सहायता मिली—

सर्वश्री अच्युतप्रसाद द्विवेदी, काशी, इंद्रनारायण सिंह, काशी, बी० ए० चटर्जी, काशी ,एम० एन० बनरजी, काशी, एम० जी० देशमुख, बंबई, एम० जे० डोले, जबलपुर, एम० बी० भट्टाचार्य, लखनऊ, एम० बी० कदंब, बड़ोदा, कन्हैयालाल गुरु, हुशंगाबाद, कमलाकर दुबे, काशी, गनपतलाल चौबे, रायपुर, चंद्रधर शर्मा, जयपुर, जीयाराम, लाहोर, जे० सी० बोस, कलकत्ता, नंदकिशोर दुबे, रायपुर, परसराम, जबलपुर, पी० सी० राय, कलकत्ता, बी० पी० मोदक, कोल्हापुर, बी० पुरोहित, मंडला, मुंशीलाल, लाहोर, रामराव राजाराम चिंचोलकर, बिलासपुर, राजाराम पाँडे, रायपुर, रामनारायण मिश्र, काशी, रामेंद्रसुंदर त्रिवेदी, कलकत्ता, विष्णु शास्त्री, जबलपुर, शिवभरोस, जबलपुर, श्रीधर पाठक, प्रयाग, श्रीराम भास्कर, नागपुर, सदाशिव जयराम, जबलपुर, शुकदेवविहारी मिश्र, हरदोई, सूरजनारायण काशी, हीरालाल, बिलासपुर।

इस प्रकार सब शब्दों के दुहराए जाने पर संशोधित कोश के संपादन का कार्य श्री श्यामसुंदरदास के निरीक्षण में श्री ठाकुरप्रसाद को सौंपा गया और इस कार्य में सहायता देने के लिये सर्वश्री विनायक राव, खुशीराम, एन० बी० रानडे, भगवतीसहाय, सुधाकर द्विवेदी, दुर्गाप्रसाद और भगवान्दास चुने गए।

संपादन और छपाई का कार्य साथ साथ चलता रहा। संवत् १९६२ में पूरा कोश छपकर तैयार हो गया। कपड़े की जिल्दवाली पुस्तक का मूल्य ४) और कागज की जिल्दवाली का ३॥) रखा गया। इस कार्य में लगभग आठ वर्ष लगे और कई हजार रुपए व्यय हुए। भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक कोश होने का सर्वप्रथम सौभाग्य नागरीप्रचारिणी सभा के उद्योग से हिंदी को ही प्राप्त है। इस कोश का एक संस्करण कन्नड में प्रकाशित हुआ, गुजराती और मराठी के कोशों में इसके शब्द संमिलित होने लगे और मद्रास की भाषाओं में जो विज्ञान विषयक ग्रंथ उस समय लिखे गए उनमें इसी कोश से सहायता ली गई। संवत् १९८५ में जब इसकी सब प्रतियाँ समाप्तप्राय हो गईं तब इसके नवीन संस्करण का निश्चय किया गया। इतने वर्षों में वैज्ञानिक शब्दावली में भी बहुत उन्नति हो चुकी थी। प्रत्येक

विषय की शब्दावली को तैयार करने का भार अलग अलग विद्वानों को सौंपा गया। प्रत्येक शब्द पर विद्वानों की एक उपसमिति में विचार होता था। उनके निर्णय के अनुसार ही शब्द निर्धारित किए जाते थे। वास्तव में इस नवीन संस्करण में इतने परिवर्तन हुए कि वह एक प्रकार से सर्वथा नया ग्रंथ ही बन गया। इस प्रकार संवत् १९८६ में डाक्टर निहालकरण सेठी द्वारा संकलित 'भौतिक विज्ञान' और प्रोफेसर फूलदेवसहाय वर्मा द्वारा संकलित 'रसायन शास्त्र' प्रकाशित हुए। संवत् १९८७ में गणित विज्ञान की पारिभाषिक शब्दावली और १९८८ में ज्योतिष् शास्त्र की पारिभाषिक शब्दावली प्रकाशित की गई। इसके बाद अभी तक और कोई शब्दावली प्रकाशित नहीं हुई।

## ४—कचहरी हिंदी कोश

अदालतों में नागरी-प्रचार के सिलसिले में कचहरी में प्रयुक्त होनेवाले शब्दों के हिंदी कोश की आवश्यकता अनुभव की गई और तत्कालीन प्रचार मंत्री श्री माधवप्रसाद के प्रस्ताव पर संवत् १९८३ में सभा ने कचहरी हिंदी-कोश तैयार कराने का निश्चय किया। यह कार्य श्री माधवप्रसाद को ही सौंपा गया। इसे तैयार करने की योजना इस प्रकार रखी गई थी कि श्री माधवप्रसाद कोश तैयार करते जायँ और संशोधन के उद्देश्य से उसकी छपाई भी आरंभ कर दी जाय। ज्यों ज्यों फार्म छपते जायँ संशोधन के लिये लगभग पचास विद्वानों के पास पहुँचते जायँ और वहाँ से लौटने पर पुनः एक उपसमिति उन पर विचार करे, तब कहीं वह संशोधित प्रति छापी जाय। इस विधि से इस कोश में फारसी, अँगरेजी और हिंदी तीन भाषाओं के शब्दों का संकलन बड़े परिश्रम से किया गया। श्री रेवरेंड ए० ग्रीव्स विलायत से संशोधन करके इसकी प्रतियाँ भेजा करते थे। यह कोश संवत् १९८९ में छपकर तैयार हो गया। सभा का विचार था कि एक विद्वत्-परिषद् बुलाई जाय जिसमें प्रांतीय सरकारों और देशी राज्यों के प्रतिनिधि भी निमंत्रित किए जायँ और उस परिषद् के संमुख संशोधन के लिये यह कोश उपस्थित किया जाय जिससे यह सर्वमान्य हो सके। किंतु यथेष्ट सहयोग न मिलने के कारण सभा का यह विचार पूरा न हो सका। यह कोश ४१ फार्मों में समाप्त हुआ था और प्रत्येक फार्म का मूल्य -) रखा गया था। इस समय यह अप्राप्य है।

## ३—हिंदी-व्याकरण

हिंदी में एक अच्छे व्याकरण की आवश्यकता सभा ने पहले ही वर्ष अनुभव की थी। दूसरे वर्ष उसके लिये एक स्वर्ण-पदक की घोषणा भी की गई, किंतु कोई अच्छा व्याकरण तैयार न हो सका। तब सभा ने व्याकरण-संबंधी संदिग्ध विषयों पर भाषा-तत्त्वज्ञ विद्वानों की संमति संग्रह करके उसे स्वयं तैयार करने का निश्चय किया। प्रश्न भेजे गए, उत्तर आए और इन पर विचार करने के लिये सभा द्वारा संघटित सर्वश्री लक्ष्मीशंकर मिश्र, सुधाकर द्विवेदी, गदाधरसिंह, हनुवंतसिंह, कार्त्तिकप्रसाद, राधाकृष्णदास, जगन्नाथदास 'रत्नाकर', इंद्रनारायणसिंह, एडविन ग्रीव्स, किशोरीलाल गोस्वामी और श्यामसुंदरदास (मंत्री) की उपसमिति की रिपोर्ट पर सभा ने विचार भी किया। सर्वश्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर', श्यामसुंदरदास और किशोरीलाल गोस्वामी को व्याकरण बनाने का कार्य सौंपा गया, पर कोई विशेष फल न हुआ। संवत्

१६५८ में डाक्टर ग्रियर्सन के प्रस्ताव पर सभा ने व्याकरण-निर्माण का उद्योग हिंदुस्थानी भाषाओं की जाँच-रिपोर्ट प्रकाशित होने तक एक वर्ष के लिये स्थगित कर दिया। फिर संवत् १६६३ तक इस संबंध में कोई कार्य नहीं हुआ। सं० १६६४ में सभा ने इस कार्य के लिये ५००) के पुरस्कार की घोषणा की जो सभा द्वारा प्रस्तुत रूप-रेखा के आधार पर लिखे गए ग्रंथ पर देना निश्चित हुआ था। किंतु इसका भी कोई विशेष संतोषजनक फल न हुआ। संवत् १६६७ में तीन व्याकरण सभा को मिले। इन पर विचार करने के लिये सर्वश्री श्यामसुंदरदास, रामावतार पांडेय, गोविंद नारायण मिश्र, महावीरप्रसाद द्विवेदी, श्यामविहारी मिश्र, श्रीधर पाठक और लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी की एक उपसमिति बनाई गई। परंतु इस उपसमिति की संमति में इनमें से कोई व्याकरण पूरे पुरस्कार के योग्य नहीं ठहरा। सभा ने श्री गंगाप्रसाद को, जिनके व्याकरण का एक अंश उत्तम था और श्री रामकरण को जिनके व्याकरण का दूसरा अंश उत्तम था, क्रमशः १५०) और ५०) पुरस्कार दिया। पीछे इन दोनों व्याकरणों के आधार पर एक सर्वांगपूर्ण व्याकरण तैयार करने का भार श्री कामताप्रसाद गुरु को सौंपा गया। वे इसे सं० १६७६ तक पूरा तैयार कर पाए। सभा की 'लेख-माला' में संवत् १६७४ से ही इसका छपना आरंभ हो गया था जो संवत् १६७६ तक बराबर उसी में प्रकाशित होता रहा। इसी को प्रकाशित करके लेखमाला बंद हुई। इस व्याकरण में से एक छोटा व्याकरण नीची श्रेणियों के लिये भी बनाया गया। हाई स्कूल कक्षा के लिये संक्षिप्त हिंदी व्याकरण का निर्माण हुआ और मिडिल कक्षा के विद्यार्थियों के लिये 'मध्य हिंदी व्याकरण' नाम से एक और संस्करण प्रकाशित किया गया। इस प्रकार संवत् १६८१ तक इस व्याकरण के चार संस्करण बन गए—नीची श्रेणी के लिये 'प्रथम हिंदी व्याकरण', फिर मिडिल क्लास के लिये 'मध्य हिंदी व्याकरण', हाई स्कूल क्लास के लिये 'संक्षिप्त हिंदी व्याकरण' और अंत में हिंदी-व्याकरण।

## ४—मालाएँ

### १—नागरी-प्रचारिणी ग्रंथमाला

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, सभा के खोज-विभाग द्वारा जो प्राचीन् ग्रंथ प्राप्त होते थे उनकी सूची तैयार करके प्रत्येक ग्रंथ का परिचयात्मक नोट सूची के साथ खोज-कार्य के संक्षिप्त विवरण के रूप में प्रकाशित कर देना निश्चित हुआ था। किंतु खोज का कार्य आरंभ होने के साथ ही सभा ने यह भी सोचा कि पुस्तकों की सूची बन जाने और उन पर संक्षिप्त नोट लिख जाने से तब तक कोई विशेष लाभ न होगा जब तक उनमें से चुने हुए ग्रंथों के छपवाने का भी कोई उत्तम प्रबंध न हो। इस विचार को आवश्यक समझकर सभा ने संवत १६५७ (सन् १६००) में 'नागरी-प्रचारिणी ग्रंथमाला' नाम की एक पुस्तकमाला प्रकाशित करने का निश्चय किया जिसकी पृष्ठसंख्या ६४ और मूल्य आठ आने रखा गया। वर्ष में इसके चार अंक निकालने का निश्चय हुआ था, जिसके अनुसार उसी वर्ष इसका प्रथम अंक प्रकाशित हो गया। इस अंक के संपादक श्री राधाकृष्णदास थे। संवत् १६७६ तक यह ग्रंथमाला बराबर प्रकाशित होती रही। किसी वर्ष २, किसी वर्ष ३, किसी वर्ष ४ और किसी वर्ष ५ अंक निकलते रहे। इस प्रकार १६ वर्षों में इसके ६४ अंक प्रकाशित हुए।

संवत् १६५७ से ६१ तक इस माला के संपादक श्री राधाकृष्णदास रहे, १६६२ से ६५ तक महामहोपाध्याय श्री सुधाकर द्विवेदी, १६६६ से ६७ तक श्री माधवप्रसाद पाठक और १६६८ से ७६ तक श्री श्यामसुंदरदास। संवत् १६६१ में प्रांतीय सरकार ने पाँच वर्ष के लिये ३००) वार्षिक सहायता यह ग्रंथमाला प्रकाशित करने के लिये सभा को प्रदान की थी। यह सहायता मिलते ही सभा ने इसकी पृष्ठ-संख्या तो ६४ से ८० कर दी पर मूल्य आठ आने ही रहने दिया।

संवत् १६७६ तक इस ग्रंथमाला में ग्रंथ खंडशः प्रकाशित होते थे। किंतु संवत् १६७७ से ग्रंथों का इस रूप में प्रकाशन बंद कर दिया गया। इस वर्ष (मई १६२० में) सभा ने एक उपसमिति इस ग्रंथमाला के संबंध में विचार करने के लिये संघटित की थी; उसी की रिपोर्ट पर यह निश्चय हुआ था कि सभा प्रत्येक प्राचीन ग्रंथ का उत्तम संस्करण प्रकाशित करे, पुस्तकें खंड खंड करके न प्रकाशित की जायँ, प्रत्युत एक एक पुस्तक संपूर्ण छापकर, उत्तम और मजबूत जिल्द बँधवाकर प्रकाशित की जाय। उपसमिति का परामर्श सभा ने स्वीकार कर लिया और तब से इस ग्रंथमाला में पूरे ग्रंथ प्रकाशित होने लगे और इसका त्रैमासिक पत्रिका के रूप में निकलना बंद हो गया। संवत् १६७६ में अलवर-नरेश ने इस ग्रंथमाला के प्रकाशन के लिये सभा को ५०००) की सहायता प्रदान की।

आरंभ से अब तक इस माला में सब मिलाकर ३७ ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं जिनके नाम सभा के प्रकाशनों की सूची में इस माला के अंतर्गत परिशिष्ट में दिए गए हैं। भक्त-नामावली, अखरावट, जंगनामा, हमीररासो, वीर विरदावली, दादू दयाल की वाणी, राजविलास, भूषण ग्रंथावली, अनन्य ग्रंथावली, देवग्रंथावली, दीनदयाल गिरि ग्रंथावली, जायसी ग्रंथावली, तुलसी ग्रंथावली, कबीर ग्रंथावली। अनन्य ग्रंथावली और हमीररासो, परमालरासो तथा पृथ्वीराजरासो जैसे विशाल ग्रंथ इसी ग्रंथमाला में प्रकाशित हुए हैं।

## २—नागरीप्रचारिणी लेखमाला

संवत् १६६६ में जब नागरीप्रचारिणी पत्रिका के आकार और विषय में बहुत कुछ परिवर्तन किया गया था, डिमाई अठपेजी के स्थान पर चौपेजी आकार में निकालने और उसमें हिंदी संबंधी समाचारों पर टिप्पणियाँ, साहित्य संबंधी छोटे छोटे लेख और सभा के समाचार देने का निश्चय किया गया था उस समय सभा ने पत्रिका के पूर्वरूप में छपनेवाले लेखों के लिये त्रैमासिक रूप में यह लेखमाला निकालने का निश्चय किया था जिसका वार्षिक मूल्य २) रखा गया था। इसके सर्वप्रथम संपादक श्री माधवप्रसाद पाठक चुने गए थे। संवत् १६६६ में इसकी तीन संख्याएँ निकलीं जिनमें निम्नलिखित आठ लेख प्रकाशित हुए—

१—सिंध का इतिहास (मुंशी देवीप्रसाद)
२—भाषा (श्री सूर्यकुमार वर्मा)
३—निगमन और आगमन (श्री दामोदरसहाय सिंह)
४—आर्ष प्राकृत व्याकरण (श्री जगन्मोहन वर्मा)
५—आयुर्वेद-निदान-समीक्षा (श्री मुरलिधर वर्मा)
६—युवतियोग्यता (मुंशी देवीप्रसाद)
७—शेख मुहम्मद बाबा (श्री गणपत जानकीराम दुबे)
८—बोपदेव (श्री केदारनाथ पाठक)

संवत् १६७७ तक लेखमाला की ३८ संख्याएँ प्रकाशित हुई और फिर यह बंद हो गई। वास्तव में

लेखमाला संवत् १९७५ में उन्नीसवीं संख्या निकालकर ही एक प्रकार से समाप्त हो गई थी। क्योंकि नागरीप्रचारिणी पत्रिका में पुनः उच्च कोटि के लेख संवत् १९७६ से प्रकाशित होने लगे थे और उसके आकार और विषय दोनों में बहुत बड़ा परिवर्त्तन कर दिया गया था। इसलिये लेखमाला निकालने की अब आवश्यकता नहीं समझी गई। संवत् १९७५ की २७, २८ और २९ तीनों संख्याओं में श्री कामताप्रसाद गुरु-लिखित हिंदी-व्याकरण का कुछ अंश प्रकाशित हुआ था उसी का शेषांश संवत् १९७७ की तीसवीं से अड़तीसवीं तक ९ संख्याओं में प्रकाशित करके लेखमाला बंद कर दी गई। व्याकरण से पूर्व इसमें प्रायः वही लेख निकलते रहे जो सभा द्वारा पुरस्कृत होते थे।

इस लेखमाला का संपादन सं० १९६६ से ६७ तक श्री माधवप्रसाद पाठक ने, १९६८ से ७० तक श्री चंद्रधर शर्मा गुलेरी ने, १९७१ से ७४ तक श्री गौरीशंकरप्रसाद ने और १९७५ से ७७ तक श्री रामचंद्र वर्मा ने किया था।

## ३—मनोरंजन पुस्तकमाला

सभा ने संवत् १९७० में यह माला निकालने का निश्चय किया। इसमें विविध विषयों के सर्वोत्तम १०० ग्रंथ निकालने की योजना बनाई गई थी। इस योजना के अनुसार ग्रंथों का कागज, जिल्द, आकार और मूल्य सब एक ही रखना निश्चित हुआ। इनकी भाषा और विषय आदि के विषय में कहा गया था कि 'प्रत्येक ग्रंथ की भाषा सरल, मुहावरेदार तथा पुष्ट होगी और पुस्तक के किसी भाग में ऐसी कोई बात न आएगी जो माता अपने पुत्र से, पिता अपनी कन्या से अथवा भाई अपनी बहन से कहने में संकोच करे।' इस माला के संपादन का भार श्री श्यामसुंदरदास को सौंपा गया। लगभग चालीस चुने हुए विद्वानों ने इसके लिये ग्रंथ लिखने का वचन दिया। प्रत्येक पुस्तक का मूल्य ।।।) रखा गया। इस माला की सर्वप्रथम पुस्तक श्री रामचंद्र शुक्ल लिखित 'आदर्श जीवन' है जो संवत् १९७१ में प्रकाशित हुई थी। तब से अब तक इसमें ५४ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं जिनकी सूची परिशिष्ट में दी गई है। जनता ने यह माला इतनी पसंद की कि दूसरे ही वर्ष इसकी ग्राहकसंख्या ६०० हो गई थी।

## ४—देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला

जोधपुर-निवासी स्वर्गीय मुंशी देवीप्रसाद मुंसिफ ने बंबई बंक के सात हिस्सों के रूप में सभा को सं० १९७५ वि० ( सन् १९१८ ई० ) में एक निधि इसलिये प्रदान की थी कि उसकी आय से हिंदी में ऐतिहासिक पुस्तकें प्रकाशित की जायँ। सन् १९२१ में ये हिस्से इंपीरियल बंक के सात हिस्सों के रूप में परिवर्तित हुए और इंपीरियल बंक के १४ नए हिस्से भी खरीदे गए। इसकी आय से अब तक कुल १५ पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। इसके ट्रस्ट डीड की प्रतिलिपि यहाँ उद्धृत की जाती है—

"श्रीहरि

मैं मुंशी देवीप्रसाद, पिता का नाम मुंशी नत्थनलाल, जाति सकसेना कायस्थ, रहनेवाला जोधपुर का हूँ।

आगे बहुत दिनों से मेरी इच्छा है कि हिंदी-साहित्य में ऐतिहासिक पुस्तकें लिखी और छापी जायँ जिससे हिंदी-साहित्य में इनके अभाव की

पूर्ति हो। इस इच्छा से नीचे लिखे हुए महाशयों को ट्रस्टी बनाता हूँ और उनको नीचे लिखे हुए अधिकार देता हूँ। इस कार्य के लिये मैं अपने सात हिस्से नंबर ५२८८, ७६६५, ६०१५, ६७८१, १२४००, १४९९७, १७४३४ जो बेंक आफ बांबे में मेरे नाम से हैं, जिनका असली दाम ३५००) रुपया है और जिनका आजकल का मूल्य १०५००) के लगभग तथा वार्षिक आय ६००) के लगभग है, काशी-नागरीप्रचारिणी सभा को देता हूँ।

१—यह ट्रस्ट "देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला ट्रस्ट" नाम से कहा जायगा और यह धन चाहे जिस रूप में रहे, काशी नागरी-प्रचारिणी सभा के अधिकार में रहेगा और उसका हिसाब-किताब इत्यादि भी उक्त सभा के कार्यालय में अलग खाता डालकर रखा जायगा।

२—इन हिस्सों का मूलधन व्यय नहीं किया जायगा किंतु उनसे जो आय होगी वह इस ट्रस्ट के नीचे लिखे हुए कार्य में लगाई जायगी।

३—काशी-नागरीप्रचारिणी सभा की प्रबंध-कारिणी समिति को अधिकार होगा कि ट्रस्टियों की संमति से इस धन को इन्हीं हिस्सों में अथवा किसी दूसरे रूप में जो इंडियन ट्रस्ट ऐक्ट की धाराओं के विरुद्ध न हो रखे, किंतु इस बात पर ध्यान रखना आवश्यक होगा कि आय में कमी न हो और मूलधन में क्षति न हो।

४—इस समय नीचे लिखे हुए तीन महाशयों को मैं ट्रस्टी नियत करता हूँ और उक्त महानुभावों ने इस ट्रस्ट के कार्य को संपादन करने का भार लेना स्वीकार किया है। बाबू श्यामसुंदरदासजी बी० ए० बनारस के, पं० चंद्रधर शर्मा बी० ए० अजमेर के और राय बहादुर पंडित गौरीशंकर हीराचंद ओझा अजमेर के।

५—इन ट्रस्टी महाशयों में यदि किसी का स्थान किसी कारण से खाली हो जावे अथवा इंडियन ट्रस्ट ऐक्ट की धाराओं के अनुसार खाली समझा जाय तो उस स्थान की पूर्ति जब तक मैं जीवित रहूँगा स्वयं करूँगा और मेरे न जीवित रहने अथवा अयोग्य होने की अवस्था में यदि किसी ट्रस्टी का स्थान खाली हुआ तो उसकी पूर्ति काशी-नागरीप्रचारिणी सभा अपने वार्षिक अधिवेशन में बाकी ट्रस्टियों की संमति से करेगी। पर यदि वार्षिक अधिवेशन को एक मास से अधिक विलंब हो तो उस अवस्था में उक्त सभा की प्रबंधकारिणी समिति को अधिकार होगा कि यदि वह आवश्यक समझे तो वार्षिक अधिवेशन द्वारा नियुक्त होने तक उस स्थान की पूर्ति कर दे परंतु हर अवस्था में इस बात का पूरा ध्यान रखना होगा कि एक वंश या संबंध के एक से अधिक व्यक्ति एक साथ ट्रस्टी न रह सकेंगे।

६—जो पुस्तकें इस ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित होंगी उनका नाम "देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला" होगा जिसमें स्वतंत्र मौलिक ग्रंथ अथवा दूसरी भाषा के ग्रंथों के अनुवाद तथा प्राचीन ग्रंथ होंगे।

७—हर पुस्तक में मेरा चित्र रहेगा।

८—इस पुस्तकमाला की बिक्री से जो आय होगी वह भी इसी पुस्तकमाला के प्रकाशित करने में व्यय की जायगी।

९—हर वर्ष यथासंभव कम से कम एक पुस्तक प्रकाशित की जायगी और उसका मूल्य जो कुछ उसके

संबंध में व्यय होगा उससे दुगुने से अधिक न रखा जायगा।

१०—यदि किसी समय मूलधन के अतिरिक्त इस पुस्तक-माला के हिसाब में १०००) वा इससे अधिक बच रहेगा और वह एक वर्ष से अधिक समय तक इस कार्य में व्यय न हो सकेगा तो उसमें एक सहस्र वा उससे अधिक जितना......काशी नागरीप्रचारिणी सभा की प्रबंधकारिणी समिति उचित समझे, मूलधन में संमिलित कर दिया जायगा और इसी प्रकार से समय समय पर जब जब ऐसी अवस्था उपस्थित होती रहेगी तब तब ऐसा ही किया जायगा और संमिलित धन की कुल आय इस कार्य में लगाई जायगी।

११—काशी-नागरीप्रचारिणी सभा की प्रबंधकारिणी समिति को पूर्ण अधिकार होगा कि इस पुस्तक-माला की पुस्तकों के लिखवाने, छपवाने तथा बेचने आदि का सब प्रबंध करे किंतु यह आवश्यक होगा कि पुस्तक के विषय के संबंध में ट्रस्टियों की संमति ले ले। यदि एक मास तक ट्रस्टी महाशयों अथवा उनमें से किसी एक की संमति प्राप्त न हो तो उस अवस्था में सभा के निश्चय की ही प्रधानता रहेगी और यदि ट्रस्टी महाशय संमति में एकमत न हों तो जिस ओर अधिक संमति होगी, वही मानी जायगी और उसी के अनुसार कार्य होगा।

१२—इस ट्रस्ट का वार्षिक चिट्ठा ट्रस्टियों के पास सभा का वर्ष समाप्त होन के पश्चात् एक मास के भीतर भेज दिया जायगा और उसका विवरण उनकी संमति के साथ सभा के वार्षिक विवरण में प्रकाशित हुआ करेगा।

१३—यदि कभी इंडियन ट्रस्ट ऐक्ट की धाराओं के अनुसार न्यायाधीश की संमति लेने की आवश्यकता होगी तो वह संमति काशी के जज महोदय से ली जावेगी।

१४—यदि किसी समय काशी नागरीप्रचारिणी सभा टूट जाय तो ट्रस्टियों को अधिकार होगा कि वे इस ट्रस्ट की समस्त संपत्ति को किसी दूसरी उपयुक्त संस्था को इस ट्रस्ट के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये इन्हीं नियमों पर दे दें। यदि काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा इस ट्रस्ट के नियमों के अनुसार कोई ग्रंथ निरंतर तीन वर्ष तक प्रकाशित न करे और इसका संतोषजनक कारण न बता सके तो मेरी जीवित अवस्था में मुझे, और मेरे पीछे ट्रस्टियों को अधिकार होगा कि इस कार्य के लिये कोई दूसरा उपयुक्त प्रबंध करें जिसमें इस ट्रस्ट का उद्देश्य सफल हो।

१५—इस ट्रस्ट के इन ऊपर लिखे हुए नियमों के साथ प्रबंध करने का भार काशी-नागरीप्रचारिणी सभा ने अपनी प्रबंधकारिणी समिति के ता० २४ मई सन् १९१८ के अधिवेशन में लेना स्वीकार किया है। ता० २१ जून, सन् १९१५—जेठ सुदी १२, संवत् १९७५

(ह०) देवीप्रसाद

मु० अजमेर स्थान राजपूताना म्यूजियम।

साक्षी (ह०) महामहोपाध्याय पंडित शिवनारायण शर्मा

विटनेस (साइंड) हरबिलास सारदा, जज स्माल काज कोर्ट, अजमेर। मुझे ट्रस्टी होना स्वीकार है—(ह०) श्यामसुंदरदास २१-६-१८।

मैंने ट्रस्टी होना स्वीकार किया—(ह०) गौरीशंकर हीराचंद ओझा २१-६-१८।"

## ५—सूर्यकुमारी पुस्तकमाला

शाहपुरा के श्रीमान् महाराजकुमार उम्मेद सिंह जी की स्वर्गीया धर्मपत्नी श्रीमती सूर्यकुमारी जी के स्मारक में यह पुस्तकमाला निकाली गई है। श्रीमती ने अपने अंतिम समय में अपने एक लाख रुपये मूल्य के आभूषण हिंदी-प्रचार के लिये दान किए थे। उन्हीं एक लाख रुपयों के सूद में से श्रीमान् ने सभा को सं० १९७७ से १९८० तक भिन्न भिन्न तिथियों में कुल १९९८४) प्रदान किए हैं जिनसे यह पुस्तक-माला प्रकाशित की जाती है। इस पुस्तक-माला की सभी पुस्तकें बहुत ही उत्तम और उच्च कोटि की होती हैं। यह पुस्तकमाला विशेष रूप से हिंदी का प्रचार करने तथा उसके भांडार को उत्तमोत्तम ग्रंथरत्नों से भरने के उद्देश्य से निकाली गई है। अब तक इस माला में १८ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

## ६—बालाबख्श-राजपूत-चारण-पुस्तकमाला

जयपुर के ग्राम हणूतिया-निवासी स्वर्गीय बारहट बालाबख्श जी ने सं० १९७९—८० में सभा को ७००० इसलिये दिया था कि वह उसके ब्याज से राजपूतों और चारणों की रची हुई डिंगल और पिंगल भाषा की पुस्तकें प्रकाशित करे। सभा ने इस धन से १२०००) रुपयों के ३॥) सूदी सरकारी कागज खरीद लिए जिनसे ब्याज की आय इस माला के प्रकाशन में व्यय होती है। अब तक इस माला में ९ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

इस माला की पुस्तकों के संपादन से लेकर उनके प्रकाशित होने तक श्रद्धेय पुरोहित हरिनारायण जी शर्मा बी० ए० (जयपुर) इस वृद्धावस्था में भी अत्यंत परिश्रम करते हैं। इसके ट्रस्ट डीड की प्रतिलिपि नीचे उद्धृत की जाती है—

"श्री रामजी

मैं बारहट बालाबख्श पिता का नाम नृसिंहदासजी, जाति चारण, रहनेवाला ग्राम हणोतिया राज जयपुर का हूँ। आगे बहुत दिनों से मेरी इच्छा है कि राजपूतों और चारणों की रची हुई ऐतिहासिक और कविता की (डिंगल तथा पिंगल) पुस्तकें प्रकाशित की जायँ जिससे हिंदी-साहित्य के भंडार की पूर्ति हो और ये ग्रंथ सदा के लिये रक्षित हो जायँ। इसलिये मैं नीचे लिखे हुए महाशयों को ट्रस्टी बनाता हूँ और उनको नीचे लिखे हुए अधिकार देता हूँ। इस कार्य के लिये मैं ५०००) रु० (पाँच हजार रुपये) नगद देता हूँ और समय समय पर मुझसे जहाँ तक होगा, मैं इस कार्य के लिये और धन स्वयं दूँगा या दूसरों से दिलाऊँगा।

(१) इस ट्रस्ट का नाम "बालाबख्श-राजपूत-चारण-पुस्तकमाला ट्रस्ट" होगा और यह धन चाहे जिस रूप में रहे, काशी नागरी-प्रचारिणी सभा के अधिकार में रहेगा और उसका हिसाब-किताब आदि भी उक्त सभा के कार्यालय में अलग खाता डालकर रखा जायगा।

(२) काशी नागरी-प्रचारिणी सभा की प्रबंध-समिति को अधिकार होगा कि ट्रस्टियों की अनुमति से तथा इंडियन ट्रस्ट-ऐक्ट की धाराओं के अनुसार इस धन को किसी बंक में जमा कर दे या सरकारी ऋण आदि के नोट इससे खरीद ले अथवा किसी और उपयुक्त रूप में लगावे या

आवश्यकतानुसार एक रूप से दूसरे रूप में करे। किंतु इस बात का ध्यान अवश्य रखना होगा कि आय में कमी न हो और मूलधन में क्षति न हो।

(३) काशी-नागरीप्रचारिणी सभा को मूलधन के व्यय करने का अधिकार न होगा किंतु उससे जो आय होगी वह इस ट्रस्ट के नीचे लिखे हुए कार्य में लगाई जायगी।

(४) इस समय नीचे लिखे हुए पाँच महाशयों को मैं ट्रस्टी नियत करता हूँ और उक्त महानुभावों ने इस ट्रस्ट के कार्य को संपादन करने का भार लेना स्वीकार किया है।

१—रायबहादुर पं० गौरीशंकर हीराचंद ओझा, क्यूरेटर म्यूज़ियम, अजमेर।

२—मुंशी देवीप्रसादजी मुंसिफ़, जोधपुर।

३—राज्यश्री ठाकुर कल्याणसिंहजी शेखावत, बी० ए०, खाचरियावास, जयपुर।

४—कविया चारण मुरारिदानजी, साँडियों का टीबा, जयपुर।

५—पुरोहित हरिनारायणजी, बी० ए०, सोरसी के, जयपुर।

(५) इन ट्रस्टी महाशयों में यदि किसी का स्थान किसी कारण से खाली हो जावे अथवा इंडियन ट्रस्ट एक्ट की धाराओं के अनुसार खाली समझा जाय तो उस स्थान की पूर्ति जब तक मैं जीवित रहूँगा स्वयं करूँगा और मेरे न जीवित रहने अथवा अयोग्य होने की अवस्था में यदि किसी ट्रस्टी का स्थान खाली हुआ तो उसकी पूर्ति काशी-नागरीप्रचारिणी सभा अपने वार्षिक अधिवेशन में बाकी ट्रस्टियों की सम्मति से करेगी। पर यदि वार्षिक अधिवेशन को तीन मास से अधिक विलंब हो तो उस अवस्था में उक्त सभा की प्रबंध-समिति को अधिकार होगा कि यदि वह आवश्यक समझे तो वार्षिक अधिवेशन द्वारा नियुक्त होने तक उस स्थान की पूर्ति कर दे परंतु हर अवस्था में इस बात का पूरा ध्यान रखना होगा कि एक वंश या संबंध के एक से अधिक व्यक्ति एक साथ ट्रस्टी न रह सकेंगे।

(६) जो पुस्तकें इस ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित होंगी उनका नाम "बालाबक्ष-राजपूत-चारण-पुस्तकमाला" होगा जिसमें पहले राजपूतों और चारणों के रचित प्राचीन ऐतिहासिक या काव्य ग्रंथ प्रकाशित किए जायँगे। उनके छप जाने पर अथवा उनके अभाव में किसी जातीय संप्रदाय के किसी व्यक्ति के लिखे हुए प्राचीन ऐतिहासिक ग्रंथ, ख्यात आदि छप सकेंगे जिनका संबंध राजपूतों अथवा चारणों से होगा।

(७) इस पुस्तकमाला की प्रत्येक पुस्तक के आदि में दाता ( बारहट बालाबक्ष जी ) का चित्र रहेगा।

(८) इस पुस्तकमाला की बिक्री से जो आय होगी वह भी इसी पुस्तकमाला के प्रकाशित करने में व्यय की जायगी परंतु प्रबंध के व्यय के लिये इसमें से १२॥) सैकड़े सभा के साधारण कोश में जमा किया जायगा।

(९) हर वर्ष यथासंभव कम से कम एक पुस्तक प्रकाशित की जायगी और उसका मूल्य जो कुछ उसके संबंध में व्यय होगा उससे दुगुने से अधिक न रखा जायगा।

(१०) यदि किसी समय मूलधन के अतिरिक्त इस पुस्तकमाला के हिसाब में १०००) वा इससे अधिक बच रहेगा, और वह एक वर्ष से अधिक समय तक इस कार्य में व्यय न हो सकेगा तो उसमें एक सहस्र वा उससे अधिक जितना काशी-नागरीप्रचारिणी सभा की प्रबंध-समिति उचित समझे मूलधन में संमिलित कर दिया जायगा और इसी प्रकार से समय समय पर जब जब ऐसी अवस्था उपस्थित होती रहेगी तब तब ऐसा ही किया जायगा और संमिलित धन की कुल आय इस कार्य में लगाई जायगी तथा मैं या अन्य कोई जो कुछ दान इस कार्य के लिये देगा वह भी मूलधन में संमिलित किया जायगा।

(११) काशी-नागरीप्रचारिणी सभा की प्रबंध-समिति को पूर्ण अधिकार होगा कि इस पुस्तकमाला की पुस्तकों को लिखवाने, छपवाने तथा बेचने आदि का सब प्रबंध करे किंतु यह आवश्यक होगा कि पुस्तक के विषय के संबंध में ट्रस्टियों की संमति ले ले। यदि एक मास तक ट्रस्टी महाशयों अथवा उनमें से किसी एक की संमति प्राप्त न हो तो उस अवस्था में सभा के निश्चय की ही प्रधानता रहेगी और यदि ट्रस्टी महाशय संमति में एकमत न हों तो जिस ओर अधिक संमति होगी वही मानी जायगी और उसी के अनुसार कार्य होगा।

(१२) इस ट्रस्ट का वार्षिक चिट्ठा ट्रस्टियों के पास सभा का वर्ष समाप्त होने के पश्चात् एक मास के भीतर भेज दिया जायगा और उसका विवरण उनकी संमति के साथ सभा के वार्षिक विवरण में प्रकाशित हुआ करेगा।

(१३) यदि कभी इंडियन ट्रस्ट ऐक्ट की धाराओं के अनुसार न्यायाधीश की संमति लेने की आवश्यकता होगी तो वह संमति काशी के जज महोदय से ली जायगी।

(१४) यदि किसी समय काशी-नागरीप्रचारिणी सभा टूट जाय तो ट्रस्टियों को अधिकार होगा कि वे इस ट्रस्ट की समस्त संपत्ति को किसी दूसरी उपयुक्त संस्था को इस ट्रस्ट के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये इन्हीं नियमों पर दे दें। यदि काशी-नागरीप्रचारिणी सभा इस ट्रस्ट के नियमों के अनुसार कोई ग्रंथ निरंतर तीन वर्ष तक प्रकाशित न करे और इसका संतोषजनक कारण न बता सके तो मेरी जीवित अवस्था में मुझे और मेरे पीछे ट्रस्टियों को अधिकार होगा कि इस कार्य के लिये कोई दूसरा उपयुक्त प्रबंध करें जिसमें इस ट्रस्ट का उद्देश्य सफल हो।

(१५) इस ट्रस्ट के इन ऊपर लिखे नियमों के साथ प्रबंध करने का भार काशी-नागरीप्रचारिणी सभा ने अपनी प्रबंधकारिणी समिति को तारीख २६ सितंबर सन् १६२२ ई० के अधिवेशन में लेना स्वीकार किया है।

हस्ताक्षर बारहट बालाबक्ष गाँव हणूतिया का २०-११-१६२२। हस्ताक्षर नरेंद्रसिंह खंगारोत जोबनेर। हस्ताक्षर अमरसिंह, काणोता।"

## ७—देव-पुरस्कार ग्रंथावली

श्री वीरेंद्र केशव साहित्य परिषद् ओड़छा की देव-पुरस्कार-समिति ने इस ग्रंथावली के नाम से उच्च कोटि की साहित्यिक पुस्तकें प्रकाशित करने के लिये

सं० १९९५ में सभा को १०००) दिया था। इसके संबंध में उक्त परिषद् का जो पत्र सभा की प्रबंध-समिति के २० कार्त्तिक, सं० १९९५ के अधिवेशन में स्वीकृत हुआ था वह इस प्रकार है—

"श्री वीरेंद्र-केशव-साहित्य परिषद्, ओरछा राज्य, टीकमगढ़, बुंदेलखंड। देवपुरस्कार विभाग, पत्र-संख्या ८१२ बतारीख २२ अक्टूबर १९३८।

प्रिय महोदय,

आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि देव-पुरस्कार-समिति ने वि० सं० १९९४ के देवपुरस्कार के द्रव्य में से एक हजार रुपया नागरीप्रचारिणी सभा, काशी, को प्रकाशन-कार्य के लिये देने का निश्चय किया है। आपको यह स्मरण होगा कि देव-पुरस्कार के उपनियम ८* के अनुसार उक्त पुरस्कार किसी लेखक को नहीं मिल सका था।

आशा है, निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखते हुए शीघ्र ही आप नागरीप्रचारिणी सभा की स्वीकृति भेजने की कृपा करेंगे, जिससे शीघ्र ही रुपया सेवा में भेजा जा सके।

१—देव-पुरस्कार के उपनियम १०† के अनुसार यह द्रव्य उत्तम साहित्य के प्रकाशन में व्यय किया जाय।

२—देव-पुरस्कार ग्रंथावली के नाम से पुस्तकें प्रकाशित की जायँ तथा पुस्तकों की बिक्री आदि से जो लाभ हो वह इसी ग्रंथावली में लगाया जाय।

३—इसके आय-व्यय का हिसाब अलग रखा जाय तथा श्री वीरेंद्र-केशव-साहित्य-परिषद् को भी हिसाब भेजा जाय।

४—पुस्तकें प्रकाशित कराने के पूर्व श्री वीरद्र केशव-साहित्य-परिषद् की भी संमति ले ली जाया करे।

विनीत

(ह०) मिथिलाप्रसाद गोस्वामी बी० ए०, एल्-एल० बी०, प्रधान मंत्री

श्री वीरेंद्र-केशव-साहित्य-परिषद्

इस धन से यह ग्रंथावली प्रकाशित की जा रही है। इसमें उत्तम कोटि के साहित्य और कला आदि की पुस्तकें प्रकाशित होती हैं। अब तक इस ग्रंथावली में श्री राय कृष्णदास लिखित दो महत्त्वपूर्ण पुस्तकें 'भारतीय मूर्तिकला' और 'भारत की चित्रकला' प्रकाशित हो चुकी हैं।

### ८—श्रीमती रुक्मिणी तिवारी पुस्तकमाला

सभा के पुराने सभासद् अजमेर के स्वर्गवासी राय साहब श्री चंद्रिकाप्रसाद तिवारी की सुपुत्री श्रीमती रामदुलारी दुबे ने अपनी स्वर्गीया माता की स्मृति में उन्हीं के नाम से महिलाओं और शिशुओं के लिये एक उपयोगी पुस्तकमाला निकालने के लिये सं० १९९७ में सभा को २०००) प्रदान करने का वचन दिया था, जिसमें १००) तो उसी वर्ष और शेष १०००) सं० १९९८ में सभा को मिल गया। अभी तक इस माला में कोई पुस्तक प्रकाशित नहीं हो सकी।

---

* उपनियम ८—पुरस्कृत होनेवाली पुस्तक के लिये यह आवश्यक है कि निर्णायकों द्वारा दिए गए अंकों के जोड़ का औसत कम से कम ७५ प्रतिशत हो।

† उपनियम १०—यदि किसी वर्ष पुरस्कार योग्य कोई पुस्तक प्राप्त न होगी तो उस वर्ष की पुरस्कार की निधि को हिंदी-साहित्य की उत्तम पुस्तकों के प्रकाशन में व्यय करने का अधिकार परिषद् को होगा और यह प्रकाशन-कार्य उसी वर्ष के भीतर हो जायगा।

## ९—श्री रामविलास पोद्दार स्मारक ग्रंथमाला

नवलगढ़ ( राजपूताना ) की श्री रामविलास पोद्दार-स्मारक-समिति ने अपने द्वारा संचालित श्री रामविलास पोद्दार-स्मारक-ग्रंथमाला का प्रबंध सं० १९९८ से सभा को सौंप दिया है। इस ग्रंथमाला के संचालन के लिये इस समिति ने दस वर्ष तक सभा को २००) वार्षिक सहायता देना स्वीकार किया है, जिसमें से ४००) सभा को प्राप्त हो चुके हैं। इस ग्रंथमाला में समिति द्वारा प्रकाशित निम्नलिखित पुस्तकें भी बिक्री के लिये सभा में आ गई हैं।

( १ ) संस्कृत साहित्य का इतिहास भाग १, लेखक—श्री कन्हैयालाल पोद्दार

( २ ) संस्कृत साहित्य का इतिहास भाग २, लेखक-श्री कन्हैयालाल पोद्दार

( ३ ) अमर जीवन की ओर, अनुवादक—श्री शिवप्रसाद सिंह विश्वेन

इनकी बिक्री से जो आय होगी, वह भी इसी ग्रंथमाला की उन्नति में लगाई जायगी।

## १०-श्री महेंदुलाल गर्ग विज्ञान ग्रंथावली

युक्त प्रांत के कृषि-विभाग के भूतपूर्व डिप्टी डाइरेक्टर और कानपुर-कृषि महाविद्यालय के वर्तमान आचार्य श्री प्यारेलाल गर्ग ने हिंदी के पुराने और प्रतिष्ठित लेखक अपने स्वर्गवासी पिता डाक्टर महेंदुलाल गर्ग की स्मृति में उन्हीं के नाम से उक्त ग्रंथावली प्रकाशित करने के लिये सभा को १०००) देने का निश्चय किया था, जिसमें ५००) सं० १९९८ में और शेष ५००) सं० १९९९ में प्राप्त हुए। दाता महोदय द्वारा संपादित 'कृषि-शब्दावली' इस माला की प्रथम पुस्तक होगी जो प्रायः तैयार है।

## ११-नव भारत ग्रंथमाला

कलकत्ते के ख्यातनामा व्यापारी श्री सेठ बाबूलाल राजगढ़िया के दान से सं० १९९९ में इस ग्रंथ माला की स्थापना हुई। श्री राजगढ़िया जी ने इस कार्य के लिये सभा को १००१) प्रदान किया है और अन्य श्रीमानों से सहायता दिलाने का भी आश्वासन दिया है। इस माला में जो पुस्तक जिस दाता की आर्थिक सहायता से छपेगी, उस पर उस दाता का नाम रहा करेगा। पुस्तकों की बिक्री आदि से होनेवाली माला की आय भी माला की ही संपुष्टि में लगाई जायगी। इस वर्ष इस माला में स्वर्गीय डाक्टर काशीप्रसाद जायसवाल कृत 'हिंदू पालिटी' का अनुवाद 'हिंदू-राज्य-तंत्र' ( दूसरा खंड ) के नाम से प्रकाशित हुआ है।

## १२—महिला-पुस्तकमाला

संवत् १९६१ के माघ मास में भिनगा के राजा साहब ने सभा को एक पत्र लिखकर स्त्री-शिक्षा की उत्तम पुस्तक तैयार करके प्रकाशित करने के लिये ३००) की सहायता देने की इच्छा प्रकट की थी। सभा ने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। इस पुस्तक के संपादन का भार श्री श्यामसुंदरदास को सौंपा गया और उनको इस विषय में परामर्श देने के लिये सर्वश्री रामनारायण मिश्र, राधाकृष्णदास और माधवप्रसाद चुने गए। आगामी वर्ष सं० १९६२ में यह पुस्तक छपकर प्रकाशित हो गई और इसका नाम वनिता-विनोद रखा गया। इस पुस्तक में विभिन्न बारह लेखकों के स्त्री-शिक्षा संबंधी सोलह लेख रखे गए थे। इसके प्रकाशित करने में ५००) व्यय हुए जिनमें ३००) भिनगा-नरेश से प्राप्त हुए और शेष सभा ने लगाए।

वनिता-विनोद का बहुत आदर हुआ। बँगला में भी इसका अनुवाद निकला। इससे उत्साहित होकर सभा ने समय समय पर महिलोपयोगी और भी कई पुस्तकें प्रकाशित कीं। अब तक इस माला के अंतर्गत सात पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं जिनकी सूची परिशिष्ट में दी गई है।

## १३—प्रकीर्णक पुस्तकमाला

इस पुस्तकमाला के लिये कोई निधि जमा नहीं है। इस माला की पुस्तकें सभा अपने धन से प्रकाशित करती है। आरंभ से अब तक इसमें ६२ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। इस माला के लिये कोई निर्धारित विषय भी नहीं है। सभा की नीति के अविरुद्ध हिंदी की कोई भी उत्कृष्ट पुस्तक इस माला के अंतर्गत प्रकाशित हो सकती है। पुस्तकों की सूची परिशिष्ट में दी गई है।

## १४—सत्य ज्ञान पुस्तकमाला

इसमें सब पुस्तकें श्री स्वामी सत्यदेव परिव्राजक रचित हैं। स्वामीजी ने इस पुस्तकमाला की स्थापना अपने ही उद्योग से की थी और पौष संवत् २००० तक स्वयं ही इसका संचालन करते रहे। १५ पौष को उन्होंने काशी नागरीप्रचारिणी सभा को नीचे लिखा पत्र लिखकर उक्त पुस्तकमाला की समस्त हिंदी-पुस्तकों का सर्वाधिकार दे दिया।

"श्रीयुत मंत्री, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

महाशय,

मैं अपनी सब पुस्तकों को जिनकी सूची इस पत्र के साथ है और उनका कुल कापीराइट नागरीप्रचारिणी सभा को भेंट करता हूँ। सभा इन पुस्तकों को बेंचकर उससे जो आय हो उसको इन्हीं पुस्तकों के प्रकाशन पर व्यय करेगी और भविष्य में भी इन पुस्तकों के प्रकाशन का अधिकार सभा को ही होगा।

भवदीय—

ता० २६-११-४३ (ह०) सत्यदेव"

## ५—अभिनंदन ग्रंथ

सभा की यह परंपरा आरंभ से ही चली आती है कि वह समय समय पर हिंदी के गण्य-मान्य साहित्य-सेवियों और विद्वानों का अभिनंदन करती रही है। सभा की ओर से अब तक अनेक विद्वानों को अभिनंदन पत्र भेंट किए जा चुके हैं। इनमें सभी विद्वान् ऐसे हैं जो हिंदी के अनन्य भक्त और साहित्य के स्तंभ कहे जा सकते हैं। इनके अतिरिक्त हिंदी की सहायता करने और उसके साथ प्रेम और सहानुभूति रखनेवाले सरकारी पदाधिकारियों का भी सभा ने कई बार अभिनंदन किया है। किंतु अपने इस संपूर्ण जीवनकाल में सभा ने अभिनंदनग्रंथ दो ही प्रकाशित किए हैं। एक तो 'कोशोत्सव-स्मारक-संग्रह' के रूप में, जिसकी चर्चा 'शब्दकोश' शीर्षक के अंतर्गत ऊपर की जा चुकी है, और दूसरा 'द्विवेदी-अभिनंदन-ग्रंथ'। संवत् १९८८ में आचार्य महावीर-प्रसाद द्विवेदी कुछ घंटों के लिये काशी पधारे थे। उस समय सभा की ओर से उन्हें एक अभिनंदनपत्र दिया गया था। उनके चले जाने के कई दिन बाद श्री शिवपूजनसहाय ने सभा के प्रधान मंत्री श्री राय कृष्णदास से चर्चा की कि सभा को केवल मान-पत्र देकर ही न रह जाना चाहिए, आचार्य के अभिनंदनार्थ एक सुंदर ग्रंथ भी निकालना चाहिए। इसके लिये उपयुक्त अवसर भी आ रहा था। संवत् १९९० के वैशाख में वे सत्तरवें वर्ष में पदार्पण

करनेवाले थे। इसलिये सभा को उक्त प्रस्ताव सामयिक और ठीक प्रतीत हुआ। उसने इसको कार्यान्वित करने का निश्चय कर उद्योग आरंभ कर दिया। इसके लिये विद्वानों तथा साहित्यिकों से उनकी रचनाएँ और प्रमुख चित्रकारों से उनके चित्र भेजने की प्रार्थना की गई। समाचारपत्रों में भी इसकी चर्चा आरंभ हुई और इस प्रस्ताव का सब ओर से अच्छा स्वागत हुआ तथा सभा के इस महत् स्वप्न को सफल बनाने में सभी हिंदी-प्रेमियों ने उसका हाथ बँटाया। महापुरुषों ने शुभ कामनाएँ भेजीं, श्रीमानों ने आर्थिक सहायता दी और देश-विदेश के विद्वान् साहित्यिकों ने अपनी उत्कृष्ट रचनाएँ भेजीं। यहाँ तक कि महात्मा *गांधी ने भी इस ग्रंथ के लिये शुभ कामना का संदेश भेजा था। सर्वश्री नूट हायजून ( नारवे के नोबुल प्राइज विजेता साहित्यिक ), सर जार्ज ग्रियर्सन, डाक्टर थियोडोर वन विंटरस्टीन,* ( जर्मनी के इंडिया इंस्टिट्यूट के संस्थापक और अध्यक्ष ) और भाई परमानंद जैसे महानुभावों ने सद्भावना के संदेश भेजे थे ।

इस कार्य के लिये सभा को जो आर्थिक सहायता प्राप्त हुई वह इस प्रकार है—

सर्वश्री सरगुजा-नरेश ३००), एक श्रीमती १००), श्रीमान् बीकानेर-नरेश १००), झालावाड़-नरेश ५१), प्रतापगढ़-नरेश ५०), खिलचीपुर-नरेश २५), बनेड़ा-नरेश २५), हनुमानप्रसाद पोद्दार ११), विरजानंद पोद्दार ५), रामरछपाल संघी २)।

किंतु आवश्यकता अधिक थी। उसका एक बहुत बड़ा अंश इंडियन प्रेस के स्वामी श्री हरिकेशव घोष ने अपने ऊपर ले लिया। उन्होंने हमारे इस सचित्र ग्रंथ को लागत मात्र पर छाप देने की कृपा की। सभा ने यह भी निश्चय किया कि द्विवेदीजी के भक्त इस ग्रंथ के प्रकाशन के संबंध में ३०) सहायता स्वरूप देकर इसके प्रतिष्ठापक बन जायँ और प्रत्येक को ग्रंथ की एक प्रति भेंट की जाय। इसमें भी सभा को सफलता मिली और चौवालीस सज्जनों ने प्रतिष्ठापक बनकर १३२०) की सहायता सभा को प्रदान की।

सभा ने इस ग्रंथ के संपादन का भार सर्वश्री श्यामसुंदरदास और राय कृष्णदास को सौंपा था। उनके संपादकत्व में बड़ी सज-धज के साथ यह ग्रंथ प्रकाशित हुआ।

११ वैशाख, सं० १९९० ( २ मई, १९३३ ई० ) को आचार्य द्विवेदी जी की ७०वीं वर्षगाँठ के अवसर पर उनकी अपूर्व हिंदी-सेवाओं का ध्यान रखते हुए उनके प्रति संमान-प्रदर्शनार्थ ओड़छा-नरेश महाराज सवाई महेंद्र वीरसिंह जू देव के सभापतित्व में सभा में अभिनंदनोत्सव मनाया गया। इस अवसर पर जो समारोह हुआ था उसमें सभा के बहुसंख्यक सभासदों के अतिरिक्त विविध प्रांतों के साहित्यकार तथा प्रतिष्ठित हिंदीप्रेमी भी एकत्र हुए थे। यह समारोह दो दिनों तक रहा। आचार्य द्विवेदीजी को द्विवेदी-अभिनंदन-ग्रंथ नाम का ६०० पृष्ठों का उक्त नयनाभिराम ग्रंथ समर्पित किया गया जिसमें हिंदी तथा अन्य भाषाओं के सुविख्यात विद्वानों के १०० निबंध तथा कविताएँ, श्रद्धांजलियाँ और २३ चित्र दिए गए थे।

इस अभिनंदनोत्सव के दूसरे दिन प्रयाग में द्विवेदी-मेले का भी समारोह हुआ जिसका उद्घाटन पंडित मदनमोहन मालवीयजी ने किया था तथा जिसके सभापति डाक्टर गंगानाथ झा थे। यह मेला प्रयाग की हिंदी-प्रेमी जनता की ओर से हुआ था जिसमें हिंदी के अनेक विद्वान् लेखक और प्रेमी एकत्र हुए थे।

## ६—'हिंदी'

हिंदी-भाषा और नागरी-लिपि के प्रचार और उस पर अनेक ओर से होनेवाले आघातों से उसकी रक्षा करने के उद्देश्य से सभा ने संवत् १९९७ में 'हिंदी' नाम की एक मासिक पत्रिका अपने तत्त्वावधान में प्रकाशित करने की स्वीकृति दी थी। सभा ने उसकी आर्थिक व्यवस्था से अपना कोई संबंध नहीं रखा और न उसकी नीति का ही उत्तरदायित्व ग्रहण किया। उसके संपादक, प्रकाशक और मुद्रक श्री चंद्रबली पांडे हैं और उसकी व्यवस्था तथा नीति की देख-रेख भी वही करते हैं। उन्होंने उसके प्रकाशित करने का उद्देश्य बताते हुए लिखा था—

"'हिंदी' आपसे कहना चाहती है कि सभ्य संसार में सभ्यता की सच्ची थाती आपके पास है, यह दिखा देना चाहती है कि इस पुण्यभूमि की वही वाणी है, उसी में इस राष्ट्र की आत्मा का निवास है। उसके विनाश और देश को रसातल भेजने के जो प्रकट और प्रच्छन्न चक्र चल रहे हैं यदि उनकी जानकारी आवश्यक है और अपने राष्ट्र और अपने स्वत्व की रक्षा यदि वांछनीय है तो कोई कारण नहीं कि इस संकटकाल में हम अपने देवांश योग से एक नव-शक्ति का सृजन न करें और उसके द्वारा मृत प्राणों में जीवन की ज्योति फूँककर सचेत न कर दें। 'हिंदी' और कुछ नहीं, उसी नशक्ति की वाणी है जो चिरंतन और नित्य है। 'हिंदी' का जन्म आपको जगाने के लिये हुआ है। 'हिंदी' राजनीति को लेकर नहीं आई है। वह तो लोक-हृदय की वाणी है और उसी को सजग एवं संपन्न करने के लिये अवतरित हुई है। वह उसी प्रकार हिंदी के व्यापक हृदय को व्यक्त करना चाहती है जिस प्रकार विश्व की अन्य शिष्ट भाषाएँ अपने लोक-हृदय को व्यक्त कर रही हैं। उसके सामने संप्रदाय नहीं, समूचा हिंद है। वह हिंद में अन्य देशभाषाओं के साथ समस्त जीवों के योग से पनपी है और आज भी सब को अपना अंग समझती है। 'हिंदी' इसको कर दिखाना चाहती है। हिंदी भेद-भाव का नहीं, योग का नाम है। जो उसे बनावटी बताने का कष्ट करते हैं उनके बनावटी हृदय को खोल दिखाना इस 'हिंदी' का काम है।"

'हिंदी' अपने उक्त उद्देश्य की पूर्त्ति बड़ी सफलता के साथ कर रही है। अभी उसकी आयु तीन ही वर्ष की है पर इस अल्पकाल में ही अपनी सेवाओं द्वारा उसने यथेष्ट लोकप्रियता प्राप्त की है जिसका श्रेय उसके संपादक एवं उन अनेक सज्जनों को है जिन्होंने समय समय पर उपयुक्त लेख, समाचार, सूचनाएँ आदि भेजकर इस कार्य में उनका हाथ बँटाया है।

भारत में 'हिंदी' का वार्षिक मूल्य ॥) रखा गया था, जिसके कारण आरंभ से ही इसके प्रकाशन में घाटा रहा है। संवत् १९९८ में कलकत्ते के सेठ श्री लक्ष्मीनिवास बिड़ला ने 'हिंदी' के लिये ५००) प्रदान करने की कृपा की। इंडियन प्रेस इस पत्रिका का मुद्रण बिना मूल्य करता है। प्रेस की इस सहायता से ही 'हिंदी' का प्रकाशन संभव हुआ है।

इन वर्षों में हिंदी की अब तक ३५ संख्याएँ निकल चुकी हैं। आर्थिक कठिनाई के कारण सं० १९९९ से उसका वार्षिक मूल्य ॥) से ॥।) कर दिया गया है।

## १३—'सरस्वती'

सभा का इतिहास हमें बताता है कि अपने जन्म-काल से अब तक सभा ने जब जब और जो जो कार्य अपने हाथ में लिए उनमें उसे आशातीत सफलता प्राप्त हुई और आगे चलकर उन कार्यों से हिंदी की बहुत बड़ी सेवा हुई और प्रतिष्ठा बढ़ी। हिंदी जगत् में 'सरस्वती' अपने ढंग की सबसे प्राचीन मासिक पत्रिका है। जिस प्रकार इसके स्वनाम धन्य संपादक आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी हिंदी में एक नवीन युग के प्रवर्त्तक कहलाते हैं उसी प्रकार मासिक पत्रिकाओं के जगत् में सरस्वती ने भी एक नवीन युग का प्रवर्त्तन किया था। मासिक पत्रिकाओं में सरस्वती का स्थान बहुत ऊँचा रहा है। किंतु यह बात कितने व्यक्ति जानते हैं कि इस 'सरस्वती' की स्थापना भी सभा के ही अनुमोदन पर उसी की सहायता और उसी के हाथों से हुई है? संवत् १९५६ में इंडियन प्रेस के स्वामी का (२० अगस्त १८९९ ई० का) एक पत्र ५ भाद्रपद, सं० १९५६ की प्रबंध-समिति की बैठक में उपस्थित किया गया था जिसमें एक सचित्र मासिक पत्र निकालने के संबंध में सभा की संमति और सहायता के लिये प्रार्थना की गई थी। उस दिन यह पत्र आगामी बैठक में उपस्थित करने के लिये स्थगित कर दिया गया। २६ भाद्रपद, सं० १९५६ की बैठक में वह पत्र पुनः उपस्थित किए जाने पर निश्चय हुआ कि "सभा इंडियन प्रेस को संमति देती है कि वह उस पत्र को अवश्य निकाले क्योंकि उससे भाषा के उपकार की संभावना है।" १४ मार्गशीर्ष, सं० १९५६ की प्रबंधसमिति में इंडियन प्रेस के स्वामी का दूसरा पत्र इस संबंध में उपस्थित किया गया जिसमें उन्होंने सभा को इसका संपादन-भार सौंपने की बात लिखी थी। यह प्रस्ताव पहले पत्र में भी किया गया था किंतु उस समय सभा ने उसे स्वीकार नहीं किया था। इंडियन प्रेस के बार बार अनुरोध करने पर उसने अपनी उक्त बैठक में उक्त पत्रिका के लिये सर्वश्री श्यामसुंदरदास, राधाकृष्णदास, जगन्नाथदास 'रत्नाकर', कार्त्तिकप्रसाद और किशोरीलाल गोस्वामी—इन पाँच विद्वानों की एक संपादक-समिति नियत कर दी। इसी समिति के संपादकत्व में सभा के अनुमोदन पर संवत् १९५६ (जनवरी १९०० ई०) में इंडियन प्रेस से 'सरस्वती' प्रकाशित हुई। उसके मुखपृष्ठ पर 'काशी-नागरीप्रचारिणी सभा के अनुमोदन से प्रतिष्ठित' छपा रहता था और संपादक-समिति के सदस्यों के नाम इस क्रम से दिए जाते थे—

"संपादक-समिति

(१) बा० कार्त्तिकप्रसाद खत्री

(२) पं० किशोरीलाल गोस्वामी

(३) बा० जगन्नाथदास बी० ए०

(४) बा० राधाकृष्णदास

(५) बा० श्यामसुंदरदास बी० ए०"

सर्वप्रथम अंक का सबसे पहला लेख संपादक-समिति द्वारा लिखित 'भूमिका' और दूसरा लेख 'भारतेंदु हरिश्चंद्र' था जो पाँचवीं संख्या तक क्रमशः प्रकाशित होकर समाप्त हुआ था। भूमिका में संपादक-समिति की ओर से कहा गया था—

"परम कारुणिक सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर की अशेष अनुकंपा ही से ऐसा अनुपम अवसर आकर प्राप्त हुआ है कि आज हम लोग हिंदी भाषा के रसिक जनों की सेवा में नए उत्साह से उत्साहित हो एक नवीन उपहार लेकर उपस्थित हुए हैं जिसका नाम

सरस्वती

है। भरत मुनि के इस महावाक्यानुसार कि 'सरस्वती श्रुति महती न हीयताम्', अर्थात् सरस्वती ऐसी महती श्रुति है कि जिसका कभी नाश नहीं होता, यह निश्चय प्रतीत होता है कि यदि हिंदी के सच्चे सहायक और उससे सच्ची सहानुभूति रखनेवाले सहृदय हितैषियों ने इसे समुचित आदर और अनुरागपूर्वक ग्रहण कर यथोचित आश्रय दिया तो अवश्यमेव यह दीर्घजीविनी होकर निज कर्तव्य-पालन से हिंदी की समुज्ज्वल कीर्ति को अचल और दिगंतव्यापिनी तथा स्थायी करने में समर्थ होगी।

"यद्यपि हम लोग महाकवि कालिदास के कथनानुसार वामन होकर उत्तुंग-शाखास्थित महाफल के प्राप्त करने की अभिलाषा करते हुए जन-समाज में हास्यास्पद होने का उपक्रम करते हैं, किंतु तो भी क्या हम लोगों की ऐसी चपलता कि जिसके मूल में नए उद्योग, उत्साह, उपकारिता और कार्यतत्परता की सुहावनी सुगंधि सनी हुई है, उदारचरित रसज्ञों और समदर्शी सहयोगियों के क्षमा करने, सराहने और उत्तेजना देने योग्य न समझी जायगी? तो फिर हिंदी के उत्साहियों, हितैषियों, उन्नायकों, रसज्ञों और सहयोगियों से ऐसी अखंडनीय आशा क्यों न की जाय कि वे लोग सब प्रकार से अपनी बाहुलता की शीतल छाया में इस नवीन बालिका को आश्रय देने में कदापि पराङ्मुख न होंगे कि जिनके सम्मुख आज यह अपने नए रंग-ढंग, नए वेश-विन्यास, नए उद्योग-उत्साह और नई मनोमोहिनी छटा से उपस्थित हुई है।

"इसके नव जीवन धारण करने का केवल यही मुख्य उद्देश्य है कि हिंदी-रसिकों के मनोरंजन के साथ ही साथ भाषा के सरस्वती-भंडार की अंगपुष्टि, वृद्धि और यथायथ पूर्ति हो तथा भाषा-सुलेखकों की ललित लेखनी उत्साहित और उत्तेजित होकर विविध भावभरित ग्रंथराजि को प्रसव करे और इस पत्रिका में कौन कौन से

विषय

रहेंगे, यह केवल इसी से अनुमान करना चाहिए कि इसका नाम सरस्वती है। इसमें गद्य, पद्य, काव्य, नाटक, उपन्यास, चंपू, इतिहास, जीवनचरित, पंच, हास्य, परिहास, कौतुक, पुरावृत्त, विज्ञान, शिल्प, कला-कौशल आदि साहित्य के यावतीय विषयों का यथावकाश समावेश रहेगा और आगत ग्रंथादिकों की यथोचित समालोचना की जायगी। यह हम लोग निज मुख से नहीं कह सकते कि भाषा में यह पत्रिका अपने ढंग की प्रथम होगी, किंतु हाँ, सहृदयों की समुचित सहायता और सहयोगियों की सच्ची सहानुभूति हुई तो अवश्य यह अपने कर्त्तव्य-पालन में सफल मनोरथ होने का यथाशक्य उद्योग करने में शिथिलता न करेगी। इससे

लाभ

केवल यही सोचा गया है कि सुलेखकों की लेखनी स्फुरित हो जिससे हिंदी की अंगपुष्टि और उन्नति हो। इसके व्यतिरिक्त हम लोगों का यह भी दृढ़ विचार है कि यदि इस पत्रिका संबंधीय सब प्रकार का व्यय

देकर कुछ भी लाभ हुआ तो इसके लेखकों की हम लोग उचित सेवा करने में किसी प्रकार की त्रुटि न करेंगे। आशा है कि हिंदी पठित-समाज इस पत्रिका पर कृपा दृष्टि बनाए रहेंगे और हम लोगों को निज कर्त्तव्य-पालन में यथाशक्ति पूर्ण सहायता देंगे।"

प्रथम वर्ष में 'सरस्वती' का संपादन उक्त संपादक-समिति करती रही। दूसरे वर्ष से सभा ने यह कार्य अकेले श्री श्यामसुंदरदास को सौंप दिया जो तीसरे वर्ष तक 'सरस्वती' का संपादन बड़ी सफलता के साथ करते रहे। संवत् १९५९ में चौथे वर्ष (जनवरी, १९०३) से श्री महावीरप्रसाद द्विवेदी उसके संपादक नियत हुए। सभा ने इस नियुक्ति पर विशेष प्रसन्नता प्रकट की। इस परिवर्तन के संबंध में श्री श्यामसुंदरदास ने अपने संपादकत्व में प्रकाशित होनेवाली अंतिम संख्या (वर्ष ३—संख्या १२) के आरंभ में लिखा था—"इस परिवर्तन का मुख्य कारण यह हुआ कि मैं समय के अभाव से सरस्वती के संपादन में इतना दत्तचित्त न रह सका जितना कि मुझे होना उचित था। इसलिये केवल नाम के लिये संपादक बना रहना मैंने उचित नहीं समझा।" द्विवेदीजी के अपने संपादकत्व में प्रकाशित होनेवाली प्रथम संख्या (वर्ष ४–संख्या १) के प्रथम पृष्ठ पर उनका सबसे पहला नोट इस प्रकार छपा था—

"जिन्होंने बाल्यकाल ही से अपनी मातृभाषा हिंदी में अनुराग प्रकट किया; जिनके उत्साह और अश्रांत श्रम से नागरीप्रचारिणी सभा की इतनी उन्नति हुई; हिंदी की दशा को सुधारने के लिये जिनके उद्योग को देखकर सहस्रशः साधुवाद दिये बिना नहीं रहा जाता; जिन्होंने विगत दो वर्षों में, इस पत्रिका के संपादन-कार्य को बड़ी ही योग्यता से निबाहा, उन विद्वान् बाबू श्यामसुंदरदास के चित्र को, इस वर्ष आदि में प्रकाशित करके, सरस्वती अपनी कृतज्ञता प्रदर्शित करती है।"

द्विवेदीजी के संपादकत्व में भी तीन वर्ष (सन् १९०३ से १९०५) तक 'सरस्वती' का संबंध सभा से पूर्ववत् ही बना रहा। उसके बाद टूट गया। सभा के बारहवें वार्षिक विवरण में इस संबंध में कहा गया था—

"सरस्वती में सब प्रकार के लोगों की रुचि के अनुसार सरल भाषा में लेखों के रहने से उसका आदर दिन दिन बढ़ता जाता है। सभा को दुःख है कि सरस्वती के प्रकाशक ने उसमें अपवादपूर्ण लेखों का रोकना उचित न जानकर सभा से अपना संबंध तोड़ना उचित समझा। परंतु सभा को विश्वास है कि इस पत्रिका द्वारा हिंदी का हित निरंतर साधन होता रहेगा।"

———

# १४—हिंदी-साहित्य-संमेलन

आज हिंदी-साहित्य-संमेलन हिंदी-प्रचार का कार्य करनेवाली सर्वप्रधान संस्था है। हिंदी-प्रचार, साहित्य-सेवा और अपनी परीक्षाओं के लिये वह समस्त भारतवर्ष में पर्याप्त ख्याति प्राप्त कर चुका है। उसकी परीक्षाओं ने लोकप्रियता के साथ साथ सरकार से भी संमान प्राप्त किया है। भारत भर में इन परीक्षाओं के केंद्र स्थापित हैं। संमेलन की शाखाएँ भी समस्त भारतवर्ष में फैली हुई हैं। प्रयाग में उसका अपना भवन है और श्री पुरुषोत्तमदास टंडन और प्रोफेसर अमरनाथ झा जैसे प्रतिष्ठित सज्जनों और प्रसिद्ध विद्वानों के हाथ में इसका संचालन-सूत्र रहता है। किंतु इस बात को संभवतः सब लोग नहीं जानते कि हिंदी-साहित्य-संमेलन की जननी 'काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा' है।

सभा की प्रबंध-समिति ने ही सं० १९६७ में (१ मई, १९१० की) अपनी बैठक में सबसे पहले बाबू श्यामसुंदरदास के प्रस्ताव पर 'हिंदी-साहित्य-संमेलन' करने का निश्चय किया था। वह निश्चय अविकल रूप में इस प्रकार है—

"हिंदी भाषा की उन्नति के लिये हिंदी-प्रेमियों का एक संमेलन काशी में आगामी आश्विन नवरात्र में किया जाय। इसमें बाहर से जो सज्जन आवें उनके ठहरने के लिये स्थान ठीक कर दिया जाय और उनकी सुविधा के लिये वहाँ मोदियों और हलवाइयों की दूकानें रखा दी जायँ। संमेलन में किन विषयों पर विचार हो और कौन सभापति चुना जाय इसके लिये समाचारपत्रों में लेख छपवाकर हिंदी-प्रमियों से संमति ली जाय। इसके लिये एक हजार रुपयों का विशेष चंदा किया जाय और प्रबंध के लिये निम्नलिखित महाशयों की एक कमेटी बना दी जाय—

१—राय शिवप्रसाद (सभापति)
२—बाबू गौरीशंकरप्रसाद (मंत्री)
३—बाबू व्रजचंद्र (उपमंत्री)
४—बाबू बालमुकुंद वर्मा (उपमंत्री)
५—पंडित रामनारायण मिश्र
६—राय कृष्णदास
७—गोस्वामी रामपुरी
८—बाबू जयशंकरप्रसाद
९—पंडित कृष्णाराम मेहता
१०—राव गोपालदास
११—राय कृष्णचंद्र

इस कमेटी को अधिकार दिया जाय कि वह अपनी सहायता के लिये और जिन महाशयों को चाहे संमिलित कर ले। पर संख्या सब मिलाकर २१ से अधिक न हो। इस कमेटी का कोरम ५ सभासदों का होगा। यह प्रबंधकारिणी सभा के अधीन रहकर काम करेगी और संमेलन के सभापति का चुनाव प्रबंधकारिणी सभा की स्वीकृति से होगा।"

इस कार्य के लिये सभा से ५०) देना निश्चित हुआ। सभा में उस समय जो सज्जन उपस्थित थे उन्होंने भी इस कार्य के लिये चंदा दिया जो इस प्रकार है—

५०) सर्वश्री राय शिवप्रसाद
२५) श्यामसुंदरदास
२५) व्रजचंद्र
२०) गोस्वामी रामपुरी
१५) कृष्णाराम मेहता
१०) गौरीशंकरप्रसाद
१०) जुगलकिशोर
१०) सुरेंद्रनारायण शर्मा
१०) बालमुकुंद वर्मा
१) गोपालदास

उन दिनों सभा के इस निश्चय के कुछ दिन पहले से हिंदी-संसार में समाचारपत्रों द्वारा यह आंदोलन हो रहा था कि हिंदी साहित्यसेवियों का एक संमेलन होना चाहिए जिसमें हिंदी के प्रेमी एकत्र होकर उसकी उन्नति के लिये योजनाएँ बनाएँ और उन्हें कार्य में परिणत करने का उद्योग करें। इस प्रकार का प्रस्ताव पहले भी सभा में उपस्थित हुआ था। कुछ कठिनाइयों के कारण उस समय सभा ने उसे स्वीकार नहीं किया। परंतु आंदोलन बढ़ता ही गया और संमेलन करने की आवश्यकता का अनुभव दिन दिन अधिकाधिक होने लगा। निदान १८ वैशाख, १९६७ की बैठक में सभा ने हिंदी-साहित्य-संमेलन करने का उक्त निश्चय किया। इस निश्चय के अनुसार इस संबंध का एक पत्र छपवाकर हिंदीप्रेमियों और समाचारपत्रों के पास भेजा गया; उस पर संमतियाँ आइं और बहुसंमति से पूज्य श्री मदनमोहन मालवीय संमेलन के सभापति चुने गए। संमेलन उपसमिति ने सभापति पद के लिये सर्वश्री मदनमोहन मालवीय, महावीरप्रसाद द्विवेदी और गोविंदनारायण मिश्र के नाम १८ आषाढ, सं० १९६७ की प्रबंध-कारिणी सभा में उपस्थित किए थे। उसने भी मालवीयजी के लिये ही अपनी स्वीकृति दी।

इस प्रकार हिंदी-साहित्य-संमेलन का सर्वप्रथम अधिवेशन महामना मालवीयजी के सभापतित्व में २४, २५ और २६ आश्विन, सं० १९६७ (१०, ११ और १२ अक्तूबर १९१०) को धूमधाम के साथ नागरीप्रचारिणी सभा में हुआ। सभाभवन और कंपनी-बाग की भूमि दोनों को मिलाकर तीन विशाल शामियाने खड़े किए गए थे। शामियाने के नीचे ऊँची चौकी पर सभापति और प्रतिष्ठित पुरुषों के बैठने के लिये मंच बनाया गया था। सभापति के संमुख समाचारपत्रों के संवाददाता और प्रतिनिधियों का स्थान था। इसके बाद एक ओर बाहर से आए हुए सज्जनों के लिये और दूसरी ओर काशीनिवासियों के लिये कुर्सियों का प्रबंध किया गया था। सभाभवन और मंडप खूब सजाए गए थे। जनता में बड़ा उत्साह था और सभा के कार्यकर्त्ताओं को अपने सत्रह वर्ष के उद्योगों का ऐसा अच्छा परिणाम देखकर असीम आनंद हो रहा था। तीन दिन तक संमेलन का यह प्रथम अधिवेशन हिंदीप्रेमियों का एक विशाल मेला सा प्रतीत होता था। विभिन्न प्रांतों के ३०० प्रतिनिधि इसमें संमिलित हुए थे। दैनिक, अर्ध साप्ताहिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक और त्रमासिक पत्रों के ४२ संपादक और सहकारी संपादक इस अवसर पर पधारे थे। संमेलन में पैसा फंड नाम की एक निधि खोली गई थी। इस निधि में प्रत्येक उपस्थित हिंदी-प्रमी से एक पैसा देने की प्रार्थना की गई थी। इस कार्य के लिये हिंदी के शुभचिंतकों का उत्साह भी देखने ही योग्य था। उपस्थित सज्जनों में चारों ओर से पैसों की वर्षा हो रही थी। सब

मिलाकर ३५२४८-)॥ के पैसे उक्त निधि में एकत्र हुए थे।

संमेलन में पढ़े जाने के लिये अनेक विद्वानों के लेख आए थे। कितने ही विद्वान् अपने लेखों के साथ स्वयं उपस्थित हुए थे। इनमें कुछ लेख तो पढ़े जा सके और कुछ समय न मिलने के कारण रह गए। इसलिये संमेलन की स्वागतकारिणी-समिति ने सब लेखों को पुस्तकाकार छपवाकर प्रकाशित कर दिया। संमेलन के व्यय के लिये आरंभ में १०००) एकत्र करने का निश्चय हुआ था, पर हिंदी प्रेमियों के उत्साह से १०००) के स्थान पर १३४६)॥ एकत्र हुए।

इस प्रकार हिंदी-प्रेमियों के इस प्रथम मेले की आयोजना में सभा को आशातीत सफलता हुई और संमेलन सब प्रकार सफल रहा। इस सफलता से उत्साहित होकर यह संमेलन प्रतिवर्ष विभिन्न नगरों में करने का निश्चय किया गया और उसका दूसरा अधिवेशन प्रयाग में वहाँ की नागरीप्रवर्द्धिनी सभा की ओर से आगामी आश्विन में होना निश्चित हुआ। वहीं से इसे एक पृथक् अखिल भारतवर्षीय संस्था का रूप मिला। तब से अब तक काशी-नागरीप्रचारिणी सभा का यह सुपुत्र हिंदी की निरंतर सेवा कर रहा है।

सं० १९८६ में संमेलन का अट्ठाईसवाँ अधिवेशन भी काशी-नागरीप्रचारिणी सभा में ही हुआ था। इस संमेलन के सभापति श्री अंबिकाप्रसाद वाजपेयी थे और स्वागताध्यक्ष महामना श्री मदनमोहन मालवीय। इस अधिवेशन की एक विशेषता यह थी कि संमेलन के भूतपूर्व सभापतियों में से जितने इसमें उपस्थित हुए थे उतने इससे पहले कभी नहीं हुए थे। उनके नाम ये हैं—

१—महामना श्री मदनमोहन मालवीय
२—डाक्टर भगवानदास
३—रा० ब० श्री श्यामसुंदरदास
४—कविसम्राट् श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय
५—श्री पुरुषोत्तमदास टंडन
६—श्री बाबूराव विष्णु पराड़कर

———

## १५—संकेत-लिपि-शिक्षा

सभा के लिये यह एक गौरव की बात है कि उसकी स्थापना के प्रथम दो वर्षों में उसके कर्णधारों का ध्यान हिंदी के लिये प्राय: सभी उपयोगी विषयों की ओर आकृष्ट हुआ था। संवत् १९५१ में सभा ने हिंदी में त्वरित-लेख-प्रणाली के अभाव का अनुभव किया। उसने उसी वर्ष त्वरित लेख के लिये संकेत बनाने और उन्हें प्रचलित कराने का निश्चय किया। पर उस वर्ष वह कृतकार्य न हो सकी। उद्योग होता रहा। संवत् १९५५ में कुछ सफलता मिली। साहित्याचार्य श्री अंबिकादत्त व्यास ने त्वरित-लेखन के नवीन चिह्न तैयार किए। इन चिह्नों का समुचित अभ्यास करके त्वरित-लेखन-परीक्षा में उत्तीर्ण होनेवाले व्यक्ति के लिये २५) के पुरस्कार की घोषणा भी सभा ने की थी। यह व्यासजी द्वारा निर्मित चिह्नों के परीक्षण के लिये किया गया था। सभा का विचार था कि यदि परीक्षण सफल हुआ तो वह इस विषय का एक ग्रंथ प्रकाशित करेगी और इस प्रणाली के प्रचार का उद्योग भी किया जायगा। किंतु व्यासजी के रुग्ण हो जाने के कारण परीक्षण न हो सका और उनके संकेतों की बात जहाँ की तहाँ रह गई। इसके बाद संवत् १९६४ में सभा ने एक शीघ्र-लिपि-प्रणाली स्वयं तैयार कराई और श्री श्रीशचंद्र बोस से उसका संपादन कराया। उन्हीं दिनों स्व-रचित 'शीघ्र-लिपि-प्रणाली' की एक पुस्तक श्री सन्नूलाल गुप्त ने भी सभा को भेजी थी और लिखा था कि 'सभा ने इस विषय में जो पुस्तक बनवाई है उसके छपवाने के पहिले मेरी पुस्तक पर भी वह विचार करे।' सभा ने यह पुस्तक भी संमति के लिये श्री श्रीशचंद्र बोस के पास भेज दी जिनकी संमति में सभा की पुस्तक इस पुस्तक से कहीं अच्छी थी। सभा ने अपनी पुस्तक छपवाने का निश्चय किया और भारत में उसे लिथो पर भी छापने के लिये जब कोई प्रेस तैयार न हुआ तो सं० १९६५ में उसे इँगलैंड भेजा। उसी वर्ष समस्त पुस्तक का प्रूफ वहाँ से आया और देखकर शीघ्र ही लौटा दिया गया। अगले वर्ष सं० १९६६ में पुस्तक छपकर आ गई जिसका मूल्य १) रखा गया। किंतु इतना सब होने पर भी उसकी शिक्षा का समुचित प्रबंध न हो सका। कई वर्ष बाद जब कांग्रेस की प्रांतीय सरकारों द्वारा हिंदी की शीघ्र-लिपि-प्रणाली के ज्ञाताओं को प्रोत्साहन मिलने की आशा हुई तब उसकी शिक्षा के प्रबंध का पुन: उद्योग किया गया और संवत् १९९४ की विजयादशमी को संयुक्तप्रांतीय लेजिस्लेटिव एसेंबली के अध्यक्ष (स्पीकर) माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टंडन के कर-कमलों से सभा में संकेत-लिपि-शिक्षा की कक्षा का उद्घाटन कराया गया। इस कक्षा में काशी के श्री निष्कामेश्वर मिश्र बी० ए० द्वारा तैयार की हुई प्रणाली की शिक्षा का प्रबंध किया गया था क्योंकि उस समय यही प्रणाली सर्वोत्तम समझी जाती थी। कांग्रेस के अधिवेशनों में सन् १९२१ से अब तक इसी प्रणाली से पूरा विवरण लिया जाता रहा है। मिश्रजी ही कक्षा के प्रधानाध्यापक थे और उनके साथ सर्वश्री गोवर्धनदास तथा श्रीराम श्रीवास्तव बी० ए० अवैतनिक रूप से कार्य करते थे। पहले वर्ष इस कक्षा में ३० विद्यार्थियों ने नि:शुल्क शिक्षा प्राप्त की और उसी

वर्ष यहाँ के सीखे हुए दो छात्रों की नियुक्ति संयुक्त प्रांत की एसेंबली में हो गई। यहाँ की परीक्षा में उत्तीर्ण निम्नलिखित पाँच छात्रों को काशी-नरेश ने प्रमाणपत्र प्रदान किए थे—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| सर्वश्री महावीरप्रसाद - | गति | १४५ | शब्द | प्रति मिनट |
| बालकृष्ण मिश्र— | „ | १४० | „ | „ |
| विश्वनाथसिंह— | „ | १३० | „ | „ |
| देवताप्रसाद— | „ | १२५ | „ | „ |
| रामअधार सिंह— | „ | ९० | „ | „ |

शनैः शनैः इसका प्रचार बढ़ने लगा और अन्य प्रांतों के छात्र भी यहाँ आने लगे। सं० १९९५ में श्रीमती रत्नोदेवी नाम की एक महिला ने भी इसकी शिक्षा प्राप्त की।

संवत् १९९५ के पौष मास से यहाँ हिंदी टाइपराइटिंग की शिक्षा का भी प्रबंध किया गया। कलकत्ते के श्री हीरालाल एंड संन्स की कोठी से हिंदी का एक पुराना टाइपराइटर सभा को प्राप्त हुआ और वहीं के श्री ब्रजमोहन बिड़ला ने एक नया टाइपराइटर खरीदने के लिये आवश्यक धन प्रदान करने की कृपा की जिससे एक बड़ा टाइपराइटर खरीद लिया गया। हिंदी टाइपराइटिंग के विषय में लोगों की धारणा है कि मात्राओं के कारण शीघ्र गति नहीं प्राप्त होती। किंतु तीन मास तक प्रतिदिन एक घंटे के अभ्यास से ही यहाँ के विद्यार्थियों ने ३५ शब्द प्रतिमिनट की गति प्राप्त कर ली। उक्त धारणा का कारण यह है कि हिंदी टाइपराइटिंग जाननेवालों में लगभग ८५ प्रतिशत देख देखकर केवल दो उँगलियों से टाइप करते हैं। इस धारणा को दूर करने के लिये इस कक्षा के अध्यापक श्री गोवर्धनदास गुप्त ने टाइपराइटिंग की वैज्ञानिक प्रणाली पर एक पुस्तक तैयार की। उसी प्रणाली से इस कक्षा में शिक्षा दी जाती थी।

इसी वर्ष से इस कक्षा का नाम 'संकेतलिपि-विद्यालय' कर दिया गया और प्रबंध-समिति की ५ चैत्र, १९९५ की बैठक में श्री गोवर्धनदास इस विद्यालय के अवैतनिक प्रधानाध्यापक बना दिए गए। इस बैठक में इस विद्यालय के संबंध में निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकृत किए गए थे—

"१—संकेत लिपि तथा टाइपराइटिंग की शिक्षा साथ साथ कर दी जाय और दोनों के लिये अवधि छः मास से बढ़ाकर आठ मास कर दी जाय।

२—परीक्षा के लिये विद्यालय से बाहर के परीक्षक बुलाए जायँ।

३—विद्यालय के जो विद्यार्थी संकेत लिपि में १०० की गति प्राप्त कर लेने के पश्चात् एक वर्ष तक विद्यालय में अवैतनिक रूप से सफलतापूर्वक अध्यापन करें उन्हें 'संकेतलिपि-दक्ष' की उपाधि दी जाय।

४—जो विद्यार्थी १५० या अधिक की गति से कोई भाषण अच्छी तरह लिखकर उसका ठीक ठीक प्रत्यक्षरीकरण कर सकें उन्हें 'संकेतलिपिरत्न' की उपाधि दी जाय।

५—जो विद्यार्थी कम से कम १४० की गति से कोई भाषण ठीक ठीक लिखकर उसी समय साधारण भाषण की तरह पढ़ सकें उन्हें पुरस्कार दिया जाय।

६—१३० की गति प्राप्त करनेवाले विद्यार्थी को 'संकेत-लिपि-कोविद' की उपाधि दी जाय।

७—विद्यालय की ओर से प्रति वर्ष अखिलभारतीय हिंदी-संकेतलिपि-प्रतियोगिता की आयोजना की

जाय जिसमें प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय आनेवालों को पुरस्कार दिया जाय। विद्यालय के बाहर के प्रतियोगियों के लिये २) प्रवेश-शुल्क रखा जाय।

८—सभा में विद्यालय की ओर से एक पत्रकार-शिक्षालय खोला जाय। बा० गोवर्धनदास कृपा कर इसकी एक विस्तृत योजना उपस्थित करें।"

इस वर्ष के अंत तक इस विद्यालय में ३१ विद्यार्थियों ने निःशुल्क शिक्षा प्राप्त की।

संवत् १९९६ में सभा में हुए अट्ठाईसवें हिंदी-साहित्य-संमेलन के अवसर पर विद्यालय की वार्षिक परीक्षा तथा अखिलभारतीय हिंदी संकेतलिपि प्रतियोगिता का आयोजन किया गया था। इसमें यहाँ के विद्यार्थियों ने सफलतापूर्वक प्रमाणपत्र और पुरस्कार प्राप्त किए। प्रतियोगिता का प्रथम पुरस्कार १७५ शब्द प्रति मिनट की गति से लिखनेवाले यहीं के एक छात्र श्री बालकृष्ण शर्मा को मिला था। इस पुरस्कार में प्रमाणपत्र के साथ एक स्थायी चषक और कुछ चुनी हुई पुस्तकें थीं। निम्नलिखित विद्यार्थी उस समय पुरस्कृत किए गए थे—

१—श्री बालकृष्ण शर्मा— गति १७५ शब्द प्रतिमिनट, प्रथम पुरस्कार और संकेत-लिपिरत्न की उपाधि।

२—श्रीमहावीरप्रसाद—गति १७५ शब्द प्रति मिनट, द्वितीय पुरस्कार और संकेत-लिपि-रत्न की उपाधि।

३—श्री दूधनाथसिंह— ,, ,,

४—श्रीराम दुलारेसिंह— ,, ,,

५—श्री गिरिजाशंकर बरनवाल—गति १३० शब्द प्रतिमिनट, प्रथम पुरस्कार और हिंदी संकेत लिपि-कोविद की उपाधि।

६—श्री बालकृष्ण दवे— ,, ,,

७—श्री रामअधारसिंह— ,, ,,

सरकार के खुफिया विभाग में उर्दू संकेत लिपि का ही व्यवहार होता था। किंतु बारह मास तक शिक्षा पाने पर भी इसे सीखनेवाले सरकारी उम्मीदवारों की गति १०० शब्द प्रति मिनट से अधिक नहीं हो पाती और यहाँ हिंदी संकेतलिपि में आठ ही मास में विद्यार्थी १५० की गति प्राप्त कर लेते थे। यह देख सं० १९९६ से सरकार ने अपने उक्त विभाग में हिंदी संकेत-लिपि जाननेवालों को भी लेना आरंभ कर दिया।

इस विद्यालय के सीखे हुए छात्र अनेक रियासतों, व्यापारीकोठियों, समाचारपत्रों, व्यवस्थापिका सभाओं और कचहरियों में सफलता के साथ अपना कार्य करते रहे हैं।

संवत् १९९६ में इस विद्यालय में ४७ छात्रों ने निःशुल्क शिक्षा प्राप्त की और १९९७ में ३२ ने। काशी नगर में अन्यत्र इस विषय की शिक्षा देने के लिये दूसरा विद्यालय खुल जाने, प्रांतों में कांग्रेस सरकार के त्यागपत्र दे देने, छात्रों को काम मिलने में कठिनता होने और सभा को इस कार्य के लिये कहीं से आर्थिक सहायता न मिलने के कारण यह विद्यालय संवत् १९९८ में कुछ दिनों के लिये बंद कर दिया गया जो अभी तक बंद है। समुचित अवसर आने और आवश्यक प्रबंध हो जाने पर सभा यह कार्य पुनः आरंभ करेगी।

## १६—अनुशीलन-विभाग

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, सभा में हस्त-लिखित पुस्तकों, आकर ग्रंथों और अनेक प्रकार के चित्र, मूर्ति और सिक्कों आदि का पर्याप्त संग्रह है। इस संग्रह की ओर अनेक प्रकार के खोजपूर्ण लेख आदि प्रस्तुत करनेवाले व्यक्तियों का आकृष्ट होना स्वाभाविक है। उनके कार्य में सुभीते के लिये सभा में एक अनुशीलन-विभाग खोलने की आवश्यकता थी जिसकी ओर डाक्टर वासुदेवशरण अग्रवाल ने अपने २६ जून, १६४१ के पत्र में सभा का ध्यान आकृष्ट किया। यह पत्र २६ आषाढ़, संवत् १६६८ की प्रबंध-समिति में उपस्थित किया गया और निश्चय हुआ कि—

"(क) सभा में श्री राय कृष्णदास की अध्यक्षता में एक अनुशीलन-विभाग खोला जाय और इसके प्रबंध के लिये एक उपसमिति बनाई जाय जिसमें निम्न-लिखित सदस्य हों—

श्री जयचंद्र विद्यालंकार, श्री वासुदेवशरण, श्री रामनारायण मिश्र, श्री प्रधान मंत्री, श्री निरीक्षक खोज विभाग, श्री राय कृष्णदास (अध्यक्ष, संयोजक)।

(ख) उक्त विभाग में पुस्तकालय की हस्त-लिखित पुस्तकें तथा अँगरेजी वा अन्य भाषाओं के आकर-ग्रंथ भी रखे जायँ।"

उक्त उपसमिति की बैठक ८ भाद्रपद, १६६८ को हुई और उसकी रिपोर्ट पर उसी दिन की प्रबंधसमिति की बैठक में निश्चय हुआ कि—

"१—निम्नलिखित सज्जनों को उपसमिति में मिला लिया जाय—

डा० राजबली पांडे, पं० केशवप्रसाद मिश्र, श्री० कृष्णानंद, पं० पद्मनारायण आचार्य।

२—(क) खोज विभाग की सहायता से उत्तम ग्रंथों का संग्रह किया जाय और खोज के लिये आवश्यक क्षेत्र निश्चित करने में खोज विभाग को सलाह दी जाय।

(ख) जो ग्रंथ प्राप्त न हो सकें उनका लघु-लेखन कराने का प्रबंध किया जाय। लघुलेखन यंत्र खरीदने के लिये प्रांतीय सरकार तथा कोर्ट आव् वार्ड्स से धन की सहायता माँगी जाय। उन्हें लिखा जाय कि इस यंत्र को खरीदने से शिक्षा-प्रसार में सहायता मिलेगी और असंख्य उपयोगी ग्रंथों की सामग्री नष्ट होने से बच जायगी।

३—(क) जनपदों की बोलियों के वैज्ञानिक अध्ययन का कार्य-संचालन करने के लिये सभाएँ खोली जायँ और जो ऐसी संस्थाएँ पहले से काम कर रही हों उनसे संबंध स्थापित किया जाय तथा उनका मार्ग प्रदर्शन किया जाय। इसके लिये कार्य का एक ढाँचा तैयार करके ५० पृष्ठों की एक पुस्तिका दिग्दर्शिका के रूप में छपा ली जाय। श्री

जयचंद्र जी तथा पं० पद्मनारायण आचार्य कृपा कर इसे तैयार कर दें।

(ख) पहले कनौजी, अवधी, बैसवाड़ी, भोजपुरी और खड़ी बोली (मेरठ की बोली) का अध्ययन किया जाय। इन बोलियों का अध्ययन करनेवाले विद्वानों की भी संमति ली जाय।

(ग) प्रादेशिक संस्थाओं से पदार्थविद्या संबंधी शब्दों का नमूने के साथ संग्रह करने के लिये अनुरोध किया जाय। शब्दों के साथ बोली का नाम भी रहे।

(घ) 'पत्रिका' के संपादक जी कृपा कर पत्रिका में इस विषय की चर्चा करें।

४—आगामी सितंबर के प्रथम सप्ताह में उपसमिति की दूसरी बैठक हो।"

इसके बाद अनुशीलन-विभाग उपसमिति की ३१ भाद्रपद, १९९८ (१६ सितंबर, १९४१) को हुई बैठक की रिपोर्ट पर १० आश्विन, १९९८ को प्रबंध-समिति की बैठक में निश्चय हुआ।

(१) हिंदी की भिन्न भिन्न बोलियों का वैज्ञानिक अध्ययन करने के संबंध में पत्रों में एक विज्ञापन दिया जाय और भिन्न भिन्न प्रदेशों को बोलियों के लिये वहाँ के साहित्यिकों की राय ली जाय।

(२) आर्यभाषा-परिवार के परिमार्जित और विशेष प्रचलित शब्दों में समता स्थापित करने का प्रयत्न किया जाय। इस संबंध में कार्यारंभ करने का भार कृपाकर श्री राय कृष्णदास ग्रहण करें।

(३) निश्चय हुआ कि संसार की प्रमुख भाषाओं के साहित्य के संपर्क में रहने के लिये सभा में ऐसे सज्जनों की एक समिति संघटित की जाय जो हिंदी के साथ साथ अन्य भाषाओं का विशेष रूप से अध्ययन करके उनके साहित्य की प्रगति से सभा को परिचित कराते रहें। इस संबंध में निम्नलिखित सज्जनों से पत्र-व्यवहार किया जाय—

गुजराती—श्री शंकरदेव विद्यालंकार

मराठी—श्री काका कालेलकर

तेलुगु—श्री ना० नागप्पा

तामिल—श्री हरिहर शर्मा

बँगला—श्री हजारीप्रसाद द्विवेदी

जर्मन—श्री डा० आर्येंद्र शर्मा तथा डा० सत्यनारायण।"

संवत् १९९९ में आर्यभाषा-पुस्तकालय के लिये डाक्टर हीरानंद शास्त्री ने अपनी हस्तलिखित तथा मुद्रित पुस्तकों का जो विशेष संग्रह प्रदान किया था उसे 'डाक्टर हीरानंद शास्त्री अनुशीलन पुस्तकालय' के नाम से इसी विभाग के अंतर्गत रखने का निश्चय भी सभा ने किया था। किंतु ये निश्चय कई कठिनाइयों के कारण कार्यान्वित न हो सके। अंत में जब सभा के आर्यभाषा-पुस्तकालय को श्री रामनारायण मिश्र के उद्योग से श्री मयाशंकर याज्ञिक का हस्तलिखित पुस्तकों का बृहत् संग्रह संवत् २००० में प्राप्त हुआ उस समय अनुशीलन विभाग खोलने के अपने निश्चय को कार्यान्वित करने का विचार कर सभा की प्रबंध-समिति ने अपनी ३० आश्विन, २००० की बैठक में श्री विश्वनाथप्रसाद मिश्र को अनुशीलन विभाग का अध्यक्ष नियत किया और श्री रामनारायण मिश्र को उसके लिये नियमादि बनाने का कार्य सौंपा। २४ कार्त्तिक, २००० की बैठक में प्रबंध-समिति ने श्री राम-

नारायण मिश्र द्वारा तैयार की गई नियमावली पर विचार करके जो निश्चय किया वह इस प्रकार है—

### "अनुशीलन-विभाग

सभा के आर्यभाषा पुस्तकालय में मुद्रित और हस्तलिखित पुस्तकों का बृहत् संग्रह है तथा उसके कला-भवन में कला और पुरातत्त्व संबंधी पुस्तकें और प्राचीन वस्तुएँ संगृहीत हैं। सभा का एक खोज-विभाग है जिसमें हस्तलिखित पुस्तकों की खोज होती है और उन पर तुलनात्मक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से विवरण प्रस्तुत किए जाते हैं। सभा अपने प्रकाशन-विभाग द्वारा साहित्य और संस्कृति की महत्त्व-पूर्ण पुस्तकें और दो पत्रिकाएँ भी प्रकाशित करती है। सभा के कार्यों के ये सब अंग जिज्ञासु विद्यार्थियों और विद्वानों को आकृष्ट किया करते हैं।

इन्हीं लोगों के कार्य में सुभीते के लिये अनुशीलन विभाग खोला गया है। यह विभाग ( १ ) पुस्तका-लय-विभाग, ( २ ) कला-भवन विभाग, ( ३ ) खोज विभाग और ( ४ ) प्रकाशन-विभाग में सामंजस्य स्थापित करता है। एक प्रकार से यह उन सबका सम-न्वयकारी विभाग है जिसके द्वारा इन सब विभागों का उपयोग अध्येताओं के लिये बढ़ जाता है। इस विभाग की नियमावली इस प्रकार है—

### नियमावली

(१) अनुशीलन-विभाग के लिये प्रबंध-समिति प्रति तीसरे वर्ष एक ऐसे विद्वान् अध्यक्ष का चुनाव करेगी जो साहित्य और संस्कृति के अन्वेषण-कार्य में विशेष अभिरुचि रखनेवाले होंगे।

(२) अध्यक्ष के कार्य की सुविधा के लिये प्रबंधसमिति एक उपसमिति का भी संघटन करेगी जिसमें अध्यक्ष के अतिरिक्त दो विद्वान् सदस्य और रहेंगे। इन सदस्यों का चुनाव भी प्रति तीसरे वर्ष अध्यक्ष के चुनाव के साथ ही होगा और अध्यक्ष इस उपसमिति के संयोजक होंगे।

(३) सभा में संगृहीत समस्त प्राचीन हस्तलिखित पुस्तकों का उत्तरदायित्व अध्यक्ष पर रहेगा।

(४) अध्यक्ष को सभा के उक्त चारों विभागों के अध्यक्षों का सहयोग प्राप्त होगा।

(५) इस विभाग में जो सज्जन अध्ययन करने आएँगे वे

क—अध्यक्ष की अनुमति से सभा में अध्ययन कर सकेंगे।

ख—जो सज्जन पुस्तकों का अध्ययन और अनुशीलन करना चाहेंगे वे सभा-भवन में बैठकर पुस्तकाध्यक्ष की देख-रेख में कार्य करेंगे और जो पुरातत्त्व संबंधी वस्तुओं का अध्ययन करना चाहेंगे वे कला-भवन के संग्रहाध्यक्ष के निरीक्षण में अपना कार्य करेंगे।

ग—वे कोई पुस्तक या वस्तु सभा की सीमा के बाहर नहीं ले जा सकेंगे।

घ—वे यदि किसी पुस्तक की प्रतिलिपि लेना चाहेंगे तो अध्यक्ष की सिफारिश पर प्रबंध-समिति की स्वीकृति से ऐसा कर सकेंगे।

(६) यदि कोई विश्वविद्यालय या प्रतिष्ठित साहित्य-संस्था हस्तलिखित पुस्तक माँगेगी तो अध्यक्ष की सिफारिश पर प्रबंध-समिति की स्वीकृति से पुस्तक दी जा सकेगी।

(७) जो सज्जन सभा-भवन में बैठकर अध्ययन करेंगे वे उस अध्ययन के आधार पर यदि कोई पुस्तक

लिखेंगे तो उसमें सभा के इस विभाग से प्राप्त सहायता का उल्लेख करेंगे और सभा को अपनी पुस्तक की कम से कम दो प्रतियाँ अवश्य प्रदान करेंगे।

(८) पर्याप्त धन रहने पर सभा की प्रबंध-समिति अनुशीलन-समिति के सुझाव पर स्वयं भी अन्वेषण का कार्य करावेगी और उसके लिये छात्र-वृत्ति भी देगी।

(९) छात्र-वृत्ति पानेवाले विद्वान् जो निबंध लिखेंगे उसे यदि सभा प्रकाशित करना चाहेगी तो उसके प्रकाशन का अधिकार पहले सभा को ही होगा। परंतु यदि सभा उसे प्रकाशित न कर सकेगी तो प्रबंध-समिति की आज्ञा से अन्वेषक स्वयं उसे प्रकाशित कर या करा सकेंगे।

(१०) छात्रवृत्ति पानेवाले विद्वान् को एक वर्ष के अंदर अपने अनुशीलित विषय पर सभा में 'प्रसाद' व्याख्यानमाला के अंतर्गत कम से कम चार व्याख्यान देने होंगे।"

साथ ही यह भी निश्चय हुआ कि 'इसके नियम (२) के अनुसार जो उपसमिति संघटित हो उसमें सर्वश्री विश्वनाथप्रसाद मिश्र और जीवनशंकर याज्ञिक सदस्य चुने जायँ, तीसरे सज्जन का चुनाव बाद में किया जाय।' इस रिक्त स्थान पर प्रबंध-समिति की २९ मार्गशीर्ष, २००० की बैठक में श्री राय कृष्णदास अनुशीलन विभागोपसमिति के सदस्य चुने गए।

श्रीरामनारायण मिश्र के उद्योग से इस विभाग के लिये कानपुर के सेठ सर पद्मपत सिंहानिया ने तीन वर्ष तक ५०) मासिक की छात्रवृत्ति देना स्वीकार किया है। प्रबंध-समिति के नियमानुसार उसका नाम 'सिंहानिया अर्द्धशताब्दी वृत्ति' रहेगा और अर्द्धशताब्दी महोत्सव के समय से ही उसका देना आरंभ कर दिया जायगा।

———

## अर्धशताब्दी के सहायक

श्री सेठ राधाकृष्ण चामड़िया, कलकत्ता
सहायता ५०१)
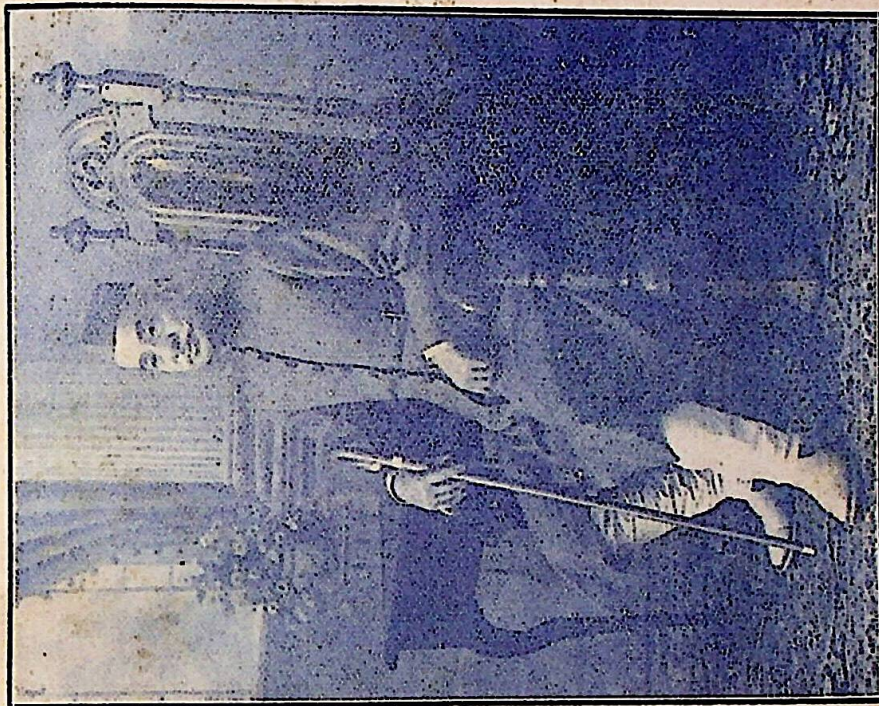
श्रीमान् राजा डाक्टर सूरजबख्श सिंह० डी० लिट्०,
आनरेरी मजिस्ट्रेट और मुंसिफ, कसमाँडा
सहायता ५००)
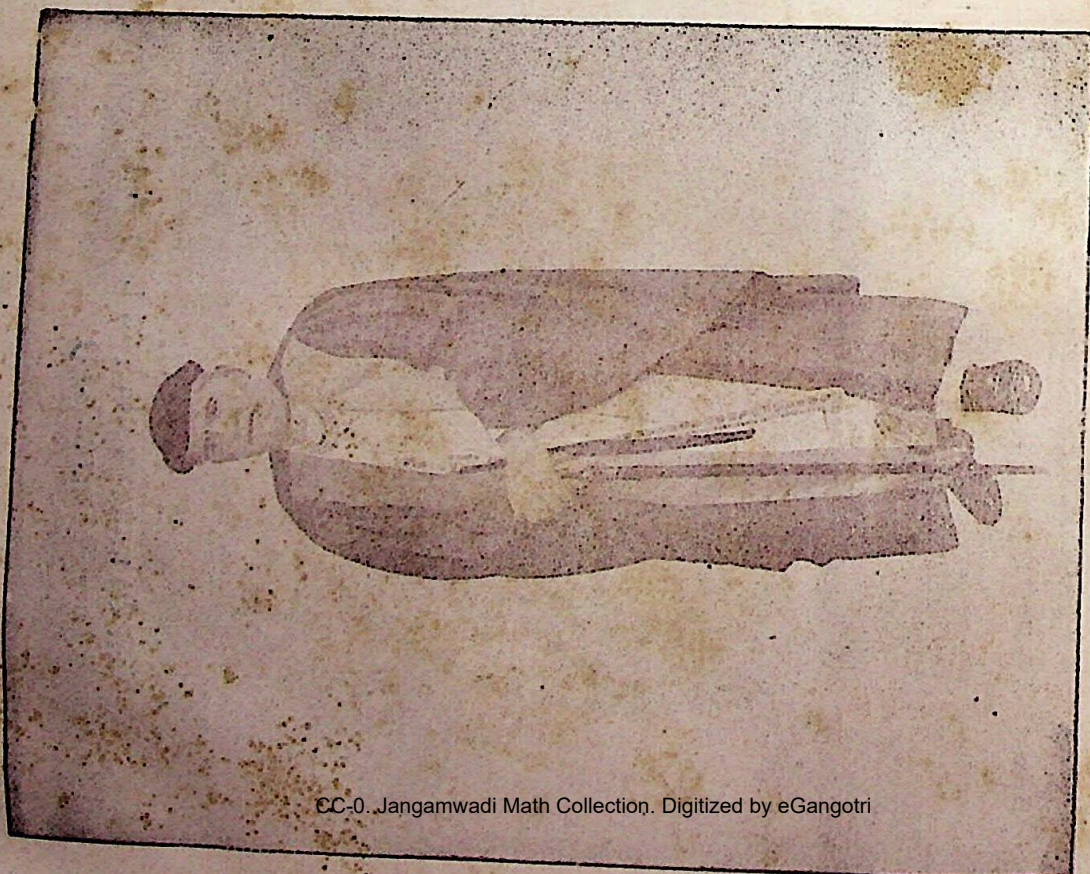
बड़ौदा-नरेश
( सभा के संरक्षक )

श्री स्वामी सत्यदेव परिव्राजक
( सत्यज्ञान-निकेतन के संस्थापक )

## १७—पश्चिमी भारत में हिंदी का प्रचार केंद्र

### सत्यज्ञान-निकेतन

पंजाब, संयुक्त प्रांत के पश्चिमी जिलों, सीमाप्रांत, काश्मीर, सिंध और राजपूताने में हिंदी का प्रचार करने के लिये कोई सुसंघटित उद्योग करने का विचार कई वर्षों से सभा कर रही थी। पंजाब में हिंदी पर होनेवाले आघातों से वह बहुत व्याकुल थी, किंतु आर्थिक कठिनाई के कारण इस ओर कदम उठाने में हिचकिचाती थी। इस वर्ष श्री स्वामी सत्यदेवजी ने इस कार्य के लिये अपना सत्यज्ञाननिकेतन सभा को प्रदान करके उसका मार्ग प्रशस्त कर दिया। यह निकेतन हरिद्वार के पास ज्वालापुर में स्थित है। सभा ने इसी निकेतन को पश्चिमी भारत में हिंदी-प्रचार का सुदृढ़ केंद्र बनाने का निश्चय किया है। आगामी ३ फाल्गुन से वहाँ कार्य आरंभ हो जायगा। सभा के नाम इस निकेतन की लिखापढ़ी ( रजिस्ट्री ) १५ पौष, सं० २००० ( ३० दिसंबर, १९४३ ) को हो गई है। इस संबंध का श्री स्वामी सत्यदेवजी का अर्पणपत्र अविकल रूप में यहाँ दिया जाता है—

#### अर्पणनामा

"मैं स्वामी सत्यदेव परिव्राजक, शिष्य स्वामी महानंदजी, साकिन सत्यज्ञान-निकेतन, ज्वालापुर, तहसील रुड़की, जिला सहारनपुर का हूँ।

"मेरी अवस्था ६५ वर्ष की हुई, मैंने बहुत वर्षों से संन्यास ले लिया है। जो कुछ मेरे पास संपत्ति है वह मेरी स्वयं उपार्जित है और किसी से उसका संबंध नहीं है और न उस पर किसी का किसी प्रकार का स्वत्व ही है। मैंने राष्ट्रमाता हिंदी की आराधना की थी उसने प्रसन्न होकर मुझे आर्थिक स्वतंत्रता का वरदान दिया और उसी के फलस्वरूप मैंने अपनी निजी कमाई से गंगा की नहर के किनारे ज्वालापुर-कनखल रोड पर एक आराजी बाग तायदादी पाँच बीघे एक बिस्वा पुख्ता बजरिए वैनामा तारीख १३ जनवरी, सन् १९३६, जिसकी रजिस्ट्री १४ जनवरी सन् १९३६ को हुई, बाबू विष्णुप्रसाद से २०००) रु० पर खरीदा और उस पाँच बीघे एक बिस्वे में से दो बिस्वे जमीन मैंने बेच दी और बाकी चार बीघे उन्नीस बिस्वे पर जिसकी तफसील और चौहद्दी नीचे दी गई है सत्यज्ञान निकेतन नाम का आश्रम तैयार किया और जिसकी पक्की चौहद्दी बनवाई और स्थान स्थान पर इमारतें बनवाई हैं। उक्त आश्रम पर मेरा पूर्ण अधिकार है और मैं उसको सब प्रकार से मुंतकिल कर सकता हूँ और क्योंकि मैंने यह आश्रम हिंदी की सेवा द्वारा उपार्जित धन से स्थापित किया है, मेरी इच्छा है कि कृतज्ञता-स्वरूप इस निकेतन को उसी हिंदी माता के चरण-कमलों में अर्पण कर दूँ और ऐसी संस्था को दे दूँ जो कि हिंदी भाषा की सेवा कर रही हो। मैं जानता हूँ कि नागरीप्रचारिणी सभा काशी ने हिंदी की महती सेवा की है और वह एक रजिस्टर्ड संस्था है। इसलिये मैं अपनी पूर्ण स्वतंत्रता और प्रसन्नता से अपनी स्वस्थचित्तता में, बिना किसी दबाव के अपने उक्त सत्यज्ञान निकेतन

मै कुल आराजी बाग, इमारत, कुआँ, पेड़ इत्यादि वाके मौजा ज्वालापुर व जगजीतपुर परगना ज्वालापुर, तहसील रुड़की, जिला सहारनपुर को जिसका ब्योरा व चौहद्दी नीचे दी गई है नागरीप्रचारिणी सभा काशी को अर्पण व वक्फ करता हूँ और यह अर्पण-नामा या वक्फनामा नीचे लिखी शर्तों के साथ लिख देता हूँ।

१—यह कि इस आश्रम का नाम सदा सत्यज्ञान-निकेतन रहेगा। इस नाम को परिवर्तन करने का अधिकार उक्त सभा को न होगा।

२—यह कि आज से इस जायदाद की मालिक काशी-नागरीप्रचारिणी सभा हुई। सभा को उचित है कि अपना नाम बजाय नाम मेरे दर्ज कागजात सरकारी करा ले, मुझे या मेरे उत्तराधिकारियों को कोई उज्र न होगा।

३—यह कि उपर्युक्त निकेतन को मैं नागरीप्रचारिणी सभा काशी के हक में अर्पण तथा वक्फ करता हूँ। उसको काशी नागरीप्रचारिणी सभा को किसी हालत में रेहन, बै, दान या किसी प्रकार मुंतकिल करने का अधिकार नहीं है और न रहेगा। अगर नागरीप्रचारिणी सभा काशी किसी प्रकार इस जायदाद को रेहन, बै या दान करे तो वह कार्रवाई सरासर नाजायज व व्यर्थ होगी और कानून के विरुद्ध समझी जायगी और अदालत द्वारा उसके संबंध में उचित कार्रवाई की जायगी।

४—यह कि उपर्युक्त आश्रम को मैं पश्चिमी भारत में देवनागरी लिपि, आर्यभाषा तथा हिंदी-साहित्य के प्रचार का सुदृढ़ केंद्र बनाने के लिये उक्त सभा को देता हूँ। उक्त सभा मेरे इस हार्दिक उद्देश्य को पूर्णतया पूरा करेगी और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये काशी-नागरीप्रचारिणी सभा धन मिलने पर और उपयुक्त भवन बनने पर एक पुस्तकालय निकेतन में खोलेगी और व्याख्यान दिलाने के लिये सरस्वती-व्याख्यान-माला स्थापित करेगी जिसमें समय समय पर हिंदी में व्याख्यान, संगीत तथा प्रवचन दिलाने का प्रयत्न करेगी।

५—यह कि इस निकेतन में जो मकान गुफा के नाम से प्रसिद्ध है उसका मुझे मेरे जीवनकाल तक उपयोग करने का अधिकार रहेगा। उक्त गुफा को बेचने या दान करने या रेहन करने या किसी दूसरे को वक्फ या अर्पण करने या किसी तौर पर मुंतकिल करने का मुझको हक न होगा परंतु अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये मुझे अधिकार होगा कि उसको अपने खर्च से बढ़ा सकूँ। जिस प्रकार गुफा सभा की मिलकियत है उसी प्रकार जो हिस्सा बढ़ाया जायगा वह भी सभा का होगा।

६—यह कि मेरा कुत्ता मोती, जिसने सात वर्ष से आश्रम का चौकीदार बनकर सेवा की है, आश्रम में जीवन पर्यंत रहेगा। उसकी रक्षा का प्रबंध उक्त सभा करेगी।

७—यह कि काशी-नागरीप्रचारिणी सभा के लिये आवश्यक होगा कि इस निकेतन के कार्य-संचालन के लिये एक उपसमिति बनावे। उसमें मैं तथा पं० रामनारायणजी मिश्र संस्थापक काशी-नागरीप्रचारिणी सभा जिनसे मेरा बड़ा पुराना संबंध है और जिनके सत्परामर्श से यह अर्पण-पत्र लिखता हूँ जीवन-सदस्य रहेंगे। मुझको

या उक्त पंडितजी को मेरे और उनके जीवन-काल तक हटाने का अधिकार सभा को न होगा और श्री वेदव्रतजी, पुत्र लाला चेतरामजी, प्रोफेसर गुरुकुल काँगड़ी भी इस उपसमिति में संमिलित किए जायँगे।

८—यह कि उक्त उपसमिति की बैठक काशी में या सत्यज्ञान-निकेतन ज्वालापुर में सुविधानुसार हुआ करेगी। इस उपसमिति की कम से कम एक बैठक वर्ष में यथासाध्य हुआ करेगी।

९—यह कि आज की तारीख से इस जायदाद की मालिक काशी-नागरीप्रचारिणी सभा हुई। और कब्जा व दखल मालिकाना उक्त सभा का बजरिए पं० रामनारायण मिश्र मौसूफ अध्यक्ष अर्द्धशताब्दी, काशी-नागरीप्रचारिणी सभा करा दिया। मेरा कोई हक मालिकाना उक्त जायदाद में नहीं रहा। मुझको किसी प्रकार से सभा के हक मालिकाना में हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं है और न रहेगा और न मैं इस अर्पणपत्र या वक्फ़नामे में कोई रद्दोबदल व तरमीम कर सकता हूँ और न मेरे बाद किसी को इसमें परिवर्तन करने या दखल देने का अधिकार रहेगा, परंतु निकेतन के सुप्रबंध तथा उन्नति के संबंध में सुझाव उक्त सभा में उपस्थित करने का मुझे अधिकार रहेगा।

१०—यह कि मुझे इस निकेतन के संबंध में कोई दूसरा वक्फ़नामा या किसी प्रकार का दस्तावेज लिखने का हक न होगा।

११—यह कि उक्त निकेतन कहीं रेहन, बै, वगैरह नहीं है और न इस पर कोई बार या ऋण है। यह बिलकुल पाक साफ और शुद्ध जायदाद है। अगर कोई शख्स मेरे जीवनकाल में या मेरे पीछे मेरा उत्तराधिकारी बनकर किसी प्रकार का दावा करे तो वह सरासर नाजायज व व्यर्थ व झूठ होगा और न किसी प्रकार से यह जायदाद कुर्क या नीलाम हो सकती है।

१२—यह कि जो स्थावर या जंगम संपत्ति उक्त सत्य-ज्ञान-निकेतन के निमित्त प्रदान की जायगी उनको काशी-नागरीप्रचारिणी सभा इसी निकेतन के संचालन-कार्य में तथा ऊपर निर्दिष्ट हिंदी-प्रचार-कार्य में लगावेगी। सभा के अन्य कार्य में उसका व्यय न हो सकेगा। उसका हिसाब-किताब सभा अपने नियमों के अनुसार अलग विभाग खोलकर रखेगी और जँचवाती रहेगी।

१३—यह कि इस अर्पणपत्र व वक्फ़नामे को मैंने अच्छी तरह पढ़वाकर और सुनकर और समझकर उस पर हस्ताक्षर किया है और इसकी पाबंदी मुझ पर है और रहेगी। इसलिये यह अर्पण-पत्र वा वक्फ़नामा लिख दिया कि सनद रहे और वक्त जरूरत काम आवे।

तफसील व चौहद्दी जायदाद सत्यज्ञान-निकेतन जो कि इस अर्पणपत्र या वक्फ़नामे द्वारा काशी नागरी-प्रचारिणी सभा को अर्पण की जाती है और जो कि अंदर हद म्यूनिसिपैलिटी यूनियन हरद्वार है और जिसकी मालियत पच्चीस हजार रुपया २५०००) रु० है।

आराजी बाग तायदादी चार बीघे उन्नीस बिस्वे ४ बीघे १९ बिस्वे पुख्ता जिसमें दो बीघे १५ बिस्वे पुख्ता मौजे ज्वालापुर की खेवट नं० २५० में खसरे नं० २५१२ पर दर्ज है और दो बीघे चार बिस्वे पुख्ता मौजा जगजीतपुर महाल मुसतहकम गैर दायियान की

खेवट नं० ३७ में खसरे नं० ६ पर दर्ज है। दोनों वाका परगना ज्वालापुर तहसील रुड़की जिला सहारनपुर में चहारदीवारी व कुल इमारत जो कि स्थान स्थान पर ऊपर आराजियात बाग मजकूर पर बनी है व कुल पेड़ व कुआँ पुख्ता वगैरह।

### चौहद्दी

पूरब मकानात व जमीन आर्य नगर वगैरह।

पच्छिम मकानात व जमीन आर्यनगर वगैरह।

उत्तर ज्वालापुर-कनखल रोड पुख्ता।

दक्षिण जमीन आर्यनगर।

ता० ३०-११-१६४३"

सत्यज्ञान-निकेतन ऐसे स्थान पर स्थित है जहाँ चारों ओर प्रतिष्ठित शिक्षा-संस्थाएँ अपना कार्य कर रही हैं। गुरुकुल काँगड़ी, ऋषिकुल और ज्वालापुर महाविद्यालय इससे एक मील की दूरी में ही अवस्थित हैं। इस कार्य में सभा को सनातनधर्म, आर्यसमाज, सिक्ख समाज, देवसमाज आदि सब प्रकार की संस्थाओं का पूर्ण सहयोग अपेक्षित है। उक्त प्रांतों में जो संस्थाएँ हिंदी-प्रचार का कार्य कर रही हैं उनके साथ कंधे से कंधा भिड़ाकर संघटित रूप से सभा हिंदी का प्रचार करना चाहती है। अपने जन्म से लेकर अभी तक जितने कार्य सभा ने उठाए हैं, ईश्वर की कृपा से सभी में उसको सफलता प्राप्त हुई है। इससे यह सहज ही अनुभव होता है कि इसके कार्यों में भगवान् की इच्छा मूर्तरूप में कार्य कर रही है। अर्द्धशताब्दी के अवसर पर सत्यज्ञान-निकेतन को प्राप्ति में भी उसी का हाथ है। इसलिये आशा है, इस कार्य में भी उसकी कृपा से सभा को पूरी सफलता मिलेगी।

---

## १८—पंचांग-शोध

जिस समय की ओर से विक्रम की द्विसहस्राब्दी मनाने का निश्चय किया गया उसी समय यह भी निश्चय हुआ कि इस उत्सव के कार्यक्रम में प्रचलित पंचांग के, जो विक्रम का सबसे बड़ा संस्मारक है, संशोधन को भी स्थान दिया जाय। इस संबंध में सभा के सभापति श्री संपूर्णानंद ने २५ माघ, १९९८ को एक छोटा-सा वक्तव्य सभा के सामने रखा जो पत्रों में भी प्रकाशित किया गया। उसका मुख्यांश यह है।

### पंचांग-शोध-समिति

यह प्रसन्नता की बात है कि सभा की ओर से विक्रम की द्विसहस्राब्दी मनाने के अवसर पर पंचांग-शोध का प्रस्ताव स्वीकृत हो गया है। पंचांग का महत्त्व तो सभी देशों में है, परंतु हमारे देश में जहाँ लोगों का फलित ज्योतिष पर विश्वास है और विवाह, व्यापार, खेती जैसे काम ज्योतिषियों के परामर्श से किए जाते हैं, इस शास्त्र का स्थान बहुत ऊँचा है। गणना में थोड़ी सी भी भूल होने से सैकड़ों व्यक्तियों के जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ सकता है। इस समय मेरी समझ में पंचांग संबंधी नीचे लिखे प्रश्न विशेष रूप से विचारणीय हैं।

१—संक्रांति की जो तिथियाँ पंचांगों में दी रहती हैं और हमारे घरों में मनाई जाती हैं वे दृश्यगणित की तिथियों से जो वस्तु-स्थिति पर निर्भर हैं, नहीं मिलतीं। वर्तमान संवत् के लिये यह अंतर इस प्रकार है—

| संक्रांति | दृश्य | विश्व पंचांगगत |
|---|---|---|
| मेष | २३ मार्च १९४१ | १३ अप्रैल १९४१ |
| कर्क | २१ जून १९४१ | १६ जूलाई १९४१ |
| तुला | २३ सितंबर १९४१ | १६ अक्टूबर १९४१ |
| मकर | २४ दिसंबर १९४१ | १३ जनवरी १९४१ |

२—चांद्र मास कहीं शुक्ल पक्ष से आरंभ होते हैं, कहीं कृष्ण पक्ष से। श्रीकृष्ण-जन्माष्टमी जिस दिन होती है उसको कहीं तो भाद्र कृष्ण अष्टमी कहते हैं, कहीं श्रावण कृष्ण अष्टमी, शुक्ल पक्ष में नाम मिल जाता है।

३—पुराने ज्योतिष-ग्रंथों में ग्रहों की गति-विधि के संबंध में जो अंक दिए गए हैं, उनके अनुसार ग्रहों के जो स्थान आते हैं वे उन स्थानों से भिन्न हैं जहाँ पर ग्रह सचमुच हैं, एक-दो उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जायगी।

### सौर वर्ष का मान

आर्य भट्ट

३६५ दिन ६ घंटा १२ मिनट २९·६४ सें०

सूर्यसिद्धांत

३६५ दिन ६ घंटा १२ मिनट ३६·५६ सें०

अर्वाचीन

३६५ दिन ६ घंटा ९ मिनट ९ सें०

यदि दशमलव के दूसरे तीसरे स्थान में भी कुछ भूल हो तो वह सैकड़ों वर्षों में बड़ा रूप धारण कर लेती है। हमारे ज्योतिषी इस बात को जानते हैं। अब महत्त्व का प्रश्न यह है कि फलित ज्योतिष के लिये इन

दृश्य स्थानों से काम लिया जाय या अदृश्य से, इस विषय में बड़ा मतभेद है।

राजाश्रय के बिना ज्योतिष में यह सब गड़बड़ी आ गई है और इसका सुधरना भी कठिन है, फिर भी प्रयत्न करना चाहिए। मुझे विश्वास होता है कि इस काम में हमको विद्वानों के अतिरिक्त नरेशों और धनिकों का भी सहयोग प्राप्त हो सकेगा। पर्याप्त प्रचार होना चाहिए।

इसलिये मेरा प्रस्ताव है कि कुछ विद्वानों की एक समिति बुलाई जाय, वह विचार करे कि १–इन प्रश्नों पर विचार करना उचित और व्यावहारिक है या नहीं, २–ऐसे विचार के लिये काशी में एक संमेलन बुलाना ठीक होगा या नहीं, ३–यदि ठीक हो तो उसमें किस किस को बुलाया जाय, ४–संमेलन के सामने कौन कौन से प्रश्न रखे जायँ और ५–संमेलन का आयोजन करने और उसकी रिपोर्ट निकालने में कितना व्यय होगा।

१४ चैत्र १९९८ को सभा की प्रबंध-समिति ने एक पंचांग-शोध-समिति नियुक्त की जिसके संयोजक श्री संपूर्णानंद और निम्नलिखित सज्जन सदस्य बनाए गए—

१—सर्वश्री रामव्यास ज्योतिषी हिं० वि० वि०, काशी।
२—बलदेव मिश्र ज्यो० श्री सरस्वती भवन, काशी।
३—रघुनाथ शर्मा ज्यो० नई बस्ती, काशी।
४—डाक्टर गोरखप्रसाद, प्रयाग वि० वि०, प्रयाग।
५—डाक्टर अवधेश नारायणसिंह, गणित विभाग लखनऊ वि०, लखनऊ।
६—महावीरप्रसाद श्रीवास्तव, फरुखाबाद।
७—रा० ब० कमलाकर द्विवेदी, खजुरी, बनारस।
८—पद्माकर द्विवेदी, खजुरी, काशी।
९—चंडीप्रसादजी, चेतगंज, काशी।
१०—हजारीप्रसाद द्विवेदी, शांतिनिकेतन।
११—संपूर्णानंद, जालिपादेवी, काशी।

शोध-समिति की बैठक बुलाने के पहले संयोजक ने पत्र-व्यवहार और काशीस्थ सदस्यों से बातचीत करके यह तय कर लेना उचित समझा कि समिति के सामने कौन से विषय विचारार्थ रखे जायँ। एक और महत्त्वपूर्ण प्रश्न था कि समिति की बैठकों में धर्मशास्त्रियों को भी निमंत्रित किया जाय? हमारा पंचांग धार्मिक कृत्यों में काम आता है और तिथि आदि के निर्णय में धर्मशास्त्र के अनुसार जो व्यवस्था मिलती है वह लोक में मान्य होती है। बिना इन विद्वानों के आशीर्वाद के किसी संशोधित पंचांग का प्रचार होना कठिन ही नहीं, असंभव है।

प्रारंभिक विचार-विनिमय के बाद समिति की एक बैठक २६ ज्येष्ठ १९९९ को और दूसरी ५ मार्गशीर्ष, १९९९ को हुई। संयोजक के जेल चले जाने के कारण उनका भार श्री रामव्यासजी ने स्वीकार कर लिया था। समिति ने मूलबिंदु, अयनांश, वर्षमान आदि कई प्रश्नों पर विचार करने के उपरांत यह निश्चय किया कि निम्नलिखित प्रश्नों पर विद्वानों की संमति माँगी जाय और सब संमतियों के आ जाने पर समिति की बैठक फिर की जाय। यह भी स्थिर हुआ कि जब तक समिति के सदस्य स्वयं कोई निर्णय न कर लें तब तक धर्मशास्त्रियों को परामर्श के लिये न निमंत्रित किया जाय।

## विचारार्थ प्रश्न

पंचांग-शोधन का स्वरूप-निर्णय, अर्थात् पंचांग में किस प्रकार के परिवर्त्तन हों—

( क ) पंचांग दृश्य गणनानुसार बनना चाहिए या ( ख ) प्राचीन गणनानुसार।

( ख ) यदि प्राचीन गणनानुसार बने तो किस सिद्धांत के अनुसार और क्यों ? या

( ग ) यदि आपके मतानुसार किसी उपायांतर का अवलंबन करना ठीक हो तो उसका क्या स्वरूप हो ?

( घ ) यदि दृश्य गणनानुसार पंचांग बनेंगे तो उनसे व्रतादिक धार्मिक कृत्यों के संबंध में अथवा धर्मशास्त्रियों की दृष्टि से जो बाधाएँ उपस्थित होंगी, उनके निवारण के लिये आपकी संमति में क्या उपाय होना चाहिए ?

इन पत्रों के उत्तर में करीब ३५ विद्वानों की संमतियाँ तथा अनेकों के बृहत् लेख आए। इनमें अधिकांश की संमति थी कि व्रतोपवास के लिये सूर्य-सिद्धांतानुसार तिथि, नक्षत्र, योग बनाए जायँ और दृश्य ग्रहण, शृंगोन्नत्यादि के लिये दृश्य गणित का व्यवहार हो। कुछ लोगों का मत दृश्य गणनानुसार पंचांग बनाने के पक्ष में भी था।

समिति की अंतिम बैठक ३ माघ, १९९९ को हुई। उपस्थित सदस्यों में से तीन अर्थात् सर्वश्री चंडीप्रसाद, डाक्टर गोरखप्रसाद और अवधेशनारायण सिंह इस मत के थे कि पंचांग सर्वथा दृश्य गणना के अनुसार बनाया जाय। दूसरी ओर सर्वश्री रामव्यास पांडेय और पद्माकर द्विवेदी का कहना था कि सूर्य-सिद्धांत का अनुसरण ही होता रहे। श्री बलदेव मिश्र की यह संमति थी कि पंचांग का आधार सूर्य्यसिद्धांत ही रहे परंतु तद्गत गणनाओं में बीज-संस्कार किया जाय और ग्रहों का उदयास्त आदि दृश्य गणित के अनुसार दिया जाय।

ऐसे प्रश्न पर जिसकी सहज जटिलता को धार्मिक विश्वासों और सैकड़ों वर्षों की गतानुगति से उत्पन्न आग्रहों ने पुष्ट कर रखा है सहसा ऐकमत्य की आशा नहीं की जा सकती। इस समय समिति का कार्य यहीं रुक गया है, परंतु सभा ने इस काम को आगे बढ़ाने का निश्चय किया है। विद्वानों में जो विचार-विनिमय हुआ है वह संतोषजनक है। इससे भी अधिक आशाजनक बात यह है कि जनता का ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ है। इस अनुकूल वातावरण में पंचांग-शोध के काम को सफलता मिलनी चाहिए।

———

## १६—आर्थिक स्थिति

सभा ने जैसे बड़े बड़े कार्य किए हैं और सभा का जितना नाम है, आर्थिक दृष्टि से उसकी वैसी स्थिति नहीं है। विगत पचास वर्षों में उसके द्वारा हुई हिंदी की ठोस सेवाओं, हिंदी-भाषी जनता और हिंदी-प्रेमियों की संख्या को देखने से यह आशा करना स्वाभाविक है कि सभा के स्थायी कोश में २०—२५ लाख अवश्य जमा होगा। किंतु यहाँ आधा लाख भी नहीं है। आश्चर्य तो इस बात का है कि आर्थिक कठिनाइयों के होते हुए भी सभा ने इतना कार्य किस प्रकार कर दिखाया। विगत प्रकरणों को पढ़ने से ज्ञात होता है कि किस प्रकार इधर-उधर से जुटाकर सभा अपना काम चलाती रही है। एक ओर कार्य चल रहा है और दूसरी ओर कुछ सदस्य उसके खर्च के लिये नगर नगर घूम रहे हैं। सभा के प्रारंभिक वर्षों में तो स्थिति यह थी कि यदि किसी से एक रुपया चंदा मिल जाता तो बड़ा आनंद मनाया जाता था और सभा की ओर से दाता को अनेक धन्यवाद दिए जाते थे। आर्थिक कठिनाइयों की परवा न कर सभा का जीवन इस प्रकार खेते आने का श्रेय उसके उन कर्णधारों को है जिन्होंने इस नौका में बैठकर निःस्वार्थ भाव से सरस्वती की आराधना की, जिनके हृदयों में हिंदी-सेवा की लगन थी और जिन्होंने कभी अपने आर्थिक लाभ का लोभ सभा से नहीं किया। इन कर्णधारों के लिये यह गौरव की बात अवश्य है किंतु हिंदी-प्रेमी जनता के लिये नहीं। जनता का गौरव इसी में था कि ऐसी उपयोगी संस्था को आर्थिक कष्ट का सामना कुछ भी न करना पड़ता और आज उसके स्थायी कोश में २०-२५ लाख जमा होते। बात यह है कि सभा ने अपनी बड़ाई के ढोल नहीं पीटे। सभा के संचालकों को कार्य की धुन थी, पैसे की नहीं। कार्य की पूर्त्ति के लिये जितने धन की आवश्यकता पड़ती थी, ज्यों त्यों करके उतना जुटाने का प्रयत्न किया जाता था। स्थायी कोश स्थापित करने की बात भी उस समय उठी जब सभा को अपना भवन बनवाने की आवश्यकता पड़ी। सभा की उपयोगिता को देखते हुए उसे चिरस्थायी बनाना आवश्यक था जिसके लिये अपना भवन और स्थायी कोश अनिवार्य थे। संवत् १९५५ में भवन-निर्माण का निश्चय हुआ और उसके लिये उद्योग आरंभ किया गया। दो वर्ष में जो धन एकत्र हो सका उसी को सं० १९५७ में स्थायी कोश का रूप दिया गया। इस प्रकार स्थायी कोश की स्थापना का दृढ़ निश्चय हो जाने पर सभा के आठवें वार्षिक अधिवेशन में ३२ आषाढ़, सं० १९५८ ( १६ जुलाई, १९०१ ) को स्थायी कोश के लिये निम्नलिखित नियम स्वीकृत हुए—

"(१) निम्नलिखित महाशय स्थायी कोष के ट्रस्टी और बाबू गोविंददास उसके मंत्री नियत किए जायँ और इन महाशयों से प्रार्थना की जाय कि वे अपने लिये नियम बनाकर सभा में स्वीकारार्थ उपस्थित करें।

१—श्रीमान् आनरेबुल महाराज सर प्रतापनारायण सिंह बहादुर के० सी० आई० ई०, अयोध्या।

२—राजा कमलानंद सिंह बहादुर श्रीनगर, पूर्णिया।

३—आनरेबुल राजा पंडित सूर्य कौल सी० आई० ई०, लाहौर।

४—आनरेबुल मुंशी माधोलाल, काशी।

५—म० म० पं० सुधाकर द्विवेदी, काशी।

६—ला० हंसराज बी० ए०, लाहौर।

७—पं० मदनमोहन मालवीय, बी० ए०, एल-एल० बी०, प्रयाग।

८—बाबू गोविंददास, काशी।

९—राय शिवप्रसाद, काशी।

१०—बाबू इंद्रनारायण सिंह, काशी।

११—मंत्री नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी।

(२) इस कोष का हिसाब बनारस के बैंक बंगाल में खोला जाय और हिंदी के प्रेमियों को सूचना दी जाय कि वे अपने दान का रुपया सीधे बैंक में भेज सकते हैं।

(३) जो कुछ धन एकत्रित हो उसमें से एक गृह सभा के लिये बनवाया जाय और बाकी रुपया जमा कर दिया जाय तथा केवल उसके सूद से ही सभा का कार्य चले और उसके उद्देश्यों की पूर्ति हो।

(४) इस स्थायी कोष के मूलधन में से रुपया व्यय न किया जाय जब तक सभा के सभासदों का ¾ भाग वैसा करने की आज्ञा और संमति न दे।

(५) जो लोग एक रुपए वा उससे अधिक की सहायता इस कोश की पूर्ति के लिये दें उनके नाम दान की संख्या सहित सभा की पत्रिका में प्रकाशित किए जायँ।

(६) हिंदी के प्रेमियों को अधिकार होगा कि जितना चाहें इस कोश की सहायता के लिये दें।

(७) जब एक लाख रुपया एकत्रित हो जाय तो इस विषय का एक बृहत् विवरण प्रकाशित किया जाय, जिसमें सब दाताओं के नाम दान की संख्या सहित प्रकाशित किए जायँ। यह रिपोर्ट सबके पास बिना मूल्य भेजी जाय।

(८) दाताओं के अधिकार इस प्रकार हों—

१—जो लोग २००) से लेकर १०००) रु० तक से इस कोष की सहायता करें उनके अधिकार स्थायी सभासदों के हों और उनके नाम एक साधारण पत्थर पर खोदकर सभा-भवन में लगा दिए जायँ।

२—जो लोग १०००) से ५०००) तक से सभा की सहायता करें उन्हें भी स्थायी सभासदों के अधिकार हों, पर उनका नाम संगमर्मर के पत्थर पर खोदकर सभाभवन में लगा दिया जाय।

३—जो लोग ५०००) अथवा इससे अधिक दें उनका चित्र सभा के भवन में लगाया जाय और उनके नाम स्वर्णाक्षरों में खोदकर लगाए जायँ तथा उन्हें स्थायी सभासदों के अधिकार हों।

४—जो इससे भी विशेष धन से सभा की सहायता करें उनका संमान विशेष रूप से किया जाय। इन लोगों तथा ५०००) या उससे अधिक दान देनेवालों के नाम प्रति वर्ष सभा के वार्षिक विवरण में छापे जायँ।

(९) जो लोग ५००) अथवा उससे अधिक दें उन्हें अधिकार हो कि कई बेर करके वे उसे एक वर्ष

में पूरा कर दें और जो ५०००) अथवा उससे अधिक दें उन्हें अधिकार हो कि कई बेर करके वे अपने दान को दो वर्ष में पूरा कर दें।

(१०) प्रबंधकारिणी सभा की अनुमति से सहायकों को अधिकार हो कि वे दो वा अधिक नामों से दान दें पर स्थायी सभासद् के अधिकार उनमें से केवल एक को ही हों।

(११) ट्रस्टी कम से कम ६ और अधिक से अधिक २५ हों। प्रबंधकारिणी सभा जब कभी उचित समझे कुछ लोगों के ट्रस्टी नियत किए जाने का प्रस्ताव साधारण सभा में करे। उनमें से जो लोग चुने जायँ उनमें से ट्रस्टियों को अधिकार हो जिसको चाहे चुनें। इस प्रकार जो लोग चुने जायँ उन्हें ट्रस्टियों के पूर्ण अधिकार हों।

(१२) ट्रस्टी अपनी ओर से हिसाब जाँचनेवाला नियत कर दें।

(१३) प्रबंधकारिणी सभा मासिक आय-व्यय के हिसाब पर यथासमय स्वयं विचार कर लिया करे।

(१४) ट्रस्टियों को प्रथम श्रेणी के सभासदों के अधिकार हों।

(१५) यदि किसी विशेष कारण से किसी महाशय का ट्रस्टियों में से अलग किया जाना आवश्यक समझा जाय तो बोर्ड आफ ट्रस्टीज और साधारण सभा के परस्पर प्रस्ताव और विचार पर उसका निर्णय सभा के वार्षिक अधिवेशन में अधिक संमति से किया जाय।

## बोर्ड आफ ट्रस्टीज के नियम

अगले वर्ष अर्थात् सभा के नवें वर्ष में 'बोर्ड आफ ट्रस्टीज' के लिये सभा ने निम्नलिखित नियम स्वीकार किए। ट्रस्टियों में लाहौर के राजा सूर्य कौल का नाम नहीं रहा और काशी के सर्वश्री साँवलदास, रामप्रसाद और राधाकृष्णदास के नाम संमिलित किए गए।

(१) काशी-नागरीप्रचारिणी सभा के स्थायी कोश का पूरा अधिकार बोर्ड आफ ट्रस्टीज को होगा। उसका यह कर्तव्य होगा कि इस कोश से जो आमदनी हो उसे नागरीप्रचारिणी सभा के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये ही केवल उस सभा की प्रबंधकारिणी सभा द्वारा व्यय करे।

(२) स्थायी कोश के मूलधन में से रुपया व्यय न किया जायगा जब तक काशी-नागरीप्रचारिणी सभा के सभासदों का ¾ भाग वैसा करने की स्पष्ट आज्ञा और संमति न दे।

(३) बोर्ड आफ ट्रस्टीज के सभासद कम से कम ६ और अधिक से अधिक २५ होंगे। ये यावज्जीवन सभासद रहेंगे अथवा जब तक कि ये स्वयं उसे छोड़ न दें। नागरीप्रचारिणी सभा का मंत्री बोर्ड का एक सभ्य होगा।

(४) जब बोर्ड के या सभा के विचार में नए ट्रस्टियों का चुना जाना आवश्यक हो तो पारी पारी से बोर्ड और सभा की ओर से ट्रस्टी चुन लिए जायँगे, जिनकी संख्या अधिक से अधिक एक बार में तीन होगी।

(५) यदि बोर्ड का कोई अधिकारी या सभासद कोई ऐसा कार्य करेगा जिससे सभा की हानि हो या उसका किसी प्रकार से उपहास हो तो वह विचारपूर्वक अपने पद से च्युत किया जायगा। इसका प्रस्ताव बोर्ड सभा के वार्षिक अधिवेशन

में करेगा और निर्णय अधिक संमति द्वारा होगा।

(६) बोर्ड अपना सभापति, दो उपसभापति और एक सहायक मंत्री चुनेगा जो ५ वर्ष तक अपने पद का कार्य करेंगे, यदि इस बीच में बोर्ड उन्हें निज पद से अलग करना उचित न समझे। पाँच वर्ष के अनंतर ये फिर भी उस पद को ग्रहण कर सकेंगे। मंत्री सभा के वार्षिक अधिवेशन में चुने जायँगे। ५ वर्ष मंत्रित्व का काम करेंगे (यदि इस बीच में सभा उन्हें अपने पद से अलग करना न चाहे) और पुनः इस पद को ५ वर्ष के पीछे ग्रहण कर सकेंगे।

(७) सभापति और उनकी अनुपस्थिति में उपसभापति सभापति का सब कार्य करेंगे और किसी विषय पर संमति का समभाग होने से उनका संमति दो के बराबर होगी।

(८) सभापति और उपसभापति दोनों की अनुपस्थिति में उपस्थित सभासदों में से कोई महाशय सभापति चुन लिए जायँ और उनकी संमति भी समविभाग होने पर दो के बराबर समझी जायगी।

(९) बोर्ड के साधारण अधिवेशन वर्ष में दो बार अर्थात् आश्विन नवरात्र और अप्रैल में होंगे। परंतु विशेष अधिवेशन सभापति अथवा मंत्री कभी भी कर सकते हैं। किंतु तीन सभासदों के लिखने पर ऐसा अधिवेशन अवश्य किया जायगा।

(१०) बोर्ड के साधारण अधिवेशनों की सूचना नियत तिथि के कम से कम १५ दिन पहिले दी जायगी और जहाँ तक संभव होगा उस अधिवेशन में क्या क्या कार्य होंगे इसकी सूचना भी दे दी जायगी। साधारण अधिवेशन में ३ और विशेष अधिवेशन में ५ सभासदों के उपस्थित होने पर कार्य हो सकेगा; परंतु यदि कोई अधिवेशन कोरम पूरा न होने के कारण न हुआ तो वह दूसरे दिन के लिये टाल दिया जायगा और उसमें बिना इस बात का विचार किए हुए कि कोरम हुआ है या नहीं कार्य का निर्वाह किया जायगा। ऐसे अधिवेशन की सूचना केवल स्थानीय सभासदों को ही दी जायगी।

(११) ट्रस्टीज को सभा के संबंध में वे ही अधिकार रहेंगे जो नागरीप्रचारिणी सभा के प्रथम श्रेणी के सभासदों को उसके नियमानुसार प्राप्त हैं।

(१२) बोर्ड की साधारण सभाओं में अन्य आवश्यक कार्यों के अतिरिक्त निम्नलिखित कार्यों का निर्वाह होगा—

१—आडीटरों का चुना जाना—इनका अवधिकाल १ जुलाई से ३० जून पर्यंत होगा। (अप्रैल)

२—नागरीप्रचारिणी सभा की प्रबंधकारिणी सभा के स्थायी कोश संबंधी बजट पर विचार। (अप्रैल)

३—स्थायी कोश की आय से जो जो कार्य हुए हों उनकी रिपोर्ट पर, जो प्रबंधकारिणी सभा प्रतिवर्ष देगी, विचार। (आश्विन)

४—सभासदों और कार्यकर्त्ताओं का चुनाव जब आवश्यक हो। (अप्रैल और आश्विन)

(१३) बोर्ड के अधिवेशनों का कार्यविवरण सभा की पत्रिका में छाप दिया जाया करेगा।

(१४) मंत्री और उसकी अनुपस्थिति में सहायक मंत्री का यह कार्य होगा कि रुपया लें, उसकी रसीद दें, उससे गवर्नमेंट प्रामेसरी नोट मोल लें, रुपया या प्रामेसरी नोट या दोनों को बैंक-बंगाल या सेविंग बंक में ( जैसा कि समय समय पर बोर्ड निश्चय करे ) जमा करावें, लौटा लेवें अथवा उन पर चेक दें और अन्य ऐसे कार्य करें जिन्हें समय समय पर बोर्ड निश्चित करे।

(१५) इन नियमों में जब कभी कुछ परिवर्त्तन करने की आवश्यकता होगी तो बोर्ड के विशेष अधिवेशन में उस पर विचार होगा और परिवर्त्तन साधारण सभा की स्वीकृति से किया जायगा।

संवत् १९८० तक संरक्षक-मंडल ( बोर्ड आव् ट्रस्टीज ) के अधीन स्थायी कोश का कार्य होता रहा। समय समय पर यथानियम उसके सदस्यों में परिवर्तन होता रहा और उसके नियमों में भी आवश्यकतानुसार संशोधन प्रवर्धन होते रहे। पहले वर्ष ४१६ दाताओं से ९०६१।।)। इस कोश के लिये एकत्र हुए। अनेक दाताओं से एक एक रुपया ही प्राप्त हुआ। सभा के कई सदस्यों को कई नगरों में इसके लिये घूमना पड़ा और इस प्रकार स्थायी कोश की नींव पड़ी। उस समय सभा के संचालकों का विचार था कि इस कोश में इतना धन एकत्र कर लेना चाहिए कि भवन-निर्माण का खर्च निकालकर उसमें कम से कम एक लाख बच रहे। इस धन-राशि के संचय और उसकी आय का उचित व्यय करने के लिये ही संरक्षक मंडल ( बोर्ड आव् ट्रस्टीज ) का निर्माण किया गया था। तेईस वर्ष तक इसने कार्य किया। किंतु बोर्ड की बैठकें करने में बड़ी कठिनता होती थी। उनके अधीन जो कार्य थे उनके अधिक रोचक अथवा विशेषत्व-पूर्ण न होने के कारण उसके सभासद् प्राय: इसकी ओर विशेष ध्यान नहीं देते थे। इसलिये श्री श्यामसुंदरदास के सुझाव के अनुसार और प्रबंधसमिति के प्रस्ताव करने पर ३ वैशाख, सं० १९८१ ( १६ अप्रैल, १९२४ ) की बैठक में सभा ने निश्चय किया कि बोर्ड तोड़ दिया जाय। और हिसाब जाँचनेवालों का चुनाव भी वार्षिक अधिवेशन में ही हुआ करे। अंतिम निर्णय के लिये यह प्रस्ताव १२ ज्येष्ठ १९८१ वि० ( २५ मई, १९२४ ) को सभा के इकतीसवें वार्षिक अधिवेशन में भी उपस्थित किया गया और स्वीकृत हो गया। इस वर्ष स्थायी कोश में कुछ भी शेष नहीं था। इकतीसवें वर्ष में 'बोर्ड आव् ट्रस्टीज' के निम्नलिखित सदस्य थे-

१—सर्वश्री राजा मोतीचंद, काशी ( सभापति ), २—रामप्रसाद चौधरी, काशी ( उपसभापति ) ३—श्यामसुंदरदास, काशी ( मंत्री ), ४—मदनमोहन मालवीय, काशी, ५—बटुकप्रसाद खत्री, काशी, ६—भगवान्दास, एम० ए०, काशी, ७—हीरालाल बी० ए०, डिप्टी कमिश्नर, नागपुर, ८—रामनारायण मिश्र, काशी, ९—गौरीशंकरप्रसाद, एडवोकेट, काशी, १०—माधवप्रसाद, काशी, ११—जस्टिस सर आशुतोष मुकर्जी, कलकत्ता, १२—वेणीप्रसाद, काशी, १३—गौरीशंकर हीराचंद ओझा, राय बहादुर, अजमेर।

बोर्ड के ये ही अंतिम सदस्य थे। बोर्ड के टूट जाने पर भी कोश के लिये प्रयत्न होता रहा। संवत् १९९४ से इसकी ओर विशेष ध्यान दिया गया। तब से आज तक श्री रामनारायण मिश्र इसके लिये निरंतर उद्योग कर रहे हैं और इसका अधिकांश श्रेय उन्हीं को है कि आज के स्थायी कोश में ४१३९९।)७ जमा हैं।

अब स्थायी कोश का धन व्यय नहीं होता। उसका ब्याज ही खर्च किया जाता है। स्थायी कोश में स्थायी सदस्यों का पूरा चंदा, साधारण सदस्यों के चंदे का कम से कम बीसवाँ अंश, उसी के निमित्त दिया हुआ धन और वार्षिक आय में से बचत का जो अंश प्रबंधसमिति दे सके, प्रति वर्ष जमा होता रहता है।

आर्थिक दृष्टि से सभा के निम्नलिखित विभाग किए जा सकते हैं—

| खर्च खाते | | वार्षिक आय के स्रोत |
|---|---|---|
| १—(क) देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला | ... | इंपीरियल बैंक के हिस्सों का ब्याज |
| (ख) बालाबख्श रा० चा० पुस्तकमाला | ... | स्टाक सर्टिफिकेट का ब्याज |
| (ग) पदक और पुरस्कार ... | ... | „ „ „ |
| (घ) साहित्य-परिषद् ... | ... | „ „ „ |
| २—(क) सूर्यकुमारी पुस्तकमाला ... | ... | पुस्तकों की बिक्री |
| (ख) देव-पुरस्कार ग्रंथावली ... | ... | „ „ |
| (ग) रुक्मिणी तिवारी पुस्तकमाला | ... | „ „ |
| (घ) रामविलास पोद्दार स्मारक ग्रंथमाला | ... | दाता से २००) वार्षिक ( १० वर्ष तक ) और पुस्तकों की बिक्री |
| (च) नवभारत ग्रंथमाला ... | ... | पुस्तकों की बिक्री |
| (छ) सत्यज्ञान पुस्तकमाला ... | ... | „ „ |
| (ज) हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों की खोज | | सरकारी वार्षिक सहायता |
| ३—(क) नागरीप्रचारिणी पत्रिका ... | ... | सभासदों का चंदा और ग्राहक शुल्क |
| (ख) कला-भवन ... | ... | सरकारी वार्षिक सहायता, विशेष चंदा, स्टाक सर्टिफिकेट का ब्याज और तीन पुस्तकों की बिक्री |
| (ग) अदालतों में नागरी-प्रचार | ... | अदालती फार्मों की बिक्री |
| ४—(क) 'हिंदी' ... | ... | ग्राहक-शुल्क और चंदा |
| (ख) आर्यभाषा-पुस्तकालय ... | ... | सरकारी सहायता, म्युनिसिपल बोर्ड की सहायता, सहायक-चंदा |
| ५—(क) पुस्तक-प्रकाशन<br>(ख) कार्यालय-वेतन<br>(ग) डाक-व्यय<br>(घ) फुटकर<br>(च) भवन-निर्माण<br>(छ) यात्रा-व्यय<br>(ज) ऋण-भुगतान | } | पुस्तकों की बिक्री,<br>स्थायी कोश का ब्याज;<br>पुस्तकमालाओं की निधियों के ब्याज से कार्यालय का खर्च |

| खर्च खाते | | | वार्षिक आय के स्रोत |
|---|---|---|---|
| ६—सत्यज्ञान-निकेतन | ... | ... | विशेष चंदा |
| ७—उत्सव आदि | ... | ... | विशेष चंदा |
| ८—अनुशीलन-विभाग | ... | ... | विशेष चंदा |

उक्त विभागों में पहले विभाग की आय दाताओं की दी हुई निधियों के ब्याज से होती है इसलिये उनमें सभा को अपने पास से कुछ नहीं लगाना पड़ता। दूसरे विभाग की मदों की कोई स्थायी निधि नहीं है, पर उनमें जो वार्षिक आय होती है उसीमें से खर्च किया जाता है, सभा अपने पास से प्रायः कुछ खर्च नहीं करती। तीसरे भाग की मदों में भी सभा को प्रायः अपने पास से खर्च नहीं करना पड़ता। यद्यपि इन मदों में आय से अधिक खर्च की आवश्यकता होती है, पर उसे रोक कर सभा आय के अनुसार ही व्यय करती है। चौथे विभाग की मदों में कम से कम खर्च करने पर भी पर्याप्त आय न होने के कारण या तो सभा को अपनी साधारण आय से खर्च करना पड़ता है अथवा विशेष रूप से चंदा एकत्र किया जाता है। पाँचवें विभाग के सब खर्चों के लिये सभा की साधारण आय पर ही निर्भर रहना पड़ता है। किंतु आय कम होने के कारण प्रतिवर्ष कुछ न कुछ घाटा उठाना पड़ता है। प्रसन्नता की बात है कि अर्द्धशताब्दी उत्सव तक सभा का समस्त ऋण चुक गया। इसका भी अधिकांश श्रेय श्री रामनारायण मिश्र को ही है। उन्हीं के अथक उद्योग से इस ऋण का भुगतान हो सका है। छठे विभाग में अब तक जो कुछ व्यय हुआ है वह सब विशेष चंदे से ही किया गया है। श्री रामनारायण मिश्र ने आवश्यकता के अनुसार पहले इसके लिये चंदा एकत्र करके यह कार्य हाथ में लिया है। भविष्य के लिये भी यही निश्चय किया गया है कि इसका कोई खर्च सभा को अपने पास से देना न पड़े। सातवें विभाग का खर्च भी विशेष चंदे के द्वारा ही किया जाता है। आठवें विभाग में ५०) मासिक की छात्रवृत्ति तीन वर्ष तक देने का वचन श्री सेठ सर पद्मपत सिंहानिया ने दिया है। भविष्य में जो और खर्च इस विभाग में बढ़ेगा उसका प्रबंध भी विशेष चंदे के द्वारा ही किया जायगा।

सभा के विगत ५० वर्षों के आय-व्यय का विस्तृत लेखा परिशिष्ट में दिया गया है।

## सभा की आवश्यकताएँ

जैसा कि पहले बताया गया है, यदि सभा को आर्थिक सुविधा मिल जाय तो वह अपने उन अनेक उपयोगी कार्यों को पूरा कर सकती है जो आर्थिक अभाव के कारण या तो अभी तक आरंभ ही न हो सके अथवा यथेष्ट प्रगति के साथ नहीं किए जा सके। जिस प्रकार सभा के कार्य बढ़ गए हैं और वह हिंदी भाषा और नागरी लिपि की अधिकाधिक सेवा करने का प्रयत्न कर रही है उसी प्रकार उसकी आर्थिक सुविधा में भी वृद्धि होना अत्यावश्यक है।

१—सभा वर्षों से प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों की खोज का कार्य कर रही है और बहुत-सा कार्य उसने इन वर्षों में किया है किंतु भारतवर्ष जैसे महादेश में यह कार्य अभी एक प्रतिशत के बराबर भी नहीं है। राजस्थान में तो एक प्रकार से कुछ हुआ ही नहीं।

वहाँ हस्तलिखित ग्रंथों के अनेक भंडार भरे पड़े हैं। न जाने कितने ग्रंथरत्न मिट्टी में मिल गए, कितनों को कीड़े चाट गए और चाटते ही चले जा रहे हैं। क्या इस साहित्यनिधि की रक्षा करना हिंदीप्रेमियों का कर्त्तव्य नहीं है? राजस्थान में ही नहीं, मध्यप्रदेश और पंजाब में भी अनेक भंडार विद्यमान हैं जिनमें खोज का कार्य कुछ भी नहीं हुआ। इस कार्य को सुचारु रूप से चलाने के लिये प्रांतीय सरकारों की सहायता के अतिरिक्त कम से कम एक लाख का स्थायी कोश सभा के पास होना आवश्यक है।

२—खोज में प्राप्त हुए प्राचीन ग्रंथों का प्रकाशन भी सभा वर्षों से कर रही है किंतु इसके लिये धन का कोई स्थायी प्रबंध न होने के कारण यह कार्य यथेष्ट परिमाण में नहीं हो पाता; कभी कभी तो आर्थिक अभाव के कारण काम रोक देना पड़ता है। हस्तलिखित ग्रंथों को प्राप्त कर सुरक्षित रखना और उन्हें संपादित कराके प्रकाशित करना अत्यंत आवश्यक है। इस कार्य के लिये भी एक लाख की स्थायी निधि सभा के पास होनी चाहिए।

३—सभा ने जो अनुशीलन विभाग खोला है उसके लिये भी धन की आवश्यकता है। ऐतिहासिक और आकर ग्रंथों का समृद्ध संग्रह उसमें रहना चाहिए। अनुशीलन करनेवाले छात्रों के अध्ययन और रहने के लिये अध्ययन-मंदिर और अतिथिशाला भी अनुशीलन-छात्रावास के रूप में होनी आवश्यक है। एक लाख से कम में इसका भी काम नहीं चल सकता।

४—सभा के भारत-कला-भवन के लिये एक समुचित भवन, उसकी साज-सज्जा, कला-पुस्तकालय, फोटोग्राफी-विभाग और एक कला-पत्रिका निकालने का प्रबंध होना भी आवश्यक है। समुचित स्थान न होने से तो कला-भवन और आर्यभाषापुस्तकालय दोनों को ही बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है। स्थान की बहुत ही तंगी है और दोनों का ही कार्य दिन दिन बढ़ता जा रहा है। इसके लिये कम से कम दो लाख का प्रबंध तो अविलंब होना चाहिए।

५—भारत के बाहर उपनिवेशों में जो भारतीय बसे हैं, वे हिंदी को भूल रहे हैं। उनमें हिंदी का प्रचार करना अत्यावश्यक है। सभा इसके लिये भी उपयुक्त आयोजन करना चाहती है। कम से कम एक लाख की निधि होने से इस कार्य को आरंभ किया जा सकता है।

६—इसी प्रकार भारत के पश्चिमी प्रांतों में भी हिंदी के सुसंघटित प्रचार की बहुत बड़ी आवश्यकता है। पंजाब, सिंध, सीमा प्रांत आदि में तो इस कार्य के लिये बहुत बड़ा क्षेत्र है और वहाँ हिंदी-प्रचार की आवश्यकता भी बहुत है। इन प्रांतों में आए दिन हिंदी पर अनेक प्रकार के प्रहार होते रहते हैं। इनसे हिंदी की रक्षा करने और हिंदी-प्रेमियों की संख्या में वृद्धि करने के लिये वहाँ हिंदी-प्रचार के सुदृढ़ केंद्र की स्थापना होनी चाहिए। श्री स्वामी सत्यदेवजी की कृपा से सभा ने इस ओर कदम तो उठाया है किंतु पर्याप्त धनराशि के बिना यह कार्य आगे नहीं बढ़ाया जा सकता। कम से कम एक लाख की निधि भी यदि आरंभ में सभा को इस कार्य के लिये मिल जाय तो निश्चिंतता के साथ कार्यारंभ हो सकता है।

७—इन सब आवश्यकताओं के समान ही सभा का स्थायी कोश पूरा करने की भी आवश्यकता है। इस कोश में कम से कम एक लाख रहना अत्यावश्यक है जिसमें ४१३६६।)७ तो एकत्र हो गया है, शेष भी शीघ्र हो जाना चाहिए।

इस प्रकार सभा को इस समय सब मिलाकर ७॥। लाख रुपयों की आवश्यकता है। हिंदी के भक्त यदि चाहें तो यह राशि बहुत शीघ्र पूरी हो सकती है।

## सभा का भविष्य

"काशी-नागरीप्रचारिणी सभा का भविष्य सचमुच बहुत उज्ज्वल है; आरंभ से अब तक इसके प्रत्येक कार्य में किसी महाशक्ति का हाथ दिखाई देता है। ईश्वर की इच्छा और कृपा के बिना परिमित साधनों से इतने बड़े कार्य सफलता के साथ कर डालना संभव नहीं है।" सभा का यह सौभाग्य है कि उसके जन्मदाता आज उसकी अर्द्धशताब्दी मनाने के लिये विद्यमान हैं। उन्हीं के शब्दों में इसके भविष्य की कल्पना करना अधिक उचित जान पड़ता है। उनको ही इसका वास्तविक अधिकार भी है। इस संबंध में उनकी भविष्य कल्पना सभा के लिये आशीर्वाद का काम देगी।

साहित्यवाचस्पति डाक्टर श्यामसुंदरदास इस संबंध में कहते हैं—"मैं इस नागरीप्रचारिणी सभा के स्थापन में सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर की शुभ इच्छा का प्रत्यक्ष अनुभव करता हूँ...। इसका बीज ऐसे शुभ स्थान में लगाया गया जान पड़ता है कि समय पर वह वट-बीज की भाँति एक महान् और व्यापी वृक्ष होकर समस्त देश में अपनी शाखाओं और उपशाखाओं की शीतल छाया से भारतवासियों में मानसिक तृप्ति के साथ भविष्य की उज्ज्वल आशा का संचार करने लगा है।...जगन्नियंता जगदीश्वर से यही प्रार्थना है कि वह इस सभा को सरस्वती की आराधना में विशेष रूप से लीन रखे और इसके कार्य-संचालकों को सदा शक्ति-संपन्न रखता हुआ महालक्ष्मी के कृपाकटाक्ष से भी वंचित न होने दे।

"इसके अतिरिक्त दो और बातें हैं जिन पर सभा की भविष्य उन्नति बहुत कुछ निर्भर है। पहली बात तो यह है कि इसके कार्यकर्त्ताओं में स्वार्थ का बिलकुल ध्यान नहीं रहना चाहिए। निःस्वार्थ भाव से सेवा करके जो फल अब तक प्राप्त हुआ है वही आगे भी सफलीभूत होता रहेगा, इसमें रत्ती भर भी संदेह नहीं। स्वार्थ को बलि चढ़ाने से सफलता हाथ बाँधे खड़ी रहेगी। दूसरी बात यह है कि यशोलिप्सा को भूलकर भी मन में न आने देना चाहिए। किसी काम को सफलतापूर्वक करने में यश तो स्वयं प्राप्त हो जाता है। बात यह है कि यश की कामना से जो काम होता है, वह आरंभ में चला भी तो थोड़े दिन में नष्ट हो जाता है। उसमें स्थायित्व नहीं रहता।

"प्रसन्नता की बात है कि वर्तमान कार्यकर्त्ताओं की दृष्टि इन बातों पर है, इसी से कार्य अग्रसर हो रहा है। फिर भी इनका स्मरण इसलिये दिलाया है कि इन बातों को ध्यान में रख कर यदि सभा के कार्यकर्त्ता उसकी उन्नति में तत्पर रहेंगे तो महामाया की लक्ष्मी और सरस्वती शक्तियाँ उन्हें निरंतर सफलता की विजय माला पहनाती रहेंगी और इसके फलस्वरूप यह सभा भारत में एक महती शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित होकर चिरजीविनी होगी। भगवान् करे, ऐसा ही हो।

"हिंदी भाषा और साहित्य का वर्त्तमान रूप जिसका बहुत कुछ श्रेय काशी नागरीप्रचारिणी सभा को और उसके साथ सहयोग कर उसके कार्यों का निःस्वार्थ भाव से संचालन करनेवाले महानुभावों को

है, बड़ा ही चमत्कारपूर्ण है। इसमें उत्तरोत्तर उन्नति के बीज वर्त्तमान हैं, जो समय पाकर अवश्य पल्लवित और पुष्पित होंगे। वर्त्तमान युग में जिन गुणों का सब बातों में होना स्वाभाविक और आवश्यक है वे सब हिंदी भाषा और साहित्य के विकास में स्पष्ट देख पड़ते हैं और उनमें काल का धर्म भी पूर्णतया प्रतिबिंबित है। इस अवस्था में जीवन है, प्राण है, उत्साह है, उमंग है और सबसे बढ़कर बात यह है कि भविष्योन्नति के मार्ग पर दृढ़तापूर्वक अग्रसर होने की शक्ति और कामना है। जिनमें ये गुण हैं, वे अवश्य उन्नति करते हैं। हिंदीभाषा और साहित्य का और साथ ही काशी नागरीप्रचारिणी सभा का भविष्य बड़ा ही उज्ज्वल और मनोरम देख पड़ता है। आदर और संमान के पात्र वे अनुभाव होंगे जो अपने कार्य द्वारा इसके मार्ग के कंटकों, और झाड़-झंखाड़ों को दूर कर उसे सुगम्य, प्रशस्त और सुरम्य बना देंगे।"

सभा के भविष्य के विषय में श्री रामनारायण मिश्र का कथन है—"संसार के समस्त सभ्य देशों में सार्वजनिक जीवन के प्रत्येक पहलू से संबंध रखनेवाली संस्थाएँ हैं। हमारे भारत में भी हैं। संस्थाएँ देश की संघशक्ति की साक्षी स्वरूप हैं, पर भारत की संस्थाओं में दृढ़ता, एकता और चिरजीवी होने के गुण प्रायः कम पाए जाते हैं। अन्य देशों में ऐसी सभा-समितियाँ हैं जो सैकड़ों बरसों से चली आ रही हैं। उनके संचालक सोचते रहते हैं कि किस प्रकार उनका भविष्य अधिक से अधिक उज्ज्वल बनाया जा सकता है; किंतु हमारे देश में समस्या यह रहती है कि किस प्रकार हम एक संस्था को जीवित रखें। ऐसी अवस्था में यदि कोई संस्था ५० वर्ष की आयु प्राप्त कर ले तो वह बधाई और प्रोत्साहन पाने की पात्र है। परमेश्वर की कृपा से काशी नागरीप्रचारिणी सभा आज इसी कोटि में पहुँच गई है।

"...यह सभा कैसे बढ़ी, इसके सामने कितनी कठिनाइयाँ आईं, इसको किससे कितनी सहायता मिली, ये बातें तो सभा के ५० बरसों के विवरणों में मिलेंगी—पर एक बात अवश्य उल्लेखनीय है। वह यह कि इसमें कभी सांप्रदायिक अथवा व्यक्तिगत भेदभाव नहीं उत्पन्न हुआ। झगड़े हुए, पर दलबंदी नहीं हुई। मनुष्यों के स्वभाव में अंतर होता ही है। एक में तमोगुण प्रधान होता है तो दूसरे में रजोगुण, तीसरे में सत्त्वगुण और किसी किसी में सब गुणों का समन्वय। वही संस्था चिरजीवी हो सकती है, जिसमें भिन्न भिन्न स्वभाव के लोग शिष्टता की सीमा का उल्लंघन नहीं करते और परस्पर प्रेम और श्रद्धा बनाए रखते हैं। मतभेद हुआ ही करता है—होना स्वाभाविक भी है—पर 'हृदय-भेद' न होना चाहिए। इस सभा में ऐसा ही रहा है। यही कारण है कि देखते देखते इसने ५० बरस बिता दिए और इतना अधिक कार्य किया।

"सभा को साधारण जनता, सरकार और राजा-महाराजाओं से बराबर आर्थिक सहायता मिलती आई है। इसकी अर्द्धशताब्दी हिंदी के लिये युग-प्रवर्त्तक होनी चाहिए, परंतु यह तभी हो सकता है जब इसको हिंदी-जगत् से प्रोत्साहन प्राप्त हो। ईश्वर की इच्छा होगी तो इसका भविष्य उज्ज्वल ही होगा।"

# परिशिष्ट—१

## प्रथम वर्ष के सभासदों की सूची

१—सर्वश्री १०८ महाराजा बालकृष्णलालजी काकरौली नरेश।
२—डा० जी० ए० ग्रियर्सन, बी० ए०, सी० आई० ई०, पी-एच० डी० कलकत्ता।
३—आनरेबुल राजा रामपालसिंह—कालाकाँकर।
४—राजा शशिशेखरेश्वर राय—तिलहारा।
५—मदनमोहन मालवीय, बी० ए०, एल्-एल० बी०, इलाहाबाद।
६—उपाध्याय पं० बदरीनारायण चौधरी—मिर्जापुर।
७—राधाचरण गोस्वामी—वृंदावन।
८—गदाधरसिंह—इटावा।
९—गोपीनाथ शर्म्मा—लाहौर।
१०—म० कु० बाबू रामदीनसिंह—बाँकीपुर।
११—रामशंकर व्यास—चकिया।
१२—उदयनारायण पंड्या—जहानाबाद।
१३—कवि वचनेश मिश्र—कालाकाँकर।
१४—पुरुषोत्तमदास—लखनऊ।
१५—कालीप्रसाद शर्म्मा—कलकत्ता।
१६—देवदत्त शर्म्मा—कालाकाँकर।
१७—शीतलप्रसाद उपाध्याय—कालाकाँकर।
१८—साहित्याचार्य पं० अंबिकादत्त व्यास—भागलपुर।
१९—दीनदयालु शर्म्मा—दिल्ली।
२०—रामनारायण वाजपेयी—बिठूर।
२१—जगन्नाथप्रसाद—वर्धा।
२२—गंगाप्रसाद अग्निहोत्री—नागपुर।
२३—रामनारायणसिंह—गाजीपुर।
२४—रामेश्वरदत्त तिवारी—जौनपुर।
२५—नंदलाल वर्म्मा—मथुरा।
२६—उदितनारायणलाल—गाजीपुर।
२७—देवीलाल—जगदीशपुर।
२८—श्रीधर पाठक—इलाहाबाद।
२९—मुंशी समर्थदानजी—अजमेर।
३०—कुँवर फतेहलाल मेहता—उदयपुर।
३१—कुँवर जोधसिंह मेहता—उदयपुर।
३२—बृजमोहनलाल—इलाहाबाद।
३३—लक्ष्मीनारायण पांडे—जौनपुर।
३४—सरजूप्रसाद मिश्र—जौनपुर।
३५—ज्वालादत्त—लाहौर।
३६—नंदकिशोरदेव शर्म्मा—अमृतसर।
३७—प्यारेलाल मिश्र—नागपुर।
३८—बेनीमाधव—शाहपुर।
३९—महामहोपाध्याय पं० सुधाकर द्विवेदी।
४०—राधाकृष्णदास
४१—कार्तिकप्रसाद।
४२—रामकृष्ण वर्म्मा।
४३—देवकीनंदन खत्री।
४४—जगन्नाथदास, बी० ए०।
४५—माताप्रसाद, एम० ए०।
४६—मुरलीधर नागर, एम० ए०।

४७—इंद्रनारायणसिंह, बी० ए०।
४८—संकटाप्रसाद।
४९—पन्नालाल।
५०—अमीरसिंह।
५१—ठाकुरदास।
५२—जगन्नाथ मेहता।
५३—गोकुलनाथ शर्म्मा।
५४—लक्ष्मीनारायण गुप्त।
५५—जगन्नाथप्रसाद, बी० ए०।
५६—उमाप्रसाद।
५७—जगदेवप्रसाद।
५८—अयोध्यानाथ शर्म्मा।
५९—सरजूप्रसादसिंह।
६०—पन्नालाल शर्म्मा।
६१—हरनंदन जोशी।
६२—केशवप्रसाद।
६३—भवानीदत्त जोशी।
६४—रामनारायण मिश्र।
६५—अच्युतप्रसाद द्विवेदी।
६६—शिवकुमारसिंह।
६७—उमरावसिंह।
६८—गोपालप्रसाद।
६९—जयकृष्णदास।
७०—भैरोलाल।
७१—बटुकप्रसाद।
७२—देवकीनंदन।
७३—प्रह्लादप्रसाद।
७४—हरदेवप्रसाद।
७५—सूरजप्रसाद।
७६—शिवरामदास।
७७—मनोहरलाल।
७८—विश्वनाथसरनसिंह।
७९—रमेशदत्त पांडे।
८०—गुरुनारायणसिंह।
८१—नंदगोपाललाल।
८२—श्यामसुंदरदास।

———

# परिशिष्ट—२

## संरक्षक

संवत् १९६१ १—श्रीमान् मुख्तार-उल्-मुल्क अजीम-उल्-इक्तिदार रफी-उश्शान बाला शिकोह मोह-तशमे दौरान उम्दतुल-उम्रा महाराजाधिराज आलीजाह हिसम-उस्-सलतनत कर्नल महाराज सर माधवराव सिंधिया बहादुर श्रीनाथ मन्सूरे-जमाँ फिद्वी-ए-हजरत-ए-मलिक-ए-मुअजम रफी-उद्दारा-ए-इँगलिस्तान, जी० सी० एस० आई०, जी० सी० वी० ओ०, ए० डी० सी०, एल्-एल० डी०, जी० सी० एल० एल०—ग्वालियर।

संवत् १९६२—६८ १—महाराज बहादुर सर माधवराव सिंधिया, ग्वालियर (उपाधियाँ पूर्ववत्)

२—श्री सम्राज महाराजाधिराज श्री महाराजा बहादुर श्री महाराजा साहिब वेंकटरमण सिंह जू देव, जी० सी० एस० आई०—रीवाँ।

संवत् १९६९ १—महाराज बहादुर सर माधवराव सिंधिया, ग्वालियर (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

२—महाराज बहादुर श्री वेंकटरमणसिंह जू देव, रीवाँ (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

३—महाराज सर सयाजीराव गायकवाड़, जी० सी० एस० आई०, बड़ौदा।

४—श्रीमान् महाराज सर गंगासिंह बहादुर, जी० सी० एस० आई०, बीकानेर।

संवत् १९७०—७२ १—महाराज बहादुर सर माधवराव सिंधिया, ग्वालियर (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

२—महाराज बहादुर वेंकटरमणसिंह जू देव, रीवाँ (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

३—महाराज सर सयाजीराव गायकवाड़, बड़ौदा (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

४—महाराज सर गंगासिंह बहादुर, बीकानेर (उपाधियाँ पूर्ववत्)

५—श्रीमान् महाराज विश्वनाथसिंह जू देव बहादुर, छत्रपुर।

६—श्रीमान् महाराजा सर प्रभुनारायणसिंह बहादुर, जी० सी० आई० ई०, काशी।

७—महाराजा सवाई जयसिंह बहादुर, अलवर।

संवत् १९७३—७४

१—महाराज बहादुर सर माधवराव सिंधिया, ग्वालियर (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

२—महाराज बहादुर वेंकटरमणसिंह जू देव, रीवाँ (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

३—महाराज सर सयाजीराव गायकवाड़, बड़ौदा (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

४—महाराज सर गंगासिंह बहादुर, बीकानेर (उपाधियाँ पूर्ववत्)

५—महाराज विश्वनाथसिंह जू देव, छत्रपुर (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

६—महाराजा सर प्रभुनारायण सिंह, काशी (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

७—महाराजा सवाई जयसिंह बहादुर, अलवर (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

८—श्रीमान् महाराजा सर प्रतापसिंह इंद्र महेंद्र बहादुर सिपरे-सलतनत, जी० सी० एस० आइ०, काश्मीर।

९—श्रीमान् महाराव मेजर सर उम्मेदसिंह जी बहादुर, के० सी० एस० आई०, कोटा।

१०—श्रीमान् राय रायाँ महारावल श्री सर विजयसिंह जी बहादुर, के० सी० एस० आई०, डूँगरपुर।

११—श्रीमान् राजराना भवानीसिंह बहादुर, झालावाड़।

संवत् १९७५—७७

१—महाराज बहादुर सर माधवराव सिंधिया, ग्वालियर (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

२—श्रीमान् महाराज सर सयाजीराव गायकवाड़, बहादुर, जी० सी० एस० आई०, सैना खास खेल शमशेर बहादुर, बड़ौदा।

३—श्रीमान् मेजर जनरल महाराजा सर गंगासिंह बहादुर, जी० सी० एस० आई०, जी० सी० आई० ई०, के० सी० बी०, ए० डी० सी०, एल्-एल० डी०, बीकानेर।

४—महाराज विश्वनाथसिंह जू देव, छत्रपुर (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

५—महाराजा सर प्रभुनारायण सिंह, काशी (उपाधियाँ पूववत्)।

६—श्रीमान् लेफ्टिनेंट कर्नल महाराज सवाई सर जयसिंह

बहादुर, के० सी० एस० आई०, के० सी० आई० ई०, अलवर।

७—श्रीमान् मेजर जनरल महाराजा सर प्रतापसिंह इंद्र महेंद्र बहादुर, सिपरे सलतनत, जी० सी० एस० आई०, जी० सी० आई० ई०, जी० बी० ई०, काश्मीर।

८—श्रीमान् महाराज लेफ्टिनेंट कर्नल सर उम्मेदसिंह बहादुर, जी० सी० एस० आई०, जी० सी० आई० ई०, जी० बी० ई०, कोटा।

६—श्रीमान् महाराज राना सर भवानीसिंह बहादुर, के० सी० एस० आई०, एम० आर० ए० एस०, झालावाड़।

संवत् १६७८—७६ १ से ६ तक पूर्ववत्।

१०—श्रीमान् राजाधिराज सर नाहर सिंह बहादुर, के० सी० एस० आई०, शाहपुरा।

संवत् १६८०—८१ १ से १० तकपूर्ववत्।

११—श्रीमान् महाराजा गुलाबसिंह जू देव बहादुर, रीवाँ।

संवत् १६८२—८४ १—महाराज सर सयाजीराव गायकवाड़, बड़ौदा (उपाधियाँ पूर्ववत्)

२—महाराज सर गंगासिंह बहादुर बीकानेर (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

३—महाराज विश्वनाथसिंह जू देव, छत्रपुर (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

४—महाराजा सर प्रभुनारायण सिंह, काशी (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

५ महाराजा सवाई जयसिंह बहादुर, अलवर (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

६—महाराव सर उम्मेदसिंह बहादुर, कोटा (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

७—राजराना भवानीसिंह बहादुर, झालावाड़ (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

८—राजाधिराज सर नाहरसिंह बहादुर, शाहपुरा (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

६—महाराजा गुलाबसिंह जू देव बहादुर, रीवाँ।

संवत् १६८५—८७ १—महाराज सर सयाजीराव गायकवाड़, बड़ौदा(उपाधियाँ पूर्ववत्)।

२—महाराज सर गंगासिंह बहादुर, बीकानेर (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

३—महाराज विश्वनाथसिंह जू देव, छत्रपुर (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

४—महाराजा सर प्रभुनारायण सिंह, काशी (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

५—महाराजा सवाई जयसिंह बहादुर, अलवर (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

६—महाराव सर उम्मेदसिंह बहादुर, कोटा (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

७—राजाधिराज सर नाहरसिंह बहादुर, शाहपुरा (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

८—महाराजा गुलाबसिंह जू देव बहादुर, रीवाँ।

संवत् १९८८ १. महाराज सर सयाजीराव गायकवाड़, बड़ौदा (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

२. महाराज सर गंगासिंह बहादुर, बीकानेर (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

३. महाराजा सवाई जयसिंह बहादुर, अलवर (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

४. महाराज सर उम्मेदसिंह बहादुर, कोटा (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

५. राजाधिराज सर नाहरसिंह बहादुर, शाहपुरा (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

६. महाराजा गुलाबसिंह जू देव बहादुर, रीवाँ।

संवत् १९८९ १—महाराज सर सयाजीराव गायकवाड़, बड़ौदा (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

२—महाराज सर गंगासिंह बहादुर, बीकानेर (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

३—महाराजा सवाई जयसिंह बहादुर, अलवर (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

४—महाराज सर उम्मेदसिंह बहादुर, कोटा (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

५—महाराजा गुलाबसिंह जू देव बहादुर, रीवाँ।

संवत् १९९०—९३ १ से ५ तक पूर्ववत्

६—श्रीमत्सवाई महेंद्र महाराजाधिराज श्री वीरसिंह जू देव बहादुर, के० सी० आई० ई०, ओरछा।

७—श्रीमान् महाराज सर आदित्यनारायणसिंह, सी० एस० आई०, काशी।

संवत् १९९४ १—महाराज सर सयाजीराव गायकवाड़, बड़ौदा (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

२—महाराज सर गंगासिंह बहादुर बीकानेर (उपाधियाँ पूर्ववत्)।,

३—श्रीमान् महाराज लेफ्टिनेंट कर्नल सर उम्मेदसिंह बहादुर, जी० सी० एस० आई०, जी० सी० आई० ई०, जी० बी० ई०, एल्-एल० डी०, कोटा।

४—महाराजा गुलाबसिंह जू देव बहादुर, रीवाँ।

५—श्रीमान् महाराज सर आदित्यनारायणसिंह बहादुर, के० सी० एस० आई०, एल्-एल० डी०, काशी।

६—सवाई महेंद्र महाराजा वीरसिंह जू देव, ओरछा (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

संवत् १९९५—९६ १—महाराज सर गंगासिंह बहादुर, बीकानेर (उपाधियाँ पूर्ववत्)

२—महाराज सर उम्मेदसिंह बहादुर कोटा (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

३—महाराजा गुलाबसिंह जू देव बहादुर, रीवाँ।

४—सवाई महेंद्र महाराजा वीरसिंह जू देव, ओरछा (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

५—श्रीमान् महाराना साहब सर भूपालसिंह बहादुर, के० सी० आई० ई०, जी० सी० एस० आई०, उदयपुर।

संवत् १९९७—९८ १—महाराज सर गंगासिंह बहादुर, बीकानेर (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

२—श्रीमान् हिज हाइनेस महाराजा गुलाबसिंह जू देव बहादुर, रीवाँ।

३—श्रीमान् हिज हाइनेस सवाई महेंद्र महाराजाधिराज सर वीरसिंह जू देव, बहादुर, के० सी० एस० आई०, ओरछा।

४—श्रीमान् हिज हाइनेस महाराना सर भूपालसिंह बहादुर, के० सी० आई० ई०, जी० सी० एस० आई०, उदयपुर।

संवत् १९९९-२००१ १—श्रीमान् महाराजा गुलाबसिंह जू देव बहादुर, रीवाँ (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

२—श्रीमान् सवाई महेंद्र महाराजाधिराज सर वीरसिंह जू देव बहादुर, ओरछा (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

३—श्रीमान् महाराना साहब सर भूपालसिंह बहादुर, उदयपुर (उपाधियाँ पूर्ववत्)।

४—श्रीमान् हिज हाइनेस महाराजाधिराज महाराजा महिमहेंद्र महाराव राजाजी श्रीभीमसिंह जी साहब बहादुर, कोटा।

५—श्रीमान् महाराजाधिराज श्री कर्नल हिज हाइनेस नरेंद्र-शिरोमणि श्रीशार्दूलसिंहजी बहादुर, बीकानेर।

# परिशिष्ट—४

## सभा के कार्यों की संक्षिप्त सूची

### ( सं० १९५० से सं० २००० तक )

| | | |
|---|---|---|
| १—१९५० | स्थापना | ३२ आषाढ़, १९५० वि० ( १६ जूलाई १८९३ ) को स्थापित संस्थापक—सर्वश्री श्यामसुंदरदास, रामनारायण मिश्र, शिवकुमार सिंह। नियम-निर्माण। |
| ” | मुख्य मुख्य कार्यों का बीजारोपण | प्राचीन हिंदी हस्तलिखित पुस्तकों की खोज, शब्द-कोश, भाषा का इतिहास, हिंदी-हस्तलिपि-परीक्षा आदि कार्यों का निश्चय। |
| ” | नागरी-भंडार | सभा ने पहले 'नागरी-भंडार' नाम का पुस्तकालय खोला था। आगे चलकर यह आर्यभाषा पुस्तकालय में मिला दिया गया। |
| २—१९५१ | नागरी-प्रचार | माल विभाग के कागज नागरी में भी भरे जाने के लिये लिखा-पढ़ी। कायस्थ बालकों को हिंदी पढ़ाने का अनुरोध। |
| ” | हिंदी-व्याकरण | हिंदी व्याकरण बनवाने के लिये स्वर्णपदक की घोषणा। हिंदी का व्याकरण तैयार कराने के लिये एक कमेटी बनी और उत्तम व्याकरण के लिये ५००) पुरस्कार की घोषणा की गई। सं० १९६६ में दो व्याकरणों के आधार पर ग्रंथ लिखने का कार्य श्री कामताप्रसाद गुरु को सौंपा गया। सं० १९७७ में व्याकरण संपूर्ण छप गया। सं० १९८२ में फिर संशोधित होकर छपा। इसके कई संक्षिप्त संस्करण भी निकले हैं। |
| ” | हिंदी-संकेतलिपि | हिंदी में संकेत-लिपि (शार्टहैंड) तैयार कराने का आयोजन। |
| ३—१९५२ | नागरीप्रचारिणी पत्रिका | पहले त्रैमासिक रूप में निकली। सं० १९६४ में मासिक हुई। सं० १९७७ में फिर त्रैमासिक हो गई और मुख्यतः शोध संबंधी लेख निकलने लगे। सं० १९९५ में इसके उद्देश्य विस्तृत कर दिए गए और संपादक-मंडल बना दिया गया। |
| ” | नागरी कैरेक्टर | इस नाम की पुस्तक छपी जिसमें नागरी और रोमन लिपि के दोष-गुण दिखाए गए। |

| | | |
|---|---|---|
| ४—१९५३ | माल विभाग में नागरी | सभा की प्रार्थना पर संयुक्त प्रांत के माल विभाग ने हिंदी में भी समन आदि भराना स्वीकार किया। |
| " | आर्यभाषा पुस्तकालय | श्री गदाधर सिंह ने सभा को प्रदान किया। सं० १९५५ में अपनी सब संपत्ति पुस्तकालय को दी और उनकी मृत्यु होने पर उनकी स्मृति में नागरी-भंडार इस पुस्तकालय में मिला कर सभा ने इसका नाम 'आर्यभाषा पुस्तकालय' स्वीकार किया। |
| ५—१९५४ | संयुक्त प्रांत की अदालतों में नागरी | ६०००० हस्ताक्षर कराके उनकी १६ जिल्दों के साथ ले० गवर्नर सर ऐंटनी मेकडानल को नागरी मेमोरियल दिया और उनसे सभा का प्रतिनिधि-मंडल मिला, फलस्वरूप २१ अप्रैल, १९०० को सरकारी आज्ञा निकली जिससे अदालतों में नागरी को स्थान मिला। |
| " | पाठ्य पुस्तकें | संयुक्त प्रांत के डाइरेक्टर ने टेक्स्टबुक कमेटी में सभा का एक प्रतिनिधि रखना स्वीकार किया। सं० १९५५ में पहले-पहल सभा की पुस्तकें स्वीकार हुईं। तब से बराबर स्वीकार होती रही हैं। |
| " | नागरी पाठशाला | नागरी लिपि में शिक्षा देने के लिये खोली गई थी। |
| ६—१९५५ | सभा की रजिस्टरी | २१ भाद्रपद सं० १९५५ ( ६ सितंबर, १८९८ ) को ऐक्ट २१ सन् १८६० के अनुसार हुई। |
| " | वैज्ञानिक कोष | पहले एक संपादन समिति बनाई गई। सं० १९५७ में पंजाब, बिहार और बंगाल की सरकारों ने संमति के लिये अपने प्रतिनिधि भेजे और कुछ भाग छपा। सं० १९६२ में यह संपूर्ण छप गया। सं० १९८२ में संशोधन के लिये भिन्न-भिन्न विषयों की समितियाँ बनीं, पर चार ही विषय संशोधित होकर छप सके। |
| " | संकेत लिपि | पहले पं० अंबिकादत्त व्यास ने कुछ चिह्न बनाए। सं० १९६६ में एक पुस्तक तैयार कराके इँगलैंड में छपाई गई। किंतु उस समय उसकी शिक्षा का समुचित प्रबंध न हो सका। सं० १९९४ में विजया दशमी को माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टंडन ने सभा के संकेत-लिपि-विद्यालय का उद्घाटन किया जिसमें हिंदी टाइपराइटिंग भी सिखाया जाता था। |

७—१९५६ सरस्वती

सभा के अनुमोदन पर, उसी के तत्त्वावधान में और उसके पाँच सदस्यों के संपादकत्व में यह मासिक पत्रिका इंडियन प्रेस, प्रयाग से पहले पहल निकली।

" भाषा और लिपि संबंधी प्रश्न

इस विषय के प्रश्नों पर विचार करने के लिये एक समिति बनी जिसकी रिपोर्ट अँगरेजो में सं० १९५९ में छपी।

" हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों की खोज

इस वर्ष आरंभ हुई। संयुक्त प्रांतीय सरकार ने ४००) वार्षिक देना स्वीकार किया। इसकी रिपोर्ट सरकार स्वयं छपाने लगी। सं० १९५९ में सहायता ५००) वार्षिक हो गई। सं० १९७३ में १०००) और सं० १९७८ से २०००) वार्षिक मिलने लगे जो अभी तक बराबर मिल रहे हैं। सं० १९७० में ५००) छत्रपुर नरेश ने दिए थे। संयुक्त प्रांत के अतिरिक्त सं० १९६३ में यह कार्य दतिया, चर्खारी और पन्ना राज्यों में, सं० १९७७ से तीन वर्ष पंजाब में और संवत् १९८७ में आठ महीने दिल्ली में भी हुआ। पंजाब सरकार ने ५००) वार्षिक तीन वर्ष तक तथा दिल्ली सरकार ने केवल ५७०) दिया था।

८—१९५७ नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला

यह श्री राधाकृष्णदास के संपादकत्व में निकलनी आरंभ हुई। इसमें प्राचीन कवियों के ग्रंथ प्रकाशित हुए हैं। पृथ्वीराज रासो जैसा बड़ा ग्रंथ इसी माला में छपा है। इसमें सब ३६ ग्रंथ निकल चुके हैं।

" प्रचार एजेंट

यह संयुक्त प्रांत में नागरी-प्रचार के लिये रखा गया था जिसने दो बार में संपूर्ण संयुक्त प्रांत का भ्रमण कर प्रचार किया।

" युनिवर्सिटी कमीशन के सामने साक्षी

१९ चैत्र, १९५७ वि० ( २ अप्रैल, १९०१ ) को काशी में युनिवर्सिटी कमीशन के सामने सभा की ओर से श्री गोविंददास ने हिंदी की पढ़ाई के पक्ष में साक्षी दी जिससे कमीशन ने अनुकूल रिपोर्ट दी।

९—१९५८ भवन और भूमि

वर्त्तमान स्थान के पूर्व सभा 'नार्मल स्कूल', नीची बाग के श्री जीवनदास वाले मकान, बुलानाला पर श्री प्रमदादास मित्र के मकान, पुराने हरिश्चंद्र स्कूल, हरिप्रकाश यंत्रालय और फिर बुलानाले पर किराए के एक मकान में रही। इस वर्ष ३५००) की भूमि ली गई जिसकी रजिस्टरी सं० १९५९ में हुई। ६ पौष,

१९५९ को श्रीमान् काशीनरेश महाराज प्रभुनारायण सिंह ने भवन की नींव रखी। ६ फाल्गुन सं० १९६० ( १८ फरवरी, १९०४ ) को गृहप्रवेशोत्सव हुआ। सं० १९८० में ४०००) की और भूमि ली गई। सं० १९८२ में २३४००) संयुक्त प्रांत की सरकार ने दिए और दो मंजिला भवन बना। सं० १९८२ में राय कृष्ण जी ने १५०००) की लागत का एक भवन दान दिया। सं० १९८५ में महामना श्री मदनमोहन मालवीय ने नए भवन की नींव रखी।

१०—१९५९ यूरोप में एजेंसी

इँगलैंड और जर्मनी में पुस्तकों की बिक्री के लिये एजेंट नियत किए गए।

११—१९६० ग्वालियर में हिंदी-प्रचार

इस वर्ष ग्वालियर में विशेष रूप से हिंदी-प्रचार हुआ।

१२—१९६१ व्याख्यानमाला

सुबोध व्याख्यानमाला आरंभ की गई। सं० १९६२ में इँगलैंड से स्लाइड और मैजिक लालटेन खरीदी गई। सं० १९७६ तक व्याख्यानमाला चलती रही, फिर बंद हो गई। सं० १९९४ में 'प्रसाद' व्याख्यानमाला के रूप में यह सिलसिला फिर जारी किया गया जो अब तक चल रहा है।

१४—१९६३ डा० छन्नूलाल पदक तथा पुरस्कार

सं० १९६३ में श्री रामनारायण मिश्र ने अपने व्यय से प्रति वर्ष यह पदक देना आरंभ किया। सं० १९७६ में उन्होंने १०००) की एक निधि दी जिससे २००) का डा० छन्नूलाल पुरस्कार विज्ञान के उत्तम ग्रंथ पर दिया जाता है।

१५—१९६४ हिंदी शब्दकोश

रेवरेंड ई० ग्रीव्स के प्रस्ताव पर कोश तैयार कराने का निश्चय हुआ। एक समिति ने मूलसिद्धांत स्थिर किए। २२ वर्षों में ९३११५ शब्दों का यह कोश १०८७१९।।।=) ७३ के व्यय से तैयार हुआ। इसकी समाप्ति पर सं० १९८५ में उत्सव हुआ और प्रधान संपादक श्री श्यामसुंदरदास को कोशोत्सव-स्मारक-संग्रह तथा अन्य संपादकों को घड़ी और फाउंटेन पेन भेंट किए गए।

१६—१९६५ रेडिचे पदक

सभा के सहायक काशी के कलक्टर के नाम पर यह पदक देने का निश्चय हुआ। सं० १९६५ में सभा ने इसकी १००) की निधि भी स्थापित कर दी।

| | |
|---|---|
| १९६५ राधाकृष्णदास पदक | श्री राधाकृष्णदास के नाम पर इस वर्ष से यह पदक देना आरंभ हुआ। सं० १९९४ में श्री शिवप्रसाद गुप्त ने १००) की निधि इसके लिये सभा को दी। |
| १८—१९६७ हिंदी-साहित्य-संमेलन | इसका प्रथम अधिवेशन सभा में पं० मदनमोहन मालवीय के सभापतित्व में हुआ। फिर २८ वाँ अधिवेशन सभा ही में सं० १९८६ में श्री अंबिकाप्रसाद वाजपेयी के सभापतित्व में हुआ। |
| २०—१९६९ संरक्षक | इस वर्ष महाराज बड़ोदा और बीकानेर, सं० १९७० में बनारस, छत्रपुर, अलवर के नरेश, सं० १९७३ में काश्मीर, कोटा, डूँगरपुर, झालावाड़ के नरेश, सं० १९८९ में ओड़छा, काशी और नेपाल के नरेश सं० १९९६ में श्रीमान् उदयपुर नरेश और २००० में नए बीकानेर नरेश सभा के संरक्षक चुने गए। |
| २२—१९७१ मनोरंजन पुस्तकमाला | इसका प्रकाशन आरंभ हुआ। इसमें अब तक ५४ पुस्तकें छप चुकी हैं। |
| २४—१९७३ जोधसिंह पुरस्कार | उदयपुर के मेहता जोधसिंह ने इसके लिये १०००) दिया जिससे एक निधि स्थापित हुई। उसके व्याज से २००) का पुरस्कार इतिहास के उत्तम ग्रंथ के लिये दिया जाता है। |
| २६—१९७५ देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला | जोधपुर के मुंशी देवीप्रसाद ने बंबई बंक के ७ हिस्से ऐतिहासिक पुस्तकमाला निकालने के लिये दिए। इनका अंकित मूल्य ३५००) और क्रय मूल्य १०५००) था। फिर इसे बदल कर इंपीरियल बंक के सात हिस्से ३५००) के और १४ हिस्से १७५०) के लिए गए। इस माला में अब तक १५ पुस्तकें निकल चुकी हैं। |
| २७—१९७६ सूर्यकुमारी पुस्तकमाला | शाहपुराधीश श्रीमान् महाराज उम्मेदसिंह के दान से यह माला निकलनी आरंभ हुई। इसके लिये सभा को कुल १९९८४) मिले। इसमें अब तक १८ पुस्तकें निकल चुकी हैं। |
| २९—१९७८ रत्नाकर पुरस्कार | श्री जगन्नाथ दास 'रत्नाकर' ने १८३५) इसलिये सभा को दिए कि एक निधि स्थापित करके उसके व्याज से २००)—२००) के दो रत्नाकर-पुरस्कार हिंदी की सर्वोत्तम काव्य पुस्तकों पर दिए जायँ। |
| ३०—१९७९ बालाबख्श राजपूत चारण पुस्तकमाला | जयपुर के बारहट बालाबख्श जी ने ७०००) सभा को दिए जिसकी निधि के व्याज से डिंगल और पिंगल के ग्रंथ प्रकाशित होते हैं। अब तक ९ पुस्तकें निकल चुकी हैं। |

१९७९ बटुकप्रसाद पुरस्कार — रायबहादुर श्री बटुकप्रसाद खत्री ने १०००) दिए। इसकी निधि के व्याज से उत्तम नाटक या उपन्यास पर २००) का पुरस्कार दिया जाता है।

३२—१९८० द्विवेदी-संग्रह — आर्यभाषा पुस्तकालय को आचार्य श्री महावीरप्रसाद द्विवेदी ने अपना बहुत सा संग्रह प्रदान किया। शेष उनके भानजे से सं० १९९९ में प्राप्त हुआ, इस संग्रह में ४३२१ पुस्तकें हैं।

३३—१९८२ सुधाकर-पदक — इस पदक के लिये १००) की निधि श्री गौरीशंकर प्रसाद ने दी जिसके व्याज से श्री सुधाकर द्विवेदी के नाम से यह पदक दिया जाता है।

" गुलेरी-पदक — पहले श्री श्यामसुंदरदास ने अपने व्यय से श्री चंद्रधर शर्मा गुलेरी के नाम से यह पदक देना आरंभ किया। सं० १९९५ में श्री जगद्धर शर्मा गुलेरी ने १००) की एक निधि इसके लिये दी जिसके व्याज से यह पदक दिया जाता है।

३६—१९८५ द्विवेदी-पदक — श्री महावीरप्रसाद द्विवेदी ने हिंदी की सर्वोत्तम पुस्तक पर स्वर्ण पदक देने के लिये १०००) दिया जिससे एक निधि स्थापित कर दी गई। उसके व्याज से यह पदक दिया जाता है।

" कलाभवन — श्री राय कृष्णदास ने भारतकला परिषद् की सामग्री सभा के संग्रहालय को दी जिसका नाम भारत कलाभवन रखा गया। १९ फाल्गुन, सं० १९८६ (३ मार्च, १९३०) को श्री अर्धेंदुकुमार गांगुली द्वारा कलाभवन का उद्घाटन हुआ। कला परिषद् के सदस्यों ने सं० १९९३ में उसे सभा में मिलाने की संमति दी। सं० १९९५ में प्रांतीय सरकार से २२००) मिला, सं० १९९६ में २५००) वार्षिक सहायता सरकार ने देनी आरंभ की जो १९९९ में स्थायी हो गई। सं० १९९६ में मूर्तिमंदिर बना। सं० १९९७ में राजघाट की वस्तुएँ मिलीं जिनको सजा कर रखने के लिये सं० १९९९ में श्री जुगुलकिशोर बिड़ला ने २०००) प्रदान किए। इसी वर्ष मूर्तिमंदिर के ऊपर कमरा बनकर तैयार हुआ।

" ग्रीव्स पदक — श्री रामनारायण मिश्र ने इस पदक की निधि के लिये ७०) दिए।

| | | |
|---|---|---|
| ३७—१९८६ | साहित्य-परिषद् | १८, १९ फाल्गुन को प्रथम अधिवेशन हुआ। सं० १९८८ में श्री जयशंकरप्रसाद ने इसकी निधि स्थापित करने के लिये ६००) दिए। इसकी आय से साहित्य-परिषद् के अधिवेशन किए जाते हैं। इसी के अंतर्गत सं० १९९४ से 'प्रसाद'-व्याख्यानमाला आरंभ की गई। |
| ३९—१९८८ | शिवलाल मेहरोत्रा निधि | अलमोड़ा के श्री गंगाप्रसाद मेहरोत्रा ने १००) दिए जिनसे यह निधि स्थापित की गई। इसके व्याज से कलाभवन के लिये वस्तुएँ खरीदी जाती हैं। |
| " | कचहरी हिंदी-कोश | तैयार कराके छापा गया। इसके संशोधन के लिये संयुक्त प्रांतीय सरकार ने एक प्रतिनिधि भेजना स्वीकार किया। |
| " | बिड़ला पुरस्कार | धर्म और नीति की उत्तम पुस्तकों पर २००) का पुरस्कार देने के लिये १०००) राजा बलदेवदास बिड़ला ने सभा को दिए। |
| " | शिलालेख | इस वर्ष भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र के निवासस्थान पर सभा ने शिलालेख लगवाया। संवत् १९९६ में 'रत्नाकर', 'प्रसाद' और 'प्रेमचंद' के निवासस्थान पर शिलालेख लगाए गए। संवत् २००० में स्वर्गीय श्री रामचंद्र शुक्ल के निवासस्थान पर और कींसकालेज में उस स्थान पर जहाँ बैठकर श्री ग्रीफिथ महोदय ने वाल्मीकि रामायण का अनुवाद किया था शिलालेख लगाए गए। |
| ४०—१९८९ | रत्नाकर-संग्रह | यह संग्रह रत्नाकर जी के सुपुत्र श्री राधेकृष्णदास ने आर्यभाषा पुस्तकालय को प्रदान किया। इसमें ११८९ ग्रंथ हैं। |
| ४१—१९९० | द्विवेदी-अभिनंदनोत्सव | आचार्य श्री महावीरप्रसाद द्विवेदी के संमान में एक उत्सव किया गया जिसके सभापति ओड़छा नरेश सवाई महेंद्र सिंह जू देव थे। द्विवेदी जी को एक सुंदर अभिनंदन ग्रंथ भेंट किया गया। |
| " | दक्षिण भारत हिंदीप्रचार दल का स्वागत | इस वर्ष उत्तर भारत की यात्रा के लिये यह दल दक्षिण भारत हिंदीप्रचार सभा मद्रास से आया था जो काशी भी आया और सभा की ओर से उसका स्वागत किया गया। |
| ४२—१९९१ | भारतेंदु अर्ध-शताब्दी | भारतेंदु हरिश्चंद्र के निधन के ५० वर्ष बाद सभा ने उनकी अर्द्धशताब्दी मनाई और भारतेंदु ग्रंथावली प्रकाशित की। |

१९९१ नागरीप्रचार सप्ताह और अदालतों में प्रांतीय भाषा प्रवेश शताब्दी

१०० वर्ष पूर्व (सन् १८३८ में) सरकार ने कचहरियों में देशी भाषाएँ व्यवहार में लाने की आज्ञा दी थी। इस वर्ष (सन् १९३८) उसकी शताब्दी मनाई गई। समय समय पर निकली हुई सरकारी आज्ञाएँ छपा कर वितरित की गईं। उसके उपलक्ष में सप्ताह भर तक उत्सव मनाया गया जिसमें भिन्न भिन्न साहित्यिक कार्यक्रम रखे गए। देश की अनेक संस्थाओं ने भी सप्ताह मनाया।

४६—१९९५ प्रतिनिधि-मंडल

पं० रामनारायण मिश्र की अध्यक्षता में एक प्रतिनिधि मंडल कलकत्ता और राजपूताना गया, सं० १९९६ में उन्हीं की अध्यक्षता में एक प्रतिनिधि मंडल मध्यभारत और मध्य प्रांत गया। प्रचार और धनसंग्रह की दृष्टि से इसमें बड़ी सफलता हुई।

४७—१९९६ देव-पुरस्कार-ग्रंथावली

श्रीमान् ओड़छा नरेश ने यह ग्रंथावली निकालने के लिये सभा को १०००) दिए, इससे अब तक दो पुस्तकें निकली हैं।

" हरिऔध अभिनंदन

सभा में २८वें हिंदी साहित्यसंमेलन के अवसर पर श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय को उनके ७५ वें वर्ष के उपलक्ष में अभिनंदनपत्र दिया गया।

" निधियों की स्थायी व्यवस्था

सभा की निधियाँ संयुक्तप्रांत के ट्रेजरर चैरिटेबल एंडाउमेंट्स के पास जमा कर दी गईं। (संयुक्त प्रांत का सरकारी गजट १३ जनवरी ४०)।

" काशीदेई - चंडीप्रसाद-मूर्ति-मंदिर

श्री मुरारीलाल केडिया के १०५१) के दान से कलाभवन का यह भव्य मूर्तिमंदिर बना। इसका उद्घाटन ३१ आश्विन, १९९७ (१७ अक्टूबर १९४०) को रायबहादुर श्री ब्रजमोहन व्यास ने किया।

४८—१९९७ 'हिंदी' पत्रिका

सभा ने अपने तत्त्वावधान में यह पत्रिका निकालने को स्वीकृति दी। इसके संपादक, प्रकाशक और मुद्रक श्री चंद्रबली पांडे एम० ए० हैं।

" श्रीमती रुक्मिणी तिवारी पुस्तकमाला

यह माला निकालने के लिये अजमेर की श्रीमती रामदुलारी दुबे ने सभा को २०००) देने का वचन दिया। यह रुपये सभा में आ चुके हैं।

| | | |
|---|---|---|
| ४९—१९९८ | अनुशीलन-विभाग | अनुसंधान और खोज के विद्यार्थियों की सुविधा के लिये यह विभाग खोलने का निश्चय किया गया। सं० २००० में इसके लिये नियम बने, विभाग खोल दिया गया और श्री रामनारायण मिश्र के उद्योग से कानपुर के सर पद्मपत सिंहानिया ने ५०) मासिक की छात्रवृत्ति तीन वर्ष के लिये प्रदान की। |
| " | श्री रामनारायण मिश्र संग्रह | श्री मिश्रजी ने आ० भा० पुस्तकालय को ४१३ पुस्तकें प्रदान कीं। |
| " | डाक्टर हीरानंद संग्रह | डाक्टर साहब ने अपनी १०१२ पुस्तकों का संग्रह पुस्तकालय को प्रदान किया इसमें २५५ हस्तलिखित पुस्तकें हैं। |
| " | हिंदीप्रचार-यात्रा और धन-संग्रह | राय बहादुर श्री कमलाकर द्विवेदी ने बिहार और श्री रामनारायण मिश्र ने, काश्मीर, सीमा प्रांत, दोहरीघाट, सैदपुर, नंदगंज तथा अबोहर की सफल यात्रा की। सं० १९९९ में श्री चंद्रबली पांडे के साथ श्री रामनारायण मिश्र जोधपुर, काँकरौली, अजमेर, कानपुर और दिल्ली गए। सं० २००० में श्री रामनारायण मिश्र कानपुर और एक प्रतिनिधि मंडल बंबई गया। |
| " | श्री रामविलास पोद्दार स्मारक-ग्रंथमाला | नवलगढ़ (राजपूताना) की श्री रामविलास पोद्दार स्मारक-समिति ने इस माला का प्रबंध सभा को सौंप दिया और इसके लिये दस वर्ष तक २००) वार्षिक देना स्वीकार किया है। |
| " | श्री महेंदुलाल गर्ग ग्रंथावली | इसके लिये कानपुर के श्री प्यारेलाल गर्ग ने १०००) सभा को प्रदान किए। |
| ५०—१९९९ | नवभारत-ग्रंथमाला | कलकत्ते के सेठ श्री बाबूलाल राजगढ़िया के १००१) के दान से इस वर्ष इस माला की स्थापना हुई और हिंदू राज्यतंत्र का दूसरा भाग इसके अंतर्गत प्रकाशित हुआ। |
| ५१—२००० | अर्द्धशताब्दी और विक्रम-जयंती | इन्हें मनाने का सफल उद्योग किया गया। |
| " | सभा का अर्द्धशताब्दी इतिहास | यह इतिहास अर्द्धशताब्दी पर प्रकाशित किया जा रहा है। |
| " | ना०प्र०पत्रिका का विक्रमांक | यह भी अर्द्धशताब्दी के उत्सव पर निकाला जा रहा है। |
| " | याज्ञिक-संग्रह | यह स्वर्गीय श्री मयाशंकर याज्ञिक का ११७९ हस्तलिखित ग्रंथों का अपूर्व संग्रह आर्यभाषा पुस्तकालय को प्राप्त हुआ। |

| | | |
|---|---|---|
| ५१—२००० | सत्यज्ञान-निकेतन, ज्वालापुर | श्री स्वामी सत्यदेवजी ने श्री रामनारायण मिश्र के सत्परामर्श से २५०००) की मालियत का अपना सत्यज्ञान-निकेतन पश्चिमी भारत में हिंदी-प्रचार का सुदृढ़ केंद्र स्थापित करने के लिये सभा को प्रदान किया जिसकी रजिस्ट्री ( ३० दिसंबर, १९४३ को ) भी सभा के नाम स्वामीजी ने कर दी। |
| ” | सत्यज्ञान-पुस्तकमाला | स्वामीजी ने अपनी समस्त पुस्तकों का सर्वाधिकार और मुद्रित पुस्तकों का पूरा स्टाक भी सभा को दे दिया। |
| ” | ऋण भुगतान | श्री रामनारायण मिश्र के उद्योग से सभा अपना समस्त ऋण इस वर्ष चुका देने में समर्थ हुई। |
| ” | स्थायी-कोश | सभा के स्थायी कोश में भी उक्त मिश्र जी के अथक उद्योग से इस वर्ष बहुत वृद्धि हुई। अब उसमें ४१३९९।)७ जमा हैं। |

———

## परिशिष्ट—५

### माला-क्रम से सभा के प्रकाशनों की सूची

### ( १ ) नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला

१—भक्त-नामावली
२—नासिकेतोपाख्यान अथवा चंद्रावती
३—सुजान-चरित्र
४—पृथ्वीराज-रासो ( बाईस संख्याओं में )
५—छत्रप्रकाश
६—रासपंचाध्यायी
७—हम्मीर-हठ
८—जंगनामा
९—अखरावट
१०—महिला मृदुवाणी
११—श्री दादूदयाल की बाणी
१२—इंद्रावती
१३—हम्मीर-रासो
१४—दादूदयाल का सबद
१५—हिम्मतबहादुर विरदावली
१६—भूषण-ग्रंथावली
१७—राजविलास
१८—देव ग्रंथावली
१९—वीरसिंहदेव-चरित्र
२०—चित्रावली
२१—अनन्य ग्रंथावली
२२—दीनदयाल गिरि ग्रंथावली
२३—परमाल रासो
२४—खुसरो की हिंदी कविता
२५—प्रेमसागर
२६—दोहावली
२७—गीतावली
२८—कवितावली
२९—जायसी-ग्रंथावली
३०-३२-तुलसी-ग्रंथावली ( अलग अलग तीन खंडों में )
३३—कबीर-ग्रंथावली
३४—रानी केतकी की कहानी
३५—सचित्र सूर-सागर (अपूर्ण, केवल आठ संख्याएँ)
३६—कीर्तिलता
३७—इनमें इस समय १६ पुस्तकें अप्राप्य हैं.

### ( २ ) मनोरंजन पुस्तकमाला

१—आदर्श जीवन
२—आत्मोद्धार
३—गुरु गोविंदसिंह
४-६—आदर्श हिंदू ( अलग तीन भागों में )
७—राणा जंगबहादुर
८—भीष्म पितामह
९—जीवन के आनंद
१०—भौतिक विज्ञान
११—लाल चीन
१२—कबीर-वचनावली
१३—महादेव गोविंद रानडे
१४—बुद्धदेव

इनमें २४ पुस्तकें इस समय अप्राप्य हैं।

## ( ३ ) देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला



## ( ४ ) सूर्यकुमारी पुस्तकमाला

१४-१५—हिंदी-रस-गंगाधर ( पृथक् दो भागों में )
१६—हिंदी की गद्य-शैली का विकास
१७—सोवियत भूमि
१८—गुलेरी ग्रंथ भाग १

इनमें इस समय एक पुस्तक अप्राप्य है।

( ५ ) बालाबख्श राजपूत चारण पुस्तकमाला

१-३—बाँकीदास ग्रंथावली ( पृथक् तीन भागों में )
४—बीसलदेव-रासो
५—शिखर-वंशोत्पत्ति
६—व्रजनिधि-ग्रंथावली
७—ढोला-मारूरा दूहा
८—राजरूपक
९—रघुनाथ रूपक गीतांरो

( ६ ) देव पुरस्कार ग्रंथावली

१—भारत की चित्रकला
२—भारतीय मूर्तिकला

( ७ ) रामविलास पोद्दार स्मारक ग्रंथमाला

१—अमर जीवन की ओर
२-३—संस्कृत-साहित्य का इतिहास भाग १, २

( ८ ) नव भारत ग्रंथमाला

१—हिंदू-राज्य-तंत्र दूसरा भाग

( ९ ) महिला पुस्तकमाला

१—वनिता-विनोद
२—सुघड़ दर्जिन
३—परिचर्य्या-प्रणाली
४—सरल व्यायाम
५—सौरी सुधार
६—छूतवाले रोग और उनसे बचने का उपाय
७—स्त्रियों के रोग और उनकी चिकित्सा

इनमें इस समय ४ पुस्तकें अप्राप्य हैं।

( १० ) प्रकीर्णक पुस्तकमाला

१—कालबोध
२—हरिश्चंद्र
३—महाराणा प्रतापसिंह नाटक
४—धम्मपद
५—सिंध का इतिहास
६—आर्ष प्राकृत व्याकरण
७—यूनान का इतिहास
८—राज्य-प्रबंध-शिक्षा
९—सत्यहरिश्चंद्र नाटक
१०—बाल-शिक्षा
११—भारत-दुर्दशा
१२—अन्योक्ति-कल्पद्रुम
१३—वैशेषिक दर्शन
१४—न्याय-प्रकाश
१५—न्यायी नौशेरवाँ
१६—संक्षिप्त हिंदी-व्याकरण
१७—मध्य हिंदी व्याकरण
१८—प्रवेशिका-पद्यावली भाग १
१९—प्रथम हिंदी-व्याकरण
२०—महाराज खारवेल के शिला-लेख
२१—महादेव गोविंद रानडे
२२—हिंदी साइंटिफिक ग्लासरी
२३—हिंदी-वैज्ञानिक-शब्दावली भौतिक विज्ञान
२४— ,, ,, ,, रसायन-शास्त्र
२५— ,, ,, ,, गणित-विज्ञान
२६— ,, ,, ,, ज्योतिष-विज्ञान
२७—हिंदी वैद्युत शब्दावली

२८—सूरदास
२९—गोस्वामी तुलसीदास
३०—रत्नाकर प्रथम भाग
३१—हिंदी-व्याकरण
३२—तुलसी हाईस्कूल कोर्स
३३-३४-हिंदी पद्यपारिजात ( पृथक् दो भागों में )
३५—पद्य-पारिजात
३६—श्री राधाकृष्णदास
३७—पंजाब में हिंदी की हस्तलिखित पुस्तकों की खोज की रिपोर्ट
३८—दिल्ली की खोज रिपोर्ट
३९—आयुर्वेद-निदान-समीक्षा
४०—कविवर बिहारीलाल
४१—वीरवर बाप्पारावल
४२—निगमन और आगमन
४३—बोपदेव
४४—भारतवर्ष की शासन-पद्धति
४५—प्रबोधचंद्रिका
४६—ललित शिक्षावली
४७—काशी-नागरीप्रचारिणी सभा के आर्यभाषा पुस्तकालय का सूचीपत्र
४८—संकेत-लिपि-विद्यालय की नियमावली
४९—कुमारसंभव-सार
५०—भाषा
५१—लेखक और नागरी लेखक
५२—शेख मुहम्मद बाबा
५३—हिंदी क्या है
५४—हिंदी लेकचर
५५—सूर-सुषमा
५६—त्रिवेणी
५७—हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण
५८—रत्नाकर ( रत्नाकरजी की संपूर्ण प्राप्य कविताओं का संग्रह )
५९—द्विवेदी अभिनंदन ग्रंथ
६०—हिंदी शब्द-सागर (पृथक् आठ खंडों में )
६१—रूपनिघंटु ( पृथक् दो संख्याओं में )
६२—इंडियन इमेज भाग १ } सभा के कलाभवन द्वारा प्रकाशित
६३—संगीत-समुच्चय भाग १ }
६४—मेघदूत }
६५—कोशोत्सव-स्मारक-संग्रह
६६—हिंदी टाइपराइटिंग
६७—संक्षिप्त हिंदी शब्द-सागर
६८—भारतेंदु-ग्रंथावली भाग २
६९—हिंदी वैज्ञानिक कोष ( परिभाषा )
७०—भारतीय-सृष्टि-क्रम विचार
७१—नागरीप्रचारिणी सभा आव् बनारस
७२—काशी नागरीप्रचारिणी सभा का ३५ वाँ वार्षिकोत्सव
७३—काशी नागरीप्रचारिणी सभा की नियमावली
७४—काशी नागरीप्रचारिणी सभा के उद्देश्य और नियम
७५—कचहरी-हिंदी-कोश ( अलग ४१ फार्मों में )
७६—श्रीगणेश पुराण, भाग १
७७—नागरीप्रचारिणी सभा के वार्षिक विवरण ( १ से ५० तक )
७८—नागरीप्रचारिणी पत्रिका ( पुराना संस्करण १–२४ भाग, नया १–२३ भाग )

इनमें इस समय २९ पुस्तकें अप्राप्य हैं।

### ( ११ ) सत्यज्ञान पुस्तकमाला

१—अनुभव

---

## परिशिष्ट—६

### सभा से संबद्ध संस्थाएँ

१—नागरीप्रचारिणी सभा, मैनपुरी।
२—नागरीप्रचारिणी सभा, बुलंदशहर।
३—नागरीप्रचारिणी सभा, बहराइच।
४—नागरीप्रचारिणी सभा, भगवानपुर रत्ती, पो० इमरौतपुर (मुजफ्फरपुर)।
५—नागरीप्रचारिणी सभा, गोंडा।
६—हिंदीहितैषिणी सभा, सहारनपुर
७—सुहृद संघ, मुजफ्फरपुर
८—बालकसंघ, विष्णुपुर, पटना।
९—प्रसाद-परिषद्, काशी।
१०—हिंदी-साहित्य-भवन, धरफरी, मुजफ्फरपुर।
११—स्वयंसेवक पुस्तकालय, छपरा।
१२—साहित्य-सदन, माँझी, सारन।
१३—हिंदीप्रचार मंडल, आर्यकुमार सभा, बदायूँ।
१४—नागरीप्रचारिणी सभा, मस्कत और मत्रा, अरब (फारस की खाड़ी)
१५—हिंदी-साहित्य-सदन, सहसराम।
१६—हिंदी-प्रचारिणी सभा जम्मू (काश्मीर)
१७—बाल नागरीप्रचारिणी सभा, पुण्यार्क, पो० पंडारक (पटना)
१८—हिंदी-हितैषिणी सभा, लालगंज (मुजफ्फरपुर)
१९—हिंदी-प्रचारिणी सभा, लालगंज, (मुजफ्फरपुर)
२०—देवनागरी परिषद्, धामपुर।
२१—नागरीप्रचारिणी सभा, सैदपुर (गाजीपुर)।
२२—हिंदी-प्रचारिणी सभा, क्वेटा।
२३—बाल समाज लाइब्रेरी, आरंग।
२४—सरस्वती-सदन (वाचनालय, पुस्तकालय) हरदोई।
२५—हिंदी-प्रचारिणी सभा, जोधपुर।

---

सूचना—इन संस्थाओं का संक्षिप्त परिचय दूसरे भाग में 'हिंदी-सेवी संस्थाएँ' शीर्षक के अंतर्गत दिया गया है।

# परिशिष्ट—७

## स्थायी निधियों की सूची

| निधि का नाम और विवरण | अंकित मूल्य | क्रय-मूल्य | वार्षिक आय |
|---|---|---|---|
| (१) देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला | | | |
| इंपीरियल बैंक के ७ हिस्से | ३५००) | १०३६२॥) | ६३०) |
| ,, ,, १४ हिस्से | १७५०) | १७५०) | |
| (२) बालाबख्श राजपूत चारण पुस्तकमाला | | | |
| गवर्नमेंट स्टाक सर्टिफिकेट | १२०००) | ७२५६=) | ४२०) |
| (३) जोधसिंह पुरस्कार | | | |
| गवर्नमेंट स्टाक सर्टिफिकेट | १६००) | १५८०)= | |
| (४) रत्नाकर पुरस्कार | | | |
| गवर्नमेंट स्टाक सर्टिफिकेट | ३२००) | २२२३-)७ | ११२) |
| (५) बटुकप्रसाद पुरस्कार | | | |
| गवर्नमेंट स्टाक सर्टिफिकेट | १७००) | १०१६=)॥ | ५६॥) |
| (६) डाक्टर छन्नूलाल पुरस्कार | | | |
| गवर्नमेंट स्टाक सर्टिफिकेट | १६००) | १०४८) | ५६) |
| (७) राजा बिड़ला पुरस्कार | | | |
| गवर्नमेंट स्टाक सर्टिफिकेट | १६००) | १०२१≡) | ५६) |
| (८) सुधाकर पदक तथा ग्रीव्स पदक | | | |
| गवर्नमेंट स्टाक सर्टिफिकेट | २००) | १४४॥-) | ७) |
| (९) द्विवेदी स्वर्ण-पदक | | | |
| गवर्नमेंट स्टाक सर्टिफिकेट | १६००) | ११९०)॥। | ५६) |
| (१०) शंभूरत्न-स्मारक निधि | | | |
| गवर्नमेंट स्टाक सर्टिफिकेट | १३००) | ९०४॥≡) | ४५॥) |
| (११) शिवलाल मेहरोत्रा निधि | | | |
| गवर्नमेंट स्टाक सर्टिफिकेट | १००) | ६१॥) | ३॥) |

| निधि का नाम और विवरण | अंकित मूल्य | क्रय-मूल्य | वार्षिक आय |
|---|---|---|---|
| ( १२ ) बलदेवदास पदक | | | |
| गवर्नमेंट स्टाक सर्टिफिकेट | १००) | ९९≡)४ | ३॥) |
| ( १३ ) राय बहादुर डा० हीरालाल स्वर्ण-पदक | | | |
| गवर्नमेंट स्टाक सर्टिफिकेट | १०००) | १००१) | ३५) |
| ( १४ ) राधाकृष्णदास पदक | | | |
| गवर्नमेंट स्टाक सर्टिफिकेट | १००) | ९९≡)४ | ३॥) |
| ( १५ ) गुलेरी पदक | | | |
| गवर्नमेंट स्टाक सर्टिफिकेट | १००) | १००॥|-)॥। | ३॥) |
| ( १६ ) रेडिचे पदक | | | |
| गवर्नमेंट स्टाक सर्टिफिकेट | १००) | १००॥-)१० | ३॥) |
| ( १७ ) भैरवप्रसाद स्मारक निधि | | | |
| पो० आ० सेविंग बंक में | १००) | १००) | |

———

# दाताओं की सूची

## ( आरंभ से अर्द्धशताब्दी तक )

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| भारत-सरकार | ... | ५०००) | [ प्रकाशन ] |
| दिल्ली-सरकार | ... | ५००) | [ हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों की खोज ] |
| पंजाब-सरकार | ... | १५००) | [ ,, ,, ] |
| मध्यप्रांतीय सरकार | ... | १०००) | [ प्रकाशन ] |
| संयुक्त प्रांत की सरकार | ... | १२२५७०) | [ ५७६००) हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों की खोज, १५८७०) पुस्तकालय, १०७००) कलाभवन, १४७००) प्रकाशन, २३४००) भवन ] |
| डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, बनारस | ... | ५५०) | [ फुटकर ] |
| म्युनिसिपल बोर्ड, बनारस | ... | १३२६०) | [१२६६०) पुस्तकालय, ६००) कलाभवन] |
| श्रीमान् महाराजा जयसिंह जू देव बहादुर, अलवर | ... | ६५००) | [ ६०००) प्रकाशन, ५००) भवन ] |
| ,, महाराजा वीरसिंहदेव बहादुर, ओड़छा | ... | १०००) | [ पुस्तकालय ] |
| ,, महाराजा सर तुकोजी राव होलकर तृतीय, इंदौर | | ५००) | [ प्रकाशन ] |
| ,, महाराणा साहब भूपालसिंह बहादुर, उदयपुर | ... | ३०००) | [ २०००) फुटकर, १०००) कला-भवन-रजतजयंती ] |
| ,, महाराजा प्रभुनारायणसिंह बहादुर, काशी | ... | २०००) | [ १०००) भवन, १०००) प्रकाशन ] |
| ,, महाराजा सर प्रतापसिंह बहादुर, काश्मीर | ... | २०५०) | [ १०५०) प्रकाशन, १०००) फुटकर ] |
| ,, महाराजा किशनसिंहजी साहब बहादुर, किशनगढ़ | | १००) | [ प्रकाशन ] |
| ,, महाराज यज्ञनारायणसिंह बहादुर, किशनगढ़ | ... | २५०) | [ फुटकर ] |
| ,, महाराज सर उम्मेदसिंह बहादुर, कोटा | ... | २५००) | [२०००) सभा-भवन, ५००) कलाभवन ] |
| ,, महाराज सर माधवराव सिंधिया बहादुर, ग्वालियर | | १०००) | [ प्रकाशन ] |

| दाताओं के नाम | धन | प्रयोजन |
| --- | --- | --- |
| श्रीमान् महाराजा सर विश्वनाथसिंहजू देव बहादुर, छतरपुर | ४०३०) | [ २०००) प्रकाशन, १३००) भवन, ५००) हस्तलिखित पुस्तकों की खोज, २३०) फुटकर ] |
| ,, महाराजा उम्मेदसिंहजी बहादुर, जोधपुर ... | ३२५) | [ प्रकाशन ] |
| ,, राणा राजेंद्रसिंह बहादुर, झालावाड़ ... | १५१) | [ प्रकाशन ] |
| ,, राजा नरेंद्रशाह बहादुर के० सी० एस० आई०, टेहरी | ५००) | [ कलाभवन ] |
| ,, महाराजा डूँगरपुर ... | ७५०) | [ ६००) भवन, १५०) फुटकर ] |
| ,, महाराजा आनंदराव पवाँर, धार स्टेट ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, महाराजा नेपाल ... | २०००) | [ भवन ] |
| ,, महाराजा सर सयाजी राव गायकवाड़ बहादुर, बड़ौदा | १०००) | [ भवन ] |
| ,, महाराजा सर गंगासिंह बहादुर, बीकानेर ... | २६००) | [ १६००) प्रकाशन, १०००) भवन ] |
| ,, महाराजा श्री शार्दूलसिंह, बीकानेर ... | १०००) | [ ५००) कलाभवन, ४००) अर्द्धशताब्दी, १००) स्थायी कोश ] |
| ,, राजा ईश्वरीसिंहजी बहादुर, बूँदी ... | २००) | [ भवन ] |
| ,, महाराजा सर भवानीसिंहजी बहादुर, के० सी० एस० आई०, भावनगर | १५००) | [ १०००) भवन, ५००) प्रकाशन ] |
| ,, महाराजा सर वेंकटरमणसिंह जू देव बहादुर, रीवाँ | ५६४९) | [३४००) भ०, १८००) प्र०, ४४९) फुटकर] |
| ,, महाराजा सर उम्मेदसिंहजी, शाहपुरा ... | १९९८४) | [ प्रकाशन—सूर्यकुमारी पुस्तकमाला ] |
| ,, महाराजा सरगुजा ... | ३००) | [ प्रकाशन ] |
| ,, राजा सर रामसिंहजी बहादुर, के० सी० आई० ई०, सीतामऊ ... | ६००) | [ ४००) प्रकाशन, २००) भवन ] |
| ,, महाराजकुमार डाक्टर रघुवीरसिंह, सीतामऊ | ५०१) | [१००) स्थायी कोश, ४०१) नागरी प्रचार] |
| ,, महाराजकुमार दिग्विजयसिंह, सैलाना राज्य | ११५०) | [ ६५०) कलाभवन रजतजयंती, ५००) कलाभवन ] |
| ,, गोस्वामी दामोदरलालजी नाथद्वारा, मेवाड़ ... | १०००) | [ भवन ] |
| ,, गोस्वामी व्रजभूषणलालजी महाराज, काँकरोली | ५००) | [४००) अर्द्धशताब्दी, १००) स्थायी कोश] |
| ,, गोस्वामी विट्ठलनाथजी महाराज, काँकरोली | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, महाराज केवनभार राज्य उडीसा | १००) | [ अर्द्धशताब्दी ] |
| ,, राजा अजितप्रताप सिंह, प्रतापगढ़ | १००) | [ स्थायी कोश ] |

| दाताओं के नाम | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|
| श्रीमान् राजा उदयप्रताप सिंह, कटियारी | १२५) | [ १००) स्थायी कोश, २५) फुटकर ] |
| ,, राजा उदयप्रताप सिंह, भिनगा ... | ५६००) | [१७००) फु०,१००) भ०,३८००) प्रकाशन] |
| ,, राजा साहब कमलानंद सिंह, पूर्णिया ... | २०००) | [ भवन ] |
| ,, राजा दलजीत सिंह, शिमला ... | १००) | [ कलाभवन ] |
| ,, राजा कल्याणसिंह भिनाय, अजमेर ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, राजा दुर्गानारायण सिंह, तिरवा (फतहगढ़) ... | १००) | [ प्रकाशन ] |
| ,, राव नारायणसिंह साहब मसूदा, अजमेर ... | ५००) | [१००) स्थायी कोश,४००) अर्द्धशताब्दी] |
| ,, राजा पन्नालाल वंशीलाल, हैदराबाद ... | ५००) | [१००) स्थायी कोश, ४००) सूरसागर] |
| ,, महाराज सर प्रतापनारायण सिंह, महामहोपाध्याय, अयोध्या ... | १०००) | [ भवन ] |
| श्रीमती रानी फूलकुमारी, शेरकोट ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| श्रीमान् राजा बलवंत सिंह, आवागढ़ ... | ५००) | [ भवन ] |
| ,, राजा बहादुर ब्रजनारायण सिंह, पडरौना, (गोरखपुर) ... | ५००) | [१००) स्थायी कोश, ४००) अर्द्धशताब्दी] |
| ,, महाराज भरथसिंह, मुल्थान ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, राजा मुंशी माधोलाल, सी० एस० आई०, काशी | ५१५) | [ भवन ] |
| ,, राजा सर मोतीचन्द, बनारस ... | ८५०) | [ ६००) फुटकर, २५०) भवन ] |
| ,, कुँवर यादवेंद्र दत्त दुबे, बी० ए०, महाराजकुमार, जौनपूर ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, राजा युवराजदत्त सिंह ओयल-नरेश (लखनऊ) | १००) | ,, |
| ,, कुमार रणंजय सिंह, अमेठी ... | १००) | ,, |
| ,, राजा रणजीत सिंह बहादुर, नशीपुर ... | १००) | [ भवन ] |
| ,, कुँवर रविप्रतापनारायण सिंह, पडरौना ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, कुँवर राजेन्द्र सिंह, सीतापुर ... | १२००) | [ १०००) प्रकाशन, २००) भवन ] |
| ,, राजा सर रामपाल सिंह, कुर्री सुदौली ... | ४००) | [२००) भवन, १००) प्रकाशन,१००) फु०] |
| ,, महाराजा महारावत सर रामसिंह बहादुर के० सी० एस० आई०, प्रतापगढ़, राजपूताना ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, राजा सर रावणेश्वरप्रसाद सिंह, गिद्धौर ... | ५००) | [ प्रकाशन ] |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्रीमान् महाराजा लक्ष्मीश्वर सिंह साहब बहादुर दरभंगा | | १२५) | [ फुटकर ] |
| ,, निमिराज महाराज सर विजयचंद्र महताब बहादुर, बर्दवान | ... | ३६००) | [२०००) भवन, १५००) प्र०, १००) फु०] |
| ,, महाराज वीरेन्द्र शाह जू देव, जगम्मनपुर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, महाराजकुमार शंकरीप्रसाद सिंह देव, पंचकोट, मानभूमि | ... | १००) | ,, |
| ,, वर्तमान महाराज बलरामपुर ( संवत् २००० ) | ... | १०००) | [ ५००) कलाभवन, ३००) अर्द्धशताब्दी, १००) स्थायी कोश, १००) पुस्तकालय] |
| ,, राजा शारदा महेशप्रसाद सिंह बड़हर, मिर्जापुर | ... | १००) | ,, |
| ,, कुँवर सुरेशसिंह, कालाकाँकर | ... | १००) | ,, |
| ,, राजा बहादुर डाक्टर सूरजबख्श सिंह, सीतापुर | ... | ५००) | [ अर्द्धशताब्दी ] |
| ,, कुँवर सूर्यप्रतापनारायण सिंह पडरौना | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, कुमार तारानंद सिंह बी० ए०, पूर्णिया | ... | ५०१) | [ १००) स्थायी कोश, १००) पुस्तकालय, ३०१) अर्द्धशताब्दी ] |
| ,, कृष्णकुमार बिड़ला, कलकत्ता | ... | ७००) | [ ५००) अर्द्धशताब्दी, १००) स्थायी कोश, १००) पुस्तकालय ] |
| ,, सेठ घनश्यामदास बिड़ला, कलकत्ता | ... | ३१००) | [ १६५०) कलाभवन, १०००) कलाभवन-रजतजयंती, ४००) फुटकर, ५०) संकेतलिपि ] |
| ,, सेठ जुगलकिशोर बिड़ला, दिल्ली | | ३९२९॥≡)॥। | [ २२५०) कलाभवन, १४००) अर्द्धशताब्दी, १००) स्थायी कोश, १७९॥≡)॥। फुटकर ] |
| ,, राजा डाक्टर बलदेवदास बिड़ला, काशी | ... | १८२५) | [१०००) पुरस्कार, ५००) भवन, ३२५) फु०] |
| ,, सेठ व्रजमोहन बिड़ला, कलकत्ता | ... | ५००) | [ ३७०) संकेतलिपि, १३०) स्थायी कोश ] |
| ,, माधवप्रसाद बिड़ला, कलकत्ता | ... | ६००) | [ ६००) प्रकाशन ] |
| ,, लक्ष्मीनिवास बिड़ला, कलकत्ता | ... | २०००) | [ १०००) हिंदी पुस्तकों की खोज, ५००) 'हिंदी', १००) स्थायी कोश, ५०) कलाभवन, २५०) नागरीप्रचार, १००) पुस्तकालय ] |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्री गिरधरदास कोठारी, कलकत्ता | ... | १२५) | [ १००) स्थायी कोश, २५) कलाभवन ] |
| ,, बसंतकुमारजी बिड़ला, काशी | ... | १०१) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, अद्वैतप्रसाद शाह, काशी | ... | १००) | [ नागरी-प्रचार ] |
| ,, प्रो० अमरनाथ झा, प्रयाग | ... | २००) | [ ५०) श्री रामप्रसाद-समादर, १५०) कलाभवन ] |
| ,, सेठ अमरचंदजी, जालौन | ... | ५००) | [ कलाभवन ] |
| ,, अंबिकाप्रसाद श्रीवास्तव, काशी | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, अयोध्यानाथ शर्मा, कानपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, अयोध्याप्रसाद, बी० ए०, कलकत्ता | ... | १००) | ,, |
| ,, अवधनारायण सिंह, हरदोई | ... | १००) | ,, |
| ,, अशोकजी, एम० ए०, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, आदित्यनाथ झा आई० सी० एस०, कानपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, आदित्यप्रकाश मिश्र, डिप्टी कलक्टर, खीरी | ... | १००) | ,, |
| श्रीमती इंदिरादेवी, दिल्ली | ... | १००) | [ भवन ] |
| श्री इंदुभूषण गुप्त, आजमगढ़ | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, इंद्रचंद्र केजरीवाल, कलकत्ता | ... | २५१) | [ १५१) फुटकर, १००) स्थायी कोश ] |
| ,, सरदार उमरावसिंह, लाहौर | ... | २००) | [ १००) भवन, १००) कलाभवन ] |
| ,, उमाशंकर प्रसाद, मुजफ्फरपुर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| श्रीमती डाक्टर एनी बेसेंट, काशी | ... | १००) | [ भवन ] |
| श्री ठाकुर कन्हैया सिंह, कानपुर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, कमलाप्रसाद सिंह, कलकत्ता | ... | १०१) | ,, |
| ,, रायबहादुर कमलाकर दुबे, खजुरी (काशी) | ... | १००) | ,, |
| ,, कर्जन थियेट्रिकल कंपनी | ... | ११७) | [ भवन ] |
| ,, डाक्टर काशीप्रसाद जायसवाल, पटना | ... | ७४५॥) | ,, |
| ,, कालीप्रसाद खेतान, बैरिस्टर, कलकत्ता | ... | १५०) | [ १००) स्थायी कोश, ५०) फुटकर ] |
| ,, किशोरीरमणप्रसाद, काशी | ... | ५५२) | [ २०१) प्रकाशन, १२६) कलाभवन, २५) रामप्रसाद-समादर, १००) पुस्तकालय, १००) स्थायी कोश ] |
| ,, किशोरीलाल सरावगी, काशी | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्री कुलदीप नारायणसिंह, लखनऊ | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, कुंजबिहारी सेठ, हरदोई | ... | १००) | ,, |
| श्रीमती कुसुमकुमारी शाह, लखनऊ | ... | १००) | [ कलाभवन ] |
| श्री दीपचंद किशनलाल पोद्दार, काशी | ... | ८००) | [ २५०) कलाभवन, १००) स्थायी कोश, ३००) पुस्तकालय, १५०) अर्द्ध शताब्दी] |
| ,, कृष्णकुमार पुरोहित, एम० ए०, एल्-एल० बी०, सांभर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, राय कृष्णजी तथा राय श्रीकृष्ण, काशी | ... | १५२००) | [ १५०००) भूमिदान, २००) भवन ] |
| ,, कृष्णचंद्र सिविल जज, प्रयाग | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, कृष्णकुमार, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, महाशय कृष्णजी, लाहौर | ... | १००) | ,, |
| ,, राय कृष्णदास, काशी | ... | १३९८॥) | [ कलाभवन ] |
| ,, कप्तान राव कृष्णपाल सिंह, आगरा | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, कृष्णराव पूर्णचंद्र मांडलीक चीफ इंसपेक्टर ग्रामोद्धार, धार | ... | १००) | ,, |
| ,, कृष्णदेवप्रसाद गौड़, काशी | ... | १००) | ,, |
| श्रीमती कृष्णादेवी झालानी बी० ए०, दिल्ली | ... | १००) | ,, |
| श्री कृष्णाराम मेहता, प्रयाग | ... | १५०) | [ १००) भवन, ५०) कलाभवन ] |
| ,, केदारनाथ सेठ शास्त्री, कलकत्ता | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, केशरी सिंह पंचौली, रतलाम | ... | १००) | ,, |
| ,, केशवदेव पोद्दार, पुलगाँव | ... | १००) | ,, |
| ,, केशवचंद्र शुक्ल, कानपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, केशवचंद्र, मुरादाबाद | ... | १००) | ,, |
| ,, स्वामी केशवानंदजी, बीकानेर | ... | १००) | ,, |
| कोर्ट आव् वार्ड्स, गाजीपुर | ... | २७०) | [ कलाभवन ] |
| श्री रा० ब० कौशलकिशोर, प्रयाग | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| कोर्ट आव् वार्ड्स, बनारस | ... | १४६) | [ कलाभवन ] |
| श्री क्षेत्रपाल शर्मा, मथुरा | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, सेठ खुशालचंद डागा, बीकानेर | ... | १०१) | ,, |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्री गंगादास बिन्नानी, बीकानेर | ... | १०१) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, रा० ब० गंगाप्रसाद (भूतपूर्व चीफ जज) ज्वालापुर | | १००) | ,, |
| ,, गंगाप्रसाद मेहरोत्रा, नैनीताल | ... | १००) | ,, |
| ,, गंगाबख्शसिंह कानोडिया, कलकत्ता | ... | २५०) | [ १५०) कलाभवन, १००) स्थायी कोश ] |
| ,, प्रो० टी० के० गज्जर, बंबई | ... | २५०) | [ भवन ] |
| ,, गोस्वामी गणेशदत्त, लाहौर | ... | १००) | [ अर्द्धशताब्दी ] |
| ,, गदाधरसिंह, काशी | ... | २०००) | [ फुटकर ] |
| ,, गरीबदास छेदीलाल, मिर्जापुर | ... | २२५) | [ भवन ] |
| ,, गांग्येय नरोत्तम शास्त्री, कलकत्ता | ... | १५३) | [ १०१) स्थायी कोश, ५२) कलाभवन ] |
| ,, गिरधारीलाल नागर, कलकत्ता | ... | १५१) | [ १००) स्थायी कोश, ५१) फुटकर ] |
| ,, डाक्टर सर जी० ए० ग्रियर्सन, इँग्लैंड | ... | १५०) | [ प्रकाशन ] |
| ,, गुप्त दान | ... | २८५१) | [ २७००) भवन, १५१) फुटकर |
| ,, रा० ब० गुरुसेवक उपाध्याय, हजारीबाग | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, गुलजारी लाल, कानोडिया, कलकत्ता | ... | २५१) | [ १५१) फुटकर, १००) स्थायी कोश ] |
| ,, गोपालचंद्रसिंह, हरदोई | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, डाक्टर गोपालसिंह, अजमेर | ... | १००) | [ भवन ] |
| ,, गोपीकृष्ण कानोडिया, कलकत्ता | ... | ६५०) | [ ५००) कलाभवन, १००) स्थायी कोश, २५) अर्द्धशताब्दी, २५) रामप्रसाद-समादर ] |
| ,, राय गोविंदचंद्र, काशी | ... | ६१५) | [ ४१५) कलाभवन, २००) प्रकाशन ] |
| ,, गोविंददास, काशी | ... | १००) | [ भवन ] |
| ,, सेठ गोविंददास, जबलपुर | ... | २००) | [ प्रकाशन ] |
| ,, गोविंद मालवीय, एम० ए०, एल्-एल० बी०, काशी | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, गौरीशंकरप्रसाद एडवोकेट, काशी | ... | ४००) | [ २००) भ०, १००) पदक, १००) फुटकर ] |
| ,, सेठ गौरीशंकर गोयनका, काशी | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, सेठ घनश्यामदास पोद्दार, बंबई | ... | ७५१) | [ ५००) अर्द्धशताब्दी, १५०) कलाभवन, १०१) स्थायी कोश ] |
| ,, घीसूलाल एम० ए०, एल-एल० बी०, अजमेर, | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्री चंडीप्रसाद जगनानी ( श्री मुरारीलाल केडिया, काशी ) | ... | ५०१) | [ भवन ] |
| ,, सेठ चंपालाल बाँठिया, बीकानेर | ... | १०१) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, चरतरामजी, नई दिल्ली | ... | १००) | ,, |
| ,, चाँदबिहारी कपूर, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, चिंतामणि घोष, प्रयाग | ... | २०००) | [ भवन ] |
| ,, रा० ब० सेठ चिरंजीलाल बागला, हाथरस | ... | ७००) | [ ५००) प्रकाशन, २००) भवन ] |
| ,, सर चुन्नीलाल बी० मेहता, बंबई | ... | १००) | [ नागरी-प्रचार ] |
| ,, सेठ छोटेलाल कानोडिया, कलकत्ता | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, छोटेलाल गयाप्रसाद ट्रस्ट, कानपुर | ... | १४४) | [ फुटकर ] |
| ,, जगद्धर शर्मा गुलेरी, लायलपुर | ... | १०१) | [ पदक ] |
| ,, ठाकुर जगदीशप्रसाद सिंह, काशी | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, जगन्नाथप्रसाद गुप्त, कलकत्ता | ... | १००) | ,, |
| ,, जगन्नाथ शर्मा वाजपेयी आयुर्वेदाचार्य, एम० ए०, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, सेठ जगन्नाथप्रसाद झुनझुनूवाला, रानीगंज | ... | ३००) | [ २००) भवन, १००) फुटकर ] |
| ,, जगन्नाथदास 'रत्नाकर', काशी | ... | १८३५) | [ पुरस्कार ] |
| ,, जगन्नाथप्रसाद वकील, गोरखपुर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, जगन्नाथप्रसाद खत्री, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, जगन्नाथप्रसाद पचभैया, काशी | ... | १५०) | [ कलाभवन ] |
| ,, जगन्नाथप्रसाद भार्गव, काशी | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, रा० ब० जगन्नाथप्रसाद मेहता, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, सेठ जमनालाल बजाज, वर्धा | ... | १००) | [ संकेतलिपि ] |
| ,, ठाकुर जमनासिंह, कानपुर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, जयकृष्णदास मेहरोत्रा, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, जयकृष्णदास, कलकत्ता | ... | १००) | [ भवन ] |
| ,, सेठ जयदयाल, सीतापुर | ... | २०१) | ,, |
| ,, जयशंकर 'प्रसाद', काशी | ... | ९००) | [ साहित्य-गोष्ठी ] |
| ,, डाक्टर जाफर हसन, हैदराबाद | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्री आनरेबुल सर जोगेन्द्र सिंह, दिल्ली | ... | १००) | [ कलाभवन ] |
| ,, मेहता जोधसिंह, उदयपुर | ... | १०००) | [ पुरस्कार ] |
| ,, जोशी बाबा माधवलाल, मथुरा | ... | १००) | [ भवन ] |
| ,, ज्योतिभूषण गुप्त, काशी | ... | १७२६) | [ १०००) बेसिक कोश, ५००) भूषणपदक, १०१) फुटकर, १००) स्थायी कोश, २५) कलाभवन ] |
| ,, सेठ ज्ञानचंद मगनमल, बीकानेर | ... | १०१) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, ज्ञानचंद आर्य, नई दिल्ली | ... | १००) | ,, |
| ,, ठाकुरदास वकील, काशी | ... | २६०) | [ १००) स्थायी कोश, १००) कलाभवन, ६०) फुटकर ] |
| ,, ठाकुरप्रसाद मिश्र, हरदोई | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, डायमंड शूगर मिल्स, पिपराइच | ... | १००) | [ कलाभवन-रजतजयंती ] |
| ,, तुलसादास कानोडिया, कलकत्ता | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| डाक्टर सर तेज बहादुर सप्रू, प्रयाग | ... | २२००) | [ भवन ] |
| ,, कुँवर तेजसिंह मेहता, उदयपुर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, तेजस्वीप्रसाद भल्ला, शाहजहाँपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, तोताराम गुप्त, काँठ, मुरादाबाद | ... | १००) | ,, |
| ,, तोताराम बाँठिया, बीकानेर | ... | १०१) | ,, |
| ,, ठाकुर त्रिभुवनप्रसाद शिवगोविन्द, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, दयाराम बालकृष्ण, दमोह | ... | १००) | [ भवन ] |
| ,, दशरथ ओझा, दिल्ली | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, दामोदरदास खंडेलवाल, काशी | ... | २००) | [ भवन ] |
| ,, दामोदरदास खन्ना, कलकत्ता | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, दामोदरदास राठी, ब्यावर | ... | १००) | [ हस्तलिखित पुस्तकों की खोज ] |
| ,, दीनदयाल शर्मा, दिल्ली | ... | १०१) | [ भवन ] |
| ,, दीपचंद बोथरा, बीकानेर | ... | १०१) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, दुर्गाप्रसाद डिप्टी कलक्टर, आगरा | ... | १००) | ,, |
| ,, देवीप्रसाद मारवाड़ी | ... | १००) | [ प्रकाशन ] |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्री मुंशी देवीप्रसाद मुंसिफ, जोधपुर | ... | १२२५०) | [ प्रकाशन—देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला ] |
| ,, लाला देशबंधु गुप्त, दिल्ली | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, देवनाथ पुरोहित, उदयपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, सेठ धरमजी मुरारजी गोकुलदास और सेठ नरोत्तम मुरारजी, गोकुलदास, बंबई | ... | २५१) | [ भवन ] |
| ,, दीवान बहादुर धर्मनारायण काक, प्रधान मंत्री, जोधपुर | | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, नंदकिशोर लोहिया, कलकत्ता | ... | १०१) | ,, |
| ,, नंदलाल कानोडिया, कलकत्ता | ... | १००) | ,, |
| ,, नंदलाल सुआलका, कलकत्ता | ... | २००) | [ १००) स्थायी कोश, १००) भवन |
| ,, नरोत्तम स्वामी, बीकानेर | ... | १०१।) | [ स्थायी कोश ] |
| श्रीमती नर्मदादेवी, कलकत्ता | ... | २०१) | [ १००) स्थायी कोश, १०१) फुटकर |
| श्री नाथूराम प्रेमी, बंबई | ... | १००) | [ अर्द्धशताब्दी ] |
| ,, नारायणदत्त, नई दिल्ली | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, सेठ नारायणदास भगवानदास बाजोरिया, कलकत्ता | | ५०२) | [ १०१) स्थायी कोश, ३०१) अर्द्धशताब्दी, १००) पुस्तकालय ] |
| ,, सेठ नारायणदास डागा, बीकानेर | ... | १०१) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, राजा बाबू नारायणदास बर्मन, कलकत्ता | ... | १००) | ,, |
| ,, नेहपालसिंह आई० ई० एस०, प्रयाग | ... | १००) | ,, |
| ,, एस० एन० पंडित, राजकोट | ... | २२५०) | [ भवन ] |
| श्रीमंत बाबा साहब पटवर्धन, पंत प्रतिनिधि, मिरज | ... | १००) | ,, |
| श्री सेठ सर पद्मपत सिंहानिया, कानपुर | ... | ४१००) | [ १००) स्थायी कोश, ४०००) अर्द्ध० ] |
| ,, पद्मनारायण आचार्य, काशी। | ... | १००) | [ कलाभवन ] |
| ,, परमेश्वरनारायण मेहता तथा विश्वनारायण मेहता, मुजफ्फरपुर | ... | २५०) | [ प्रकाशन ] |
| ,, परमेश्वरीलाल गुप्त, काशी | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, परिपूर्णानंद वर्मा, कानपुर | ... | १०५) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, पुरुषोत्तमदास हलवासिया, कलकत्ता | ... | १०५०) | [६००) कलाभवन, ४५०) कूप की मरम्मत] |
| ,, पूरनमल गोपनका, बीकानेर | ... | १०१) | [ स्थायी कोश ] |

| दाताओं के नाम | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|
| श्रीमती पूर्णिमा चाँदमल, लखनऊ ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| श्री प्यारेलाल गर्ग, कानपुर ... | १०००) | [प्र० डा०महेंदुलाल गर्ग विज्ञान ग्रंथावली] |
| ,, स्वामी प्रकाशानंद गिरि, काशी ... | २००) | [ भवन ] |
| ,, जस्टिस सर प्रमदाचरण बनर्जी, प्रयाग ... | २००) | ,, |
| ,, रा० ब० मुंशी प्रयागनारायण भार्गव, लखनऊ ... | २५०) | ,, |
| ,, प्राणाचार्य कविराज प्रतापसिंह, दिल्ली ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, कुँवर फतहलाल मेहता, उदयपुर ... | ५००) | [ ४००) कलाभवन, १००) स्थायी कोश ] |
| ,, वंकटलाल ओझा, हैदराबाद ... | १०१) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, सेठ वंशीधर जालान, कलकत्ता ... | ५००) | [ ४००) फुटकर, १००) स्थायी कोश ] |
| ,, वंशीधर ढाँढनियाँ, भागलपुर ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, बाबू वंशीधर वैश्य मारवाड़ी, बुलंदशहर ... | १००) | [ प्रकाशन ] |
| ,, रा० ब० वंशीलाल अबीरचंद, जबलपुर ... | २००) | ,, |
| ,, रा० ब० बटुकप्रसाद खत्री, काशी ... | १०००) | [ पुरस्कार ] |
| श्रीमती बड़ी सेठानीजी कोठी सेठ भीजूमल गिल्लूमल, हाथरस | १००) | [ कलाभवन ] |
| श्री सर बद्रीदासजी गोयनका, कलकत्ता ... | १००१) | [ ५००) कलाभवन, ४०१) फुटकर, १००) स्थायी कोश ] |
| ,, उपाध्याय बदरीनारायण चौधरी, मिर्जापुर ... | १००) | [ भवन ] |
| ,, बनारसीप्रसाद सारस्वत, काशी ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, लाला बनवारीलाल, दिल्ली ... | २५१) | [ नागरी-प्रचार ] |
| ,, बाबू वल्लभदास, कलकत्ता ... | २००) | [ भवन ] |
| ,, सेठ वल्लभदास, जबलपुर ... | १०१) | [ प्रकाशन ] |
| ,, बाबू बसंतलाल, कलकत्ता ... | १०१) | ,, |
| ,, ब्रजकिशोर बर्मन, काशी ... | १५०) | [ १००) स्थायी कोश, ५०) कलाभवन ] |
| ,, ब्रजभूषण जेतली, हरदोई ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, ब्रजमोहनदास केजरीवाल, काशी ... | १२६) | [ १०१) स्थायी कोश, २५) रामप्रसाद-संमादर-कोश ] |
| ,, ब्रजरत्नदास वकील, काशी ... | ३७५) | [ १००) पदक, १००) प्रकाशन, १००) स्थायी कोश, ७५) फुटकर तथा ५३१।) की पुस्तकें ] |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्री व्रजलाल अष्ठाना, गोरखपुर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| „ ब्रह्मदेव मोहता, बीकानेर | ... | १००) | „ |
| „ वृंदावनलाल एडवोकेट, झाँसी | ... | २००) | [ कलाभवन ] |
| „ बाँकेबिहारीलाल, काशी | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| „ सेठ बाबूलाल ढांढनियाँ, काशी | ... | २०१) | [ १००) स्थायी कोश, १०१) फुटकर ] |
| „ सेठ बाबूलाल राजगढ़िया, कलकत्ता | ... | १०५१) | [ १००१) प्रकाशन—नवभारतग्रंथमाला, ५०) 'वर्तमान हिंदी-लेखक और उनको कृतियों' के डाकव्ययार्थ ] |
| „ बारहट बालाबख्श, जयपुर | ... | ७०००) | [प्रकाशन-बालाबख्श, रा० चा० पु०मा०] |
| „ बालकृष्णलाल पोद्दार, कलकत्ता | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| „ बालकृष्ण माहेश्वरी, कानपुर | ... | १०१) | „ |
| „ सेठ बालमुकुंद डागा, कलकत्ता | ... | १००) | „ |
| „ विट्ठलदास डागा, बीकानेर | ... | १०१) | „ |
| „ दीवान बहादुर खजांची बिहारीलाल, जबलपुर | ... | १००) | [ प्रकाशन ] |
| „ बुद्धलाल मेहरोत्रा, कानपुर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| „ ठाकुर बैजनाथसिंह, बरमा | ... | १२५) | [ भवन ] |
| „ बैजनाथ बाग्रे, फैजाबाद | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| „ राय भगवतीप्रसाद रोहाना, काशी | ... | १२५) | [ १००) स्थायी कोश, २५) कलाभवन ] |
| „ भगवतीप्रसादसिंह एम० ए०, डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट, खीरी | | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| „ रा० ब० भगवतीशरणसिंह, प्रयाग | ... | १००) | „ |
| „ भगवान्दास हालना, मिर्जापुर | ... | १००) | [ भवन ] |
| „ भगीरथ मोहता, बीकानेर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| „ भगीरथ कानोडिया, कलकत्ता | ... | ३५०) | [२००) अर्द्धशताब्दी, १५०) कलाभवन] |
| „ भरतराम, नई दिल्ली | ... | २००) | [१००) अर्द्धशताब्दी, १००) स्थायी कोश] |
| „ डाक्टर भवानीशंकर याज्ञिक, लखनऊ | ... | १०१) | [ स्थायी कोश ] |
| „ भूपेंद्रकुमार, काशी | ... | ५०१) | [ कलाभवन ] |
| „ भैरवलाल फतहचंद, कलकत्ता | ... | २००) | [ भवन ] |
| „ मंगतुराम जयपुरिया, कलकत्ता | ... | ७५२) | [ ६५२) फुटकर, १००) स्थायी कोश ] |
| „ मटरूमल शिवसुखराय, हाथरस | ... | १००) | [ भवन ] |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्री मदनगोपाल कानोडिया, कानपुर | ... | १०१) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, मदनमोहन, काशी | ... | १२५) | [ १००) स्थायी कोश, २५) अर्द्धशताब्दी ] |
| ,, मदनमोहन जैन, उज्जैन | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, राय साहब मदनमोहन सेठ चीफ जज, पटना-राज | | १००) | ,, |
| ,, मन्नीलाल, हरदोई | ... | १००) | ,, |
| श्रीमती मनीबाई शाह | ... | ५००) | [ कलाभवन ] |
| श्री मनोहरलाल जुत्शी, काशी | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, महादेव एल० सराफ, कलकत्ता | ... | १००) | ,, |
| ,, महादेव राय, मिर्जापुर | ... | २००) | [ भवन ] |
| ,, महादेवप्रसाद काशीप्रसाद, मिर्जापुर | ... | ४००) | [ ३००) भवन, १००) प्रकाशन ] |
| ,, आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी, दौलतपुर, रायबरेली | | १२००) | [ १०००) पदक, २००) फुटकर तथा ४३२१ पुस्तकें ] |
| ,, महेंद्रप्रतापसिंह बी० ए०, गया | ... | १०१) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, रा० ब० सरदार माधवराव विनायकराव साहब किबे, इंदौर | ... | १००) | ,, |
| ,, राय बहादुर मानसिंह, कानपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, भालचंद्र शर्मा, बीकानेर | ... | १०१) | ,, |
| श्रीमती मालतीदेवी, बदायूँ | ... | १००) | ,, |
| श्री मिहरचंद धीमान, हवड़ा | ... | १००) | ,, |
| ,, मुन्नीलाल नेवटिया, कानपुर | ... | १०१) | ,, |
| वेदशास्त्रसंरक्षक मेहता श्री मुरारीलाल, काशी | ... | १०१) | [ कलाभवन ] |
| श्री मुरारीलाल केडिया, काशी | ... | ७७५) | [ ५००) भवन-निर्माण, ५०) मूर्ति-मंदिर-कोश, २५) रामप्रसाद-समादर कोश, २००) ग्रिफिथ-शिलारोपण ] |
| ,, मुरारीलाल केडिया मार्फत श्री बैजनाथ केडिया, काशी | | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, मूलचंद जैन, करवी | ... | १००) | ,, |
| ,, मूलचंद अग्रवाल, कलकत्ता | ... | ६५०) | [ २००) कलाभवन, २००) अर्द्धशताब्दी, १५०) फुटकर, १००) स्थायी कोश ] |
| ,, मेघराज भुआलका, काशी | ... | १०१) | [ स्थायी कोश ] |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्री मैथिलीशरण गुप्त, झाँसी | ... | १०१) | [ फुटकर ] |
| „ डाक्टर मोतीचंद चौधरी, काशी | ... | २५२) | [ २०१) प्रकाशन, ५१) कलाभवन ] |
| „ मोतीलाल कानोडिया, देवघर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| „ रा० ब० मोहनलाल, हरदोई | ... | १००) | „ |
| „ मोहनलाल, काशी | ... | १०१) | „ |
| „ मोहनलाल कोठारी, बीकानेर | ... | १०१) | „ |
| „ मोहनलाल लाठ, काशी | ... | १५१) | [ कलाभवन ] |
| „ म्हालीराम सोनथलिया, कलकत्ता | ... | १५१) | [ १००) स्थायी कोश, ५१) फुटकर ] |
| „ यज्ञदत्त उपाध्याय, अजमेर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| „ यशजी, लाहौर | ... | १००) | „ |
| „ रघुवरदयाल वाजपेयी, हरदोई | ... | १००) | „ |
| „ लाला रघुवीरसिंह बी० ए०, दिल्ली | ... | १००) | „ |
| „ रतनचंद कालिया, कानपुर | ... | ६००) | [१००) स्थायी कोश, ५००) अर्द्धशताब्दी] |
| श्रीमती कमलावती देवी, अमृतसर | ... | १०००॥=) | [१००) स्थायी कोश, ४००) अर्द्धशताब्दी, ५००॥=) सत्यज्ञान-निकेतन ] |
| „ रमादेवी जैन, डालमियानगर | ... | ६००) | [१००) स्थायी कोश, ५००) अर्द्धशताब्दी] |
| श्री रमेशदत्त पांडे बी० ए०, काशी | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| „ व्योहार राजेन्द्र सिंह, जबलपुर | ... | १००) | [ प्रकाशन ] |
| „ राय राधारमण, इलाहाबाद | ... | ५००) | [ भवन ] |
| „ राधाकृष्ण गोपीकृष्ण, कलकत्ता | ... | २५१) | „ |
| „ सेठ राधाकृष्ण चामड़िया, कलकत्ता | ... | ५०१) | [ १००) स्थायी कोश, ४०१) अर्द्धशताब्दी] |
| „ राधाकृष्णदास | ... | २२६) | [ भवन ] |
| „ राधेकृष्णदास, काशी | ... | १००) | [ पुरस्कार तथा ११८९ पुस्तकें ] |
| „ रामकुमार केजरीवाल, कलकत्ता | ... | १०००) | [ १००) स्थायी कोश, ५००) अर्द्धशताब्दी, ४००) प्रकाशन ] |
| „ रामकुमार गोयनका, कलकत्ता | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| „ रामकुमार भुआलका, कलकत्ता | ... | ३०१) | [ २००) स्थायी कोश, १०१) फुटकर ] |
| „ सेठ रामकृष्ण डालमिया, डालमियानगर ( बिहार ) | | ८१६) | [ १०१) स्थायी कोश, ७१५) पुस्तकालय की सूची के लिये कागज ] |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्री सेठ रामगोपाल आर्य, आजमगढ़ | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, रामचंद्र शर्मा वैद्य, अजमेर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, राय रामचरण अग्रवाल, प्रयाग | ... | ३७५) | [ कलाभवन ] |
| ,, बा० रामजसराय अग्रवाल, झरिया | ... | २००) | [ भवन ] |
| ,, बा० रामदयाल नेवटिया, फतहपुर | ... | २५०) | ,, |
| ,, रामदहिन मिश्र, बाँकीपुर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| श्रीमती रामदुलारी दूबे, अजमेर | ... | २२०१) | [ १००) स्थायी कोश, २०००) प्रकाशन—रुक्मिणी देवी ग्रंथमाला, १०१) अर्द्धशताब्दी ] |
| ,, रा० ब० सेठ रामदेव चोखानी, काशी | ... | १०८५।≈) | [ २००) भूषण-पदक, २५१) अर्द्धशताब्दी, २४) फुटकर, २५) कलाभवन, १००) नागरी-प्रचार, १०१) स्थायी कोश, ३८४।≈) राजस्थान साहित्य रक्षा-निधि ] |
| ,, हरिचरण चोखानी, काशी | ... | १०१) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, रामधन शर्मा, दिल्ली | ... | १००) | ,, |
| ,, रामनाथ आनंदीलाल पोद्दार, बंबई | ... | १००) | ,, |
| ,, सेठ रामनाथ कानोडिया, कलकत्ता | ... | १००) | ,, |
| ,, रामनाथ सिंह, जबलपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, रामनारायण मिश्र, काशी | ... | १४००) | [ १२००) पुरस्कार, १००) पदक, १००) भवन ] |
| ,, साहु रामनारायण लाल, बरेली | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, रामप्रसाद चौधरी, बनारस | ... | १००) | [ भवन ] |
| ,, राय साहब श्री रामप्रसाद गुप्त, आरा | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, साहु रामप्रसाद, बिजनौर | ... | १००) | ,, |
| ,, सेठ रामप्रसाद भालोठिया, गोरखपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, रामभरोसे तिवारी, इन्दौर | ... | १०१) | ,, |
| ,, रामभरोसे सेठ, कानपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, बाँकेबिहारी सेठ, कानपुर | ... | ५००) | [ सत्यज्ञाननिकेतन ] |
| ,, लाला रामरत्न गुप्त, कानपुर | ... | १४०३) | [ १००) स्थायी कोश, ७०१) कलाभवन, ६०२) अर्द्धशताब्दी ] |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्री मंत्री, रामविलास पोद्दार स्मारक समिति, बंबई | | ४००) | [ प्रकाशन तथा १६४८॥) की पुस्तकें ] |
| ,, रामशंकर त्रिपाठी, कलकत्ता | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, राय रामशरणदास ऐंड ब्रदर्स, लाहौर | ... | २००) | [ भवन ] |
| ,, ठाकुर रामसिंह, बीकानेर | ... | ३००) | [ प्रकाशन ] |
| ,, रामसुंदर कानोडिया, कलकत्ता | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, रामेश्वर गौरीशंकर ओझा, अजमेर | ... | १००) | ,, |
| ,, रामेश्वर जोशी, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, रामेश्वर नोपाणी | ... | २०१) | [ १००) स्थायी कोश, १०१) फुटकर ] |
| ,, रामेश्वरलाल गनेरीवाला, कलकत्ता | ... | १०१) | [ कलाभवन ] |
| ,, रामेश्वरसहाय सिनहा, काशी | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, ऋषिराम, लाहौर | ... | १००) | ,, |
| ,, सेठ रोशनलाल बागला, हाथरस | ... | १००) | [ भवन ] |
| ,, लक्ष्मणदास फतेपुरिया, जोधपुर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| कोठी श्री लक्ष्मीनारायण कानोडिया कंपनी, कलकत्ता | | २०१) | [ फुटकर ] |
| श्री मैनेजर लक्ष्मीनारायण प्रेस, काशी | ... | १०१) | ,, |
| ,, लक्ष्मीनारायण पोद्दार, कलकत्ता | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, लक्ष्मीनारायण मूँदड़ा, बीकानेर | ... | १०५) | ,, |
| ,, लल्लीप्रसाद पांडेय, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, लाजवंती रामकृष्ण मदान, जोधपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, लालचंद, लाहौर | ... | १००) | ,, |
| ,, रा० ब० लालचंद सेठी, उज्जैन | ... | १०१) | ,, |
| ,, कुँवर लाल रत्नाकर सिंह, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, प्रो० लालजीराम शुक्ल, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, डा० एस० के० बर्मन तथा श्री पूरनचंद बर्मन, कलकत्ता | | २००) | [ १००) भवन, १००) स्थायी कोश ] |
| ,, के० एन० वांचू जज, आगरा | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, वासुदेव कानोडिया, कलकत्ता | ... | १००) | ,, |
| ,, विनयकृष्णजी रोहतगी, कलकत्ता | ... | २५१) | [ १५१) फुटकर, १००) स्थायी कोश ] |
| ,, रा० ब० कुँवर विनयानंद पाठक, जयपुर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, विष्णु सेठ, शाहजहाँपुर | ... | १००) | ,, |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्री विश्वनाथप्रसाद, काशी | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, विश्वंभरप्रसाद नेवटिया, कानपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, विष्णुदास वासिल, नई दिल्ली | ... | ६००) | [५००) अर्द्धशताब्दी, १००) स्थायी कोश] |
| ,, वीरेंद्र केशव साहित्य परिषद्, ओड़छा | ... | १०००) | [ प्रकाशन ] |
| ,, शंकरबख्शसिंह, केसठ | ... | १०१) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, शंभुलाल गुप्त, बुलंदशहर | ... | १००) | [ भवन ] |
| ,, शत्रुंजयप्रसाद सिंह, आरा | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, महंत शांतानंद नाथ, हरिद्वार | ... | १००) | ,, |
| ,, सेठ शिवनारायण जी वंग, जोधपुर | ... | १०१) | ,, |
| ,, शिवनारायण लाल, रायबरेली | ... | १००) | [ भैरवप्रसाद स्मारक-निधि ] |
| ,, शिवप्रसाद गुप्त, काशी | ... | २७७) | [ १५१) रामप्रसाद-समादर-कोश, २५) कलाभवन, १०१) पदक ] |
| ,, राय शिवप्रसाद राय शंभुप्रसाद, काशी | ... | २०००) | [ भवन ] |
| ,, शिवविहारीलाल मिश्र, लखनऊ | ... | २२५) | [ भवन ] |
| ,, शीतलप्रसादजी, कानपुर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, शीतलाचरण वाजपेयी, हरदोई | ... | १००) | ,, |
| ,, राव राजा डा० श्यामविहारी मिश्र तथा रा० ब० शुकदेवविहारी मिश्र, लखनऊ | ... | २६२≡)८ | [ १३९)। प्रकाशन, १२३≡)५ भवन ] |
| ,, श्यामलाल, कलकत्ता | ... | २५०) | [ भवन ] |
| ,, श्यामलाल, आगरा | ... | १०५) | [ फुटकर ] |
| ,, श्यामलाल बाँठिया, बीकानेर | ... | १०१) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, रा० ब०, साहित्यवाचस्पति, डा० श्यामसुंदरदास, बी० ए०, काशी | ... | २०१) | [ भवन ] |
| एक श्रीमती | ... | १००) | [ प्रकाशन ] |
| श्री श्रीगोपाल नेवटिया, बंबई | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, श्रीधर पंतजी शास्त्री एम० ए०, साहूकारा, बरेली | | १००) | ,, |
| ,, रा० ब० श्रीनारायण महथा, मुजफ्फरपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, श्रीप्रकाश, काशी | ... | १२५) | [ १००) अर्द्धशताब्दी, २५) रामप्रसाद समादर-कोश ] |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्री श्रीप्रकाश तथा चंद्रभाल, काशी | ... | १००) | [ कलाभवन ] |
| ,, श्रीराम उपाध्याय एडवोकेट, जौनपुर | ... | १०१) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, श्रीशचंद्र शर्मा, काशी | ... | १००) | [१००) स्थायी कोश तथा ४२६ पुस्तकें ] |
| ,, डाक्टर सच्चिदानंद सिनहा, पटना | ... | १००) | ,, |
| ,, सतीशकुमार, बरेली | ... | १०१) | [ नागरी-प्रचार ] |
| ,, सतीशचंद्र आई० सी० एस०, प्रयाग | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, डाक्टर सतीशचंद्र बनर्जी, प्रयाग | ... | २००) | [ भवन ] |
| ,, सत्यनारायण आर्य एम० ए०, बम्बई | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, स्वामी सत्यदेव, हरिद्वार | ... | २८७८२।।) | [ २५०००) भूमिदान, ३७८२।।) पुस्तकें और उनको छापने का कापी राइट] |
| ,, सत्येंद्रकुमार, काशी | ... | ५००) | [ १००) स्थायी कोश, ४००) अर्द्धशताब्दी ] |
| ,, डाक्टर सद्गोपाल, प्रयाग | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| श्रीमती सरोजिनी रोहतगी, कानपुर | ... | १००) | ,, |
| श्री सहदेव सिंह वकील, काशी | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, सियारामशरण गुप्त, झाँसी | ... | २२५) | [ कलाभवन ] |
| ,, सीताराम अग्रवाल, नैनी | ... | १०१) | ,, |
| ,, सीताराम खेमका, दिल्ली | ... | २००) | [१००) स्थायी कोश,१००) अर्द्धशताब्दी] |
| ,, सीताराम सेकसरिया, कलकत्ता | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, सुखदेवशरण केदारनाथ भार्गव, बंबई | ... | १००) | ,, |
| ,, डाक्टर सर सुन्दरलाल सी० आई० ई०, प्रयाग | ... | १५००) | [ १०००) प्रकाशन, ५००) भवन ] |
| ,, सुन्दरलाल गुप्त, हरदोई | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, सुंदरीप्रसाद रईस, स्पेशल मजिस्ट्रेट, जौनपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, सुधाकर एम० ए०, दिल्ली | ... | १००) | ,, |
| ,, सुरेंद्रनाथ श्रीवास्तव, हरदोई | ... | १००) | ,, |
| ,, रा० सा० डाक्टर सूरजप्रसाद श्रीवास्तव, मेरठ | ... | १००) | ,, |
| ,, सूर्यनारायण व्यास, उज्जैन | ... | १००) | ,, |
| ,, राय बहादुर सूर्यप्रसाद, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, सूर्यप्रसाद शुक्ल हजारी, बनारस राज्य | ... | १००) | ,, |
| ,, हंसराज गुप्त एम० ए०, एल्-एल० बी०, दिल्ली | ... | १००) | ,, |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार, मथुरा | ... | १००) | [ कलाभवन रजत-जयंती ] |
| ,, हनुमानप्रसाद पोद्दार, गोरखपुर | ... | १०१) | [ कलाभवन ] |
| ,, लाला हरगोविन्ददयाल, लखनऊ | ... | १००) | [ भवन ] |
| ,, राय बहादुर हरप्रसाद, पीलीभीत | ... | ५००) | [ भवन ] |
| ,, हरिकेशव घोष, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग | ... | ५५०) | [ ५००) प्रकाशन, ५०) रामप्रसाद-समादर कोश ] |
| ,, हरिचंद खन्ना, कानपुर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, रा० ब० हरिप्रसाद नालन्द, अजमेर | ... | १००) | ,, |
| ,, हरिप्रसाद वर्मा, मुकामाघाट ( बिहार ) | ... | १००) | ,, |
| ,, हरिराम अग्निहोत्री, कानपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, प्रो० हरि रामचंद्र दिवेकर, उज्जैन | ... | १००) | ,, |
| ,, हरिश्चंद्र बागला, कानपुर | ... | १०१) | ,, |
| ,, हरिश्चंद्र आई० सी० एस०, प्रयाग | ... | १००) | ,, |
| ,, हरिहरनाथ टंडन एम० ए०, आगरा | ... | १००) | ,, |
| ,, महंत हरिहर गिरि, बीकानेर | ... | २१६) | [१११) अर्द्धशताब्दी, १०५) स्थायी कोश |
| ,, हिम्मत सिंह माहेश्वरी, जयपुर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, ठाकुर हीरसिंह, बीकानेर | ... | १०१) | ,, |
| ,, हीरानंद यू भाटिया, जोधपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, डाक्टर हीरानंद शास्त्री, गुरदासपुर | ... | १००) | ,, तथा १०१२ पुस्तकें |
| ,, रा० ब० डा० हीरालाल, कटनी | ... | ११००) | [ १०००) पदक, १००) प्रकाशन ] |
| ,, रा० ब० त्रिजुगीनाथ कौल, हरदोई | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, शारदाप्रसाद, काशी | ... | १०१) | ,, |
| ,, राजनाथ पांडेय, गोरखपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, श्रीगोपाल जालान, काशी | ... | १०१) | ,, |
| ,, कन्हैयालाल खेतान, काशी | ... | १०१) | ,, |
| ,, बनारसीलाल बजाज, काशी | ... | १०१) | ,, |
| ,, हृषीकेश सराफ, काशी | ... | १०१) | ,, |
| ,, विश्वनाथप्रसाद जालान, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, नवलविहारी बर्मन, काशी | ... | १००) | ,, |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्री रामजीलाल सरावगी, काशी | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, पुरुषोत्तमदास केडिया, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, देवीप्रसाद पोद्दार, काशी | ... | १००) | ,, |
| श्रीमती भागीरथी देवी झुनझुनवाला, कलकत्ता | ... | १००) | ,, |
| श्री परमहंस मल्लसिंह वकील, गोरखपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, राजा हरिहरबख्श सिंह, हरदोई | ... | १००) | ,, |
| ,, जगदंबाप्रसाद, हरदोई | ... | १००) | ,, |
| ,, राय बहादुर ठा० विभूतिसिंह, हरदोई | ... | १००) | ,, |
| ,, राजबहादुर अष्ठाना, हरदोई | ... | १००) | ,, |
| ,, सोहनलाल खन्ना, लाहौर | ... | ५००) | [ १००) स्थायी कोश, ४००) सत्यज्ञान-निकेतन ] |
| ,, विद्यानंदन देवकीनंदन, कानपुर | ... | २००) | [१००) स्थायी कोश, १००) अर्द्ध शताब्दी] |
| ,, काशीराम कन्हैयालाल, कानपुर | ... | २००) | [१००) स्थायी कोश, १००) अर्द्ध शताब्दी] |
| ,, चुन्नीलाल पुरुषोत्तमदास, कानपुर | ... | २००) | [१००) स्थायी कोश, १००) अर्द्ध शताब्दी] |
| ,, जीतमल कानोडिया, कानपुर | .. | २००) | [१००) स्थायी कोश, १००) अर्द्ध शताब्दी] |
| ,, बदरीदास प्यारेलाल, कानपुर | ... | २००) | [१००) स्थायी कोश, १००) अर्द्ध शताब्दी] |
| ,, रामजीवन रामप्रसाद, कानपुर | ... | २००) | [१००) स्थायी कोश, १००) अर्द्ध शताब्दी] |
| ,, दयाराम, कानपुर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, देवकांमता दीक्षित, कानपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, वुडवल मिल, कानपुर | ... | १२५) | [ अर्द्ध शताब्दी ] |
| ,, राय बहादुर रामेश्वरप्रसाद बागला, कानपुर | ... | १०००) | [१००) स्थायी कोश, ९००) अर्द्ध शताब्दी] |
| ,, सरदार इंद्रसिंहजी, कानपुर | ... | २००) | [१००) स्थायी कोश, १००) अर्द्ध शताब्दी] |
| ,, रामनिरंजन शर्मा, कानपुर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, प्रो० शिवपूजनसहाय, छपरा | ... | १०१) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, राय सत्यव्रत, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, गंगाशरण भार्गव, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, कला रानी मिश्र, हरदोई | ... | १००) | ,, |
| ,, वीरेंद्रनाथ मिश्र, हरदोई | ... | १००) | ,, |
| ,, कुँवर कान्हसिंह, बीकानेर | ... | १०५) | ,, |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्री डाक्टर वासुदेवशरण अग्रवाल, लखनऊ | ... | १००) | [ स्थायी कोष ] |
| ,, भागवत मिश्र, गाजीपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, सर्वजीत, गौहाटी | ... | १००) | ,, |
| ,, रामचंद्र, कानपुर | ... | १०००) | [ १००) स्थायी कोश, ९००) अर्द्धशताब्दी] |
| ,, मोतीलाल शुक्ल, कानपुर | ... | १०१) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, गुलाबचंद गुप्त, कानपुर | ... | १०१) | ,, |
| ,, किशोरचंद कपूर, कानपुर | ... | १०१) | ,, |
| ,, उमाशंकर मेहरोत्रा, कानपुर | ... | १०१) | ,, |
| ,, माधोराम सं‍ड, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, अंबालाल देराश्री, उदयपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, सर गणेशदत्त सिंह, पटना | ... | १००) | ,, |
| ,, निहालकरण सेठी, आगरा | ... | १००) | ,, |
| ,, पूरनचंद बर्मन, कलकत्ता | ... | १००) | ,, |
| ,, बलराम शर्मा एम० ए०, एल्-एल० बी०, बरेली | | १००) | ,, |
| ,, राय वागीश्वरीप्रसाद, गया | ... | १००) | ,, |
| ,, रामकुमार जालान, कलकत्ता | ... | १०१) | [ १००) स्थायी कोश, १) फुटकर ] |
| ,, रा० ब० वंशीधर सेठ, हरदोई | ... | ३५६) | [१००) स्थायी कोश, २५६) नागरी-प्रचार] |
| ,, राजा विश्वेश्वरनाथ, हैदराबाद | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, सत्यजीवन वर्मा, इलाहाबाद | ... | १००) | ,, |
| ,, सी० डब्ल्यू० डेविड, इंदौर | ... | १००) | ,, |
| ,, राजश्री ठाकुर साहब शिवनाथसिंह, जयपुर | ... | १५०) | [१००) स्थायी कोश, ५०) नागरी-प्रचार] |
| ,, रामनाथ श्रीवास्तव एम० ए०, एल्-एल० बी०, हरदोई | | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, सेठ रामदेव पोद्दार, बंबई | ... | १०००) | [१००) स्थायी कोश, ९००) अर्द्धशताब्दी] |
| ,, सेठ गोविंदराम शेखसरिया, बंबई | ... | १०००) | [१००) स्थायी कोश, ९००) अर्द्धशताब्दी] |
| ,, जगमोहनप्रसाद गोयनका, कमला मिल्स, बंबई | ... | ५००) | [१००) स्थायी कोश, ४००) अर्द्धशताब्दी] |
| ,, सेठ चिरंजीलाल लोयलका, बंबई | ... | ५००) | [ १००) स्थायी कोश, ४००) अर्द्धशताब्दी |
| ,, विश्वंभरलाल, बंबई | ... | ५००) | [१००) स्थायी कोश, ४००) अर्द्धशताब्दी] |
| ,, सेठ रामरिखदास केडिया, बंबई | ... | ५००) | [१००) स्थायी कोश, ४००) अर्द्धशताब्दी] |
| ,, बैजनाथ स्लाहारिया, बंबई | ... | ५००) | [१००) स्थायी कोश, ४००) अर्द्धशताब्दी] |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्री सेठ रामरिखदास परसरामपुरिया, बंबई | ... | ५००) | [१००) स्थायी कोश, ४००) अर्द्धशताब्दी] |
| „ सेठ द्वारिकादास, बंबई | ... | ५००) | [१००) स्थायी कोश, ४००) अर्द्धशताब्दी] |
| „ मनोहरदास भैरामल, बंबई | ... | ५००) | [१००) स्थायी कोश, ४००) अर्द्धशताब्दी] |
| „ सेठ गजाधर सोमाली, बंबई | ... | ५००) | [१००) स्थायी कोश, ४००) अर्द्धशताब्दी] |
| „ सेठ सनेहीरामजी मुआलका, बंबई | ... | ५००) | [१००) स्थायी कोश, ४००) अर्द्धशताब्दी) |
| „ धरमचंद खेमका, बीकानेर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| „ मुरलीधर डालमिया, बहराइच | ... | १००) | „ |
| „ रंगलाल लाठ, बहराइच | ... | १००) | „ |
| „ बजरंगलाल सराफ, काशी | ... | १००) | „ |
| „ नंदकिशोर पोद्दार, कानपुर | ... | १०१) | „ |
| „ सेठ रतनलाल, कानपुर | ... | १०१) | „ |
| „ देवकुमार जैन, कानपुर | ... | १०१) | „ |
| „ रा० ब० पं० रामशरण मिश्र, फैजाबाद | ... | १००) | „ |
| „ कालीचरण, मैनेज़िंग डाइरेक्टर रोलिंग मिल्स, कानपुर | | १०००) | [ १००) स्थायी कोश, ९००) फुटकर ] |
| „ गुरुप्रसाद टंडन, ग्वालियर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| „ गुप्त आयरन स्टील कं०, कानपुर | ... | १००) | [ अर्द्धशताब्दी ] |
| „ नारायणलाल वंशीलाल, बंबई | ... | २५०) | [ १००) स्थायी कोश, १५०) अर्द्ध-शताब्दी ] |
| „ ठाकुर तिलकसिंह कुशवाहा, हरदोई | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| „ शिवचरण गर्ग, लखनऊ | ... | १००) | „ |
| „ स्वामी विद्यानंद महाराज, अहमदाबाद | ... | १०१) | „ |
| „ मेसर्स लल्लूमल, कानपुर | ... | २०१) | [१००) स्थायी कोश, १०१) अर्द्धशताब्दी] |
| „ मथुराप्रसाद मातादीन, कानपुर | .... | २००) | „ |
| „ मानूलाल सिद्धगोपाल, कानपुर | ... | २००) | [१००) स्थायी कोश, १००) अर्द्धशताब्दी] |
| „ पुत्तनलाल दलाल, कानपुर | ... | २००) | „ |
| „ ज्वालाप्रसाद राधाकृष्ण, कानपुर | ... | २००) | „ |
| „ वासुदेव शिवदयालमल, कानपुर | ... | २००) | „ |
| „ राजाराम रमेशचंद्र, कानपुर | ... | २००) | „ |
| „ नानकचंद मानकचंद, कानपुर | ... | २००) | [१००) स्थायी कोश, १००) अर्द्धशताब्दी] |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्री विट्ठलदास झवेरचंद, कानपुर | ... | २००) | [१००) स्थायी कोश, १००) अर्द्धशताब्दी] |
| ,, मोतीलाल भगवतीप्रसाद, कानपुर | ... | २००) | ,, |
| ,, आनंदराम पूरनमल, कानपुर | ... | २००) | ,, |
| ,, दुर्गाप्रसाद बद्रीप्रसाद, कानपुर | ... | २००) | ,, |
| ,, बिहारीलाल रामचरन, कानपुर | ... | २००) | ,, |
| ,, म्हालाराम वंशीधर कसेरा, कानपुर | ... | २००) | ,, |
| ,, महेशप्रसाद, कानपुर | ... | २००) | ,, |
| ,, गोपीनाथ छंगामल, कानपुर | ... | २००) | ,, |
| ,, गनेशप्रसाद दलाल, कानपुर | ... | २००) | ,, |
| ,, गयाप्रसाद गुरुप्रसाद, कानपुर | ... | २००) | ,, |
| ,, संतलाल श्रीकिशन, कानपुर | ... | २००) | ,, |
| ,, गयाप्रसाद शंभुनाथ, कानपुर | ... | २००) | ,, |
| ,, गोपीनाथ अग्रवाल, कानपुर | ... | २००) | ,, |
| ,, महादेवप्रसाद लूंड़िया, कानपुर | ... | २०१) | [१००) स्थायी कोश १०१) अर्द्धशताब्दी] |
| ,, लाला गोकुलदास, कानपुर | ... | १००) | [स्थायी कोश] |
| ,, राममोहन कृष्णमूर्ति, कानपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, बद्रीदास शंकरलाल, कानपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, मोहन ब्रादर्स, कानपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, नौरंगराय काल्रूराम, कानपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, दानमल शिवनाथराम, कानपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, मन्नोलाल भरतिया, कानपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, कुँवर बुद्धसिंह, कोटा | ... | १००) | ,, |
| ,, कमलाकांत चतुर्वेदी, कोटा | ... | १००) | ,, |
| ,, प्यारेलाल कटियार, कानपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह, शाहाबाद | ... | १००) | ,, |
| ,, बैजनाथ केडिया, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, कृष्णगोपाल केडिया, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, प्रो० जीवनशंकर याज्ञिक, काशी | ... | १००१) | [याज्ञिक ग्रंथमाला तथा ११७९ हस्त-लिखित पुस्तकें] |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्री शुकदेव पांडेय, पिलानी | ... | ११००) | [ १००) स्थायी कोश, १०००) माधवी देवी पुरस्कार ] |
| ,, प्रेमचंदजी केडिया, बंबई | ... | १००) | [ अर्द्धशताब्दी ] |
| ,, जमनादास अडूकिया, बंबई | ... | १००) | ,, |
| ,, केशवदास नेवटिया, बंबई | ... | १००) | ,, |
| ,, गणेश नारायण ओंकारमल, बंबई | ... | २५१) | [१००) स्थायी कोश, १५१), अर्द्धशताब्दी] |
| ,, आनंदराम मगतूराम, बंबई | ... | २५१) | ,, |
| ,, चतुरभुज पीरामल, बंबई | ... | २५१) | ,, |
| ,, कालूराम ब्रजमोहन, बंबई | ... | २५१) | ,, |
| ,, बलदेवदास महावीरप्रसाद, बंबई | ... | १५१) | [१००) स्थायी कोश, ५१) अर्द्धशताब्दी] |
| ,, बनारसीधर गोपालदास, बंबई | ... | २५१) | [१००) स्थायी कोश, १५१) अर्द्धशताब्दी] |
| ,, जगन्नाथ किशनलाल, बंबई | ... | १०१) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, सुखदेवदास रामविलास, बंबई | ... | १०१) | ,, |
| ,, रामकिशनदास सागरमल, बंबई | ... | १०१) | ,, |
| ,, गुलराज चूड़ीवाला, बंबई | ... | १०१) | ,, |
| ,, गोरखराय गनपतराय, बंबई | ... | २५१) | [१००) स्थायी कोश, १५१) अर्द्धशताब्दी] |
| ,, नरसिंहप्रसाद बूबना, मुजफ्फरपुर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, नौरंगलाल तुलस्यान, शाहाबाद | ... | १००) | ,, |
| ,, मंगलचंदजी चोपड़ा, बीकानेर | ... | १०१) | ,, |
| ,, गुमानमल बोथरा, बीकानेर | ... | १०१) | ,, |
| ,, कमलनाथ अग्रवाल, काशी | ... | १००) | ,, |
| ,, घनश्यामदास भरतिया, मुजफ्फरनगर | ... | १०१) | ,, |
| ,, श्यामसुन्दरलाल भरतिया, मुजफ्फरनगर | ... | १०१) | ,, |
| ,, सूरजमल नागरमल, कलकत्ता | ... | १०००) | [ ८००) अर्द्धशताब्दी, १००) पुस्तकालय, १००) स्थायी कोश ] |
| ,, वनविहारीप्रसाद भूप, गया | ... | १०१) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, शिवनारायण टंडन, हरदोई | ... | १००) | ,, |
| ,, मोहनलाल जालान, कलकत्ता | ... | ५०१) | [ राजस्थानी साहित्य-रत्ननिधि ] |
| ,, वैद्य जयरामदास स्वामी, जयपुर | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |

| दाताओं के नाम | | धन | प्रयोजन |
|---|---|---|---|
| श्री बा० काशीराम गुप्त, कलकत्ता | ... | १००) | [ स्थायी कोश ] |
| ,, राजनारायणसिंह आई० एफ० एस०, बरेली | ... | १००) | ,, |
| श्रीमती कुमारी विमला पुरी, कानपुर | ... | १००) | ,, |
| श्री सी० एस० गुप्ता, कानपुर | ... | १०१) | ,, |
| ,, देवीचरण, कानपुर | ... | १०१) | ,, |
| ,, पद्मराज, कानपुर | ... | १०१) | ,, |
| श्रीमती सुभद्रादेवी, कानपुर | ... | १०१) | ,, |
| श्री देवराज, कानपुर | ... | १०१) | ,, |
| जूही लाइम एण्ड फ्लावर मिल्स, कानपुर | ... | १०१) | ,, |
| श्री रामकिशन शिवशम्भूलाल, कानपुर | ... | १०१) | ,, |
| ,, जगन्नाथ बलराम, कानपुर | ... | १०१) | ,, |
| ,, एम० मुस्तफा (?), कानपुर | ... | १००) | ,, |
| ,, स्वामी रामानंद, व्याकरणाचार्य, दर्शनशास्त्री, काशी | | १००) | [ पुस्तकालय ] |
| | | ४३६६३६॥)५ | |

---

# सभा के नवीन प्रकाशन

गुलेरी-ग्रंथ ( पहला खंड, पहला भाग )—अमर-कृती स्व० श्री चंद्रधर शर्मा गुलेरी की समस्त हिंदी कृतियाँ तथा उनका विस्तृत जीवन-चरित प्रकाशित करने की योजना के अनुसार पहले खंड का पहला भाग जिसमें इतिहास संबंधी प्रबंध हैं, अभी प्रकाशित किया गया है। संपूर्ण संग्रह तीन खंडों में होगा। पहले खंड के दूसरे भाग में उनके शेष प्रबंध तथा टिप्पणियाँ रहेंगी; दूसरे खंड के तीसरे और चौथे भागों में उनकी स्फुट कविताएँ, वस्तुप्रधान एवं भाव-प्रधान निबंध, कहानियाँ, आलोचनाएँ तथा टिप्पणियाँ रहेंगी। उनका विस्तृत जीवन-चरित तीसरे खंड में रहेगा। पहले खंड के पहले भाग की पृष्ठ-संख्या लगभग ३००, मूल्य १॥) ।

काशी का मानमंदिर—अर्थात् काशी के मानमंदिर तथा दिल्ली के 'जंतरमंतर' नामक वेधशालाओं की प्रदर्शिका। लेखक श्री चंडीप्रसाद, एम० ए०, बी० एस-सी०। इस पुस्तक में विद्वान् लेखक ने उपर्युक्त वेधशालाओं के विभिन्न यंत्रों का विस्तृत विवरण, उनका इतिहास तथा उनके द्वारा वेध करने की रीति का बहुत ही सरल भाषा में वर्णन किया है तथा स्वयं वेध करके यह दिखाया है कि इन यंत्रों द्वारा प्राप्त मान कहाँ तक ठीक है। यंत्रों के चित्र तथा आवश्यक नक्शों से युक्त रायल अठपेजी आकार के २८ पृष्ठों की पुस्तक का मूल्य ।=) ।

हिंदुस्तानी शिष्टाचार—लेखक श्री रामनारायण मिश्र। संशोधित आठवाँ संस्करण भारतीय संस्कृति और रीति-नीति के अनुसार बालकों को गुरुजनों के प्रति तथा गुरुजनों को बालकों और आश्रितों के प्रति किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए तथा उनकी मान-मर्यादा और सुख-सुविधा के लिये किस प्रकार का आचरण करना चाहिए, उन सबका सीधी-सादी भाषा में इस पुस्तिका में वर्णन है। इस संशोधित संस्करण में शिष्टाचार संबंधी नियमों का विषयानुसार वर्गीकरण कर दिया गया है जिससे बालकों को याद करने में सुविधा हो। संयुक्तप्रांत के डाइरेक्टर ऑव पब्लिक इंस्ट्रक्शन द्वारा स्वीकृत। पृष्ठ-संख्या ४८, मूल्य -)॥ ।

पंजाब में हिंदी की प्रगति—लेखक श्री रघुनंदन शास्त्री, एम० ए०, एम० ओ० एल०। पंजाब में गत पचास वर्षों के अंतर्गत हिंदी भाषा और साहित्य ने जो प्रगति की है उसका इस पुस्तक में सर्वांगपूर्ण विवरण दिया गया है। शिक्षा-विभाग, पंजाब-विश्वविद्यालय, आर्यसमाज, हिंदू सभा, देवसमाज, विभिन्न साहित्यिक संस्थाओं तथा पुस्तक-प्रकाशकों द्वारा किए गए हिंदी संबंधी कार्यों के संक्षिप्त विवरणों के साथ हिंदी के सुलेखकों और हिंदी का पक्ष समर्थन करनेवाले प्रायः समस्त हिंदीप्रेमियों की इसमें चर्चा है। अंत में, इस बीच पंजाब से प्रकाशित होनेवाली विभिन्न विषयों की पुस्तक-सूची तथा पत्र-पत्रिकाओं की नामावली भी दे दी गई है। पृष्ठ-संख्या १२६, मूल्य ॥।) ।

राजस्थानी साहित्य का महत्त्व—संपादक रायबहादुर श्री रामदेव चोखानी। राजस्थानी भाषा और साहित्य की विशिष्टता पर प्रकाश डालनेवाले तथा उनकी खोज, रक्षा और प्रकाशन की उपयोगिता का पक्ष समर्थन करनेवाले मुनि जिनविजय जी तथा ठाकुर रामसिंहजी के अभिभाषणों तथा राजस्थानी साहित्यपीठ के मंत्री द्वारा प्रस्तुत 'राजस्थानी भाषा और साहित्य' नामक उपयोगी लेख का संग्रहमात्र। पृष्ठ-संख्या १२०, मूल्य ॥।) ।

विश्व-साहित्य में रामचरितमानस ( पहला भाग )—लेखक श्री राजबहादुर लमगोड़ा, बी० ए०, एल्‌ एल० बी०। प्रस्तुत पुस्तक में विद्वान् लेखक ने विश्व-साहित्य में मान्य शेक्सपियर कृत नाटकों के साथ रामचरितमानस की तुलनात्मक आलोचना करते हुए गोस्वामी जी की मार्मिक वर्णन-शैली, भाव-प्रकाशन की विशिष्ट रीति, शील और मर्यादा पर उनकी सतर्क दृष्टि तथा काव्य-कौशल पर विस्तारपूर्वक विचार किया है। इस पहले भाग में शेक्सपियर-कृत हैमलेट, अथेलो तथा मैकबेथ के साथ मानस की तुलना की गई है। पृष्ठ-संख्या लगभग ३००, मूल्य १॥) ।